शिक्षा तथा समाज-कल्याण मन्त्रालय, भारत सरकार की विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रन्थ योजना के अन्तर्गत राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा प्रकाशित :

प्रथम संस्करण १९७३

This book has been published with a subsidy under the Indo-American Text-book Programme operated by National Book Trust, India. Subsidy Code No. 54-92/1974. मूल्य [illegible]

प्रकाशक :

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
ए 26/2, विद्यालय मार्ग, तिलक नगर
जयपुर-४

मुद्रक :

मनोज प्रिन्टर्स
गोदीको का रास्ता, किशनपोल बाजार,
जयपुर-३०२००३

प्रस्तावना

भारत की स्वतन्त्रता के बाद इसकी राष्ट्रभाषा को विश्वविद्यालय शिक्षा के माध्यम के रूप मे प्रतिष्ठित करने का प्रश्न राष्ट्र के सम्मुख था। किन्तु हिन्दी मे इस प्रयोजन के लिए अपेक्षित उपयुक्त पाठ्यपुस्तके उपलब्ध नही होने से यह माध्यम परिवर्तन नही किया जा सकता था। परिणामत भारत सरकार ने इस न्यूनता के निवारण के लिए 'वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दावली आयोग' की स्थापना की थी। इसी योजना के अन्तर्गत 1969 मे पाँच हिन्दी भाषी प्रदेशो मे ग्रन्थ अकादमियो की स्थापना की गयी।

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी हिन्दी मे विश्वविद्यालय स्तर के उत्कृष्ट ग्रन्थ-निर्माण में राजस्थान के प्रतिष्ठित विद्वानो तथा अध्यापको का सहयोग प्राप्त कर रही है और मानविकी तथा विज्ञान के प्रायः सभी क्षेत्रों मे उत्कृष्ट पाठ्य-ग्रन्थों का निर्माण करवा रही है। अकादमी चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अन्त तक तीन सौ से भी अधिक ग्रन्थ प्रकाशित कर सकेगी, ऐसी हम आशा करते है।

प्रस्तुत पुस्तक इसी क्रम मे तैयार करवायी गयी है। हमे आशा है कि यह अपने विषय मे उत्कृष्ट योगदान करेगी। इस पुस्तक की समीक्षा के लिए अकादमी डॉ० आर० एन० तिक्खा, एम० एम० मोदी कॉलेज, पटियाला के प्रति आभारी है।

चन्दनमल वैद
अध्यक्ष

गौ० शं० सत्येन्द्र
निदेशक

Foreword

Meteorology as a Science has made rapid strides in India during recent years. In earlier years it was often fashionable to consider this profession as a collection of soothsayers, or eccentrics, who spent a lifetime making wrong prophesies. A series of natural calamities, droughts, floods and tropical cyclones–have now changed this outlook. It is indeed encouraging to find evidence of a trend in the other direction, namely. an increasing awareness of the importance of earth sciences.

It is not often realised that a good part of the strain imposed on our economy could be averted, if proper steps were taken in advance against the adverse forces of nature. In this context, the economic value of a meteorological forecast is substantial. It has been estimated that the damage caused by a tropical storm hitting the Indian coastline could be as hundred crores of rupees. If we could save even a tenth of this figure by timely warnings, the cost-benefit ratio would more than justify the existence of a national meteorological service. There are many examples of this nature where meteorology can, and should, make important contributions to the national economy. The management of water resources is another example. How does rainfall affect the water level of a river ? Can we predict the next day's rainfall in quantitative terms, so that the engineers know whether to open or not the flood gates ? Questions of this nature are becoming increasingly important these days, and they all emphasize the need for a more determined and meaningful study of the earth sciences.

This book, which is in Hindi, introduces us to this fascinating subject and fulfils a long felt need. It covers a fairly extensive range of the subject, with more emphasis on the weather of India. As it is in Hindi, the Indian reader should experience little or no

difficulty in following it. The authors have undertaken a commendable task in preparing this introductory text. I wish this book success, and I hope it provides an useful introduction to a subject which has much scope for further development.

Sept. 1973
New Delhi,

Dr. P. K. Das.
M.Sc. (Lon) D Phil. DIC
Dy. Director General of Observatories
(Planning)
India Meteorological Department

प्राक्कथन

मौसम की घटनायें अनादि काल से ही पृथ्वी तथा उस पर रहने वाले जीव-धारियों को प्रभावित करती रही हैं। ये घटनायें वायुमण्डल में उपस्थित जलवाष्प तथा वायुराशियों की गति के कारण उत्पन्न होती हैं। मानव सभ्यता के आदि काल में लोग वर्षा, सूखा आदि को दैवी घटनायें समझते थे और अनुकूल मौसम के लिये प्रार्थना तथा अनुष्ठानों में आस्था रखते थे। यह दशा एक शताब्दी पूर्व तक भी संसार के हर क्षेत्र में व्याप्त थी। किन्तु अब वायुमण्डल के बारे मे अनेक वैज्ञानिक तथ्यो की खोज के पश्चात् मौसम के घटनाओ की यथार्थ व्याख्या बहुत कुछ स्पष्ट हो गयी है।

वायुमंडलीय घटनाएँ अनुप्रयुक्त विज्ञान और गणित के लिए संभवतः सबसे बड़ी चुनौती हैं। क्योकि न तो ये घटनाएँ किसी प्रयोगशाला मे उत्पन्न की जा सकती हैं और न ही इनकी तीव्र परिवर्तिताएँ (Variabilities) किसी गणितीय मॉडल द्वारा सूत्रबद्ध की जा सकती है। राडार, मौसम उपग्रह आदि अनेक सशक्त यंत्रों के अविर्भाव से पिछले कुछ वर्षों मे वायुमण्डल की विशेष प्रयोगशाला में ही मौसम का अधिक यथार्थ अध्ययन संभव हो सका है।

मौसम विज्ञान अब एक व्यवस्थित विज्ञान के रूप मे तेजी से अग्रसर हो रहा है। इसका स्वरूप पिछले चार-पांच दशकों मे अब तक कई शाखाओ मे विकसित हुआ है। इन शाखाओ मे गतिक (Dynamic) मौसम विज्ञान, भौतिक (Physical) मौसम विज्ञान, समकालीन (Synoptic) मौसम विज्ञान, राडार तथा उपग्रह मौसम विज्ञान, जलवायु विज्ञान (Climatology) आदि प्रमुख है। विषुवत रेखीय क्षेत्र अधिक तथा ध्रुवीय क्षेत्र कम सौर उष्मा प्राप्त करते है। सन्तुलन स्थापित करने के लिए वायुराशियो द्वारा निम्न से उच्च अक्षांशों की ओर उष्मा का अभिवहन (Advection) होता है। अत. वायुमण्डल एक ताप इंजन की भाति कार्य करता है। इस प्रकार स्वाभाविक रूप से उष्मागतिकी के नियम वायुमण्डलीय विज्ञान मे लागू हो जाते है, जिसके आधार पर भौतिक मौसम विज्ञान विकसित हुआ। सूर्य की उष्मा और पृथ्वी का घूर्णन मिलकर वायुप्रवाह जनित करते हैं। इस प्रवाह की विशेषताओ के अध्ययन के लिए गतिक मौसम विज्ञान का विकास हुआ।

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी ने प्रस्तुत पुस्तक तैयार कराने मे गहरी दिलचस्पी दिखाई तथा सुविधाये उपलब्ध कीं, जिसके लिए लेखक विशेष रूप से आभार व्यक्त करना अपना कर्तव्य समझते है।

स्थान-स्थान पर मानचित्र एवं आंकड़ो के प्रस्तुतीकरण मे भारत मौसम विज्ञान विभाग के प्रकाशनो का जो सहयोग मिला है, उसके लिए लेखक विभाग के ऋणी हैं।

सितम्बर, 1973
मौसम केन्द्र, जयपुर
(राजस्थान)

रमेशचन्द्र बनर्जी
दयाशंकर उपाध्याय

विषय-सूची

1

पर्यावरण

(THE ENVIRONMENT)

1 10 हमारा पर्यावरण

जल, थल, और वायुमण्डल मिलकर हमारा पर्यावरण बनाते हैं। उत्तरी गोलार्द्ध का 61% और दक्षिणी गोलार्द्ध का 81% इस तरह सम्पूर्ण पृथ्वी का 71% भाग जल से ढका है। शेष भाग थल है, जो 20 से 50 अंश उत्तरी अक्षाश तक हिमालय, आल्प्स, राकी आदि पर्वतो के कारण काफी ऊँची है। 60 से 90 अंश दक्षिणी अक्षांश तक फैला एन्टार्कटिक प्रदेश भी ऊँचाई पर स्थित भू-भाग है।

पृथ्वी की कुल जलराशि का आयतन- लगभग 1.4×10^9 घन किमी है, जिसका 98% भाग सागरों मे है। शेष 2% का अधिकाश भाग ध्रुव प्रदेशो मे बर्फ के रूप मे जमा है। हमारे दिन-प्रतिदिन काम मे आने वाले मीठे पानी का भाग सिर्फ 0.27% के लगभग है।

सूर्य के वार्षिक स्थानान्तरण तथा उसके फलस्वरूप उत्पन्न जलवायु के आधार पर भूमण्डल तीन भागो मे बाँटा जा सकता है—

(1) उष्ण कटिबन्ध (Tropics)

सूर्य की वार्षिक गति कर्क रेखा ($23\frac{1}{2}°$ उ) से मकर रेखा के ($23\frac{1}{2}°$ द.) अक्षाश वृत्तो के बीच सीमित है। इन अक्षाशो के बाद कही भी सूर्य की किरणें वर्ष

चित्र (1.1)
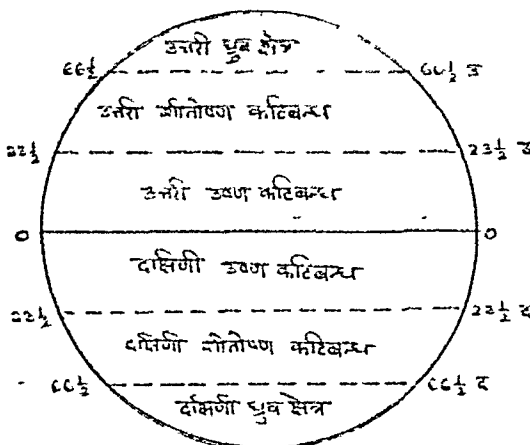
के किसी भाग में लम्बवत् नहीं पड़ती। फलस्वरूप 23½° उ. से 23½° द. का क्षेत्र अधिक तापमान तथा वर्षा प्राप्त करता है।

विषुवत् रेखा और कर्क रेखा के बीच का क्षेत्र उत्तरी उष्ण कटिबन्ध तथा विषुवत् रेखा से मकर रेखा तक का भाग दक्षिणी उष्ण कटिबन्ध कहलाता है।

(2) मध्य अक्षांश या शीतोष्ण कटिबन्ध (Middle latitude or Temperate Zone)

23½° उ.–66½° उ. तथा 23½° द.–66½° द. के भूभाग क्रमशः उत्तरी और दक्षिणी मध्य अक्षांश कहलाते हैं। 66½° अक्षांश तक ही सूर्य की किरणें प्रतिदिन पहुँच पाती हैं। इसके परे 24 घण्टे से अधिक अवधि के दिन और रात पाए जाते हैं।

(3) ध्रुव क्षेत्र या उच्च अक्षांश (Polar region or High latitude)

उत्तरी ध्रुव क्षेत्र—(66½° उ.–90° उ.)
दक्षिणी ध्रुव क्षेत्र—(66½° द.–90° द.)

1.11 अक्षांशों के प्रति जल-थल का आवंटन और महाद्वीपों की समुद्र तल से औसत ऊँचाई सारिणी (1.1) में दी गई है।

सारिणी (1.1)

गोलार्द्ध	प्रतिशत जलीय भाग		समुद्र तल से औसत ऊँचाई (मीटर)	
अक्षांश	उ.	द.	उ.	द.
0–10	77.2	76.4	158	154
10–20	73.6	70.0	146	121
20–30	62.4	76.9	366	156
30–40	57.2	88.8	496	106
40–50	47.5	97.0	382	5
50–60	42.8	99.2	296	5

पर स्थित होता है। पृथ्वी सर्दियों में (उत्तरी गोलार्द्ध को) सूर्य के निकट और, गर्मियों मे दूर होती है। सूर्य और पृथ्वी की निम्नतम दूरी 1 जनवरी को होती है, जिसे रविनीच (पेरीहीलियन) दूरी कहते है। 1 जुलाई को यह दूरी अधिकतम होती है। इसे रविउच्च (एपहीलियन) दूरी कहते हैं।

रविनीच दूरी PS = 1 47 × 10^8 किमी = 913,60,000 मील

रविउच्च दूरी AS = 1 52 × 10^8 किमी = 944,70,000 मील

औसत दूरी = 1 497 × 10^8 किमी = 93000000 मील

1 जनवरी और 1 जुलाई की अवस्थाएं, क्रमश दक्षिणायण और उत्तरायण भी कहलाती है।

चित्र (1 2)
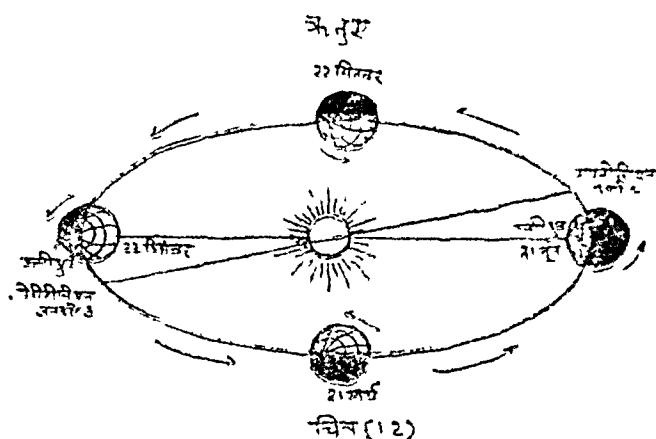
(4) रविनीच के दिन सूर्य रविउच्च की अपेक्षा 31,10,000 मील पृथ्वी के निकट रहता है। यदि ऐसा न होता तो, उत्तरी गोलार्द्ध मे सर्दिया और तेज पडती। यह सोचा जा सकता है कि दक्षिणी गोलार्द्ध की गर्मियों का तापमान करीब 4°C अधिक रहता, पर जल का भाग अपेक्षाकृत ज्यादा होने के कारण दक्षिण मे गर्मियों का तापमान उत्तर से लगभग 5°C कम रह जाता है। तुलना के लिये सारिणी (1 2) मे कुछ औसत तापमान दिए जा रहे है।

सारिणी (1 2)

औसत तापमान (सेण्टीग्रेड)

गोलार्द्ध	जनवरी	जुलाई	वार्षिक
उत्तरी	8 1	22.4	15 2
दक्षिणी	17 1	9.7	13 3

(5) रविनीच से थोड़ा पहले, 22 दिसम्बर को सूर्य की किरणें $23\frac{1}{2}°$ द. अक्षांश पर लम्बवत पड़ती है। इसे (शीत) अयनान्त (Winter Solistice) या मकर सक्रान्ति कहते हैं। इसी प्रकार 21 जून ग्रीष्म अयनान्त (Summer Solistice) या कर्क सक्रान्ति कहलाता है। इस दिन सूर्य का अधिकतम दिकपात (Declination) $23\frac{1}{2}°$ ऊपर होता है। 21 मार्च और 23 सितम्बर का सूर्य भूमध्य रेखा पर सीधा चमकता है, जब दिन और रात बराबर होते हैं। ये स्थितियां क्रमश वसन्त विषुव (Spring equinox) तथा शरद विषुव कहलाती हैं। इन्हे क्रमश महा (Vernal) और जल (Autumn) विषुव के नाम से भी जाना जाता है। महा विषुव के दिन सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध से उत्तरी गोलार्द्ध मे जाते समय विषुवत् रेखा पार करता है। इसी दिन से उत्तरी गोलार्द्ध मे वसत ऋतु का आरम्भ होता है। जल विषुव के दिन सूर्य विषुवत् रेखा को पार कर दक्षिणी गोलार्द्ध मे प्रवेश करता है। उत्तरी गोलार्द्ध मे इस दिन से शरद ऋतु आरम्भ होती है।

(6) पृथ्वी का अक्ष भूमध्य रेखीय तल से 66 6° का कोण बनाता है। यह अक्ष शंकु की जनन रेखा (Generating line) की भाँति अपना दिक् विन्यास (Orientation) बदलता रहता है। यह दिक् विन्यास 25800 वर्षों मे एक चक्कर पूरा करता है।

(7) किसी स्थिर नक्षत्र के सन्दर्भ मे सूर्य के चमकने का औसत समय एक नाक्षत्र-दिन (Siderial day) कहलाता है, जो 23 घण्टे, 56 मिनट और 4 सेकड के बराबर होता है।

(8) पृथ्वी का कोणिक वेग $= \frac{2\pi}{\text{नाक्षत्र दिन}}$

$= 7\ 293 \times 10^{-5}$ रेडियन/सेकड

(9) पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण स्थिरांक $(G) = 6\ 688 \times 10^{-8}$ सेमी³/ग्राम सेकड² ।

1.30 वायुमण्डल के अवयव (Constituents of atmosphere)

हम मुख्यत नाइट्रोजन और ऑक्सीजन का मिश्रण है। आर्गन और कार्बन-डाई ऑक्साइड गैसे भी गण्य मात्रा मे विद्यमान रहती है, जो स्थान-स्थान पर बदलती रहती है। वायुमण्डल मे इन गैसो का परिमाण इस प्रकार है :

अवयव	आयतन के अनुसार (%)	भार के अनुसार (%)
1. नाइट्रोजन	78.9	75 50
2 ऑक्सीजन (इसमे 20 से 50 किमी. ऊँचाई तक पायी जाने वाली ओजोन भी शामिल है)	20 95	23.10

3 आर्गन	0.93	1 30
4 कार्बन डाई ऑक्साइड	0 03	0 05

हाइड्रोजन तथा अन्य अक्रिय गैसे—हीलियम, नियन, क्रिप्टान और जेनान भी वायुमण्डल मे पायी जाती है, पर इनकी मात्रा नगण्य है। 150 किमी से ऊपर के वायुमण्डल मे हाइड्रोजन और हीलियम की ही प्रचुरता रहती है।

औद्योगिकरण के विकास के साथ-साथ विशेषत बड़े नगरो की हवा मे प्रदूषक तत्त्व (कार्बन मोनो ऑक्साइड, गंधक के ऑक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, मीथेन तथा कार्बन, सीसे और धूल के कण आदि) भी अब विचारणीय मात्रा मे पाये जाने लगे है।

इनके अतिरिक्त आयतन के अनुसार, पूरे वायुमण्डल के लगभग 4% के बराबर जलवाष्प हमेशा वायुमण्डल मे स्थित रहती है, जो स्थान और समय के अनुसार अत्यधिक परिवर्तनशील रहती है।

1 40 वायुमण्डल की संरचना (Structure of Atmosphere)

लगभग 100 किमी की ऊँचाई तक सभी गैसे, ऊपर दिये गये अनुपात मे मिश्रित रहती है, अर्थात् उनका मिश्रण सम (होमोजिनियस) होता है। वायुमण्डल के इस भाग को सममण्डल (होमोस्फीयर) कहते है। इसके ऊपर गैसे घनत्व के अनुसार स्थिति ग्रहण कर लेती है, अर्थात् भारी गैसे नीचे और हलकी गैसे ऊपर होती जाती है। यह भाग **विषम मण्डल** (हिटरोस्फीयर) कहलाता है। मोटे तौर पर वायुमण्डल को सम और विषम मण्डलो मे विभक्त करना ठीक है, परन्तु सममण्डल मे गठन (Composition) समान होते हुए भी भौतिक गुणो की विभिन्नता के कारण, वायुमण्डल कई तहो म बाँटा जा सकता है। इन तहो का संक्षिप्त विवरण 1 50 मे दिया गया है।

1 41 ह्रास दर (Lapse rate)

वायुमण्डल की निचली तहो मे तापमान ऊँचाई के साथ घटता जाता है क्योंकि हवा को गर्म करने वाली ताप किरणो का स्रोत, पृथ्वी की सतह है, न कि अन्तरिक्ष से आता हुआ सूर्य का विकिरण।

ऊँचाई के साथ तापमान **घटने** की दर को ह्रास दर कहते है। सामान्यत ह्रास दर का मान 6.5°C प्रति किमी. लिया जाता है।

यदि किसी भाग मे तापमान ऊँचाई के साथ बढता है, तो ह्रास दर वहाँ ऋणात्मक होगी। अत ह्रास दर

$$r = -\frac{dT}{dz},$$

जहाँ dz ऊँचाई की पर्त मे, ऊपरी और निचली सतह के तापमान का अन्तर dT है।

1.50 चित्र 1.3 मे तापमान का उर्ध्वाधर वटन (Vertical distribution) दिखाया गया है, जिसके अनुसार वायुमण्डल के निम्नलिखित भाग किए गए हैं ।
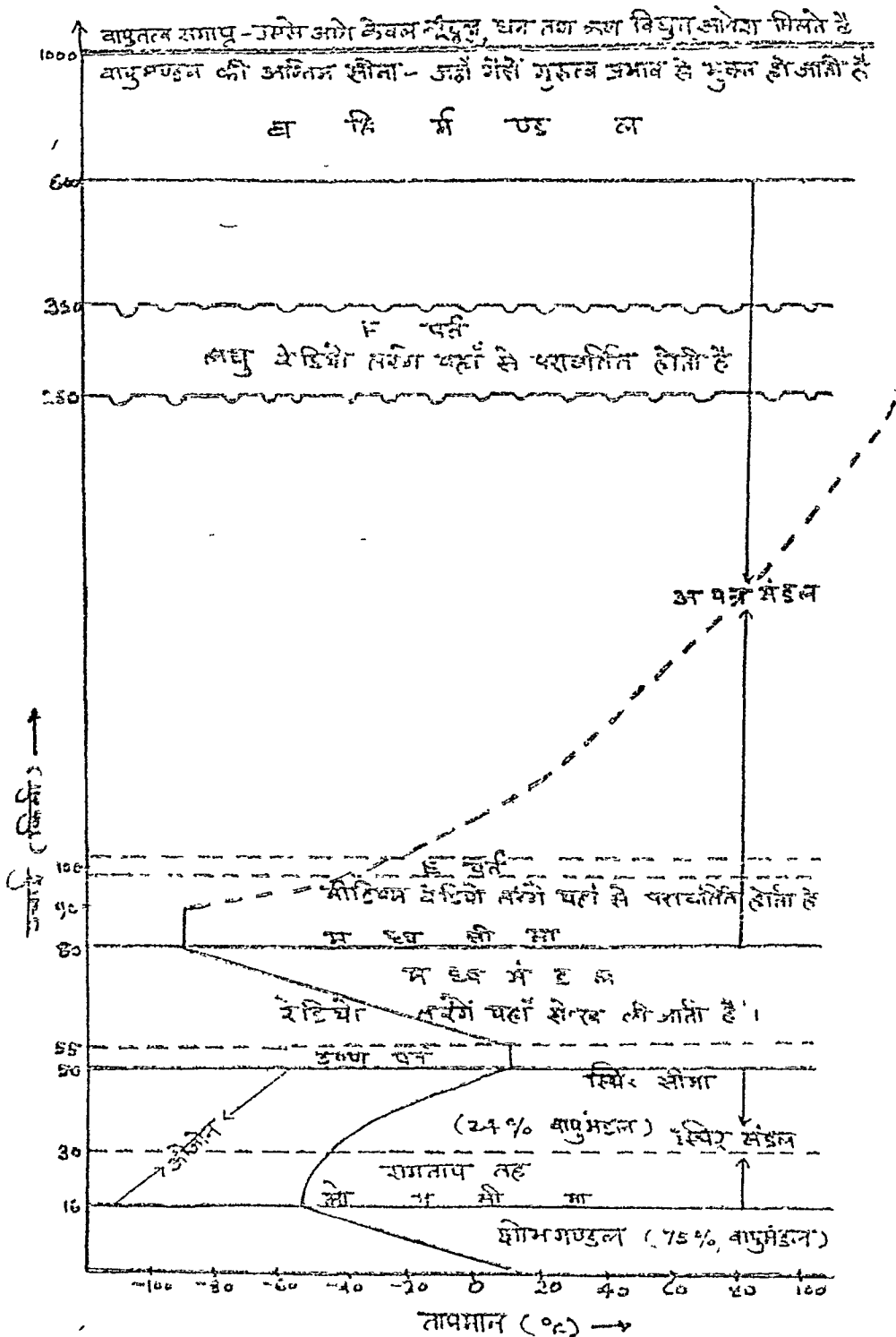
चित्र (1.3)

(1) क्षोभ मण्डल (Troposphere)

वायुमण्डल की सबसे निचली तह क्षोभ मण्डल कहलाती है, जिसमे तापमान सामान्य ह्रास दर से ऊँचाई के साथ घटता जाता है। क्षोभ मण्डल की छत को क्षोभ सीमा (Tropo-pause) कहते है। इसकी ऊँचाई भूमध्य रेखा पर सबसे ज्यादा, लगभग 16 किमी होती है। क्षोभ सीमा की ऊँचाई अक्षांश के साथ-साथ घटती जाती है तथा मध्य अक्षाशो मे 12 और ध्रुव क्षेत्रो 8 किमी के आसपास आ जाती है।

क्षोभ सीमा की ऊँचाई का घटाव हर जगह अविरल नही होता। उष्ण कटिबन्ध और मध्य अक्षाशो के संगम पर उष्ण कटिबन्धीय क्षोभ मण्डल मुड़ कर नीचे आता है (चित्र 1 4) और मध्य क्षोभ मण्डल के रूप मे आगे बढता है। इसी कारण संगम क्षेत्र के आसपास प्राय दो क्षोभ सीमाएँ T_1 और T_2 मिलती है। इसी प्रकार, मध्य और उच्च अक्षाशों के संगम पर भी दुहरी क्षोभ सीमा पायी जाती है।
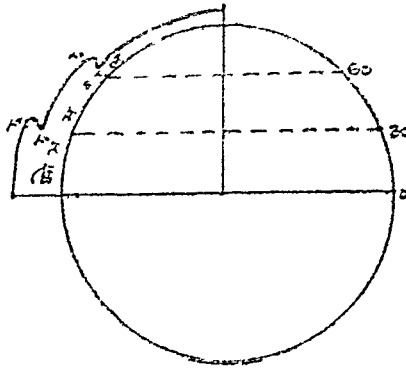
चित्र (1 4)

वायुमण्डल की लगभग 75% मात्रा क्षोभ मण्डल मे सीमित है। मौसम की घटनाएँ सामान्यत इसी तह मे ही उत्पन्न होती है। वास्तव मे क्षोभ तल से उठने वाली संवाहनिक वायुधाराएँ (Convective air currents) क्षोभ सीमा पार नही कर पाती, जिससे पृथ्वी की नमी क्षोभ मण्डल से बाहर नही जा पाती। नमी ही मौसम-घटनाओं का मूल कारण है।

क्षोभ सीमा का तापमान सबसे कम भूमध्य रेखा पर होता है, क्योंकि यहाँ उसकी ऊँचाई सर्वाधिक है। इसका औसत तापमान मध्य अक्षाशो पर लगभग -55^0C होता है।

अक्षाशो के अतिरिक्त, क्षोभ सीमा की ऊँचाई ऋतुओ के अनुसार भी बदलती है। गर्मियो मे यह सीमा अधिक ऊपर एव सर्दियो मे नीचे आ जाती है।

(2) स्थिर मण्डल (Stratosphere)

क्षोभ सीमा के ऊपर तापमान, करीब 30 किमी की ऊँचाई तक या तो अपरिवर्तित रहता है या बहुत धीरे-धीरे बढता जाता है। यह भाग समताप तह (Isother-

mal-Layer) कहलाती है। इसके बाद तापमान तेजी से बढ़ता है। इस वृद्धि की सीमा 50 किमी है, जिसे **स्थिर सीमा** (Strato-pause) कहते हैं। क्षोभ सीमा और स्थिर सीमा के बीच का वायुमण्डल **स्थिर-मण्डल** के नाम से जाना जाता है। कुल हवा का 24% भाग इस मण्डल मे वर्तमान है और शेष 1% इससे ऊपर।

यह नाम सभवत. इसलिए दिया गया कि सवाहनिक धाराओ तथा नमी के अभाव मे यह भाग मौसम रहित और स्थिर (stable) तहो से बना होता है। वायु-प्रवाह विभिन्न तहों मे क्षैतिज होता है।

समताप तह उच्च अक्षांशो मे ही अधिक विकसित होती है। निम्न अक्षांशो में तापमान क्षोभ सीमा के बाद ही ऊँचाई के साथ बढने लगता है। यह अतिरिक्त वृद्धि उस अन्तर को लगभग पूरा कर लेती है, जो उच्च और निम्न अक्षांशो की क्षोभ सीमा के तापमानो मे होता है। इसी कारण, सभी अक्षांशो पर स्थिर सीमा के तापमान मे अद्भुत समता पायी जाती है। यह तापमान समुद्रतल के तापमान के लगभग बराबर होता है।

स्थिर मण्डल मे तापमान वृद्धि का कारण ओजोन गैसे है। कुल वायुमण्डलीय ओजोन मुख्यत. 15 से 45 किमी ऊँचाई के बीच सीमित है, जिसकी अधिकतम सान्द्रता 22 किमी के आसपास पायी जाती है। ओजोन मे सूर्य से आती परावैगनी (ultra violet) किरणों को सोखने की अत्यधिक क्षमता है। यही शोषित ताप किरणे स्थिर मण्डल मे उच्च तापमान बनाए रखने मे सहायक होती है।

1 51 वायुमण्डलीय ओज़ोन

ओजोन (O_3) गैस, ऑक्सीजन (O_2) का ही त्रि पारमाणविक (triatomic) रूप है, जो वायुमण्डल मे परावैगनी किरणों द्वारा ऑक्सीजन अणुओ के प्राकाशिक वियोजन (photo dissociation) से निर्मित होता है। इस क्रिया मे O_2 का अणु, नवजात (nascent) ऑक्सीजन (O) के दो परमाणुओ मे टूट जाता है और प्रत्येक परमाणु O_2, से संयोग कर O_3 बना लेता है। यह प्रक्रिया श्रृंखला-रूप में निरन्तर होती रहती है।

वायुमण्डल की कुल ओजोन यदि समुद्रतल की सतह पर उतार दी जाए, तो ओजोन पर्त की ऊँचाई 3 मिलीमीटर होगी। इससे वायुमण्डलीय ओजोन की मात्रा का अनुमान लगाया जा सकता है। 15 से 45 किमी ऊँचाई के भाग को, जिसमे ओज़ोन अधिकता से पायी जाती है, कुछ विद्वान **ओज़ोन मण्डल** (Ozonosphere) कहते हैं। इसी भाग को रासायनिक प्रक्रियाओ के कारण रसायन मण्डल (Chemosphere) भी कहा जाता है।

उत्तरी गोलार्द्ध में किए गए प्रयोगों से प्राप्त निष्कर्ष के अनुसार, ओज़ोन की मात्रा भूमध्य रेखा से अक्षांश के साथ बढती जाती है और 60° उ पर अधिकतम होने के बाद ध्रुव की ओर फिर घटने लगती है। ओज़ोन की मात्रा ऋतुओ के

अनुसार भी परिवर्तनशील है। हर अक्षांश पर यह मात्रा वसन्त ऋतु के प्रारम्भ में अधिकतम और पतझड़ के अन्तिम दिनों (अक्टूबर) में निम्नतम होती है।

इसके अलावा ओज़ोन में दैनिक चलन (Diurnal Variation) भी नोट किया गया है। ऐसा अनुमान है कि यह परिवर्तन पृथ्वी तल पर नित्य प्रति होने वाली मौसम घटनाओं से सबधित है। लेकिन यह सम्बन्ध अभी तक स्पष्ट रूप से ज्ञात नही किया जा सका है।

1 52 स्थिर सीमा के ऊपर लगभग 5 किमी तक, तापमान स्थिर रहता है और फिर घटने लगता है। स्पष्ट है कि 50 से 55 किमी पर्त का तापमान ऊपर-नीचे की तहों की अपेक्षा ज्यादा रहता है। इस पर्त को वायुमण्डल की उष्ण पर्त (Warm Layer) कहते हैं।

(3) मध्य मण्डल (Mesosphere)

उष्ण पर्त के ऊपर 80 किमी की ऊँचाई तक, तापमान निरन्तर घटता जाता है। यह भाग मध्य मण्डल और इसकी छत मध्यसीमा (meso pause) कहलाती है। मध्य सीमा का तापमान–80 से–90°C तक होने का अनुमान है। मध्य मण्डल की पर्तों में यह गुण है कि सूर्य-किरणों की प्रक्रिया से वे रेडियो-तरंगों को सोख लेती है। इसी कारण, दिन में रात की अपेक्षा कम आवृत्तियों (frequencies) पर रेडियो-प्रसारण संभव हो पाता है।

मध्य सीमा के आसपास गर्मियों में कभी-कभी कुछ चमकीले बादल आ जाते हैं। इन्हे निशादीप्त (noctilucent) मेघ कहते है। वास्तव में उल्का पिंडो के टूटने से यहाँ धूल काफी मात्रा में केन्द्रित हो जाती है और धूलकणों के चारों ओर बर्फ के रवे जम कर बादल बन जाते हैं।

(4) आयन-मण्डल (Ionosphere)

मध्य सीमा के ऊपर 500 से 600 किमी ऊँचाई तक, सारा वायुमण्डल पराबैंगनी किरणों की प्रक्रिया से आयनीकृत होता रहता है, जिससे इस भाग में पर्याप्त स्वतन्त्र इलैक्ट्रान पैदा होते रहते हैं। इस भाग को आयन-मण्डल कहते हैं। यों तो आयनीकरण की परिस्थितियां और अधिक ऊँचाई पर पायी जाती हैं, परन्तु 600 किमी के ऊपर, वायुमण्डल इतना विरल हो जाता है कि स्वतन्त्र इलैक्ट्रान का पाया जाना सीमित हो जाता है। अत 600 किमी आयन-मण्डल की सीमा मानी जा सकती है।

आयन-मण्डल में दो मुख्य पर्तें हैं, जहाँ इलैक्ट्रान की सान्द्रता सर्वाधिक होती है।

पहली पर्त E–पर्त है, जो 100 किमी के आसपास स्थित है। दूसरी पर्त, F–पर्त कहलाती है, यह 250 से 350 किमी तक विद्यमान रहती है। F–पर्त दिन में अक्सर F_1 और F_2 नामक दो पर्तों मे टूट जाती है।

E–पर्त सूर्य की रोशनी मे ही अधिक विकसित होती है और मीडियम रेडियो तरंगो को परावर्तित कर देती है। लघु तरंगे (short wave) F–पर्त से परावर्तित होती है।

आयन-मण्डल मे तापमान ऊँचाई के साथ बढता जाता है। पेन्डार्फ (Penndorf) ने E–पर्त का तापमान 77°C और F–पर्त के ऊपरी सतह का तापमान 427°C ज्ञात किया था। लेकिन ये तापमान अक्षाश और समय के साथ अत्यधिक परिवर्तनशील है। एक गणितीय विधि के आधार पर E–पर्त का तापमान 170°C से 230°C तक हो सकता है।

रंग-बिरंग प्रकाश, जो बहुधा उच्च अक्षाशो मे दिखाई देता है, आयन-मण्डल मे ही उत्पन्न होता है। ये प्रकाश पुंज ध्रुवीय प्रकाश या सुमेर ज्योति (aurora) कहलाते है। ध्रुवो पर, जहा 6 महीने की रात होती है, गुलाबी और बैगनी प्रकाश इतना अधिक चमकता है कि उसकी मदद से वहा के निवासी रात्रि मे अपना कार्य किया करते है।

सभवत: पराबैगनी किरणो द्वारा आवेशित कणो के वायु अणुओ से घर्षण के कारण ही यह विद्युत प्रकाश पैदा होता है। कभी-कभी यह प्रकाश 1000 से 1100 किमी की ऊँचाई पर भी देखा गया है, जिससे इतनी ऊँचाई पर वायु कणो के पाये जाने का आभास मिलता है।

(5) बहिर्मण्डल: (Exosphere)

आयन मण्डल से कुछ वायु कण जो आयनीकृत होने से बच जाते है, विसरित होकर आयन मण्डल से ऊपर आ जाते हैं। ये कण 600 से 1000 किमी की ऊँचाई तक पाये जाते है। इनके अलावा, इस भाग मे आयनीकृत आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन तथा हीलियम के कण भी पाये जाते है। हीलियम यहाँ नाइट्रोजन अणुओ पर कास्मिक किरणो की प्रक्रिया से बनती है। गुरुत्वाकर्षण की क्षीणता के कारण ये कण अक्सर शून्य मे खोते रहते है। एक स्तर ऐसा होता है, जिस तक कण गुरुत्व शक्ति से बधे रहते है। यहा कणो का जमाव अपेक्षाकृत ज्यादा होता है और यही हमारे वायुमण्डल की सीमा है।

इस सीमा से ऊपर वायुतत्त्व समाप्त हो जाता है और कणो का चुम्बकीय तत्त्व (धन, ऋण या उदासीन आवेश) ही बाकी रहता है। करीब 2000 किमी की ऊँचाई तक न्यूट्रान (उदासीन आवेश) तथा उसके बाद प्रोटान (धन आवेश) और इलेक्ट्रान (ऋण आवेश) ही पाये जाते है। इसे चुम्बक मण्डल (magneto sphere) कहा जा सकता है। चुम्बक मण्डल का दूसरा सिरा सभवत अन्तर्ग्रहीय (inter planetary) प्रभाव मण्डल मे जाकर मिलता है।

1.60 वायु-प्रदूषण (Air Pollution)

औद्योगिक तथा घने बसे नगरो मे, भूमितल से कुछ मीटर ऊँचाई तक की हवा में कार्बन डाई ऑक्साइड (CO_2), कार्बन मोनो ऑक्साइड (CO), सल्फर डाइ-

ऑक्साइड (SO_2), हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S), नाइट्रोजन के ऑक्साइड, ओज़ोन (O_3), मीथेन (CH_4), तथा सीसे (lead), कार्बन और धूल के कण विचारणीय मात्रा मे पाये जाते है, जिनसे हमारे नित्य प्रति काम मे आने वाली हवा दूषित रहती है।

वायु-प्रदूषण के मुख्य स्रोत ये है

1. मोटर और रेलगाडियो से निकलने वाली फालतू गैसे।
2. औद्योगिक चिमनियो का धुआँ।
3. घरो मे घटिया ईंधन जलाने से उत्पन्न धुआँ।
4. गन्दी नालियाँ और पशुओ के मलमूत्र।
5. तटीय नगरो के लिये समुद्री हवा मे मिले नमक के कण और ज्वालामुखी वाले प्रदेशो के लिए लावे की गैस।

पैट्रोल और डीजल से चलने वाली मोटरगाडियो की फालतू गैस मे CO, CO_2, NO_2 तथा नाइट्रोजन गैस मुख्यत मिलती है। एक लिटर पैट्रोल और डीजल तेल जलने पर क्रमश 9.6 तथा 16 4 किलोग्राम गैस निकलती है। रासायनिक विश्लेषण द्वारा इनमे विभिन्न प्रदूषको का अनुपात इस प्रकार है :

सारिणी 1.3

प्रदूषक	पैट्रोल %	डीजल %
1. कार्बन मोनो ऑक्साइड	4–8	अत्यल्प
2 कार्बन डाइ ऑक्साइड	20–25	25–28
3. सल्फर डाइ ऑक्साइड	0 1	0.2
4. नाइट्रोजन	60–70	60–70
5. नाइट्रोजन पर ऑक्साइड	2–5	1–2
6. सीसे तथा कार्बन के कण	अत्यल्प	अत्यल्प

बडी गाडियो, बसो तथा रेल गाडियो की अपेक्षा मोटर कारो से प्रदूषको की उत्पत्ति बहुत अधिक होती है। कार, बड़ी गाडियो की अपेक्षा 300 गुना CO, 10 गुना N_2 और 5 गुना CO_2 पैदा करती है। वायु की निचली तहो मे अब टायरो के छोटे-छोटे कण भी पाये जाने लगे है, जो श्वास के रोग पैदा कर सकते है।

औद्योगिक चिमनियो तथा घटिया कोयला जलाने वाले घरो से उत्पन्न धुएँ मे SO_2, NO_2, H_2S, O_3 तथा सीसे और कार्बन के अधजले कण होते है।

केन्द्रीय स्वास्थ्य और अभियान्त्रिकी की शोध संस्था द्वारा फरवरी-मार्च 1969 मे किए गए प्रयोगो के अनुसार, भारत के तीन प्रमुख नगरों मे इन प्रदूषकों की औसत मात्रा इस प्रकार पाई गई :

सारिणी 1.4

नगर	SO_2 भाग प्रति करोड़	NO_2 भाग प्रति करोड़	H_2S भाग प्रति करोड़	O_3 भाग प्रति करोड़	सीसे, कार्बन और धूल की मात्रा (माइक्रो ग्राम/घन मीटर)
कलकत्ता	·22	·13	·05	·15	527
बम्बई	·38	·09	·18	·06	239
दिल्ली	·16	·11	·03	·09	924

नगर के उन भागों मे जहाँ गन्दी नालियां खुली होती हैं, या जहाँ लोग अधिक मात्रा में पशु पालते हैं, हाइड्रोजन सल्फाइड गैस प्रमुख प्रदूषक बन जाती है।

उत्तरी-पश्चिमी भारत के वायुमण्डल में धूल के कण व्यापक रूप में [illegible] हैं, जो परोक्ष रूप से वहाँ की जलवायु पर असर डालते हैं।

सारिणी (1.4) में दिये गये मात्रा के लगभग बराबर की मात्रा में प्रदूषक तत्त्व दुनिया के अधिकांश बड़े नगरों में विद्यमान हैं। कुछ बड़े [illegible] नगरों में इनकी मात्रा और ज्यादा है।

प्रदूषक तत्त्वों का वायुमण्डल में वितरण, उनके उद्गम स्थल की ऊँचाई, वायुमण्डल की स्थिरता (Stability) तथा वायु-प्रवाह पर निर्भर करता है। एक अनुमान के अनुसार, चिमनी से निकले हुए धुएं की सान्द्रता लगभग 40 मीटर दूर जाने पर सिर्फ 10% रह जाती है।

अतएव, औद्योगिक बस्तियां बसाने से पूर्व वहां की जलवायु का अध्ययन आवश्यक है। चिमनी का मुख, जहां से धुआं निकलता है, आसपास के मकान से [illegible] गुना ऊँचा होना चाहिए और आबादी की बस्ती उस तरफ नहीं होनी चाहिए, जिधर औसत वायु (mean wind) धुएँ को बहा कर ले जाती है।

2

दाब और ऊँचाई

(PRESSURE AND HEIGHT)

2.10 मौसम के मुख्य तत्व (Principal Weather elements)

पृथ्वी की सतह और उस पर स्थित वायुमण्डल एक विशाल प्रयोगशाला है, जिसमे हमे मौसम का अध्ययन करना पड़ता है। इस प्रयोगशाला मे निरन्तर घटित होने वाली मौसम की घटनाएँ, अपनी विशालता और अनियमितता के कारण हमारी नियन्त्रण-क्षमता से बाहर होती है। अत उनकी प्रकृति (nature) की सही जानकारी प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। फिर भी दबाव, गति, वाष्पीकरण और सघनन (Condensation) विकिरण और शीतलन आदि मे लगने वाले भौतिकी (Physics) के नियमो के आधार पर, मौसम की दुरूह प्रणालियो की व्याख्या की जा सकती है। इन नियमो की रोशनी मे मौसम विज्ञान के मुख्य तत्त्वो का परिचय प्राप्त कर लेना आवश्यक है। ये तत्त्व निम्नलिखित है।

(1) दाव (pressure) और ऊंचाई (height)।

(2) तापमान (temperature) और घनत्व (density)।

(3) विकिरण (radiation)।

(4) आर्द्रता (humidity), मेघाच्छन्नता (cloudiness) और वर्षा। (Precipitaion)।

(5) वायु गति

2 20 वायु दाव (Atmospheric-pressure)

पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के कारण ही, वायुमण्डल पृथ्वी पर टिका है। अत वायुमण्डल पृथ्वी की सतह पर भार डालता है। किसी बिन्दु के चारो ओर इकाई क्षेत्रफल पर खडे वायु-स्तम्भ का कुल भार उस बिन्दु का वायुदाव कहलाता है।

यदि बिन्दु कुछ ऊंचाई पर लिया जाए, तो उसके ऊपर खडे वायु-स्तम्भ की ऊँचाई कम होगी; अत उस बिन्दु पर वायु दाव पृथ्वी तल के वायु दाव से कम होगा। जैसे-जैसे हम ऊंचे बढते जाएँगे, वायु दाव कम होता जाएगा। इससे यह स्पष्ट है कि 'वायु दाव ऊँचाई के साथ घटती है।' इस बात का पता सबसे पहले पास्काल (Pascal) नामक वैज्ञानिक ने सन् 1643 मे स्वय पहाड़ियो पर चढ कर लगाया था। चूँकि ऊपर हवा अत्यधिक विरल होने लगती है, अत. वायुदाब ऊँचाई के साथ घाताकीय नियमो से घटता है। यदि पृथ्वी तल पर वायुदाब P हो तो 6 कि मी.

पर दाव $\frac{P}{2}$, 50 कि मी की ऊँचाई पर $\frac{P}{1000}$ और 100 कि. मी की ऊँचाई पर $\frac{P}{10,00,000}$ के लगभग होगा ।

2 21 इकाई (Unit)

वायुदाव की मीट्रिक इकाई डाइन प्रति वर्ग से. मी. है, परन्तु बैरोमीटर मे यह पारद स्तम्भ की उस ऊँचाई (से मी) के रूप मे व्यक्त की जाती है, जो वायु दाव के सतुलन पर बैरोमीटर नली मे खडा होता है । समुद्र तल पर बैरोमीटर की औसत पाठांक 76 से मी होता है ।

अत. समुद्र तल पर औसत वायुदाव $= 76 \times 13\ 6 \times 981 = 1013\ 250$ डाइन/से. मी^{2}

वायुदाव की बडी इकाई 10^6 डाइन/से मी^{2} के बराबर है । यह परिमाण समुद्र तल पर औसत वायुदाव के क्रम (order) का है । भौतिकी मे यह इकाई वायु मण्डल (atmosphere) और मौसम विज्ञान मे बार (bar) कहलाती है ।

अत. 1 वायुमण्डल $= 1$ बार $= 10^6$ डाइन/से. मी^{2}

मौसम विज्ञान की सर्वाधिक प्रचलित इकाई मिलीबार है, जो एक 'बार' के हजारवें भाग के बराबर है । इस प्रकार

1 बार $= 1000$ मिलीबार

और 1 मिलीबार $= 1000$ डाइन/से. मी^{2}

अत औसत समुद्रतलीय वायुदाव $= 1013.25$ मिलीबार

2.22 वायुदाब का माप (Measurement of atmospheric pressure)

वायुदाब मापी दो प्रकार के होते है :

(1) पारद वायुदाब मापी (Mercury Barometer)

फोर्टिन और क्यू प्रकार (Kew pattern) के बैरोमीटर इस श्रेणी के है । दोनों ही, एक मीटर लम्बे शीशे की नली मे पारा भरने के सिद्धान्त पर बने है । फोर्टिन के निचले भाग में चमडे की एक थैली (cistern) होती है, जिसमे स्थित पारे तल को, पाठाक लेने से पहले एक सूचक (pointer) से स्पर्श-करना पडता है क्योंकि पैमाने का शून्य सूचक की नोक से ही आरम्भ होना है । क्यू प्रकार मे पाठाक की सुविधा के लिए थैली सिस्टर्न व्यवस्था को हटा दिया गया है । इस अन्तर का क्यू वायुदाब मापी के पैमाने का अ कीकन (Calibrate) करते समय सामजस्य (adjustment) कर लेते है । क्यू पैमाने का प्रत्येक खाना फोर्टिन पैमाने के खाने मे थोडा संकुचित होता है । संकुचन गुणक (K) का निम्नलिखित मान साधारण गणना से ज्ञात किया जा सकता है ·

$$K = \frac{A}{A + a}$$

जहाँ A, और a क्रमशः सिस्टर्न तथा पारद नली के अनुप्रस्थ काट के क्षेत्रफल है।

अतः क्यू वायुदाब मापी का एक खाना = K. फोर्टिन का एक खाना।

(2) निर्द्रव दाबमापी (एनीरायड बैरोमीटर)

पनारीदार (Corrugated) धातु से बनी डिस्क के आकार के कुछ बक्सों की एक कतार होती है। प्रत्येक बक्स के अन्दर से हवा निकाल दी जाती है। दाब बढ़ने से इन बक्सों में संकुचन होता है तथा दाब घटने से वे फूल जाते हैं। बक्सों की मोटाई में यह परिवर्तन बहुत थोड़ा होता है, जिसे लीवर प्रणाली से आवर्धित कर लिया जाता है। दाब के परिवर्तन से एक निदेशक (प्वाइन्टर) गतिशील हो उठता है, जो एक गोलाकार पैमाने पर घूम कर दाब का माप बतलाता है।
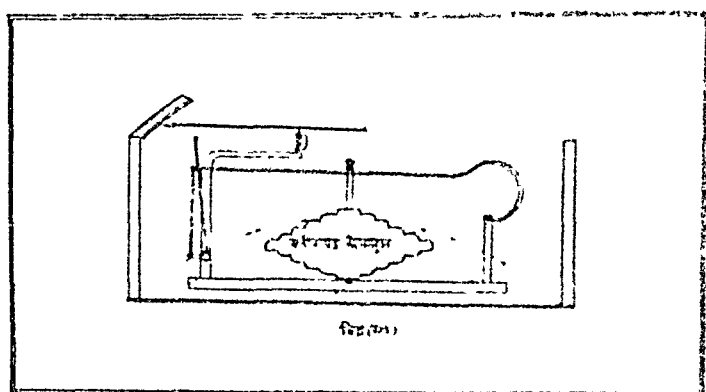
बैरोग्राफ—बैरोग्राफ वह यन्त्र है, जो किसी स्थान पर दाब का मान स्वयमेव, हर क्षण अंकित करता जाता है। यह मूल रूप से निर्द्रव दाबमापी ही होता है, जिसकी लीवर प्रणाली से एक पेन आर्म सम्बन्धित कर दिया जाता है और उस पेन आर्म को एक बेलनाकार क्लाक ड्रम से लिपटे चार्ट पर टिका दिया जाता है। क्लाक ड्रम अपने अक्ष पर घूमता रहता है और 24 घण्टे में एक चक्कर पूरा करता है, इस प्रकार, वह स्वयं ही घड़ी भाँति समय-सूचक बन जाता है। अतः पेन आर्म की कलम ड्रम पर लिपटे चार्ट पर 24 घण्टे लगातार दाब का मान अंकित करती जाती है। यह चार्ट बैरोग्राम (Barogram) कहलाता है।

2.23 मैदानी मौसम वेधशालाओं में अधिकतर क्यू-वायुदाब मापी का प्रयोग होता है, किन्तु पहाड़ी स्थानों में सिस्टर्न-व्यवस्था के कारण फोर्टिन बैरोमीटर ही उपयोगी है क्योंकि दाब कम होने पर नली में अतिरिक्त पारा सिस्टर्न में आ सकता है। फोर्टिन, क्यू प्रकार के मुकाबले ज्यादा सही भी होता है, क्योंकि पारद नली और सिस्टर्न की हर बिन्दु पर समता (यूनिफार्मिटी) की गारन्टी न होने के कारण, A और a का बिल्कुल सही मान ज्ञात करना असम्भव है। अतः संकुचन गुणक का त्रुटिपूर्ण रहना स्वाभाविक है।

2.24 वायुदाब मापी के पाठाक मे निम्नलिखित संशोधन करने के बाद किसी स्थान का सही वायुदाब निकलता है ।

(1) निदेशांक समायोजन (Index-Correction)

पैमाने का शून्य सही न होने से, पैमाने के खाने त्रुटिपूर्ण होने से अथवा नली मे पारे के ऊपर का शून्य-स्थान अशुद्ध होने से, पाठाक गलत हो सकता है । मान लीजिए यह त्रुटि δ के बराबर है । तब यदि दाबमापी का पाठाक P और वास्तविक वायुदाब p हो तो

$$P = p + \frac{2T}{r} + \delta,$$

जहा $\frac{2T}{r}$ पारद तल पर लगने वाला जलीय तनाव (Surface tension) का बल है । T पारे का जलीय तनाव और r नली की त्रिज्या है । व्यजक $\frac{2T}{r} + \delta$ निदेशांक त्रुटि कहलाती है । और

निदेशांक समायोजन = − निदेशाक त्रुटि ।

सामान्यत किसी वायुदाब मापी की निदेशांक त्रुटि, उसके और एक मानक (स्टैन्डर्ड) वायुदाब मापी के पाठाको की तुलना करके ज्ञात की जाती है । मानक के पाठांक से जितना अन्तर होगा, वही दावमापी की निदेशाक त्रुटि होगी । किसी वायुदाब मापी को इस्तेमाल मे लाने से पूर्व उनकी निदेशाक त्रुटि ज्ञात कर लेनी आवश्यक है ।

चित्र (2·2)

(2) तापमान (Temperature) और गुरुत्व (Gravity) समायोजन

तापमान बदलने के साथ, वायुदाब मापी के पैमाने तथा पारे मे प्रसार या सकुचन हो सकता है, जिसका परिमाण भिन्न तापमानो पर अलग-अलग होगा ।

इसी प्रकार, स्थान के साथ गुरुत्व शक्ति बदलते रहने के कारण, विभिन्न स्थानो के वायुदाब मापियो के पाठाको मे एक तुलनात्मक त्रुटि पायी जाती है ।

इसलिये सर्वत्र पाठाको मे एक रूपता स्थापित करने के लिए, विश्व मौसम संघ ने सन् 1957 मे नया दावमापी सम्मति (Convention) घोषित किया । इसके अनुसार, पैमाने और पारे, दोनो के लिए मानक तापमान 0°C और मानक गुरुत्व 980 665 से मी /सैकड^2 मान लिया गया है । गुरुत्व का यह परिमाण लगभग 45 अंश आक्षांश पर मिलता है ।

किसी भी तापमान और गुरुत्व पर लिए गये पाठाक को, मानक तापमान और मानक गुरुत्व पर समायोजित करना पड़ता है । इन्हे क्रमश· तापमान और गुरुत्व समायोजन कहते है ।

2.31 दाब और ऊंचाई में सम्बन्ध—लाप्लास सूत्र

भूमितल से Z ऊँचाई पर मान लीजिए वायुदाव p है।

इस सतह पर dZ ऊँचाई की एक पतली तह पर विचार कीजिए, जिसके ऊपरी तल पर दाव $p-dp$ है।

चित्र (2·4)

$-dp =$ तह dZ मे स्थित वायु का भार

$= g\varrho dZ$ ... (i)

जहा ϱ, तह मे स्थित हवा का घनत्व है।

सार्वलौकिक (यूनीवर्सल) गैस-नियम के अनुसार $p\alpha = RT$, ..(ii)
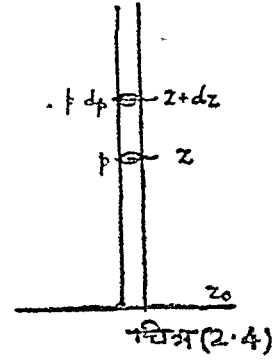
जहा T निरपेक्ष तापमान, R सार्वलौकिक गैस स्थिराक और ϱ वायु का विशिष्ट आयतन (आयतन प्रति इकाई मात्र) है।

$$\therefore \quad \alpha = \frac{\text{आयतन}}{\text{मात्रा}} = \frac{1}{\varrho} \qquad \text{... (iii)}$$

$$\text{(ii) और (iii) से } \varrho = \frac{p}{RT} \qquad \text{....(iv)}$$

ϱ का मान (i) मे रखने से

$$\frac{dp}{p} = -\frac{g}{RT} dZ \qquad \text{....(v)}$$

यदि g का ऊँचाई के प्रति परिवर्तन छोड दिया जाए और T के स्थान पर z_0 और z के बीच का औसत तापमान T′ रख दिया जाए, तो

$\frac{g}{RT}$ अचर (Coustant) हो जाएगा। तब,

$$\int_{p_0}^{p} \frac{dp}{p} = -\frac{g}{RT'} \int_{z_0}^{z} dZ$$

या $l_n \frac{p}{p_0} = -\frac{g}{RT'}, (z - z_0)$, जहाँ p_0, z_0 स्तर पर वायुदाव है,

मध्य समुद्रतल पर $z_0 = 0$

अत मध्य समुद्रतल से दाव तल p की ऊँचाई,

$$Z = \frac{RT'}{g} l_n \frac{p_0}{p} = \frac{2.3026\ RT'}{g} \log \frac{p_0}{p}$$

$$\text{या } z = KT' \log \frac{p_0}{p} \qquad \text{....(vi)}$$

यह लाप्लास सूत्र कहलाता है।

2.32 T′ का मान केल्विन इकाई मे दिया जाना चाहिए। यदि z की इकाई मीटर हो, तो K = 67 4 और यदि z फीट मे ली जाए, तो K = 221 1

धारा 2 31 के समीकरण (v) से

$$dz = -\frac{RT}{gp}\,dp$$

यदि $dp = 1$ मिलीबार हो, तो R और g का मान उपर्युक्त समीकरण मे रखने से

$$dz = 28.3\ \frac{T}{p}\text{ मीटर होगा ।}$$

इस प्रकार, p दाब स्तर पर एक मिलीबार दाबान्तर के समकक्ष ऊँचाई = $28\ 3\ \frac{T}{p}$ मीटर, जहा, T, कैल्विन इकाई मे तापमान और p, मिलीबार मे दाब है ।

2 33 जिस स्थान पर वायु पर्त का औसत तापमान अधिक होता है, वहां पर्त के ऊपरी तल पर सामान्यत उच्च दाब बन जाता है ।

मान लीजिए, भूमितल पर X और Y दो स्थान है, जहाँ वायुदाब समान
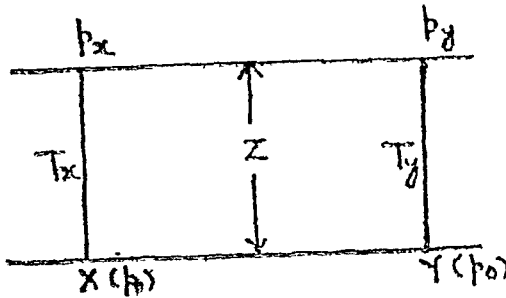
चित्र 2.5

(p_o) है। दोनो स्थानो पर z ऊँचाई की वायु पर्त का औसत तापमान T_x और T_y इस प्रकार है कि

$$T_x > T_y \qquad (i)$$

लाप्लास सूत्र के अनुसार,

$$z = KT_x \log \frac{p_o}{p_x} = KT_y \log \frac{p_o}{p_y} \qquad ...(ii)$$

जहा p_x और p_y क्रमश स्थान X और Y पर पर्त के ऊपरी तलो के दाब हैं।

$$\text{(i) और (ii) से } \log \frac{p_o}{p_x} < \log \frac{p_o}{p_y}$$

$$\text{या}\quad \frac{p_o}{p_x} < \frac{p_o}{p_y} \quad \text{या}\quad p_x > p_y. \qquad ...(iii)$$

2.34 उपर्युक्त व्यजक से स्पष्ट है कि यदि किसी स्थान की वायुपर्त के ऊपरी सतह का दाब अधिक हो, तो उस पर्त का औसत तापमान भी अधिक होगा ।

2.35. उदाहरण

प्रश्न—यदि स्टेशन A पर दाब और तापमान का आवटन निम्नांकित हो, तो 700 मिलीबार स्तर की ऊँचाई ज्ञात कीजिए।

दाब (मिलीबार)	तापमान (^{0}C)
1014 (माध्य समुद्र तल)	16
1000	14
900	10
800	8
700	5

हल—इस प्रश्न मे चार वायु-तहे (1014–1000, 1000–900, 900–800 और 800–700 मिलीबार) दिए गए है। इन तहों की अलग-अलग मोटाई (thickness) ज्ञात करके जोड देने से 700 मिलीबार की सही ऊँचाई ज्ञात हो जाएगी।

पहले तह (1014–1000) का औसत तापमान $T' = \frac{16+14}{2} = 15°C$

$= 288°K$

इस तह की मोटाई, $z_1 = KT' \log \frac{p_o}{p}$

$= 67.4 \times 288 \log \frac{1014}{1000} = 116.5$ मीटर

दूसरे तह (1000–900) का औसत तापमान $= \frac{14+10}{2} = 12°C$

$= 285°K$

∴ इस तह की मोटाई, $z_2 = 67{\cdot}4 \times 285 \times \log \frac{1000}{900}$

$= 879\ 6$ मीटर

इसी प्रकार, $z_3 = 67\ 4 \times 282 \log \frac{900}{800}$

$= 971.2$ मीटर

और $z_4 = 67.4 \times 279\ 5 \times \log \frac{800}{700}$

$= 1092\ 6$ मीटर।

अत 700 मिलीबार स्तर की अभीष्ट ऊँचाई

$$ z = z_1 + z_2 + z_3 + z_4 $$
$$ = 2959.9 \text{ मीटर} $$

2.40 एक स्थान पर दाब का चलन (Varation of pressure at a place)

किसी स्थान पर दाब मे निम्नांकित प्रकार के चलन होते है :—

1 दैनिक चलन (Diurnal Variation)।

2 मौसमी चलन (Seasonal Variation)।

3 अनियमित दाब चलन, जैसे—

गतिशील दाब प्रणालियों के प्रभाव से उत्पन्न चलन।

(1) दैनिक चलन

दाब का दैनिक चलन एक नियमित दोलन है (Oscillation) जो 24 घण्टे मे दो बार निम्नतम, और दो बार उच्चतम, प्रदर्शित करता है।

स्थानीय समय के अनुसार, सुबह 4 बजे और शाम के 4 बजे दाब निम्नतम और सुबह 10 बजे तथा रात के 10 बजे उच्चतम होता है।

चित्र(2.5)
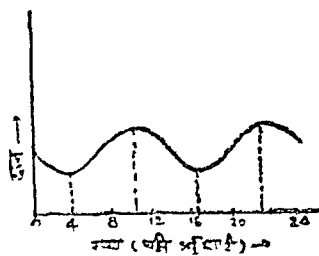
दाब उच्चतम और दाब निम्नतम का अन्तर, अर्थात् दाब चलन का परिसर (रेन्ज) भूमध्य रेखा पर सबसे अधिक होता है और फिर अक्षांशो के साथ लगातार घटता जाता है। ध्रुवीय अक्षांशो पर दैनिक चलन नगण्य हो जाता है।

दैनिक दाब चलन के औसत परिसर के आँकडे इस प्रकार है :

भूमध्य रेखा पर = 5.08 मिलीबार

मध्य अक्षांशो मे = 1.38 मिलीबार

ध्रुवीय क्षेत्रो मे = अत्यल्प

इस अर्द्ध दैनिक विचलन का कारण ताप जनित (thermal) है। 24 घंटो मे तापमान एक बार निम्नतम और एक बार उच्चतम होता है। इनमे से प्रत्येक, वायुमण्डल मे एक दोलन उत्पन्न करता है, जिसका प्राकृतिक दोलन समय 12 घण्टे का है। फलस्वरूप, हर 12 घण्टे मे किसी स्टेशन के वायुमण्डल मे एक बार सकुचन (compression) और एक बार प्रसार (expansion) होता है। सकुचन के समय दाब उच्चतम और प्रसार के समय निम्नतम हो जाता है। इस तरह हर 6 घण्टे के बाद सकुचन और प्रसार की लहरे क्रमश आती रहती है।

(2) मौसमी चलन

ऋतुओ के अनुसार किसी स्थान पर दाब का परिवर्तन, मुख्य रूप से वहा की भौगोलिक अवस्था पर निर्भर करता है, क्योंकि सूर्य की ऊष्मा विभिन्न सतहो को अलग-अलग मात्रा मे गर्म करती है। स्थलीय भाग, गर्मियो मे शीघ्र सूर्य की ऊष्मा

ग्रहण करके, जल की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाता है। सर्दियो मे शीघ्र ऊष्मा खो देने के कारण स्थल भाग, जल की अपेक्षा अधिक ठडा रहता है। इसके कारण निम्नाकित है .

1. सूर्य की किरणे जमीन मे कुछ सेण्टीमीटर से ज्यादा प्रवेश नही कर पाती, जबकि जल मे वे लगभग 10 मीटर की गहराई तक घुसती है।

2. मिट्टी की विशिष्ट ऊष्मा जल की अपेक्षा बहुत कम है।

3. जल में संवाहनिक धाराएँ (convective current) उत्पन्न हो जाती है, जो ऊष्मा को दूर-दूर तक फैला देती है। भूमि पर ताप का स्थानान्तरण सिर्फ संचालन विधि से ही होता है और मिट्टी की सचालकता बहुत कम है।

उपर्युक्त कारणो से गर्मी के दिनों मे स्थल का भाग निम्न दाब का क्षेत्र बन जाता है, जबकि जल का भाग अपेक्षाकृत उच्च दाब का क्षेत्र रहता है। सर्दियो मे जल का भाग अधिक गर्म होने से निम्न दाब क्षेत्र बनता है और स्थल का भाग ठंडा होने के कारण उच्च दाब क्षेत्र। यह कारण दैनिक स्तर पर भी प्रभाव डालता है, जिसके कारण दिन मे स्थल क्षेत्र का दाब जल की अपेक्षा कम और रात में ज्यादा होता है।

2 50 तुंगता मापी (Altimeter)

दाब और ऊँचाई के अन्त. सम्बन्धो के आधार पर दाबमापी के पैमाने को इस प्रकार अंकित किया जा सकता है कि उससे दाब के स्थान पर सीधे ऊँचाई का मान पढ़ा लिया जाए। यह यंत्र **दाब तुंगता मापी** कहलाता है। इसके अलावा, रेडियो ऊँचाई मापी भी होते है, जो मौसम परिस्थितियो पर आधारित न होकर स्वतत्र रूप से ऊँचाई नापते है। अत इनका वर्णन यहां नही किया जा रहा है।

2.51 हम देख चुके है कि दाब और ऊँचाई का सम्बन्ध सर्वथा अचल (invariant) नही है। यह सम्बन्ध भूमितल के दाब और विचाराधीन पर्त के तापमान पर आश्रित है, जो समय और स्थान के अनुसार परिवर्तनशील है। अत इन दो तत्त्वो की किसी सुनिश्चित दशा मे ही तुंगता मापी सही ऊँचाई का माप दे सकता है। जहा पर दाब और तापमान, इन सुनिश्चित दशाओ से भिन्न हो, वहा इस अन्तर के लिए पूर्व निर्धारित त्रुटि सशोधन द्वारा सही ऊँचाई ज्ञात की जा सकती है।

इस आधार पर बने दो प्रकार के दाब तुंगता मापी है।

(1) समताप तुंगता मापी (आइसोथर्मल आल्टीमीटर)

इसका आधार यह परिकल्पना (Hypothesis) है कि वायुमण्डल हर ऊँचाई पर 10^0 का समान तापमान रखता है।

इस प्रकार $T' = 283°K$

अत. किन्ही दो दाब तलो p_0 और p के बीच की ऊँचाई z_1, जो समताप ऊँचाई मापी द्वारा प्रदर्शित होगी, निम्नाकित सूत्र द्वारा बताई जा सकती है :

$$Z_i = K \times 283 \log \frac{p_o}{p} \qquad (i)$$

अब यदि वास्तविक ऊँचाई Z_r हो तो :

$$Z_r = KT' \log \frac{p_o}{p} \qquad (ii)$$

$$\therefore \quad \frac{Z_r}{Z_i} = \frac{T'}{283} = \frac{283+t}{283} = 1 + \frac{t}{283}$$

जहा t, मानक तापमान 10° मे वास्तविक तापमान का विचलन है। अत

$$Z_r = Z_i + \frac{t}{283} Z_i$$

या $$Z_r = Z_i + \frac{t}{300} Z_i \quad \text{(लगभग)} \qquad (iii)$$

इस गणना द्वारा प्रदर्शित (indicated) ऊँचाई से, वास्तविक ऊँचाई ज्ञात कर सकते है। यह एयरी (Airy) का नियम कहलाता है।

उदाहरण—एक उडते हुए वायुयान का तुंगतामापी 200 मीटर की ऊँचाई प्रदर्शित कर रहा है। यदि वहाँ बाहरी हवा का तापमान 14°C और ह्रास दर 8°C प्रति किलोमीटर मानली जाए, तो जहाज की वास्तविक ऊँचाई ज्ञात करो।

तल से 2000 मीटर ऊँचे पर्त का औगत तापमान
(अर्थात् 1000 मीटर ऊँचाई का तापमान)
$T' = 14 \quad 8 \times 1 = 22°C$
$\therefore \quad t = 22-10 = 12°C$

अत सही ऊँचाई $Z_r = 2000 + \frac{12}{300} \times 2000 = 2080$, मीटर

2 52 समताप वायुमण्डल का परिकल्पना और ममताप तुंगना मापी, वास्तविकता मे ज्यादा दूर होने के कारण अब प्रचलन मे नही है।

(2) आई सी ए एन. तुंगता मापी

अन्तर्राष्ट्रीय वायु यातायात आयोग (International Commission of International Air Navigation) ने एक मानक वायुमण्डल निर्धारित किया, जिसे आई सी. ए एन वायुमण्डल कहते, है। इस निर्धारण को बाद मे I C A O. (International Civil Aviation Organisation) ने पुनर्गठित किया, जिसके आधार पर आई सी. ए. एन तुंगता मापी बनाया गया है। यह निर्धारण मध्य अक्षाशो के लिए है, इसके अनुसार

1 वायुमण्डल का रासायनिक गठन सर्वत्र समान है और हवा सूखी है।

2 गुरुत्वजनित त्वरण 'g' का मान समुद्रतल पर = 980 62 से मी./सैकन्ड²

3. औसत समुद्रतल का दाब = 1013.25 मिलीबार।

4. औसत समुद्रतल पर हवा का घनत्व = 1225 ग्राम/मीटर³

5 औसत समुद्रतल पर हवा का तापमान = 15°C

6. औसत समुद्रतल से Z किमी. ऊँचाई पर तापमान = (15–6·5 z)°C
(अर्थात् ह्रास दर = 6.5°C/किमी)। यह नियम सिर्फ 11 किमी ऊँचाई तक चलता है, जहाँ तापमान – 56 5°C हो जाता है। इसके ऊपर यही तापमान स्थिर माना जाता है।

2 53 आई सी ए. एन तुंगता मापी के पैमाने, I C A N वायुमण्डल की परिकल्पना के आधार पर अंकित किए जाते है।

इसमे एक उप पैमाना (Sub scale) है, जिस पर मिलीबार अंकित होता है। जब तुंगतामापी शून्य ऊँचाई दर्शित करता है, तो उप पैमाना यंत्र के स्तर पर वायुदाब बढता है। उपपैमाने को किसी भी दाबस्तर पर स्थित किया जा सकता है। किसी हवाईजहाज के उडान भरते समय उप-पैमाने को इस प्रकार स्थित किया जाना है कि तुंगता मापी उस समय की सही ऊँचाई प्रदर्शित कर सके। वायुयान के स्थान और समय के प्रति बदलने के कारण, यह ऊँचाई दूसरी हवाई पट्टी पर उतरते समय गलत हो सकती है। अत: उतरने के पहले उपपैमाने को इस हवाई पट्टी के वायुदाब के अनुसार फिर से सेट करना पडता है। यदि यान के मार्ग मे दाब घटता जाता है, तो ऊँचाई मापी का पैमाना वास्तविक से अधिक ऊँचाई बढ़ेगा और यदि दाब बढता जाता है तो वास्तविक ऊँचाई से कम। 1 मिलीबार दाबान्तर पर लगभग 8 मीटर ऊँचाई की त्रुटि पायी जाती है।
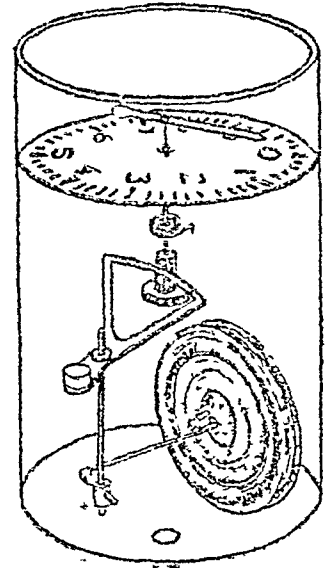
कोल्समैन आल्टीमीटर (तुंगतामापी)

चित्र (27)

तुंगता मापी के मुख्य पैमाने में साधारणत. तीन सुईयाँ होती हैं। पैमाने के दो अंको के बीच 5 छोटे खाने होते हैं और हर खाना 20 फुट के बराबर होता है। सबसे लम्बी सुई फोर्ट के सैंकडे/दहाई और इकाई मे पढ़ती है। मझली और छोटी सुईयाँ क्रमश हजार और दस हजार फीट की इकाईयो मे पढती हैं।

2 54 एयरी के नियम से स्पष्ट है कि वायुदाब परिवर्तन के अलावा तापमान बदलने से भी तुंगता मापी के पाठांको मे संशोधन की आवश्यकता आ जाएगी। यदि

वास्तविक ऊँचाई Z_r और प्रदर्शित ऊँचाई Z_i हो, तो

$$Z_r = Z_i \left(1 + \frac{\Delta T}{288} \right)$$

जहा ΔT भूमितल तापमान का 15°C से विचलन है। यदि विचलन धनात्मक है, तो वास्तविक ऊँचाई,से प्रदर्शित ऊँचाई से ज्यादा होगी। अत संशोधन जोडना होगा। विपरीत दशा मे सशोधन घटाना चाहिए।

2.60 समकालीन मौसम चार्ट (Synoptic Weather Charts)

मानचित्र पर, जब एक निश्चित समय पर लिये गये विभिन्न स्टेशनो के वायुदाव साथ-साथ अकित करते है, तो तुलनात्मक दृष्टिकोण से उनके स्तर (साधारणत मध्य समुद्रतल) पर अवतरित किये जाने का कारण स्वत स्पष्ट हो जाता है। वायुदाव के अतिरिक्त अन्य मौसम तत्व, जैसे—तापमान, आर्द्रता, बादल, तत्कालीन मौसम विवरण आदि साकेतिक रूप (Symbolic form) मे मानचित्र पर अकित किए जाते हैं। यह मानचित्र समकालीन मौसम चार्ट कहलाता है, जो पूरे मानचित्र पर एक निश्चित समय की मौसम अवस्थाओ का पूरे क्षेत्र पर एक साथ निरूपण करता है।

विश्व मौसम संघ (World Meteorological Organisation) द्वारा नियत किया गया 00, 06, 12 तथा 18 जी एम. टी (ग्रीनविच मीन टाइम) का समय सारे ससार के लिये मुख्य समकालीन घडी (Main Synoptic hour) मानी जाती है। इन घडियो मे लिये गये प्रेक्षणो के आधार पर ससार के हर मौसम केन्द्र मे समकालीन मौसम चार्ट तैयार किये जाते हे। भारतीय मानक समय (I S T) के अनुसार, मुख्य समकालीन घडियो का तुल्याक समय क्रमश $5\frac{1}{2}$, $11\frac{1}{2}$, $17\frac{1}{2}$, और $23\frac{1}{2}$ बजे पडता हे।

इसके अलावा, 03, 09, 15 और 21 जी एम. टी भी समकालीन घडी कहलाती हे। अपनी आवश्यकता के अनुसार मौसम केन्द्र इन घडियो मे भी समकालीन चार्ट तैयार कर सकते हे।

2 या 4 मिलीबार के अन्तर पर खीचे गये समान वायुदाब की रेखाओ द्वारा, मौसम चार्ट का विश्लेपण (analysis) करते है। इन रेखाओ को समदाब रेखाएँ (Isobars) कहते हैं। इन रेखाओ से मानचित्र पर दाब बटन एक नजर मे स्पष्ट हो जाता है।

2.61 दाब प्रणालियां (Pressure Systems)

समकालीन मौसम मानचित्र पर ये समदाब रेखाएँ विभिन्न आकृतियाँ ग्रहण किया करती हैं। प्रत्येक आकृति एक विशेप मौसम तथा वायु-प्रवाह की दशा व्यक्त करती है। चूँकि समदाब रेखाएँ प्रचलित (prevailing) वायु-प्रवाह की दिशा मे ही खीची जाती है, अत किसी स्थान पर वायु दिशा, उस स्थान के समदाब रेखा पर

स्पर्श रेखा द्वारा जानी जा सकती है। कुछ प्रमुख प्रकार के दाव प्रणालियो का सक्षिप्त परिचय नीचे दिया जा रहा है :

(1) सीधी समदाब रेखाएँ (Straight isobars)

सरल रेखा के समानान्तर समदाब रेखाएँ किसी मौसम विशेष की परिचायक न होकर सरल वायु-प्रवाह व्यक्त करती हैं। यदि ये रेखाएँ एक-दूसरे के निकट है, तो वायुगति तीव्र होगी और यदि समदाब रेखाओ के बीच की दूरी अधिक है, तो उस क्षेत्र मे वायुगति हल्की होगी। अध्याय 6 मे इस वात को विस्तार से समझाया गया है।

(2) निम्नदाव (Low pressure)

एक अपेक्षाकृत कम दाव का क्षेत्र, जो लगभग वृत्ताकार समदाव रेखाओ द्वारा घिरा होता है, निम्न दाव कहलाता है (चित्र 2 8)। इस वृत्ताकार परिधि के केन्द्र पर दाव निम्नतम होता है। जैसाकि चित्र मे दिखाया गया है, वायु-प्रवाह वृत्ताकार पथ पर घडी की सुइयो से विपरीत दिशा मे होता है। निम्न दाव जब अधिक गम्भीर (deep) और कई समदाव रेखाओ से घिरा होता है, तो अवदाब (डिप्रेशन) कहलाता है।
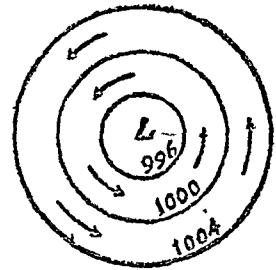
चित्र (2.8)

बादल, वर्षा, वज्रपात, झंझा, तूफान, हिमपात आदि की घटनाएँ निम्नदाव से ही सम्बन्धित है। निम्नदाव जितना ही गम्भीर होगा, मौसम और वायु-प्रवाह उतना ही तीव्र होगा। निम्नतम दाव का सबसे गम्भीर रूप, उष्ण कटिबंधीय चक्रवात (ट्रापिकल साइक्लोन) है, जो सैकडो किलोमीटर व्यास का क्षेत्र घेरता है तथा समुद्र और तटीय प्रदेशों मे भीषण मौसम उत्पन्न करता है।
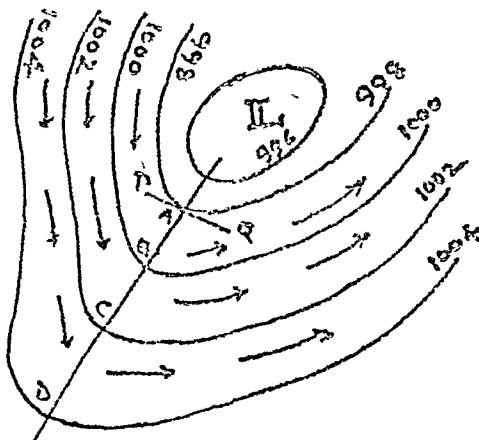
चित्र (2.9)

(3) निम्नदाब की द्रोणिका (Trough of low pressure)

निम्नदाब क्षेत्र के बाहर की उभरती (elongated) समदाब रेखाएँ, प्राय. 'V' की आकृति का क्षेत्र बनाती है, (चित्र 2 9)। बिन्दुओ A, B, C और D पर जहाँ रेखाओ मे अचानक मोड पैदा होता है, दाब अपने दोनो तरफ (जैसे P और Q) की अपेक्षा कम रहता है। यह उभरा क्षेत्र निम्नदाब की द्रोणिका कहलाती है और निम्नतम दाब बिन्दुओ A, B, C और D को मिलाने वाली रेखा द्रोणिका-अक्ष (Axis of trough) कहलाती है।

(4) उच्चदाब या प्रतिचक्रवात (एन्टीसाइक्लोन)

एक अपेक्षाकृत उच्चदाब का क्षेत्र जो वृत्ताकार समदाब रेखाओ से घिरा होता है, उच्चदाब या प्रतिचक्रवात कहलाता है, (चित्र 2 10)। इसमे वृत्ताकार पथ पर हवाएँ घडी की सुइयो की दिशा मे चलती रहती है। दाब, केन्द्र पर उच्चतम होता है।
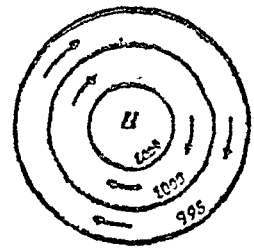
चित्र (2.10)

प्रतिचक्रवात साफ मौसम का प्रतीक होता है। इसमे हवाएँ भी अपेक्षाकृत धीमी चलती है और समदाब रेखाओ के बीच की दूरी निम्नदाब की तुलना मे प्राय अधिक होता है।

(5) दाब कटक (Ridge)

निम्नदाब की द्रोणिका की भाँति उच्चदाब से बाहर को उभरती आकृति दाब कटक कहलाती है। दाब कटक मे बिन्दु A, B, C और D - L पर वायु-प्रवाह का मोड द्रोणिका की भाँति तीखा (Sharp) न होकर प्राय गोलाकार (rounded) होता है। मोड बिन्दुओ A, B और C को मिलाने वाली रेखा दाब कटक की अक्ष कहलाती है।
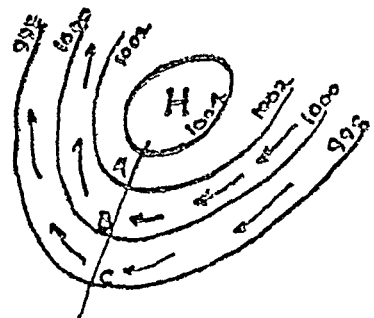
चित्र (2.11)

(6) कॉल (Col)

दो उच्च और दो निम्नदाबो से घिरा क्षेत्र (C) कॉल कहलाता है (चित्र 2 12)। इस क्षेत्र मे दाब लगभग समान रहता है। वायु-प्रवाह धीमा और मौसम प्राय.

अनिश्चित सा रहना है। द्रोणिका और कटक के अक्षो का कटान बिन्दु कौल का केन्द्र कहलाता है।

2·62 समकालीन मौसम चार्टों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि दाब प्रणालियाँ, स्थान-स्थान पर स्वत उत्पन्न होती हैं, एक स्थान से दूसरे स्थान तक गतिशील रहती है, प्रभावित क्षेत्रो में अपनी विशेषता के अनुसार मौसम पैदा करती है, अपनी तीव्रता तथा रूप, समय और स्थान के साथ बदलती रहती है और क्रमश स्वयं समाप्त हो जाती है। दाब प्रणालियों की गति और तीव्रता का अनुमान लगाना ही मौसम पूर्वानुमान की कुंजी है।

कौल
चित्र 2.12

3
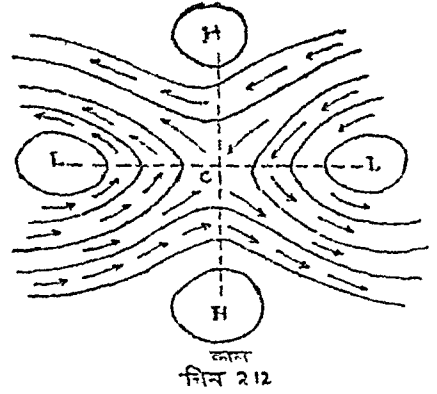
वायुमण्डलीय उष्मा संतुलन और तापमान

(ATMOSPHERIC, HEAT, BALANCE AND TEMPERATURE)

---

3 10 पृथ्वी और वायुमण्डल की ऊर्जाओं का मूलस्रोत सौरविकिरण ही है। जब हम कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस या अन्य ईंधन जलाते है, तो वास्तव मे हम सूर्य द्वारा एकत्र ऊर्जा का ही उपयोग करते है, जो जीव तथा वनस्पति पदार्थों पर सौर किरणो की सैकडो साल की प्रक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। पृथ्वी को सूर्य द्वारा जितनी ऊष्मा प्राप्त होती है, उसकी तुलना मे अन्य नक्षत्रो तथा आकाशीय पिंडो द्वारा प्राप्त विकिरण तथा पृथ्वी के आन्तरिक तहो से आती ऊष्मा का मूल्य नगण्य है।

आकार मे पृथ्वी से लाखो गुना बडा सूर्य, धधकती गैसो का एक गोला है, जिसका अनुमानित तापमान लगभग 6000° से० है। इसके द्वारा विसर्जित ऊष्मा का अधिकांश भाग अन्तरिक्ष मे खो जाता है और बहुत ही अल्प-भाग पृथ्वी के वायुमण्डल तक आ पाता है। यही ऊष्मा मौसम-प्रक्रियाओ के लिये ईंधन का काम करती है। सौर विकिरण पृथ्वी पर कुछ तो सूर्य से सीधे आती है, जिसे विकिरण कहते है तथा कुछ अन्तरिक्ष द्वारा परावर्तित होकर पहुंचती है, जिसे अन्तरिक्ष विकिरण कहते है।

3 11. सूर्य द्वारा ऊष्मा तथा प्रकाश का विकिरण विद्युत चुम्बकीय तरंगों के रूप मे होता है, जो 186000 मील/सेकण्ड की गति से सीधी रेखा मे चलती है। प्रकृति मे समान होते हुए भी विकिरण अलग-अलग तरंग दैर्घ्यों (wave length) के कारण कई प्रकार के होते है। किसी विकिरण की ऊर्जा, उसकी तरंग दैर्घ्य पर ही निर्भर करती है। साधारणत कम तरंग दैर्घ्य वाले विकिरण अधिक ऊर्जा रखते हैं। तरंग

चित्र (3·1)

दैर्घ्यों के अनुसार, विभिन्न प्रकार के विकिरणो का आवटन एक सरल रेखा चित्र द्वारा चित्र (3·1) के अनुसार दिखाया जा सकता है—विद्युत चुम्बकीय तरंगों के तरंग दैर्घ्य की सामान्य इकाई μ (म्यू) ली जाती है; $1\mu = 10^{-4}$ से मी.।

0.3. μ से कम तरंग दैर्ध्य के सौर विकिरण पृथ्वी तक साधारणत. नही पहुँच पाते । परावैंगनी किरणें, अयन मण्डल तथा स्थिर मण्डल मे आयनीकरण प्रक्रिया के लिये प्रयुक्त हो जाती है तथा अतिलघु तरंग व कॉस्मिक किरणें ऊपर से ही अन्यत्र वितरित हो जाती है ।

इस प्रकार सौर, विकिरणो द्वारा हमे प्रकाश तथा ताप किरणे प्राप्त होती हैं । प्रकाश किरणे, जो 0.4 मे 0 7 μ तक की तरग दैर्घ्य रखती है और आँखो से दिखाई पड़ती है, कुल विकिरण का लगभग 45% भाग है । शेप भाग ताप विकिरण का है, जो मुख्यत (लगभग 46%) पराकसनी किरणे तथा अल्पत (लगभग 9%) परावैंगनी किरणो (0 3 से. 0 4 μ) के रूप मे पृथ्वी तल पर पहुँचता है । सूर्य द्वारा प्राप्त सभी विकिरणो को साधारणत एक नाम 'इन्सोलेशन' द्वारा सम्बोधित किया जाता है ।

वायुमण्डल मे प्रविष्ट होने वाले कुल विकिरण का लगभग एक चौथाई भाग पृथ्वी ग्रहण कर पाती है । यह विकिरण ऊष्मा मे परिवर्तित हो जाती है, जिसके कारण पृथ्वी तल मे स्वत विकिरण उत्पन्न करने की क्षमता आ जाती है । कम तापमान के कारण, इस विकिरण मे सौर विकिरणो की अपेक्षा, अधिक तरंग दैर्ध्य होती है । पृथ्वी का विकिरण, भू-विकिरण या दीर्घ तरंग विकिरण कहलाता है ।

3 12 विकिरण के नियम

विकिरण के सम्बन्ध मे प्रतिपादित भौतिकी के अनेक सिद्धान्तो मे से दो सामान्य नियम इस प्रकार हैं

(1) स्टीफन का नियम

किसी वस्तु की प्रति इकाई विकिरण की तीव्रता की दर (E), उसके निरपेक्ष तापमान (T) के चतुर्थ घातांक के समानुपाती होती है ।

अर्थात् $E = \sigma T^4$,

जहाँ σ स्टीफन का स्थिरांक कहलाता है । इसका मान निम्नांकित है :

$\sigma = 82 \times 10^{-12}$ कैलौरी से मी.$^{-2}$ मिनट$^{-1}$ अंश$^{-4}$

$= 5 7 \times 10^{-5}$ अर्ग से मी.$^{-2}$ सैकड$^{-1}$ अंश$^{-4}$

(2) वीन का नियम

किसी वस्तु के तीव्रतम विकिरण का तरंग दैर्ध्य (λ_m), उसके निरपेक्ष तापमान (T) का व्युत्क्रमानुपाती होता है ।

अत. $$\lambda_m = \frac{\omega}{T},$$

जहा ω वीन का स्थिरांक कहलाता है ।

यदि λ_m 'माइक्रान', तथा T 'अंश केल्विन' मे व्यक्त किया जाये, तो

$$\omega = 2940$$

वीन के नियम से स्पष्ट है कि ठण्डी वस्तुएँ, अपेक्षाकृत दीर्घ-तरंगों का विकिरण करेगी । उदाहरण देखिए,

सूर्य के लिए $T = 6000°K$ (लगभग)

$$\therefore \qquad \lambda_m = \frac{2940}{6000} = 0\ 49\mu$$

λ_m का यह मान वर्ण पट के Y (पीला) और G (हरा) विकिरण के बीच पड़ता है ।

पृथ्वी के लिये $T = 288°K$ (लगभग)

$$\therefore \qquad \lambda_m = \frac{2940}{288} = 10.21\mu$$

इस प्रकार, भू-विकिरण की तरंग दैर्घ्य, सौर विकिरण से लगभग 20 गुना है ।

3.20 वायुमण्डल के शिखर पर सौर विकिरण

पृथ्वी की सतह पर पहुँचने वाले सौर विकिरण की मात्रा, वायुमण्डल द्वारा अवशोषित हो जाने के कारण, उस मात्रा से कम होती है, जो वायुमण्डल के शिखर पर पड़ती है । शिखर पर एक वर्ग से मी का क्षेत्र इस प्रकार लीजिये कि उसका तल किरणों के लम्बवत पड़े । इस क्षेत्र को प्रति मिनट जितने कैलोरी सौर ऊष्मा
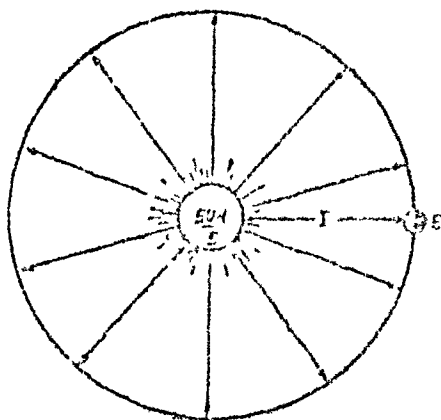
चित्र (3·2)

प्राप्त होती है, उसे सौर-स्थिरांक (सोलर कान्सटेंट) कहते हैं । अनुमानित तापमान और क्षेत्रफल के अनुसार, सूर्य प्रति मिनट $55\ 44 \times 10^{26}$ कैलोरी ऊष्मा अन्तरिक्ष में विकिरण करता है । पृथ्वी और सूर्य की औसत दूरी $D(= 9\ 3 \times 10^7$ मील या $1\ 50 \times 10^{13}$ से मी) के बराबर अर्द्ध व्यास का एक वृत्त सूर्य को केन्द्र मानकर खींचिये । यदि सूर्य की ऊष्मा इस वृत्त की परिधि पर समान रूप से पड़ती, मानली

जाये तो वायुमण्डल के इकाई शिखर पर प्रति मिनट लम्बवत आने वाली ऊष्मा की मात्रा—

$$S = \frac{55\ 44 \times 10^{26}}{4\pi(1\ 5 \times 10^{13})^2}$$

$$= 1\ 94 \text{ कैलोरी से मी}^{-2} \text{ मिनट}^{-1}$$

नोट—अत्याधुनिक गणनाओ के आधार पर, सौर स्थिराक का मान लगभग 2 कैलोरी से मी $^{-2}$ मिनट$^{-1}$ निश्चित किया गया है।

3.21. यदि पृथ्वी का अर्धव्यास $R(=6\ 37 \times 10^8$ से मी) हो, तो $\pi R^2 S$ सौर विकिरण वायुमण्डल का शिखर ग्रहण कर पाता है। यहा वायुमण्डल की ऊँचाई (= 10 कि मी. लगभग) अपेक्षाकृत नगण्य होने से छोडदी गई है।

इस सूत्र के अनुसार, प्रतिदिन $3\ 67 \times 10^{21}$ कैलोरी सौर ऊष्मा वायुमण्डल के शिखर पर पडती है। यह सूर्य द्वारा विसर्जित कुल ऊष्मा का कोई 20 लाखवाँ भाग है।

यदि यह मान लिया जाए कि वायुमण्डल पर पड़ने वाली समस्त ऊष्मा शिखर तल पर समान रूप मे वितरित होती है, तो इकाई क्षेत्र को मिलने वाली ऊष्मा,

$$Q = \frac{\pi R^2 S}{4\pi R^2}$$

$$= \frac{S}{4} = 0\ 5 \text{ कैलोरी/मिनट}$$

$$= 263 \text{ किलो कैलोरी/वर्ष}$$

3 22. पृथ्वी पर पडने वाली सौर विकिरण की मात्रा, दृढ रूप मे स्थिर नही रहती। पृथ्वी और सूर्य के बीच की दूरियो मे परिवर्तन होने के कारण, S का मान किंचित् मात्रा मे परिवर्तनशील है। शीत अयनान्त (22 दिसम्बर) के बाद, जब पृथ्वी की सूर्य से दूरी निम्नतम होती है, S का मान सर्वाधिक(2 01 कैलोरी सेमी$^{-2}$ मिनट$^{-1}$) होता है। ग्रीष्म अयनान्त (21 जून) के बाद, जब पृथ्वी सूर्य से अधिकतम दूरी पर होती है, निम्नतम मान 1.88 कैलोरी $^{-2}$ मिनट$^{-1}$ होता है।

3.23 वायुमण्डल के शिखर के किसी स्थान पर पहुँचने वाली सौर ऊष्मा की वास्तविक मात्रा, स्थान के अक्षांश, वर्ष के समय तथा दिन की वास्तविक लम्बाई पर निर्भर करती है। इसकी नि सूत्र द्वारा की जा सकती है

$$Q_s = \frac{1440}{\pi} S \left(\frac{\bar{d}}{d}\right) \ldots n\ \phi \sin \delta \ ] \text{ कैलोरी सेमी}^{-2}$$

इस सूत्र में

S = सौर स्थिरांक

$\bar{d}$ = पृथ्वी की सूर्य से औसत दूरी

d = पृथ्वी की सूर्य से वास्तविक दूरी

H = दोपहर से सूर्योदय या सूर्यास्त के बीच का घंटा कोण (आवर कोण)

ϕ = स्थान का अक्षांश

δ = किसी दिन के लिए सूर्य का दिक्पात कोण। इसका मान एफीमेरीज के आँकड़ों से ज्ञात किया जा सकता है।

H का मान ϕ तथा δ के पदों में निम्नांकित त्रिकोणमितीय सूत्र द्वारा ज्ञात किया जा सकता है

$$\cos H = -\tan \phi \tan \delta$$

उपर्युक्त सूत्रों द्वारा विभिन्न अक्षांशों पर 20 मार्च, 21 जून, 22 सितम्बर तथा 21 दिसम्बर के लिए शिखर पर आपतित सौर विकिरण की गणना (पेटर्सन-इलिमेंटरी मेटेरोलोजी) की गई है। यदि 20 मार्च को विषुवत् रेखा पर आपतित विकिरण को इकाई मान लिया जाए, तो ये मान इस प्रकार होंगे -

सारणी 3-1

दिन/अक्षांश	0	20 उ	40 उ	60 उ	90 उ
20 मार्च	1.000	0.940	0.766	0.500	0.000
21 जून	0.882	1.014	1.107	1.093	1.201
22 सितम्बर	0.987	0.927	0.956	0.494	0.000
21 दिसम्बर	0.941	0.676	0.307	0.056	0.000

3.30 वायुमण्डल का प्रभाव

जितना सौर विकिरण वायुमण्डल के शिखर पर पड़ता है, वह समस्त का समस्त वायुमण्डल को पार कर पृथ्वी की सतह तक नहीं पहुँच पाता। इसका कुछ भाग बादलों, धूल के कणों तथा वायु अणुओं से टकरा कर, अन्तरिक्ष को वापस परावर्तित या प्रकीर्ण (scattered) हो जाता है। यह भाग कुल आपाती किरण का लगभग 32% है। धरती से टकरा कर भी, सौर विकिरण का लगभग 2% इसी प्रकार से परावर्तित होकर लौट जाता है। ये परावर्तित विकिरण पृथ्वी या वायुमण्डल को कोई ऊष्मा प्रदान नहीं करते।

परावर्तित तथा कुल आपाती विकिरणों का अनुपात धवलता या ऐलबिडो कहलाता है। ऐलबिडो विभिन्न प्रकार के सतहों के लिए अलग-अलग होते हैं। उदाहरण के लिए, बादलों का ऐलबिडो सामान्य भूमि के ऐलबिडो से 10 गुना से भी अधिक होता है। सारी पृथ्वी तथा वायुमण्डल का सम्मिलित ऐलबिडो लगभग 34% लिया जा सकता है। एडिंग्टन (1919) की गणना के अनुसार, इस ऐलबिडो का मान 43% है, किन्तु यह संख्या स्थिर नहीं है। मेघाच्छन्नता, और ऋतुओं के अनुसार,

वनस्पति व तुषार क्षेत्रों के परिवर्तन के साथ अलविदो के मान में भारी परिवर्तन हुआ करता है। कुछ विभिन्न सतहों के औसत अलविदो इस प्रकार हैं :

सतह —	अलविदो (%)
(i) घासरहित मैदान	— 7–20
(ii) रेगिस्तान	—24–28
(iii) घासयुक्त मैदान	—14–37
(iv) हरे-भरे वन	— 3–10
(v) तुषार या हिम	—46–86
(vi) नगर	—14–18 %
(vii) शान्त जल-सतह	—50% जब किरणें 15° के कोण पर गिरती है। – 23% जब आपाती किरणों का कोण 60° से अधिक हो।

विभिन्न प्रकार के बादलों से पूर्ण तथा आच्छन्न दशा के लिए अलविदो का मान इस प्रकार है :

मेघ प्रकार	अलविदो (%)
स्ट्रेटो कुमुलास	56–81
आल्टोस्ट्रेटस	39–56
घना स्ट्रेटस	78
सिरोस्ट्रेटस	44–50

3.31 परावर्तन और प्रकीर्णन के अतिरिक्त आपाती विकिरण का एक भाग (लगभग 19%) वायुमण्डलीय हवा, मुख्यत ओजोन, कार्बन डाई-ऑक्साइड तथा जलवाष्प द्वारा शोषित कर लिया जाता है। शोषित विकिरण खो नहीं जाता, बल्कि वायुमण्डल को ऊष्मा प्रदान कर, उसका तापमान बढ़ाने मे सहायक होता है।

3.40 पृथ्वी का ऊष्मा-सन्तुलन

कुल आपाती सौर विकिरण का कुछ भाग वायुमण्डल तथा पृथ्वी द्वारा परावर्तित व प्रकीर्ण हो जाता है तथा कुछ भाग वायुमण्डल द्वारा अवशोषित होता है। शेष भाग पृथ्वी तल द्वारा शोषित होता है। यदि पृथ्वी तल को उतनी ऊष्मा की प्राप्ति बिना खर्च निरन्तर होती रहती, तो उसका तापमान लगभग 400°C प्रतिवर्ष बढ़ता, जिससे सारी पृथ्वी तुरन्त जलकर भस्म हो गई होती। किन्तु ऐसा नहीं है। उतनी ऊष्मा शोषित करने के बाद पृथ्वी मे, स्वत विकिरण करने की क्षमता आ जाती है। भू-विकिरण, सौर विकिरण की अपेक्षा दीर्घ तरंगों के रूप मे होता है।

वायुमण्डल की ऊष्मा का मुख्य स्रोत भू-विकिरण होता है, जिसका अधिकांश भाग वायुमण्डल द्वारा आत्मसात कर लिया जाता है; जबकि सौर विकिरण का एक अल्प भाग ही वायुमण्डल शोषित कर पाता है। यही कारण है कि वायुमण्डल का तापमान ऊँचाई के साथ सामान्यत घटता जाता है।

औसत रूप मे पृथ्वी का ऊष्मा बजट निम्नांकित आंकड़ों द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है

मान लीजिए वायुमण्डल के शिखर पर कुल आपाती विकिरण = 100 इकाई

(1) बादलो द्वारा परावर्तन = 23 इकाई

(2) पृथ्वी तल से परावर्तन = 7 इकाई

(शीशा और प्रसरित या उपयुक्त)

(3) वायु मण्डल द्वारा प्रसारित परावर्तन तथा

प्रकीर्णन = 9 6 इकाई

वापस अन्तरिक्ष को कुल परावर्तन व प्रकीर्णन = 36 इकाई

(1) वायुमण्डल द्वारा शोषण = 17 इकाई

(2) बादलो तथा वायुमण्डल से प्रसारित और प्रकीर्ण विकिरण का पृथ्वी द्वारा अवशोषण = 16 इकाई

(3) सीधे विकिरण का पृथ्वी द्वारा अवशोषण = 31 इकाई

वायुमण्डल और पृथ्वी का तापमान

बढाने वाली कुल सौर विकिरण = 64 इकाई

3.41 पृथ्वी द्वारा शोषित प्रकीर्ण विकिरण का स्पष्टीकरण

सौर विकिरण, जो बादलो तथा वायु कणो से प्रकीर्ण या प्रसरित हो जाता है, पूरा का पूरा अन्तरिक्ष को वापस नही जाता। उसका एक बड़ा भाग पृथ्वी पर भी आता है और शोषित कर लिया जाता है। जैसाकि उपर्युक्त आंकड़ों से स्पष्ट है, इसे सीधे विकिरण की अपेक्षा नगण्य नही किया जा सकता। विशेषकर, जब सूर्य निम्न ऊँचाइयों पर चमकता है, तो यह प्रसरित आकाशीय विकिरण (diffused sky radiation), सीधे विकिरण की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है। मेघाच्छन्न आकाश के दिनों मे भी प्रसरित विकिरण, सीधे विकिरण से अधिक शक्तिशाली बन जाता है।

3.42. पृथ्वी तल के दीर्घ तरग विकिरण के अतिरिक्त बादलो की तहे तथा वायुमण्डल के कण भी अन्तरिक्ष को ऊष्मा का विकिरण करते है। कुल आपतित तथा बहिर्गामी विकिरण एक अवधि के अन्दर ठीक-ठीक एक दूसरे को सन्तुलित कर देते है। इसी सन्तुलन के कारण, पृथ्वी बहुत गर्म या बहुत ठंडी होने से बची रहती है।

पृथ्वी तल पर वास्तव मे निम्न अक्षाशो मे सौर ऊष्मा का अधिक्य तथा उच्च अक्षाशो मे कमी रहती है। इसका कारण यह है कि निम्न अक्षाशो में प्राप्ति की मात्रा ह्रास से अधिक होती है, जबकि उच्च अक्षाशो (38 अश से परे) मे प्राप्ति, ह्रास से कम हो जाती है। कुल वार्षिक सौर विकिरण, विषुवत रेखा पर अधिकतम पड़ता है जो अक्षाशो के साथ घटता जाता है। उष्ण कटिबन्ध मे यह ह्रास नगण्य होता है, लेकिन उच्च अक्षाशो मे विकिरण का ह्रास तेजी से बढता है और ध्रुवो को, विषुवत रेखीय सौर विकिरण का लगभग चौथाई भाग ही मिल पाता है।

बाहर जाने वाली भू-विकिरण का अक्षाशीय चलन अपेक्षाकृत कम रहता है। चित्र (3 1) से स्पष्ट है कि लगभग 38 अश अक्षाश से नीचे भू-विकिरण की मात्रा,

और विकिरण से कम होती है। अत इन क्षेत्रो मे ऊष्मा का लाभ होता है। इससे उच्च अक्षाशो मे सौर विकिरण का वक्र, भू-विकिरण रेखा से नीचे आ जाता है और इनमेवार्षिक ऊष्मा की लगभग उतनी ही हानि होती है जितनी कि निम्न अक्षांशो मे लाभ। इस दशा मे, निम्न अक्षाशो को गर्म और उच्च अक्षाशो को क्रमशः गर्म और ठडा होते जाना चाहिए। किन्तु क्षैतिज वायु-प्रवाह तथा महासागरीय धाराओ द्वारा, अतिरिक्त ऊष्मा को उच्च अक्षाशों मे स्थानान्तरित किए जाने के कारण, पृथ्वी तल पर ऊष्मा का वार्षिक सन्तुलन स्थापित हो जाता है। क्षैतिज ऊष्मा का स्थानान्तरण दो रूपो मे होता है·

1. गुप्त ऊष्मा

जलवाष्प मे निहित गुप्त उष्मा उसके प्रवाह के साथ स्थानान्तरित होती रहती है। जल वाष्प के सघनित होने पर यह उष्मा प्रगट हो जाती है।

2. संवेद ऊष्मा

उष्ण वायु राशियों का प्रवाह।

ऊष्मा स्थानान्तरण की तीव्रता अक्षांशो तथा समय के अनुसार परिवर्तनशील रहती है। दोनो गोलार्द्धो मे ही 35 से 45° अक्षाशो के बीच के क्षेत्र मे सबसे अधिक ऊष्मा-स्थानान्तरण होता है।

ऊष्मा प्रवाह की तीव्रता, मेरिडियानल ताप-प्रवणता की समानुपाती है, अतः शीत गोलार्द्धो मे वायु प्रवाह अधिक शक्तिशाली होता है।

3.43 ऊष्मा सन्तुलन

पृथ्वी और वायुमण्डल का ऊष्मा सन्तुलन सक्षिप्त रूप से चित्र (3.3) द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। ये आँकड़े बुड्को व अन्य द्वारा तैयार किये गए है। सरलता के लिए, मान लिया जाए कि कुल अपतित सौर विकिरण 100 इकाई है। भू-विकिरण को यदि 15°C तापमान पर कृष्णिका (black body) विकिरण के बराबर मान लिया जाए, तो यह 98 इकाइयो के तुल्य होता है। किन्तु इसका यह तात्पर्य नही कि पृथ्वी तल, प्राप्त ऊष्मा से कम विकिरण करता है। चित्र मे दिए गये आँकडे पूर्ण सन्तुलन स्थापित करते है।

$$100 \text{ इकाई} = 0.5 \text{ कैलोरी सेमी}^{-2} \text{ मिनिट}^{-1}$$
$$= 263 \text{ किलो कैलोरी सेमी}^{-2} \text{ वर्ष}^{-1}$$

भू-विकिरण की 98 इकाइयो मे से 91, वायुमण्डल द्वारा शोषित कर ली जाती है तथा शेष 7 इकाई उन तरग दैर्घ्यों के रूप मे वायुमण्डल मे खो जाती है, जिनका शोषण नही होता। 78 इकाई क्षोभ मण्डल मे पुन विकिरण के रूप मे पृथ्वी को लौट आती है तथा 57 इकाई अन्तरिक्ष मे चली जाती है। पृथ्वी से निकली ऊष्मा की 22 इकाई वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा के रूप मे तथा 5 इकाई सवेद ऊष्मा के रूप मे वायुमण्डल को प्राप्त होती है।

चित्र (33)
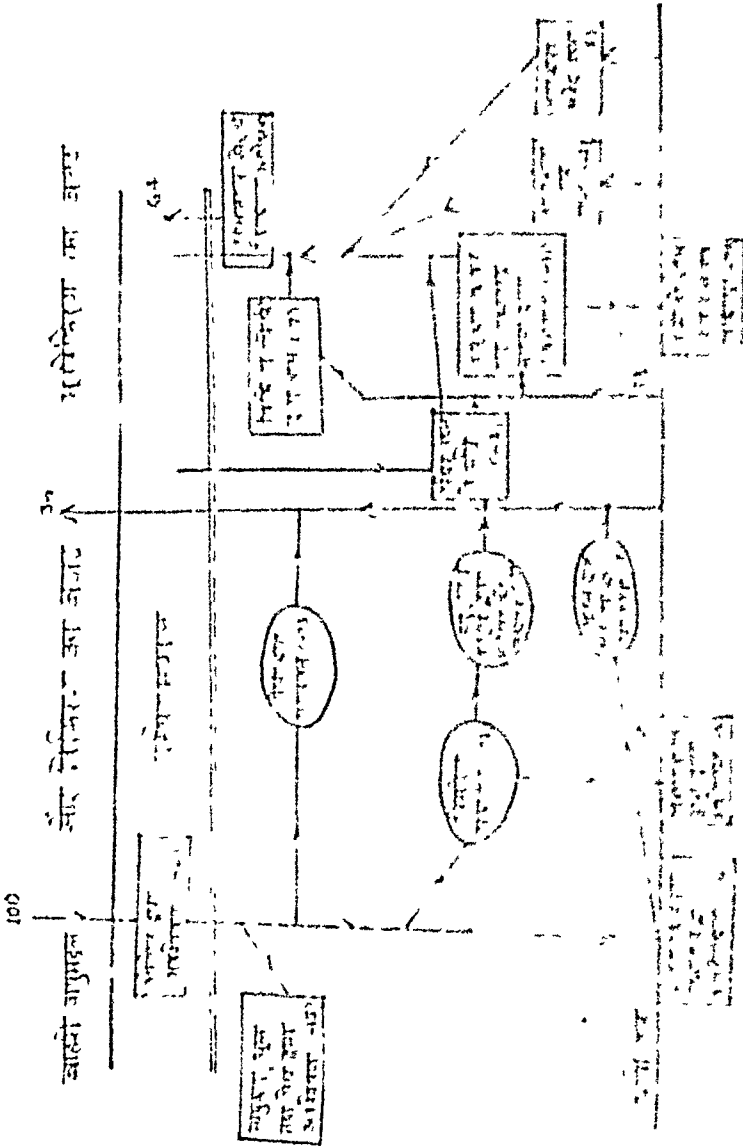
इस प्रकार, 100 इकाई आपतित लघुतरंग विकिरण, 36 इकाई लघु तथा 64 इकाई दीर्घ तरंगो के रूप मे अन्तरिक्ष को वापस चली जाती है। बजट-सन्तुलन के आँकड़े इस प्रकार दिए जा सकते है—

क्षोभ मण्डल

प्राप्ति (इकाई)	ह्रास (इकाई)
लघु तरंगों से—15	अन्तरिक्ष को—57
दीर्घ तरंगो से—91	पृथ्वी तल को
स्थिर मण्डल से—2	वापसी विकिरण—78
सवहन से—22	
संचालन मे—5	
योग · 135	योग . 135

पृथ्वी तल

प्राप्ति (इकाई)	ह्रास (इकाई)
लघु तरंगो से—47	वायुमण्डल को दीर्घ तरगो मे—98
दीर्घ तरंगो मे—78	वायुमण्डल को संवहन से—22
	वायुमण्डल को संचालन से—5
योग : 125	योग 125

3.50 सौर विकिरण का चलन

पृथ्वी तल के किसी स्थान पर, किसी दिन अपतित कुल विकिरण, (1) सौर स्थिराक (2) मेघाच्छन्नता व वायु प्रदूषण (3) जमीन का ढाल (4) सूर्योदय से सूर्यास्त के बीच की अवधि, पर निर्भर करता है।

जैसाकि ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है, सौर स्थिराक का मान सूर्य से निकली, ऊष्मा और पृथ्वी व सूर्य के बीच की दूरी पर निर्भर करता है तथा इसमे स्थान और समय के साथ बहुत ही थोडा चलन होता है; अत प्रायोगिक रूप से महत्त्वपूर्ण नही है।

बादल तथा धूल, वाष्प आदि प्रदूपक तत्त्वो की उपस्थिति मे पृथ्वी पर सीधी आने वाली किरणो की मात्रा बहुत कम हो जाती है क्योकि ये तत्त्व स्वत किरणो के शोषण, परावर्तन तथा प्रकीर्णन की क्षमता रखते हैं। उच्च अक्षाशो मे सूर्य की कोणिक ऊँचाई कम होने से, किरणो को तिर्यक रूप से वायुमण्डल मे अपेक्षाकृत अधिक दूरी तय करनी पडती है। अत. बादल तथा प्रदूषक तत्त्वो द्वारा सीधे विकिरण का ह्रास उच्च अक्षाशो मे अधिक होता है। सर्दियो मे सूर्य की ऊँचाई और कम होने के कारण यह प्रभाव और महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

स्थानीय दोपहर को, जब सूर्य का उन्नतांश अधिकतम होता है, सबसे अधिक विकिरण प्राप्त होता है। उन्नतांश सुबह और शाम के समय कम होने लगता है। उसी अनुपात मे दोपहर के पहले और बाद मे विकिरण की मात्रा भी घटती जाती है। सूर्य का स्थानीय उन्नतांश ऋतुओ के साथ भी परिवर्तित होता है।

शीशे के गोले द्वारा सूर्य की किरणों को केन्द्रित करते है। सूर्य के स्थानान्तरण के साथ, कार्ड पर जलने की एक रेखा खिचती जाती है। जलन रेखा की लम्बाई सौर-प्रकाश की अवधि के समानुपाती होगी।

मेघाच्छन्नता की अवधि भी जलन रेखाओं के बीच बीच मे खण्डित भाग के आधार पर ज्ञात की जा सकती है।

सौर विकिरण नापने वाला यंत्र पाइर हीलियोमीटर कहलाता है, जो विद्युत ऊष्मा (thermo electric) के सिद्धान्त पर कार्य करता है। इसका विस्तृत विवरण प्रस्तुत पुस्तक के विषय क्षेत्र मे बाहर है।

3.60 तापमान

किसी स्थान पर भूमि तल और उससे संलग्न वायुमण्डल का तापमान आगत सौर विकिरण व बहिर्गत भूविकिरण के अन्तर, क्षैतिज वायु प्रवाह तथा सतह की प्रकृति पर निर्भर करता है।

स्थानीय दोपहर को, जब सूर्य का उन्नतांश सर्वाधिक होता है, आगत विकिरणो की तीव्रता उच्चतम होती है। उन्नतांश मे अक्षांशीय तथा मौसमी परिवर्तन भी होते है, जैसे ग्रीष्म गोलार्द्ध में उन्नतांश सर्दियो की अपेक्षा अधिक होता है। उन्नतांश ऊष्ण कटिबन्धो मे शेष भागों की अपेक्षा अधिक होता है, क्योंकि सूर्य का वार्षिक स्थानान्तरण कर्क ($23\frac{1}{2}°$ उ) से मकर ($23\frac{1}{2}°$द) रेखा के बीच मे ही होता है। इन अक्षांशो के बीच प्रत्येक स्थान पर सूर्य दो बार सीधा चमककर **वार्षिक सौर विकिरण का दोहरा उच्चतम स्थापित करता है।** उच्च अक्षांशो में उन्नतांश घटता जाता है। तापमान चलन मुख्यत उन्नतांशो के ही समानुपाती होता है। अत अक्षांशो के साथ घटता जाता है।

बहिर्गामी विकिरण पृथ्वी के तापमान के समानुपाती होने के कारण, यद्यपि दिन मे ही अधिक होता है किन्तु इसका शीतलन प्रभाव रात्रि मे ही प्रभावशाली हो पाता है, जब सौर विकिरण अनुपस्थित रहता है। बहिर्गत दीर्घ तरग विकिरण का अधिकांश भाग बादलो व वायुकणो द्वारा शोषित होकर पृथ्वी की ओर पुन विकिरण द्वारा लौट आता है। यह विकिरण निम्न वायु तहों का तापमान बढाने मे सहायक होता है। यही कारण है मेघाच्छन्न रात्रि, साफ आसमान वाली रात्रि से अधिक गर्म होती है। ठंडे प्रदेशो मे वनस्पतियो को आवश्यक ऊष्मा प्रदान करने के लिए चारो ओर से शीशे की दीवारो द्वारा ढक देते हैं, जिसे ग्रीन हाउस कहते है। ये दीवारे लघु तरंगीय सौर विकिरणों को अन्दर जाने देती है, पर बहिर्गत दीर्घ तरंगीय ऊष्मा को बाहर जाने से रोक देती हैं। इस प्रकार वनस्पतियो के विकास के लिए आवश्यक ऊष्मा उपलब्ध हो जाती है। आकाश मे छाए बादल ग्रीन हाउस जैसा प्रभाव ही प्रस्तुत करते है।

प्राप्त ऊष्मा बराबर होने पर भी, विशिष्ट ताप की विभिन्नता के कारण, सतहों के तापमान मे वृद्धि अलग-अलग पायी जाती है। जल का विशिष्ट ताप सर्वाधिक होने के कारण तापमान वृद्धि सबसे कम होती है।

रात्रि को ऊष्मा-ह्रास के समय जल का तापमान ह्रास भी इसी कारण सबसे कम होता है। विशिष्ट ताप के अतिरिक्त, जल का तापमान कम घटने और कम बढने का मुख्य कारण यह भी है कि जल मे किरणे अधिक गहराई तक लगभग 10 मीटर प्रवेश करती है, जिससे ऊष्मा का वितरण अधिक जल राशि मे होना पड़ता है।

3 70 वायु तापमान का माप

मौसम वेधशालाओ मे तापमान-प्रेक्षणो के लिए भूमि तल से लगभग 4 फुट ऊपर की हवा का तापमान मानक रूप से मान लिया गया है। इसके लिए लकडी के एक बक्स मे, जिसे "स्टीवेन्सन स्क्रीन" कहते है,4 तापमापी (थर्मामीटर) रखे जाते है। बक्स लकडी के चार पैरो पर लगभग 4 फुट ऊँचाई पर स्थित किया जाता है। इस बक्स मे इस प्रकार मुडी हुई खिडकियाँ कटी होती है कि थर्मामीटर बाहरी वायु के सम्पर्क मे तो रहते हैं, लेकिन सूर्य की किरणे अन्दर नही जा पाती है। बक्स खोलने पर भी सूर्य की किरणे तापमापियो पर न पडे, इसके लिए उत्तरी गोलार्द्ध की सभी वेधशालाओ मे स्क्रीन का मुँह ठीक उत्तर की ओर रखते है तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे दक्षिण की ओर। स्टीवेन्सन स्क्रीन और इसमे रखे गए ताप-मापियो का विशेष विवरण अध्याय 7 मे दिया गया है।

3.71 चारों तापमापियों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है

(1) उच्चतम तापमापी

यह एक पारद-तापमापी होता है, जो दिन का उच्चतम तापमान बतलाता है। इसकी बनावट बहुत कुछ डॉक्टरी तापमापी से मिलती है। बल्ब के पास नली अन्दर से इस प्रकार सँकरी कर दी जाती है कि तापमान घटने पर सँकरे भाग के बाद वाला पारा नीचे नही आ पाता, जबकि तापमान बढने पर वह आगे बढने के लिए स्वतन्त्र होता है। इस प्रकार, यह दिन का उच्चतम तापमान पढता है।

उच्चतम तापमापी स्क्रीन मे क्षैतिज अवस्था मे इस प्रकार रखा जाता है कि इसका बल्ब दूसरी सिरे मे लगभग 3 मिलीमीटर नीचे रहे। इससे पारद स्तभ के, गुरुत्व के कारण बढ जाने की सम्भावना नही रह जाती।

(2) निम्नतम तापमापी

यह निम्ततम तापमान नापने के काम मे आता है और इसमे पारे की जगह साधारणत' अल्कोहल का प्रयोग किया जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि अल्कोहल का हिमाक पारे से बहुत कम है, अत' यह उन स्थानो पर भी प्रयोग मे लाया जा सकता है, जहाँ तापमान हिमाक से बहुत नीचे पाया जाता है।

यह तापमापी पूर्णत क्षैतिज अवस्था मे रखा जाता है। अल्कोहल के धागे मे काले शीशे का एक सूचक छोड़ दिया जाता है। तापमान घटने पर अल्कोहल का सिरा जलीय तनाव (surface tension) के कारण, सूचक को बल्ब की ओर खीच लाता है, किन्तु तापमान बढ़ने पर अल्कोहल, सूचक और नली के बीच से आगे गुजर

जाता है और सूचक मे कोई गति नही हो पाती । इस प्रकार, सूचक निम्नतम तापमान ही रिकार्ड कर पाता है ।

(3) शुष्क वल्ब तापमापी

यह सामान्यत. सेन्टीग्रेड पैमाने वाला साधारण पारद तापमापी होता है, जिसे स्टीवेन्सन स्क्रीन मे ऊर्ध्वाधर रखते है । यह स्क्रीन के स्तर की वायु का तात्कालिक तापमान पढता है ।

(4) नम-वल्ब तापमापी

वायुमण्डल में जल का वाष्पीकरण करने से वायु का तापमान घटता है क्योंकि वाष्पीकरण के लिए ऊष्मा वायुमण्डल द्वारा ही ग्रहण की जाती है । वायु-मण्डल मे जल को वाष्पीकृत करने से जितना निम्नतम तापमान प्राप्त किया जा सकता है, उसे **नम-वल्ब तापमान** कहते है । यह तापमान इस बात पर निर्भर करता है कि वायुमण्डल की वर्तमान आर्द्रता कितनी है । अत: नम-वल्ब तापमान, आर्द्रता के एक माप के रूप मे व्यक्त किया जा सकता है ।

नम वल्ब तापमान इस तापमापी द्वारा नापा जाता है । नम-वल्ब तापमापी शुष्क वल्ब की ही तरह होता है,किन्तु इसके वल्ब पर एक पतले मस्लिन (एक तरह का कपडा) की पर्त लपेट देते है । मस्लिन को चार सूती मोटे धागो से बांध देते है, और धागो के दूसरे सिरे आसवित (डिस्टिल्ड) जल के बरतन मे डुबो देते है । इसमे धागो के सहारे जल चढ कर मस्लिन से लिपटे वल्ब को नम रखता है । वाष्पीकरण होने पर इस मस्लिन और वल्ब का तापमान गिरता है, क्योंकि भीगे हुए मस्लिन से वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा निकाल ली जाती है । इस प्रकार यह तापमापी नम वल्ब तापमान रिकार्ड करता है ।

3.72 वायु तापमान के लगातार और स्वय मापन के लिए थर्मोग्राफ नामक यन्त्र उपयोग मे लाया जाता है जिसका विवरण अध्याय 7 मे दिया गया है ।

3.73 घास निम्नतम तापमापी

यह तापमापी भूतल के बहुत निकट (कुछ सेन्टीमीटर) का निम्नतम तापमान मापता है । कृषि विज्ञान के लिए यह तापमान बहुत महत्त्वपूर्ण है । बादल रहित रात्रि मे भू-तल का तापमान विकिरण द्वारा बहुत गिर जाता है । भू-तल के आस-पास का निम्नतम तापमान, स्क्रीन स्तर के निम्नतम से साधारणत लगभग 4–5^{0}C कम पाया जाता है ।

यह निम्नतम तापमापी की भांति साधारण अल्कोहल तापमापी ही होता है और खुले आसमान मे Y के आकार की लकडी की खूटियो पर इस प्रकार रखा जाता है कि इसका वल्ब छोटी गई घास के ऊपरी सतह को छूता रहे है । सर्दियो मे जब फसलो को पाला मारने की आशका उत्पन्न हो जाए, तो इस तापमान का प्रेक्षण रखना विशेष महत्त्वपूर्ण हो जाता है ।

3.74 इकाई

मौसम वैज्ञानिक कार्यों के लिए भारत में सेण्टीग्रेड पैमाने को मानक रूप में स्वीकार कर लिया गया है। इस इकाई को इस पैमाने के आविष्कारक के नाम पर सेल्सियस के नाम से भी जाना जाता है, बल्कि अब 'सेण्टीग्रेड' के स्थान पर भारत मौसम विभाग 'सैल्सियस' के प्रयोग को ही अधिक प्रोत्साहन देता है।

फारेनहाइट पैमाना भी कुछ देशों में तापमान मापन के लिए प्रयुक्त किया जाता है, जिसमें हिमांक 32^0F तथा क्वथनांक 212^0F होता है। सेल्सियस (C) और फारेनहाइट (F) का आपसी सम्बन्ध निम्न लिखित समीकरण द्वारा बताया जा सकता है।

$$\frac{C}{5} = \frac{F - 32}{9}$$

3.75 निरपेक्ष इकाई

किसी वस्तु से ऊष्मा निकाल लेने से उसकी आन्तरिक शक्ति कम हो जाती है, जिससे तापमान घट जाता है। लेकिन ऊष्मा निकालने की भी एक सीमा होगी। सैद्धान्तिक रूप से ज्ञात किया गया है कि 273 के तापमान पर सभी वस्तुओं की आन्तरिक शक्ति शून्य हो जाती है और दशा में उसमें किंचित मात्र भी निकाल लेना सम्भव नहीं। इस स्थिति को निरपेक्ष शून्य कहते हैं। निरपेक्ष शून्य से कम तापमान नही पाया जा सकता।

निरपेक्ष शून्य को मूलबिन्दु मानकर, तापमान के लिए जो सेल्सियस पैमाना तैयार किया जा सकता है, उस निरपेक्ष पैमाना या सम्बन्धित वैज्ञानिक के नाम पर केल्विन पैमाना या (K) कहते हैं। स्पष्ट है कि $0^0K = 273^0C$

$$\text{अत} \quad K = 273 + C$$

3.80 दैनिक तापमान—निम्नतम

भूमितल के आसपास का तापमान सूर्योदय के ठीक पहले निम्नतम होता है। इसका कारण यह है कि रात्रि में दीर्घ तरंग विकिरण के रूप में ऊष्मा खोते रहने से, भूमितल का तापमान सूर्योदय तक निरंतर घटता रहता है। सूर्योदय होते ही सौर विकिरण की प्राप्ति के कारण, भू-तल के तापमान से बढ़ने की प्रवृत्ति आ जाती है।

चूँकि हवा ऊष्मा का बहुत ही क्षीण संचालक है, अत भू-तल से केवल कुछ सेण्टीमीटर ऊँची वायु की तह ही भूमितल की ऊष्मा संचालित कर पाती है, यह ऊष्मा भी विकिरण द्वारा खो जाती है। इस प्रकार ग्रास निम्नतम तापमान सूर्योदय के ठीक पहले स्थापित हो जाता है।

3.81 लेकिन स्टीवेन्सन स्क्रीन स्तर का तापमान सूर्योदय के कुछ मिनट बाद निम्नतम हो पाता है। इसका कारण यह है कि क्षीण संचालक होने के कारण, इस स्तर की हवा का तापमान सूर्योदय के समय निचली वायु तहों की अपेक्षा अधिक

होता है। सूर्योदय होने पर समानान्तर किरणें, वायु की स्थिरता भग कर देती है। वायु तहो में बुल-बुले उत्पन्न होकर हलचल उत्पन्न कर देते हैं, जिससे भूमितल से लेकर कुछ ऊँचाई तक की वायुपर्ते एक-दूसरे से घुल मिल जाती है। इस प्रक्रिया से कुछ ऊँचाई तक की वायुपर्तों का तापमान सम हो जाता है। स्पष्ट है कि नीचे की अधिक ठंडी वायु के मिश्रण के कारण, स्क्रीन स्तर की वायु का तापमान कुछ गिर जाता है। इस प्रकार, सूर्योदय के कुछ मिनट बाद तक स्क्रीन का तापमान गिरता रहता है।

3.82 दैनिक तापमान—उच्चतम

किसी स्थान के स्थानीय दोपहर को सूर्य का उन्नतांश अधिकतम होता है और इसी समय, उस स्थान पर सर्वाधिक सौर विकिरण प्राप्त होता है। लेकिन उच्चतम तापमान दोपहर के दो-तीन घण्टे बाद स्थापित होता है। इसका कारण निम्नांकित है।

यद्यपि दोपहर के बाद सूर्य द्वारा प्राप्त ऊष्मा की मात्रा घटनी आरम्भ हो जाती है तथापि यह मात्रा बर्हिगत भू-विकिरण की मात्रा से जबतक अधिक रहती है, पृथ्वी तल को कुछ न कुछ ऊष्मा-लाभ होता रहता है, जिससे तापमान बढ़ते रहना स्वभाविक है। तापमान उच्चतम उस समय हो सकता है, जब आगत सौर विकिरण और बर्हिगत भू-विकिरण एक दुसरे के ठीक-ठीक बराबर हो जाए। यह सन्तुलन दोपहर के दो-तीन घण्टे बाद ही स्थापित हो पाता है। इसके बाद भू-विकिरण-सौर विकिरणों पर भारी पड़ने लगता है तथा तापमान घटना आरम्भ हो जाता है। चित्र (3.5) देखिए।
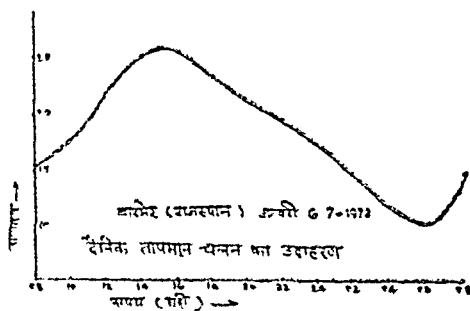
चित्र (3.5)

3.83 दैनिक तापमान चलन

दैनिक निम्नतम और उच्चतम तापमानों के समय के आधार पर, तापमान के दैनिक चलन की रूपरेखा स्पष्ट हो जाती है। यह समय सममित नहीं है, अर्थात्

निम्नतम से उच्चतम तक पहुँचने का समय सूर्योदय से दोहपर के बाद तक (7–8 घण्टे) का हैं जबकि शेष समय (16–17 घण्टे) तापमान घटता रहता हैं।

दैनिक उच्चतम और निम्नतम का अन्तर, दैनिक तापमान परिसर (रेन्ज) कहलाता है। किसी स्थान पर दैनिक तापमान परिसर का मान मेघाच्छन्नता, वायुमण्डल की स्थिरता, तथा पृथ्वी तल की प्रकृति पर मुख्य रूप से निर्भर करता है। इन तत्वों का विशेष विवरण अध्याय 13 मे किया गया है।

3 84 क्षोभमण्डल मे ह्रास दर

जैसाकि पहले कहा जा चुका है, वायुमण्डल मुख्य रूप से पृथ्वी के दीर्घ तरग विकिरण द्वारा ऊष्मा ग्रहण करता है, न कि लघु तरग सौर विकिरण से। अत तापमान क्षोममण्डल मे ऊँचाई के साथ घटता जाता है।

ह्रास दर क्षोममण्डल मे विभिन्न अक्षाशो तथा ऋतुओ मे 5 से 6^0C प्रति कि मी के बीच पायी जाती है, जो क्षोभमण्डल के पास कुछ अधिक तीव्र हो जाती है। विभिन्न ऊँचाईयो और अक्षाशो पर उत्तरी गोलार्द्ध के ह्रास दर के पक्ष वार्पिक औसत तालिका (3.4) मे दिए गए है।

तालिका (3 4)

ह्रास दर (^0C/कि.मी.)

ऊँचाई (मिलीबार)		800–700	700–500	500–300	300 200
स्थिति अक्षाश	देशान्तर				
0 उ	20 पू	6 1	5 7	7.3	7 3
20 उ	20 पू	7.1	5.7	7.6	7.6
20 उ	90 पू	6.5	5.6	7.4	6.2
20 उ	170 पू	3.0	5.7	7.7	7.1
45 उ	20 पू	4.4	5.8	7.5	2.3
45 उ	90 पू	5.0	6.1	7.6	2.6
50 उ	170 पू	5.7	5.7	5.8	0.7
70 उ	20 पू	6.0	5.9	6.6	1.4
70 उ	90 पू	3.0	4.7	6.2	1.5
70 उ	170 पू	3.2	4.9	5.0	0.7

3.85 अत्यधिक ऊँचाइयो पर तापमान की धारणा

कोई गैस बहुत अधिक सख्या मे अणुओ से मिलकर बनी होती हे। ये अणु तीव्र गति से चलते रहते है। गैस को यदि ऊष्मा प्रदान की जाय, तो अणुओ की गति और तीव्र हो जाती है। यदि गेस से कुछ ऊष्मा निकाल ली जाए, तो अणुओ की गति कम हो जाती है।

यदि गैसीय अणुओ का औसत वेग v हो, तो उसका तापमान (T), v^2 के, समानुपाती होता है।

हवा मे रखे गए तापमापी के बल्ब पर वायु अणुओं के सघट्टन मे ऊष्मा उत्पन्न होती है, जिनकी मात्रा अणुओ की गति पर निर्भर करती है। इस तरह बल्ब तापमान ग्रहण करने और नापने मे समर्थ हो पाता है। किन्तु अत्यधिक वायु ऊँचाइयो पर (100 कि.मी. से ऊपर) वायुकण बहुत ही विरल हो जाते है, जिससे अणुओ के बीच की दूरी (मीन फ्री पाथ) बहुत बढ जाती है। समुद्र तल पर यह दूरी 10^{-5} से.मी. के क्रम की होती है, जबकि 50 कि.मी. पर 10^{-2} से.मी., 100 कि.मी. पर 1 से.मी. तथा 400 कि.मी. पर 10^{4} से मी के क्रम की हो जाती है।

अत 100 कि मी. से अधिक ऊँचाई पर यदि साधारण तापमापी रखा जाए, तो अणुओं के बल्व से सघट्टन की सम्भावना बहुत कम रह जाएगी। अत तापमापी वास्तविक वायु का तापमान ग्रहण नही कर सकेगा। इस दशा मे तापमापी का बल्व इतना बड़ा बनाया जाना चाहिए कि कुछ समय मे अणुओ की औसत सख्या सघटित हो जाए ताकि निश्चित समय के बाद बल्व आसपास की हवा का तापमान औसत रूप मे प्राप्त कर सके। अत स्पष्ट है कि इन ऊँचाइयो पर तापमापियो द्वारा तापमान ज्ञात करना प्रायोगिक नहीं है। यहा तापमान की केवल 'गतिज ऊर्जा धारणा' का महत्त्व शेष रह जाता है। 100 कि.मी. से अधिक ऊँचाइयो पर तापमान ज्ञात करने की कुछ सैद्धान्तिक विधियाँ इस प्रकार है·

1. अरोरा वायु दीप्ति का स्पेक्ट्रोस्कोपिक प्रेक्षण
2. अयनमन्डलीय तत्त्वो पर तापमान की निर्भरता
3. वायुमण्डलीय अवयवो मे विकिरण सन्तुलन के सिद्धान्त।

3.90 मौसम और हमारा शरीर

मनुष्य का स्वास्थ्य, शारीरिक शक्ति और आराम पर मौसम एव जलवायु का जितना प्रभाव पड़ता है, उतना वातावरण के अन्य तत्त्वो का नही। यहा तक कि शरीर की बनावट तथा रूप-रंग भी जलवायु की विभिन्नता के अनुसार, अलग-अलग पाए जाते है। मौसम का परिवर्तन हमारी शारीरिक प्रक्रियाओ तथा मानसिक अवस्थाओ को भी प्रभावित करता है, जिसके कारण भोजन, रहन-सहन तथा वस्त्रो मे तदनुसार परिवर्तन स्वाभाविक है। कुछ बीमारियाँ भी मौसमी परिवर्तन के कारण ही उत्पन्न होती हैं।

विभिन्न मौसमी दशाओं का असर हर मनुष्य पर समान नही होता। यह उसके विगत जलवायु के अनुभव, उम्र, शारीरिक अवस्था, खान-पान तथा रहन-सहन पर निर्भर करता है। प्रभाव के दृष्टिकोण से तापमान, धूप और आर्द्रता सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्त्व हैं।

3.91 शारीरिक ऊष्मा का संतुलन

शारीरिक ऊष्मा ह्रास-के स्रोत निम्नांकित है :

1. त्वचा पृष्ठ द्वारा वाष्पीकरण,
2. श्वसन तंत्रो द्वारा वाष्पीकरण,

3. शरीर के सम्पर्क में आने वाली हवा द्वारा ऊष्मा का संवाहनिक ह्रास,
4. विकिरण द्वारा शारीरिक ऊष्मा का ह्रास,
5 शरीर के सम्पर्क में आने वाली वस्तुओं का संचालन द्वारा ऊष्मा ह्रास,
6 फेफड़ो में ली गई ठण्डी हवा।

इन ह्रासों के संतुलन के लिए शरीर, मेटाबोलिक प्रक्रियाओं द्वारा ऊष्मा को प्राप्त करता है जो भोजन तत्वों के पचने में निकलती है। इसके अतिरिक्त सौर तथा भू-विकिरणों के अवशोषण से भी शरीर को ऊष्मा मिलती है। प्राप्ति तथा ह्रास में सामंजस्य स्वतः कुछ इस प्रकार निर्धारित हो जाता है कि शरीर अपना सामान्य तापमान (लगभग 98°F) कायम करने में समर्थ रहता है। काली चमड़ी श्वेत चमड़ी की अपेक्षा डेढ़ गुनी अधिक ऊष्मा शोषित करती है। यही कारण है कि धूप में रहने पर काले लोग, श्वेत लोगों की अपेक्षा त्वचा तापमान में अधिक वृद्धि दर्शाते हैं। **संवेद तापमान**, अर्थात् जो तापमान हमारा शरीर अनुभव करता है, वह थर्मामीटर द्वारा नापे गए, वायु तापमान से भिन्न होता है। संवेद तापमान इस बात पर निर्भर करता है कि शरीर से कितनी ऊष्मा संचालन, संवाहन या विकिरण द्वारा हटाई जा रही है तथा त्वचा की सतह और श्वसन से कितना वाष्पीकरण हो रहा है। दूसरे शब्दों में, वायुगति तथा वायुमण्डलीय आर्द्रता पर संवेद तापमान निर्भर करता है। इन तत्वों के समान होने पर भी संवेद तापमान हर व्यक्ति में अलग-अलग पाया जाता है।

गर्मियों में जब आर्द्रता कम होती है, तो शरीर शीतलता अनुभव करता है क्योंकि वाष्पीकरण ज्यादा होने से संवेद तापमान कम हो जाता है और जब आर्द्रता अधिक हो जाती है, तो और अधिक गर्मी लगने लगती है जिसे हम ऊमस कहते हैं।

लेकिन सर्दियों में अधिक आर्द्रता संवेद तापमान को और घटा देती है क्योंकि इन दिनों शरीर से ऊष्मा का हटाव मुख्य रूप से संचालन और संवाहन द्वारा होता है, न कि वाष्पीकरण से। अधिक आर्द्रता वायुगति से मिलकर संचालन की दर बढ़ा देती है, जिससे शरीर ज्यादा ठंडक महसूस करने लगता है। इस ताप ह्रास को गर्म कपड़ों द्वारा रोक दिया जाता है।

वायुवेग बढ़ने से हर मौसम में संवेद ताप घटता है। किन्तु जब वायु का तापमान शरीर के तापमान से बढ़ जाय, तो वायु वेग शरीर को और गर्म करेगा अर्थात् संवेद ताप बढ़ जाएगा।

व्यक्तिगत कारणों के समावेश के कारण, संवेद तापमान को किसी यन्त्र द्वारा नापना लगभग असम्भव है।

3·92 आनन्ददायक वायुमण्डल—

सामान्य तापमान पर 30 से 70% तक की आर्द्रता साधारणतः आरामदेह होती है। शान्त वायुमण्डल में तापमान और आर्द्रता के संयुक्त प्रभाव पर शारीरिक आराम निर्भर करता है। 20% पर लगभग 85% या इससे अधिक की सापेक्ष

आर्द्रता ऊमस पैदा कर देगी। 25°C पर 60% तथा 30°C पर 44% की आर्द्रता ऊमस उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त है। किन्तु यदि वायुगति तेज होगी, तो अधिक तापमान या आर्द्रता भी, त्वचा से वाष्पीकरण की दर बढाकर ठंडक पैदा कर सकती है, जिससे हम आराम का अनुभव करते है। एक अनुमान के अनुसार, वायुमण्डल की सबसे आरामदेह स्थिति तब होती है, जब तापमान 15 से 25°C के बीच तथा सापेक्ष आर्द्रता 40 से 70% के बीच हो।

हमारे शरीर का तापमान वर्ष भर लगभग स्थिर रहता है। विभिन्न ऋतुओ मे 1°C से भी कम तापमान परिवर्तन रिकार्ड किया जाता है। जब त्वचा का तापमान अधिक होता है, तो पसीना आता है जिसके वाष्पीकरण से त्वचा ठडक प्राप्त करती है और तापमान को बढने से रोकती है। इसके अलावा परिश्रम, भावुकता तथा भय आदि मे भी खून का प्रवाह बढ जाता है, जिससे पसीना छूटने लगता है। भावुकता और भय से निकले पसीने शरीर पर हानिकारक असर डालते है क्योकि इनसे शरीर के किसी भाग से आवश्यक ऊष्मा का ह्रास हो जाता है।

3.93 वस्त्र और मौसम

कपड़ा क्यो पहनते है ? इसके जवाब के कई पहलू है। सांस्कृतिक दृष्टिकोण से कपडे सजावट, फैशन, रीति-रिवाज, प्रतिष्ठा आदि के लिए पहना जाता है। आघात और चोट से बचने के लिए भी कपडे पहने जाते है। जलवायु के दृष्टिकोण से धूप, वर्षा तथा अधिक व कम तापमान से सुरक्षा के लिए कपडे पहनने आवश्यक है। अधिकतर कपडो के प्रकार और डिजाइन का चुनाव जलवायु पर निर्भर करता है।

कपडे और शरीर के बीच फसी हवा, बाहरी वायु की शीतलता के लिए अवरोधक का कार्य करती है और शरीर को ठंड से बचाती है। इस कार्य के लिए हाथ से बुने ढीले ऊनी कपडे ज्यादा उपयुक्त होते हैं। वायुप्रवाह इन फसी हुई वायु-पर्तो को अस्थिर करके उनकी अवरोधता कम कर देते है। कुछ सर्द देशो मे विद्युत प्रवाह युक्त गर्म सूट के प्रयोग किए गए है। लेकिन ये सूट उन लोगो के लिए कारगर नही हो सकेंगे, जो इन्हे पहन कर काम-काज मे लगेंगे।

गर्मियों मे हल्के रग के कपडे उपयुक्त होगे, जो सूर्य की सीधी किरणे भी रोक सकते है और शरीर की ऊष्मा के सुलभ स्थानान्तरण के लिए माध्यम भी बन सकते है। गर्मियो मे कोट, टाई वगैरह पहनना जलवायु के दृष्टिकोण से उपयुक्त नही है।

बरसात के दिनो मे रबर तेलयुक्त धागो के वाटर प्रूफ कपडो मे यह नुकसान है कि वे शरीर की आर्द्रता बाहर नही जाने देते, जिससे ऊमस महसूस होती है।

3.94 मौसम और स्वास्थ्य

मौसम का परिवर्तन स्वास्थ्य पर भी असर डालता है। तापमान की अधिकता से ताप तरंगे और लू उत्पन्न होती हैं, जो मृत्यु का कारण भी बन सकती है। अधिक गर्म मौसम मे शीतल जल से स्नान करना दवा का काम करता है, जो शरीर का तापमान कम रखता है। गर्मियो मे शरीर की मेटाबोलिक प्रक्रियाएं स्वाभाविक रूप से सुस्त हो जाती है, जिनसे पेट की खराबी, अपच आदि का खतरा हो सकता है। इन ऋतुओ मे, गरिष्ठ भोजन विशेष हानिकारक है।

सर्दियो मे शीत तरंगें तथा कम तापमान अनेक बीमारियो, जैसे-आर्थराइटिस, चिलब्लेंस, जोडों मे दर्द, जुकाम आदि का कारण बन सकती हैं।

वायुदाब और आर्द्रता मे ज्यादा परिवर्तन से, मास-पेशियो मे दर्द तथा सांस की तकलीफें हो सकती हैं। हवा ज्यादा खुश्क होने से होठो तथा शरीर के अन्य स्थानों में चमडी फटने लगती है। एलर्जिक तत्व भी आर्द्रता के परिवर्तन से प्रभावकारी हो जाते हैं।

भोजन की मात्रा और स्तर भी जलवायु, विशेषकर तापमान द्वारा प्रभावित होती है। सर्दी के दिनों मे चर्बी तथा कार्बोहाइड्रेट से युक्त अधिक भोजन की आवश्यकता होती है, जो ठंडक मे शरीर के ताप को संतुलित रख सके। विटामिन, खनिज तथा ऊष्मा की कमी से न्यूट्रिशन की बीमारिया उत्पन्न हो जाती है। गर्मियो में अधिक जल, लवण तथा कुछ विटामिन, जैसे-बी, इन बीमारियो से शरीर को सुरक्षित रख सकते हैं।

सौर विकिरण का एक भाग, जिसे इन्फारेड कहा जाता है, हमारा शरीर ग्रहण करता है। इससे शरीर मे ऊष्मा उत्पन्न होती है। अत यह स्वाभाविक है कि हम सर्दियों में खुली धूप तथा गर्मियो मे छाँव मे बैठे। रेगिस्तान अथवा बर्फीली पहाड़ियो द्वारा परावर्तित होकर आती चमकती धूप मे अल्ट्रावायलेट किरणे पाई जाती हैं, जो आंखो मे चकाचौंध करके सरदर्द पैदा कर सकती है। इनके तीव्र प्रभाव से कभी-कभी लोग अन्धे भी हो जाते हैं। अल्ट्रावायलेट किरणो मे डी विटामिन पाई जाती है। किन्तु यह अधिकतर चमडी को जला देने की क्षमता रखती है। यह बात नोट कर लेनी चाहिए कि गोरे लोगो पर ये किरणे काले लोगो की अपेक्षा जल्दी असर डालती है। सफाई, पोषण-(न्यूट्रिशन), शारीरिक क्रियाएँ तथा अन्य कारणों के अलावा बीमारियाँ उत्पन्न होने और फैलने का एक प्रमुख कारण जलवायु भी है। जलवायु हमारे स्वास्थ्य पर दो प्रकार से असर डालता है; —(i) विभिन्न रोगाणुओ का प्रजनन और वृद्धि निर्धारित मौसमी दशाओ मे ही सम्भव हो पाती है। तथा (ii) —मौसम और जलवायु शरीर की बीमारियो के प्रति प्रतिरोधक शक्ति को कम या अधिक करने की क्षमता रखते है।

उष्ण कटिबन्धीय देश उच्च तापमान और नम जलवायु के कारण अनेक रोगाणुओ के पनपने के लिए उपयुक्त है, जो उच्च अक्षांशो मे नही मिलते। लेकिन सर्दियों मे टासिल और गले की खराबियाँ, निमोनिया, इन्फ्लुएन्जा और वसन्त ऋतु मे स्कारलेट बुखार उच्च अक्षाशो मे अधिक प्रचलित है। अधिक ऊंचाइयो वाले क्षेत्रो मे वायुदाब की कमी अनेक श्वास की बीमारियाँ उत्पन्न कर सकती हैं।

स्वस्थ्य जलवायु में ताजी हवा, धूप तथा उपयुक्त तापमान और नमी, शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति बढाती हैं। तपेदिक, रिकेट तथा चर्म रोगो के लिए ताजी हवा और धूप दवा का काम करती है।

लेकिन एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने पर जलवायु का अचानक परिवर्तन, दुर्बल लोगो के लिए शारीरिक और मानसिक—दोनों तरह से हानिकारक हैं। विशेष तौर पर रोगी का स्थानान्तरण क्रमिक जलवायु अन्तर वाले कई स्थानों से होकर इस प्रकार करना चाहिए कि व्यक्ति को जलवायु सहन करने मे कोई शारीरिक या मानसिक दवाव न पडे।

3.95 आर्द्र बल्ब तापमान और आरामदायक वायुमण्डल

चूकि वायुमण्डलीय आर्द्रता और तापमान का संयोग शारीरिक गतिविधियो पर प्रभाव डालता है, अत. आर्द्र बल्ब तापमान, जो इन दोनो तत्वों का सयुक्त माप है, की मात्रा आराम दायक वायुमण्डल की सीमा निर्धारित करने के लिए एक तत्व के रूप मे प्रयुक्त किया जा मकता है। 25°C के लगभग आर्द्र बल्ब तापमान कष्टदायक उमस वातावरण प्रस्तुत कर सकता है जबकि सामान्य वायु तापमान 35°C तक भी सुविधाजनक रह सकता है। ग्रिफिथ टेलर (1916) के अनुसार आर्द्र बल्ब तापमान की अधिकतम सीमा 21°C है, जिसमे वायुमण्डलीय घुटन के विना शारीरिक श्रम किया जा मकता है।

3.96 क्लाइमोग्राफ

किसी स्थान पर वर्ष भर मे आराम देह मौसम की अवधि ज्ञात करने के लिए, जो रेखाचित्र तैयार किया जाता है उसे क्लाइमोगाफ कहते है। इसमे X – अक्ष पर सापेक्ष आर्द्रता (%) तथा Y – अक्ष पर तापमान (°C) के पैमाने अंकित कर दिए जाते हैं। इस पर, दिए गए स्थान की औसत मासिक सापेक्ष आर्द्रता तथा औसत मासिक तापमान (या आर्द्र बल्ब तापमान) हर महीने के लिए अंकित करते है। अंकित बिन्दुओ को मिलाने से एक बन्द घेरे वाला रेखा चित्र तैयार हो जाता है।

उदाहरण के लिए, जयपुर का क्लाइमोग्राफ चित्र (3 5) में दिया गया है। इसमें वर्ष भर में (1) 16 अक्टूबर से 5 नवम्बर तक 21 दिन का समय तथा (2) 21 नवम्बर से 29 नवम्बर तक 9 दिन का समय मौसम की दृष्टिकोण से आराम देह है।

तापमान (°C)→

चित्र (3·5)

4
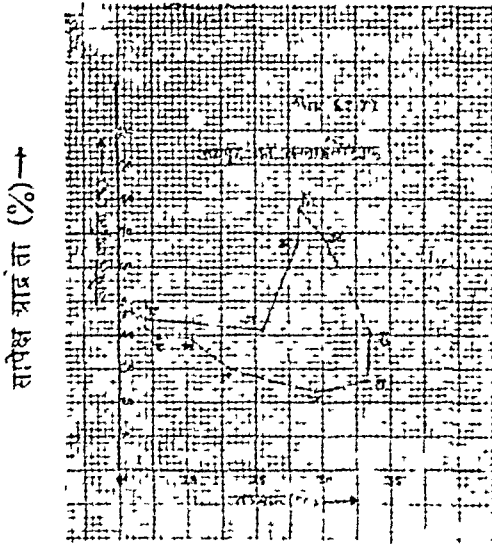
आर्द्रता और वायुमण्डलीय स्थिरता

(HUMIDITY AND ATMOSPHERIC STABILITY)

4·10 वायुमण्डल में जल वाष्प की मात्रा स्थान और समय के साथ बदलती रहती है, जबकि अन्य गैसों का अनुपात सर्वत्र समान होता है। इसी वाष्प की मात्रा पर बादल और वर्षा का होना निर्भर करता है। इसके अलावा वाष्प की मात्रा. पृथ्वी के विकिरण संतुलन, वायुमण्डल की स्थिरता और मौसम की आराम-दायकता पर भी प्रभाव डालती है।

वायुमण्डलीय आर्द्रता के स्रोत सूर्य की ऊष्मा के कारण सागरों, नदियों. ग्लेशियरों, नम धरातल, वायुमण्डल में जल की बूंदों तथा पेड़-पौधों से होने वाला वाष्पीकरण तथा वाष्पोत्सर्जन हैं।

किसी निश्चित तापमान और दाब पर वाष्प की एक अधिकतम मात्रा होती है, जो हवा में समा सकती है। इस दशा में हवा **संतृप्त (Saturated)** कह-लाती है।

सूखी हवा और वाष्प वायुमण्डल की दोनों गैसें, अलग-अलग गैसीय नियमों का पालन करती है। अत वायुमण्डल का कुल दाब (p), सूखी हवा के आंशिक दाब तथा वाष्प के आंशिक दाब के योग के बराबर होगा।

4·11 आर्द्रता राशियां (Humidity Quantities)

वायुमण्डलीय वाष्प की मात्रा नापने के लिए कई राशियां नीचे दी गई हैं, इन्हें आर्द्रता राशियाँ कहते हैं। हवा में संतृप्त होने पर ये राशियाँ, संतृप्त आर्द्रता राशियां (Saturated humidity quantities) कहलाती है।

(i) वाष्प दाब (e) (Vapour pressure)

वायुमण्डल में उपस्थित कुल वाष्प के कारण किसी स्थान पर जितना आंशिक दाब पड़ता है, वह वाष्प दाब (e) कहलाता है। हवा के संतृप्त होने की दशा में वाष्प दाब सबसे अधिक होगा, जिसे संतृप्त वाष्प दाब (e_s) कहते है। जब तक e का मान e_s से कम रहेगा, हवा असंतृप्त समझी जाएगी।

(ii) निरपेक्ष आर्द्रता (a) (Absolute Humidity) या वाष्प घनत्व (Vapour density)

हवा के इकाई आयतन में वाष्प की जितनी मात्रा होती है, उसे निरपेक्ष आर्द्रता (a) कहते है। यदि V आयतन की नम हवा में वाष्प की मात्रा M हो तो;

$$a = \frac{M}{V}$$

इसकी सामान्य इकाई, ग्राम/घनमीटर लिया जाता है ।

(iii) विशिष्ट आर्द्रता (q) (Sepcific humidity)

नम हवा में स्थित वाष्प की मात्रा और कुल नम हवा की मात्रा का अनुपात विशिष्ट आर्द्रता कहलाती है । यदि 1 कि ग्राम. नम हवा में 12 ग्राम जल वाष्प हो तो $q = 12$ ग्राम/कि ग्रा या 0 012 ग्राम/ग्राम ।

यदि 1 किग्राम सतृप्त हवा मे 40 ग्राम वाष्प हो तो सतृप्त विशिष्ट आर्द्रता $(q_s) = 40$ ग्राम/किग्राम ।

(iv) आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m) (Humidity mixing ratio)

प्राकृतिक हवा की मात्रा (M) = वाष्प की मात्रा (Mv) + सलग्न सूखी हवा की मात्रा (Md) । वाष्प की मात्रा और सलग्न सूखी हवा की मात्रा के अनुपात को आर्द्रता मिश्रण अनुपात कहते है ।

$$m = \frac{Mv}{Md}$$

यदि 1 किग्राम नम हवा मे 12 ग्राम जल वाष्प हो तो,

$$m = \frac{12}{988} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

यदि 1 किग्राम सतृप्त हवा मे 40 ग्राम वाष्प हो, तो सतृप्त आर्द्रता मिश्रण अनुपात

$$m_s = \frac{40}{960} = \frac{1}{24} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

(v) सापेक्ष आर्द्रता (r) (Relative Humidity)

हवा मे उपस्थित वाष्प की मात्रा (w) और उसे सतृप्त करने के लिए आवश्यक कुल वाष्प की मात्रा (w_s) का अनुपात सापेक्ष आर्द्रता कहलाती है । इसे सामान्यत प्रतिशत मे व्यक्त करते है । इसे निम्नाकित रूपो मे व्यक्त किया जा सकता है ।

$$r = \frac{w}{w_s} \times 100$$

$$= \frac{e}{e_s} \times 100$$

$$= \frac{m}{m_s} \times 100$$

4 12 q और m में सम्बन्ध

$$q = \frac{\text{वाष्प की मात्रा}}{\text{नम हवा की मात्रा}} = \frac{Mv}{M}$$

$$= \frac{Mv}{Mv + Md}$$

$$= \frac{Mv/Md}{1 + Mv/Md}.$$

$$= \frac{m}{1+m}$$

4.13 संतृप्त आर्द्रता राशियों का मान तापमान के साथ बढ़ता है। एक निश्चित दाब (p) पर, तापमान (T), और किसी संतृप्त आर्द्रता राशि (S.H.Q.) के बीच खींचे गये ग्राफ चित्र (4·1) की तरह होंगे, जिसमें ग्राफ का उन्नतोदर भाग तापमान अक्ष की ओर निकला होता है। स्पष्ट है कि अधिक तापमानों पर S.H Q. का अन्तर कम तापमानो पर S.H.Q. के अन्तर से कम होगा। अन्य दावों ($p_1, p_2 \cdots$ आदि) के लिए यहरेखा समानान्तर रूप से स्थानान्तरित हो जाती है। कम दाब पर रेखा की वक्रता (Curvature) अधिक पायी जाती है।
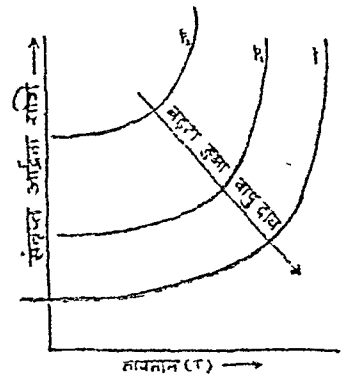
चित्र (4·1)

4 14 राशि ($e_s - e$) संतृप्तता हानि (Saturation deficit) कहलाती है। (चित्र 4 2) मे दिए गए (T $- e_s$) ग्राफ देखिए :
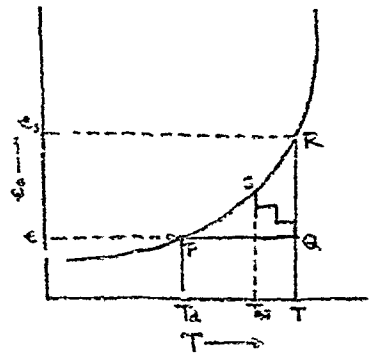
तापमान T पर, e_s = TR और e = TQ (मान लीजिए)

अत. संतृप्तता हानि = QR

यदि स्थिर तापमान T पर ($e_s - e$) वाष्प की मात्रा सामान्य हवा में मिला दी जाए, तो वायु संतृप्त हो जायेगी। तापमान यदि घटाया जाए, तो एक तापमान (Td) आएगा जब वाष्प दाब (e) पर ही हवा संतृप्त हो जाएगी। यह तापमान ओसांक कहलाता है।

चित्र (4·2)

$$\text{अत. } r = \frac{\text{ओसांक विन्दु पर संतृप्त वाष्प दाव}}{\text{वायु तापमान पर संतृप्त वाष्प दाव}}$$

4 15 किन्तु वास्तविक वायुमण्डल में संतृप्तता की स्थिति लाने के लिए, तापमान और वाष्प दोनो हाथ का रहता है। अर्थात् तापमान भी घटता है और वाष्प भी जुटती रहती है। इस प्रकार हवा T और Td के बीच किसी तापमान Tw पर संतृप्त हो जाती है। Tw, ही आर्द्र वल्ब तापमान कहलाता है। दूसरे शब्दों मे तापमान स्थिर किए विना, (प्राकृतिक दशा मे) वाष्पीकरण करने मे हवा जिस तापमान पर संतृप्त हो जाय वह **आर्द्र वल्व तापमान** कहलाता है।

4 20 वाष्पीकरण (Evaporation)

किसी जलाशय की सतह से वाष्पीकरण की मात्रा, जलाशय के तापमान, वायुमण्डल की शुष्कता तथा वायुगति पर निर्भर करती है। जलाशय मे संलग्न वायु पर्त जव तक असतृप्त रहेगी, वाष्पीकरण होता है। दूसरे शब्दो मे जब तक हवा का वाष्प दाव (e) सतृप्त वाष्प दाव (e_s) से कम हो, तव तक वाष्पीकरण निरन्तर होता रहेगा तथा वाष्पीकरण मात्रा ($e_s - e$) के समानुपाती होगी। यह मात्रा वायुगति वढने पर भी वढ जाती है। एक ध्यान देने योग्य वात यह भी है कि समुद्र के खारे पानी की अपेक्षा मीठे पानी से वाष्पीकरण अधिक होता है।

वनस्पतियो द्वारा होने वाला **वाष्पोत्सर्जन** (transpiration), वायुगति, पत्तियो की वनावट, तापमान तथा मिट्टी मे निहित जल की मात्रा पर निर्भर करता है। इसके अलावा सूर्य की किरणे भी वाष्पोत्सर्जन की मात्रा पर प्रभाव डालती है, जिनकी उपस्थिति मे वाष्पोत्सर्जन की दर वढ जाती है।

वनस्पतियो या घास आदि से ढकी जमीन मे नगी जमीन की अपेक्षा अधिक वाष्प वायुमण्डल मे मिलती है। यह वाष्प घने जगलो मे दिन का तापमान साधारणत संशोधित करने की क्षमता रखती है। वनस्पतियो से वाष्पोत्सर्जन लगातार होता रहता है, जवकि नगी जमीन के विल्कुल सूखी हो जाने पर वाष्पीकरण वन्द हो जाता है। पृथ्वी के भू भाग पर गिरने वाली कुल वर्षा का आयतन प्रति वर्ष लगभग 99 हजार घन किमी. है, जिसमे लगभग 62000 घन किमी वाष्पीकृत हो जाता है और शेष 37000 घन किमी. अपवाह (run off) द्वारा सागरो मे मिल जाता है। यद्यपि वायुमण्डल की नमी वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन—दो विभिन्न विधियो से प्राप्त होती है, परन्तु दोनो की प्रकृति समान होने के कारण,उन्हे एक पद **वाष्पीकरण वाष्पोत्सर्जन** (इवैपोट्रान्स पाइरेशन) द्वारा व्यक्त किया जाना अधिक सुविधाजनक है।

4.21 तालिका (4 1) मे दोनो गोलार्द्धो के लिए विभिन्न अक्षांशो पर औसत वाष्पीकरण की मात्रा दी गई है। यो दक्षिण गोलार्द्ध मे वाष्पीकरण की मात्रा दक्षिण गोलार्द्ध से कुछ अधिक है पर उस अनुपात मे नही, जिसमे दक्षिण गोलार्द्ध का जलीय भाग अधिक है। इसका कारण दक्षिणी गोलार्द्ध का कम तापमान और अधिक मेघाच्छन्नता (Cloudiness) है, जो वाष्पीकरण मे रुकावट डालते

है। अधिक बादल, अधिक नमी और बहुत हल्की वायुगति के कारण दोनो गोलार्द्धों के विपुवत् रेखीय क्षेत्रो (0–10 अक्षाश) के महासागरो मे अधिकतम तापमान होने पर भी (10–20) अक्षाश के महासागरो मे कम वाष्पीकरण होता है।

तालिका 4.1
औसत वार्षिक वाष्पीकरण (मिलीमीटर)

अक्षाश	उत्तरी गोलार्द्ध	दक्षिणी गोलार्द्ध
0–10	1235	1304
10–20	1389	1541
20–30	1246	1416
30–40	1002	1256
40–50	641	895
50–60	469	520
60–70	333	174
70–80	145	45
80–90	42	0
0–90	944	1064

महासागरो से प्रतिवर्ष 334000 घन किमी जल का वाष्पीकरण होता है, जिसमे 297000 घन किमी सीधी वर्षा द्वारा वापस आ जाता है।

4 22 वाष्पीकरण की मात्रा ज्ञात करना

वायुमण्डल मे वाष्पीकरण की गणना करने के लिए अनेक विधिया प्रयोग मे लाई जाती रही है। सन् 1876-78 में मौन (Mohn) ने वाष्पीकरण की मात्रा ज्ञात करने के लिए पहलीबार पैन वाष्पमापी का इस्तेमाल किया। तब से जलीय तल के तापमान, हवा की शुष्कता और वायुवेग पर आधारित कई सूत्र इस गणना के लिए तैयार किए गए है।

रोवर (1931) वाष्पीकरण की मात्रा (E) के लिए निम्नाकित सूत्र दिया —

$$E = (0\ 44 + 0\ \ 11\ u)\ (e_s - e_d),$$

जहाँ w वायुगति पर आधारित एक गुणांक है, तथा e_s और e_d क्रमशः जल की सतह और हवा के वाष्पदाब हैं।

4 23 वायुमण्डल में विकिरण ऊर्जा के संतुलन पर आधारित, E की गणना के लिए सैद्धान्तिक (theoretical) समीकरण तैयार किया गया है। इस प्रकार, सूर्य द्वारा प्राप्त कुल विकिरण ऊर्जा (Q) तीन भागों में बाटी जा सकती है:

(i) दीर्घ तरंगों (long wave) के रूप में पृथ्वी द्वारा वापसी विकिरण (H_l)

(ii) संचालन (conduction) द्वारा वायुमण्डल में ऊर्जा का ह्रास (H_c)

(iii) वाष्पीकरण के लिए प्रयुक्त ताप (H_e)

$$\therefore \quad H = H_l + H_c + H_e \qquad \cdots (i)$$

यहा यह मान लिया गया है कि ताप-जनन या ह्रास के अन्य स्रोत, जैसे—रासायनिक क्रियाएँ, पृथ्वी का आन्तरिक संचालन, घर्षण आदि नगण्य हैं। उपर्युक्त सभी राशियां, कैलोरी प्रति वर्ग से मी प्रति मिनट की इकाई में व्यक्त की गई हैं।

यदि $\dfrac{H_c}{H_e} = \beta$, तो

$$H_c = \frac{H - H_l}{1 + \beta} \qquad \cdots (ii)$$

अब, यदि वाष्पीकरण का गुप्त ताप L और प्रति वर्ग से मी वाष्पीकरण की दर E हो तो,

$$H_e = LE \qquad \cdots (iii)$$

समीकरण (ii) और (iii) से

$$E = \frac{H - H_l}{L(1 + \beta)} \qquad \cdot (iv)$$

स्थिरांक β को बावेन अनुपात (Bowen's ratio) कहते हैं।

4 24. $H - H_l$ की गणना आसान है और किसी स्थान के लिए विकिरण के आँकड़ो द्वारा सीधे तौर पर किया जा सकता है। डब्ल्यू, स्मित ने विभिन्न अक्षांशों के लिए इसकी गणना की है जो चित्र (4 3) में दिखाया गया है।

यदि ऊष्मा सचालन और जल वाष्प प्रसरण का आवर्त गुणांक (eddy coefficient) समान हो और μ के बराबर हो, तो

$$H_c = -C_p \mu \frac{dT}{dz},$$

$$\text{तथा} H_e = -L\mu \frac{\cdot 622}{p} \quad \frac{de}{dz} \cdot$$

जहाँ L, तापमान T पर वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा है ।
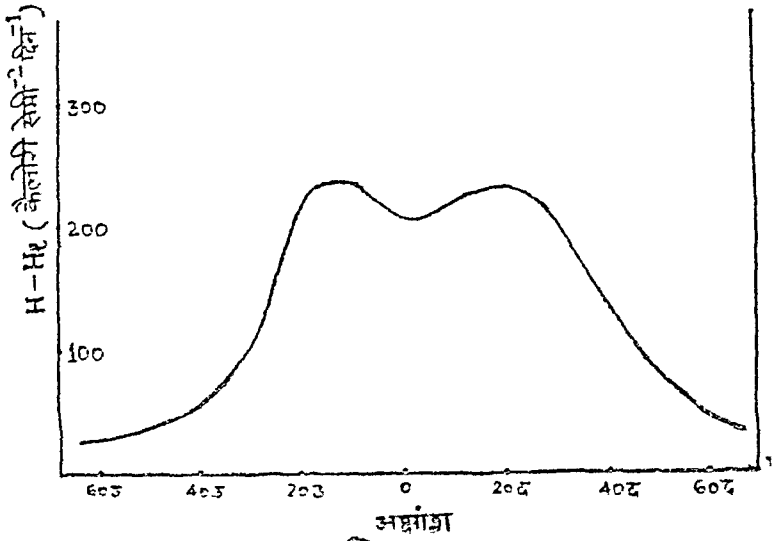
चित्र (4·3)

यदि $C_p = 24$ और $L = 585$ कैलौरी तथा $p = 1000$ मिलीबार हो तो,

$$\beta = 0.66 \frac{T_o - T_h}{e_o - e_h},$$

जहाँ T_o तथा e_o समुद्र तल पर क्रमश तापमान और वाष्प दाब है तथा T_h और e_h h ऊँचाई पर हवा के तापमान व वाष्पदाब है ।

4 25 β का मान अक्षाशो के साथ बदलता रहता है । विभिन्न अक्षाशो पर β का औसत मान तालिका (4 2) मे दिया गया है ।

तालिका 4.2

अक्षांश	0	10	20	30	40	50	60	70
β	0–10	0 10	0 10	0 13	0 18	0 25	0 37	0 53

4.26 किसी स्थान की जलवायु सम्बन्धी आँकडो की सहायता से भी वाष्पीकरण का अनुमान लगाया जा सकता है । कुल अपवाह (run off) व जल भण्डारो (बाँध, तालाब आदि) मे जल की मात्रा मे हुई कमी को यदि कुल अवक्षेपण से घटा दिया जाए, तो शेष भाग, जमीन, वनस्पति तथा स्वतत्र जल-सतह के वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन द्वारा हुए जल ह्रास (watei-loss) की मात्रा होगी । इस विधि के लिए पूर्ण और सही आँकडो का मिलाना आवश्यक है ।

4.27 वाष्पमापी (Evaporimeter) —

स्वतत्र जल-सतह से वाष्पीकरण की सीधी माप लेने के लिए अधिकतर दो प्रकार के वाष्पमापी प्रयोग मे लाए जाते हे ।

(i) खुली टंकी वाष्पमापी

4 फुट व्यास और 10 इंच ऊँचाई की एक बेलनाकार नाद होती है, जिसके तलवे जमीन से 4 ' अन्दर टिम्बर के ढाँचे पर जड़ देते हैं। नाद में लगे निदेशक (प्वाइन्टर) तथा पैमाने की सहायता से किसी भी अवधि के लिए जल-स्तर का ह्रास (वाष्पीकरण) पढ़ा जा सकता है।

(ii) पिच वाष्पमापी (Piche evaporimeter)

यह एक अंकित परखनली होती है, जिसमें पानी भर कर उसके खुले सिरे को एक झरझरी प्लेट से बन्द कर देते हैं। फिर नली को उल्टा करके लटका देते हैं। पोरस प्लेट से पानी रिस-रिस कर वाष्पीकृत होता रहता है, जिसकी मात्रा परखनली में अंकित पैमाने से पढ़ सकते हैं।

वाष्पीकरण का चलन

(i) उष्ण कटिबंध में वाष्पीकरण का दैनिक चलन दो उच्चतम और दो निम्नतम प्रदर्शित करते हैं। उच्चतम प्रातः के अन्तिम तथा रात्रि के प्रथम प्रहर में होता है और निम्नतम सूर्यास्त और दोपहर के ठीक बाद होता है। यहाँ दैनिक परिसर का औसत मान 5 मिमी. के लगभग होता है।

मध्य अक्षांशों में रात्रि और प्रातः के प्रथम पहरों में क्रमशः उच्चतम और निम्नतम के लिए केवल एक ही आवृत्ति पायी जाती है।

(ii) वाष्पीकरण का मौसमी विचलन स्थान की स्थिति और जलवायु की दशाओं पर निर्भर करता है। भारत में वाष्पीकरण अधिकतर पतझड़ और सर्दियों के आरम्भिक महीनों में तथा निम्नतम मानसून महीनों में होता है। वाष्पीकरण का दूसरा अधिकतम मार्च तथा निम्नतम फरवरी के महीने में पाया जाता है।

4.28 भारत में वाष्पीकरण

भारत में लगभग 80 वेधशालाओं में रिकार्ड किए गए 5 से 10 वर्ष तक (1960-70) के वाष्पीकरण आकड़ों के आधार पर तैयार किया गया विश्लेषण चित्र (4.4) में प्रदर्शित किया गया है। वार्षिक वाष्पीकरण की सबसे कम मात्रा (150 से.मी. से कम) असम और सलग्न हिमालय की घाटियों में पाई गई है। सर्वाधिक वाष्पीकरण के दो क्षेत्र हैं, जहाँ प्रतिवर्ष 350 से. मी. से अधिक मात्रा बनती है। पहला क्षेत्र उत्तरी गुजरात और सलग्न सौराष्ट्र क्षेत्र तथा दूसरा जलगाँव और आसपास के भू भाग हैं।

दैनिक वाष्पीकरण की सर्वाधिक मात्रा (1 6 से.मी.) मई के महीने में महाराष्ट्र, दक्षिणी-पश्चिमी मध्यप्रदेश और राजस्थान में नोट की गई है, जबकि सबसे कम दैनिक वाष्पीकरण (2 मि.मी से कम) हिमालय की जड़ों में जनवरी के महीने में देखा जाता है।
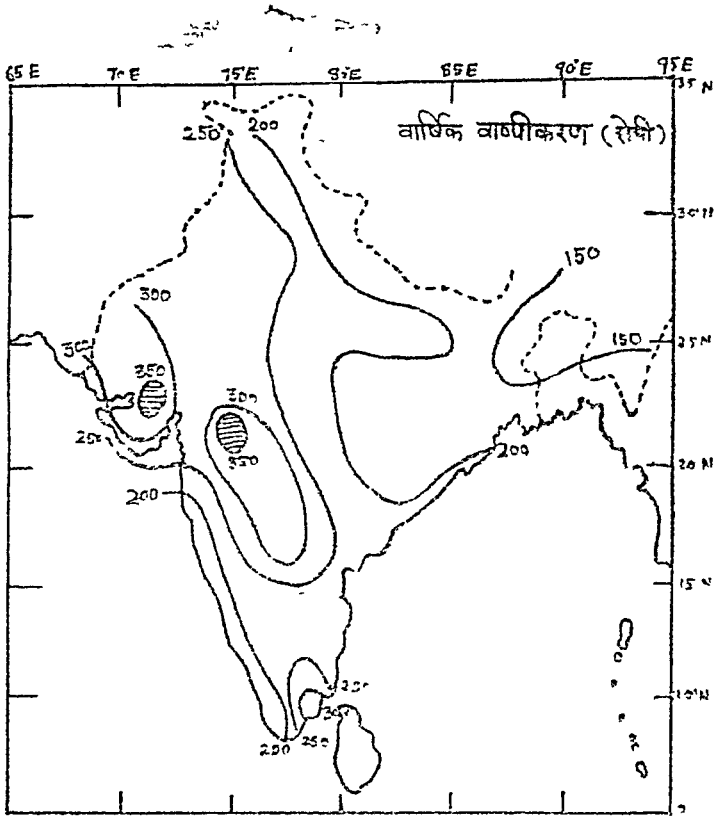
चित्र (4.4)

वार्षिक वाष्पीकरण (सेमी)

▤ सर्वाधिक वाष्पीकरण के क्षेत्र (7350 से.मी.)

4 30 नम हवा के लिए गैस-समीकरण (Equation of state for moist air)

किसी गैस के दाब p और तापमान T (केल्विन इकाई मे) पर यदि उसका विशिष्ट आयतन (आयतन प्रति इकाई मात्रा) α हो तो,

$$p\alpha = RT \qquad \cdots(1)$$

जहाँ R वायु के लिए विशेष गैस स्थिराक है ।

हम जानते है कि सामान्य दाब $p_o = 76 \times 13\ 5951 \times 980{\cdot}665$ डाइन/से मी ^{2} और तापमान $T_o = 273°K$ पर गैस के ग्राम अणुभार (w ग्राम) का आयतन 22400 घन से मी होता है ।

$$\therefore \qquad \alpha_o = \frac{22400}{w}$$

$$\therefore \quad R = \frac{p_o \alpha_o}{T_o} = \frac{76 \times 13{\cdot}5951 \times 980{\cdot}650 \times 22400}{273 \times w}$$

$$= \frac{R^*}{w}$$

जहाँ R* सम्पूर्ण (Universal) गैस स्थिराक कहलाता है।
अत. गैस समीकरण

$$p\alpha = \frac{R^*}{w} T, \qquad \cdots (ii)$$

या $$p = \frac{\rho RT}{m} \quad \text{जहाँ } \rho = \frac{1}{\alpha}$$

के रूप मे लिया जा सकता है, जहा w गैस का ग्राम मे व्यक्त किया गया अणु भार है।

4 31 सूखी हवा के लिए गैस समीकरण,

$$p - e = \frac{\rho d}{w_d} R^*T$$

जहाँ ρd सूखी हवा का घनत्व है और $w_d = 28{\cdot}96$ ग्राम

$$\therefore \quad \rho d = \frac{(p-e)\; w_d}{R^*T} \qquad \cdots (i)$$

इसी प्रकार, जल वाष्प का घनत्व $\rho v = \frac{e w_v}{R^*T}$ जहा $w_v = 18$ ग्राम।

अब आर्द्रता मिश्रण अनुपात $m = \frac{Mv}{Md} = \frac{\rho v}{\rho d}$

$$= \frac{e}{p-e} \quad \frac{w_v}{w_d}$$

$$= .622 \frac{e}{p-e}$$

$$= .622 \frac{e}{p} \text{ (लगभग)}$$

इसी प्रकार संतृप्त आर्द्रता मिश्रण अनुपात $m_s = .622\frac{e_s}{p}$

4 32 नम हवा के लिए गैस समीकरण

$$p\alpha = \frac{R^*}{\overline{w}} T$$ के रूप मे लिखते है।

$$\text{जहाँ} \quad \overline{w} = \frac{Md + Mv}{Md/w_d + Mv/w_v}$$

$$= \frac{w_d(Md + Mv)}{Md} \Bigg| \left[1 + \frac{Mv}{w_v} \Bigg| \frac{Md}{w_d} \right]$$

$$= \frac{w_d(1 + m)}{1 + m/622}$$

$$\therefore \quad p\alpha = \frac{R^*T}{w_d} \left[\frac{1 + 1.61m}{1 + m} \right]$$

या $\quad p\alpha = RT(1 + \cdot 61m),$

जहाँ $R = \frac{R^*}{w_d}$ = सूखी हवा के लिए विशेष गैस स्थिरांक है।

यदि $\quad T\ (1 + .61m) = Tv$

तो गैस समीकरण $\quad p\alpha = RTv$

Tv, हवा का आभासी (virtual) तापमान कहलाता है। यह वह तापमान है जिस पर सूखी हवा का वही घनत्व होगा, जो नम हवा का, T तापमान पर है, यदि दाब दोनों दशाओ में स्थिर रखा जाए।

4 40 नम हवा का घनत्व (Density of moist air)

नम हवा का घनत्व $\rho_h = \rho_d + \rho_v$

या $\quad \rho_h = \frac{p - e}{\frac{R^*}{28\ 96}T} + \frac{e}{\frac{R^*}{18}T}$, जहाँ वायुमण्डल का कुल दाब p और वाष्प दाब e है।

$$\therefore \quad \rho_h = \frac{p - e}{RdT} + \frac{18/28{\cdot}96e}{RdT}, \quad \text{जहाँ } Rd = \frac{R^*}{28{\cdot}96}$$

$$= \frac{p - 3/8e}{R_dT}$$

$$= \frac{348 \cdot 4}{T} \left(p - \frac{3}{8} e \right) \text{ ग्राम/मीटर}^3$$

यदि दाव, मिलीवार और तापमान केल्विन इकाई मे व्यक्त किया जाय।

4 41 सूत्र (1) मे स्पष्ट है कि हवा का घनत्व निम्नाकिन अवस्थाओ मे घटता है

(i) वायुदाव p घटने पर अर्थात् ऊँचाई बढने पर।

(ii) वाष्प दाव e बढने पर अर्थात् आर्द्रता बढने पर।

(iii) तापमान बढने पर।

यह देखा जा सकता है कि वायुमण्डल की सबसे निचली पर्तो मे । प्रतिशत घनत्व कम करने के लिए, या तो लगभग 10 मिलीवार दाव कम किया जाए (या 27 मीटर ऊँचाई बढाई जाए) अथवा 3°C तापमान बढाया जाए।

यह भी स्पष्ट है कि किसी निश्चित दाव पर गर्म हवा हल्की और ठडी हवा अपेक्षाकृत भारी होगी।

4.42 घनत्व का चलन (Variation of density)

ग्लोब पर माध्य समुद्र तल स्तर पर घनत्व का चलन, दाव और तापमान के चार्टो द्वारा समझा जा सकता है। यह घनत्व भूमध्य रेखा के पास सबसे कम, लगभग 1200 ग्राम/मीटर³ होता है, जो ध्रुवो की ओर अक्षाश के साथ बढ़ता जाता है। सर्दियो मे साइबेरिया मे घनत्व समुद्रतल पर 1550 ग्राम/मीटर³ तक पाया जाता है, जिसका कारण कम तापमान और उच्च दाव का सयुक्त प्रभाव है। गर्मियो मे उच्च तापमान और कम दाव के कारण उत्तरी अफ्रीका और दक्षिणी-पश्चिमी एशिया के रेगिस्तानो मे 1150 ग्राम/मीटर ³ से भी कम घनत्व आ जाता है।

ऊँचाई बढने से दाव और तापमान, दोनो घटते है परन्तु दाव का परिवर्तन, तापमान परिवर्तन पर हावी रहता है जिसके फलस्वरूप सर्वत्र ऊँचाई के साथ घनत्व घटता जाता है। घनत्व का घटाव हर ऊँचाई पर समान नही होता है। आई सी.ए.एन. वायुमण्डल के लिए पृथ्वी तल का घनत्व = 1225 ग्राम/मीटर³ है, ऊँचाई के साथ घनत्व परिवर्तन का गाफ चित्र (4.5) मे दिखाया गया है।

चित्र (4.5)
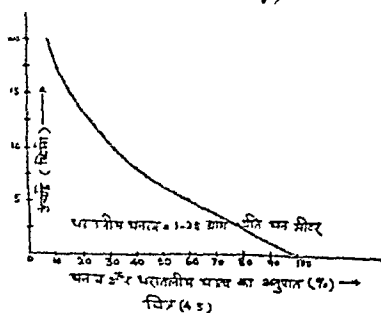
4.50 जल को वाष्पीकृत करने के लिए कुछ ऊष्मा देनी पड़ती है। एक ग्राम उबलते जल को वाष्पीकृत करने मे लगभग 536 कैलोरी ऊष्मा लगती है। यह ऊष्मा वाष्प मे मिल जाती है और उसमे छिपी रहती है। संघनित होते समय वाष्प से यह ऊष्मा निकल जाती है। इसे वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा कहते है। वायुमण्डल मे हर तापमान पर वाष्पीकरण होता रहता है। अत वाष्प मे स्थित गुप्त ताप की मात्रा कुछ हद तक उस तापमान पर निर्भर करती है जिस पर वाष्पीकरण हो रहा है।

4.51. रुद्धोष्म प्रक्रिया (Adiabatic Process)

पृथ्वी तल की हवा के तापमान मे स्थान-स्थान पर भिन्नता होती है। यदि हवा की कोई राशि (पार्सल) आसपास की अपेक्षा अधिक गर्म हो, तो वह हल्की होगी और इसलिए ऊपर उठेगी। ऊपर कम दाब होने के कारण वायुराशि फैलती जाएगी। यदि वायुराशि का उतार-चढाव तेजी से हो, तो उसकी और आसपास की ऊष्मा का स्थानान्तरण नही हो पाएगा। इस दशा मे वायुराशि के फैलाव के लिए आवश्यक शक्ति उसमें निहित ऊष्मा द्वारा ही खर्च की जाएगी, जिसके कारण वायुराशि का तापमान घट जाएगा। ठीक इसी प्रकार विना आसपास से ऊष्मा ग्रहण किए नीचे उतरती वायु राशि संकुचित होगी, जिससे उसका तापमान बढ जाएगा।

इस प्रकार फैलाव या संकुचन के कारण वायु राशि के क्रमश: ठंडे या गर्म होने की प्रक्रिया को रुद्धोष्म प्रक्रिया कहते हैं। इस प्रक्रिया मे तापमान परिवर्तन केवल गतिक कारणो से वायुराशि की आन्तरिक ऊष्मा मे कमी या वृद्धि होने का परिणाम है। किसी बाहरी तत्व, जैसे—मिश्रण, विकिरण, सचालन आदि से ऊष्मा का कोई लेनदेन नही होता है।

4.52. शुष्क और संतृप्त रुद्धोष्म प्रक्रम (Dry and Saturated Adiabatic Processes)

जब कोई शुष्क या असंतृप्त वायु राशि ऊपर उठती है, तो उसके तापमान मे लगभग 9.8/किमी कमी आ जाती है। अवतरित होते समय वायु का तापमान इसी दर से बढता है। इस दर को शुष्क रुद्धोष्म ह्रास दर (Dry Adiabatic Lapse rate) या (D A. L. R.) कहते हैं।

संतृप्त वायुराशि के ऊपर उठने पर फैलाव से जो शीतलन होता है, उसके फलस्वरूप वाष्प का संघनन होने लगता है। संघनन होने पर वाष्प की गुप्त ऊष्मा बाहर निकल आती है, जो वायु राशि के शीतलन की दर को कम कर देती है। अत उठती हुई संतृप्त वायु राशि की शीतलन दर, जिसे संतृप्त रुद्धोष्म ह्रास दर (S A. L R) या (Saturated Adiabatic Lapse rate) कहते है, D.A.L.R. से कम होती है। सांकेतिक रूप से D A.L.R. और S.A.L.R को क्रमश γ_d और γ_s द्वारा सूचित किया जाता है।

γ_s का मान स्थिर नही होता, वल्कि संघनित हुए वाष्प की मात्रा पर निर्भर करता है। सतृप्त वायु राशि यदि ठंडी है, तो उसमे अपेक्षाकृत कम वाष्प की मात्रा संघनित होगी। अत उसके द्वारा स्वतंत्र की गई गुप्त ऊष्मा कम होगी। इसलिए इस अवस्था मे γ_d और γ_s का अन्तर कम होगा।

मध्य अक्षाशो के लिए γ_s का मान γ_d के लगभग आधे के बराबर आता है।

अत $\gamma_s = 5^0C$/किमी (लगभग)

4.53 γ_s का मान ऊँचाई के साथ वढता जाता है क्योंकि वायु राशि मे निहित वाष्प की मात्रा लगातार सघनन के कारण कम होती जाती है। एक निश्चित ऊँचाई के वाद वायु असतृप्त हो जाएगी और तव $\gamma_s = \gamma_d$। अत सतृप्त वायु पहले सतृप्त रुद्धोष्म पथ (AB) पर और फिर विन्दु B पर असतृप्त हो जाने के वाद शुष्क रुद्धोष्म पथ (BC) पर चलने लगती है। यह कहा जा सकता है कि विन्दु B के वाद सतृप्त रुद्धोष्म दर शुष्क रुद्धोष्म के उपगामी (asymptotic) हो जाती है, अर्थात् दोनो पथ समानान्तर हो जाते है।

चित्र (4.6)
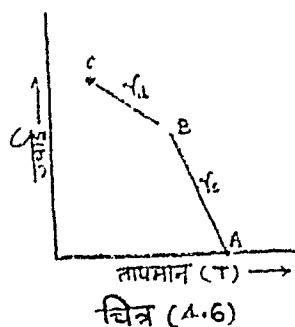
4.54 उठती हुई सतृप्त वायु राशि मे कुछ वाष्प के सघनन के वाद भी वायुराशि सतृप्त रहती है, अत सतृप्त दर पर चलती रहती है। अव इस वायुराशि के अवतलन पर विचार कीजिए। यदि सघनित जल को वायुराशि से अलग नही किया गया है, तो अवतलन मे तापमान वढने से यह जल वाष्पीकृत होकर वायुराशि को सतृप्त रखेगा। अत सतृप्त वायुराशि उसी पथ पर लौट सकती है, जिस पर चढाई गई थी, अर्थात् यह प्रक्रिया परिवर्तनीय रहेगी।

परन्तु यह विचार सिर्फ कल्पना मात्र है। वास्तविक वायुमण्डल मे सघनित जल, वायुराशि से अलग हो जाता है। इस दशा मे यदि वायुराशि को अवतलित कराया जाय, तो वह गर्म होने के साथ तुरन्त असतृप्त हो उठती है और फिर सतृप्त दर के वजाय शुष्क दर (9 8°C/किमी) पर नीचे उतरेगी। इस प्रकार, वायुमण्डल मे सतृप्त वायुराशि को रुद्धोष्म प्रक्रिया उत्क्रमणीय (reversible) नही है। अत यह प्रक्रिया दृढता से रुद्धोष्म भी नही कही जा सकती है। इसे छद्म रुद्धोष्म प्रक्रिया (Pseudo Adiabatic Process) कहा जाता है।

4.55. गैस के समताप (Isothermal) और रुद्धोष्म (Adiabatic) समीकरणो के अनुसार क्रमश

$$\frac{p\alpha}{T} = R$$

और $$p\alpha^{\gamma} = \text{स्थिराक},$$

जहा γ स्थिर दाब और स्थिर आयतन पर सूखी हवा की विशिष्ट ऊष्माओं का अनुपात है।

अर्थात् $\gamma = \frac{C_p}{C_v} = 1\ 403$

(ii) मे (i) के घाताक का भाग देने से

$$\frac{T^{\gamma}}{p^{\gamma-1}} = \text{स्थिराक}$$

या $\frac{T}{p^{\cdot 288}} =$ स्थिराक . .(iii)

यदि आरम्भिक स्तर p_o पर तापमान T_o हो और रुद्धोष्म परिवर्तन (जिसमे संचालन, मिश्रण, विकिरण आदि को सुविधा न देकर, परिवर्तन केवल गतिक कारणो मे हो) से किसी दाब स्तर p पर तापमान T हो जाता हो, तो समीकरण (iii) से

$$\frac{T}{T_o} = \left(\frac{p}{p_o}\right)^{\cdot 288} \qquad \dots (iv)$$

इस समीकरण को रुद्धोष्म प्रक्रिया के लिए प्वायसन (Poisson) का समीकरण कहते है।

4.56 तुलना मे समानता के लिए एक मानक दाब स्तर (साधारणत. 1000 मिलीबार) चुन लिया जाता है। किसी वायुराशि को रुद्धोष्म विधि द्वारा 1000 मिलीबार स्तर तक लाने पर उसका तापमान जितना हो जाएगा, वह वायुराशि का विभव तापमान (Potential Temperature) कहलाएगा। परिभाषा से ही यह स्पष्ट है कि रुद्धोष्म परिवर्तनो के दौरान विभव तापमान स्थिर (Constant) होता है।

यदि विभव तापमान को θ द्वारा सूचित करे, तो

$$\theta = T\left(\frac{1000}{p}\right)^{\cdot 288}$$

जहां T और p, वायुराशि के क्रमश. आरम्भिक तापमान और दाब है।

$\therefore \log \theta = \log T - 0.288 \log p + 0\ 864$

या $\theta = \text{Antilog}\ [\ \log T - 0.288\ \log p + 0.864\ ]$ (v)

4.57 उदाहरण उस वायुराशि का विभव तापमान ज्ञात कीजिए जिसका 500 मिलीबार पर तापमान 0°C है।

समीकरण (v) से

$\theta = \text{Antilog}\ [\ \log 273 - 0\ 288 \log 500 + 0.864\ ]$

$= 333.4°$ Kelvin $= 60\ 4°$C.

4.60. वायुमण्डल की स्थिरता और अस्थिरता (Stability and instability of atmosphere)

स्थिरता वायुमण्डल की वह दशा (Condition) है, जिसमे वायु की उर्ध्वाधर गति (Vertical Motion) या तो बिलकुल नही होती या कुछ ऊँचाई पर अवरुद्ध हो जाती है। अस्थिरता वायुमण्डल की वह अवस्था है, जिसमे भूमि तल से काफी ऊँचाई तक वायुराशियो की गति सुगमता से होती रहती है।

स्पष्ट है कि अस्थिर वायुमण्डल मे ही नमी को काफी ऊँचाई तक उठने की सुविधा मिलती है, जो सघनित होकर बादल और वर्षा का कारण बन सकती है। स्थिर वायुमण्डल मे नमी के अपेक्षित ऊँचाई तक नही पहुँच पाने के कारण, सघनन की सम्भावनाएँ बहुत कम हो जाती है। इस प्रकार, अस्थिरता नम मौसम और बादल की तथा स्थिरता शुष्क मौसम और साफ आसमान की प्रतीक है।

4.61 स्थिरता और अस्थिरता की धारणा

मान लीजिए कि किसी वायुराशि को अपनी मूल स्थिति से उर्ध्वाधर दिशा (ऊपर या नीचे) मे थोडा स्थानान्तरित (δz) किया जाता है। यदि वायुराशि अपनी मूल स्थिति मे वापस आती है, तो वह स्थिर कहलाएगी, यदि वायुराशि स्थानान्तरण की दिशा मे और आगे विचलित हो जाए, तो वह अस्थिर कहलाएगी, यदि वायुराशि स्थानान्तरित स्थिति मे ही रुक जाए, अर्थात् न वापस आए और न आगे बढ़े, तो वह उदासीन (Neutral) कहलाएगी।

अत स्थिरता किसी भी स्थानान्तरण का विरोध करती है, जबकि अस्थिरता उसे और बढावा देती है और उदासीनता उसके प्रति अक्रिय रहती है।

दूसरे शब्दो मे,

यदि स्थानान्तरण δz, से वायुराशि मे a त्वरण (acceleration) उत्पन्न हो, तो

स्थिरता की दशा मे, यदि δz घनात्मक (ऊपर की ओर) है, तो a उसके विपरीत, अर्थात् ऋणात्मक (नीचे की ओर) होगा और यदि δz ऋणात्मक है, तो a घनात्मक होगा। दोनो ही दशाओ मे,

$a\,\delta z$ = ऋणात्मक · · (i)

अस्थिरता की दशा मे δz और a की दिशा एक ही होगी। या तो दोनो ऊपर की ओर (घनात्मक) होगे या फिर दोनो नीचे की ओर (ऋणात्मक)।

अत $a\,\delta z$ = घनात्मक · (ii)

उदासीनता की दशा मे, जिसमे वायुराशि स्थानान्तरित स्थिति मे ही रुक जाती है :—

चित्र (4.7)

$$a = o,$$
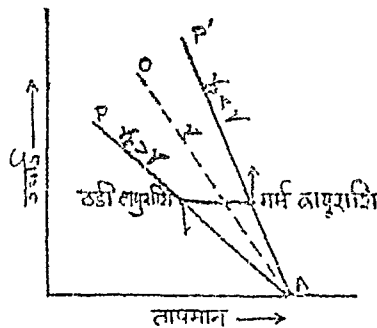
अतः $a.\,\delta z = o$ ... (iii)

4.62 मान लीजिए वायुमण्डल की ह्रास दर (γ) चित्र (4.7) मे AO द्वारा प्रदर्शित की गई है। उठाये गये वायुराशि का ह्रास दर (γ_p), γ से अधिक या कम हो सकता है। ये स्थितियाँ क्रमश AP और AP′ द्वारा दिखाई गई है।

पहले स्थिति AP′ पर विचार करे

इस स्थिति मे, $\gamma < \gamma_p$,

अत उठाई गई वायुराशि का तापमान, किसी भी ऊँचाई पर, वहा के पर्यावरण के तापमान से कम होगा। वायुराशि आसपास की अपेक्षा ठण्डी होने के कारण भारी होगी और इसलिए नीचे वापस आ जाएगी। इस स्थिति मे वायुराशि स्थायी हुई।

अब स्थिति AP′ पर विचार करे।

यहा $\gamma > \gamma_p$,

अत. किसी भी ऊँचाई पर वायुराशि का तापमान आसपास की अपेक्षा अधिक होगा। गर्म होने के कारण वायुराशि हल्की होगी और स्वत उठती चली जाएगी। इस प्रकार यह वायुराशि अस्थायी हुई।

4.63 अत· यदि पर्यावरण का वास्तविक ह्रास दर (γ) और उठती हुई वायुराशि का ह्रास दर γ_p हो तो वायुमण्डल

स्थायी होगा, यदि $\gamma < \gamma_p$

अस्थायी होगा, यदि $\gamma > \gamma_p$

और उदासीन होगा, यदि $\gamma = \gamma_p$

4.64 यदि हवा असतृप्त है, तो $\gamma_p = \gamma_d = 9\ 8°C$/किमी. (साधारणत)

अत असतृप्त हवा के स्थायी होने के लिए $\gamma < \gamma_d$। यह प्रतिबन्ध वास्तविक वायुमण्डल मे ($\gamma = 6\ 5°C$/किमी.), बहुधा लागू रहता है। अत असंतृप्त वायु साधारणत: स्थायी होती है।

असंतृप्त वायु अस्थायी तब होगी, जब पर्यावरणीय ह्रास दर $\gamma > \gamma_d$। यह एक असाधारण स्थिति है और वही लागू हो सकती है जहां, या तो γ इतना अधिक हो जाए या फिर γ_d इतना कम। उदाहरणार्थ गर्मियो मे अक्सर दोपहर के बाद, सूर्य की ऊष्मा से निचली तहो मे γ का मान अत्यधिक हो उठता है और सूखी हवा भी अस्थायी हो जाती है।

यदि हवा असतृप्त है, तो $\gamma_p = \gamma_s = 5°C$/किमी. (साधारणत)

सतृप्त वायुमण्डल स्थायी तब होगा, जब $\gamma < \gamma_s$। यह स्थिति भी असामान्य है और विशेष परिस्थितियो मे ही सम्भव है। अत्यधिक सर्दियो मे, जबकि वायुमण्डल की निचली तहो मे व्युत्क्रमण (inversion) होता है, अर्थात् γ का मान ऋणात्मक होता है, यह स्थिति लागू हो जाती है। यही कारण है कि इन दिनों मे सतृप्त होने पर भी वाष्प के कण, कुहरे के रूप मे भूतल पर छाये रहते हैं।

संतृप्त वायुमण्डल सामान्य रूप से अस्थायी हो जाता है, क्योंकि इस दशा में साधारणत: $\gamma > \gamma_s$ का प्रतिबन्ध लागू रहता है।

उपर्युक्त विवेचना से यह निष्कर्ष निकलता है कि वायुमण्डल पूर्ण रूप से स्थायी होगा यदि $\gamma < \gamma_s$

(इस स्थिति में स्वत $\gamma < \gamma_d$ क्योंकि $\gamma_s < \gamma_d$)

यह स्थिति निरपेक्ष स्थायित्व (Absolute stability) कहलाती है।

इसी प्रकार, चाहे वाष्प की मात्रा कुछ भी हो, वायुमण्डल पूर्ण रूप से अस्थायी होगा, यदि $\gamma > \gamma_d$

(स्वत $\gamma > \gamma_s$ क्योंकि $\gamma_d > \gamma_s$)

इस अवस्था को निरपेक्ष अस्थायित्व (Absolute instability) कहते हैं।

परन्तु वास्तविक वायुमण्डल न तो पूर्ण रूप से अस्थायी होता है और न स्थायी।

साधारणत. ($\gamma = 6\ 5°C$/किमी.)

अत $\gamma_s < \gamma < \gamma_d$

यह अवस्था प्रतिबन्धी अस्थायित्व (Conditional instability) कहलाती है।

वास्तविक वायुमण्डल इसी अवस्था में होता है।

वाष्प की मात्रा के पूर्ण या लगभग संतृप्त होने पर हवा अस्थायी हो जाती है और सूखी या कम आर्द्र होने पर स्थायी।
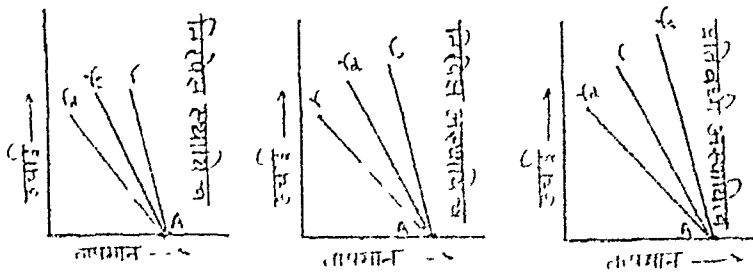
चित्र (4 8)

4.65 अस्थायी होने पर वायुमण्डल में ऊर्ध्व धाराएँ (Vertical currents) उत्पन्न हो जाती है, जो भूतल की नमी को ऊपर ले जाती है।

4 70 वायुमण्डल की ऊष्मागतिकी (Thermodynamics of atmosphere)

निम्न अक्षांशों में ऊष्मा की नेट प्राप्ति तथा उच्च अक्षांशों में नेट ह्रास होती है। इस ताप-प्रवणता के कारण वायु प्रवाहित होती है, जो ऊष्मा को निम्न अक्षांशों से उच्च अक्षांशों की ओर ले जाती है। इस प्रकार, वायुमण्डल एक ताप-इंजन की भांति कार्य करता है जिसमें ऊष्मा का स्रोत निम्न अक्षांश, सिंक उच्च अक्षांश तथा कार्यकारी पदार्थ वायुराशि है। इस प्रवाह में ऊष्मा का कुछ भाग यान्त्रिकी ऊर्जा

मे परिवर्तित हो जाता है। अतएव वायुमण्डल में ऊष्मागतिविज्ञान का प्रवेश आवश्यक है।

4 71 ऊष्मा-गतिकी का प्रथम नियम

यदि इकाई मात्रा की वायुराशि का, जिसका आयतन α है, dQ ऊष्मा प्रदान की जाए, तो (1) कुछ ऊष्मा वायुराशि का तापमान बढाने के काम आएगी। यदि तापमान मे वृद्धि dT है, तो इसके लिए आवश्यक ऊष्मा की मात्रा $= C_v\, dT$, जहाँ C_v स्थिर आयतन पर वायु की विशिष्ट ऊष्मा है।

(2) शेष ऊष्मा, वायु के प्रसार मे प्रयुक्त होगी। यदि प्रसार $d\alpha$ हो, तो p दाब पर इसके लिए आवश्यक ऊष्मा की मात्रा $= p d\alpha$

$$\text{इस प्रकार } dQ = C_v dT + p d\alpha \qquad \cdots\text{(i)}$$

यह समीकरण ऊष्मागतिकी का प्रथम नियम कहलाता है।

4.72 रुद्धोष्म परिवर्तन की दशा मे $dQ = O$

$$\text{अत:} \; -C_v dT = p d\alpha$$

अर्थात् हवा फैलने पर ठण्डी होगी तथा सकुचित होने पर गर्म।

4.73 गैस समीकरण $p\alpha = RT$ से,

$$p d\alpha + \alpha dp = R dT \qquad \cdots\text{(ii)}$$

समीकरण (2) से $p d\alpha$ का मान (i) में रखने से

$$dQ = (C_v + R)\, dT - \alpha dp$$

$$\text{या} \quad dQ = C_p dT - \alpha dp, \qquad \cdots\text{(iii)}$$

जहाँ C_p स्थिर दाब पर गैस की विशिष्ट ऊष्मा है। रुद्धोष्म स्थिति मे

$$C_p dT = \alpha dp$$

$$\text{या} \quad C_p dT = -\alpha g \rho dz$$

$$\text{या} \quad C_p dT = -g dz$$

$$\text{या} \quad -\frac{dT}{dz} = \frac{g}{C_p}$$

$$\text{या} \quad \gamma_d = \frac{g}{C_p} \qquad \cdots\text{(iv)}$$

4 74 एनट्रापी (Entropy)

यदि बिना तापमान बदले वायुराशि को रुद्धोष्म विधि से प्रसारित और फिर उतना ही संकुचित किया जाए, तो प्रक्रम उत्क्रमणीय (रिवर्सिबुल) हो जाएगा। उस दशा मे प्रति इकाई तापमान, प्रयुक्त हुई ऊष्मा का कुल योग शून्य होगा, अर्थात्

$$\int_{\text{प्रथम}}^{\text{द्वितीय दशा}}$$

राशि $d\phi = \frac{dQ}{T}$, दोनों दशाओ (परिवर्तन से पहले और बाद) मे एनट्रापी का अन्तर कहलाती है। एनट्रापी का निरपेक्ष मान ज्ञात नही किया जा सकता। किसी स्वेच्छ मूल विन्दु से इसका तुलनात्मक मान ज्ञात किया जा सकता है।

$$\therefore \quad \phi = \phi_0 + \int \frac{dQ}{T}$$

जहा ϕ_0 मूल विन्दु पर एनट्रापी का निरपेक्ष मान है।

4.75 अवस्थाओ का परिवर्तन सम एनट्रापिक कहलाता है जब,

$$d\phi = 0, \text{ या } \phi = \text{स्थिराक}$$

$$\text{इस स्थिति मे स्पष्ट है कि } dQ = 0$$

अत सभी सम एन्ट्रापिक परिवर्तन रुद्धोष्म होते है। किन्तु सभी रुद्धोष्म प्रक्रम सम एन्ट्रापिक नही होते। सम एन्ट्रापिक होने के लिए प्रक्रमो का उत्क्रमणीय होना भी आवश्यक है।

4.76
$$d\phi = \frac{dQ}{T} = \frac{C_p dT - \alpha dp}{T}$$

$$\therefore \quad d\phi = C_p \frac{dT}{T} - R \frac{dp}{p}$$

$$\therefore \quad \phi = C_p \log T - R \log p + \phi_0$$

$$\phi = C_p \log \frac{T}{p^{R/C_p}} + \kappa$$

$$\text{या} \quad \phi = C_p \log \theta + \kappa$$

$$\therefore \quad \phi \propto \log \theta$$

अत. एनट्रापी (ϕ) विभव तापमान के लघु गणक के समानुपाती है।

4.80 तापमान-एनट्रापी आरेख या टी फाई ग्राम (Tephigram या $T-\phi$ gram)

मौसमी प्राचलों (पैरामीटर्स) जैसे, तापमान, दाव, आर्द्रता आदि के सतही और ऊर्ध्व वायुमण्डलीय प्रेक्षणो मे वर्तमान मौसम अवस्था के बारे मे निष्कर्ष निकालना और सही निरूपण करना मौसम पूर्वानुमान के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसके लिए कुछ ऊष्मागतिक ग्रिड तैयार किए गए हैं, जिन पर इन प्राचलो का एक साथ आलेख करके इनका अध्ययन किया जाता है। ये रेखाचित्र तत्कालीन वायुमण्डलीय अवस्था का चाक्षुप चित्र प्रस्तुत करते है, जिनसे निष्कर्ष निकालना बहुत आसान हो जाता है। मौसम पूर्वानुमान केन्द्रो मे सर्वाधिक प्रचलित ग्रिड टीफाईग्राम के नाम से विख्यात है। भारतीय मौसम केन्द्रो मे प्रयुक्त होने वाले टी-फाइ (T-ϕ gram) ग्राम

का नमूना चित्र (4.9) में दिया गया है। इस पर तापमान, आर्द्रता (या ओसांक) और वायु वेग के आंकड़े, ऊँचाई के अनुसार सरलता से अंकित कर दिए जाते हैं, जिससे इनका ऊर्ध्वाधर वंटन एक नजर में स्पष्ट हो जाता है।

चित्र (4.9)
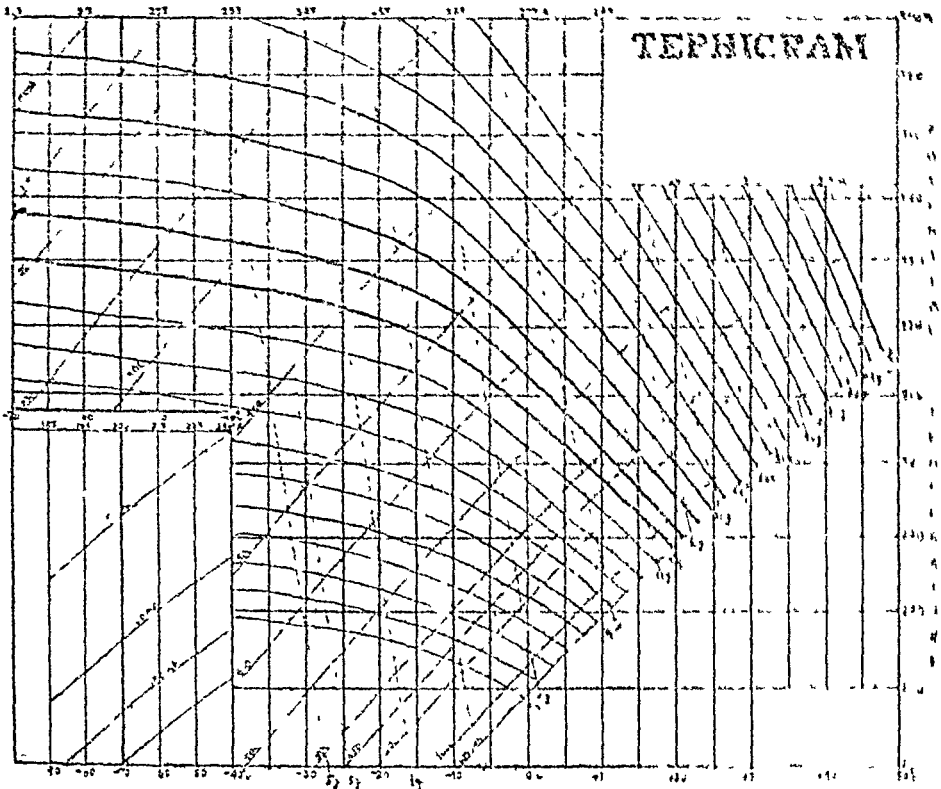
4 81 टीफाईग्राम का X- अक्ष, तापमान (T) तथा Y-अक्ष, एनट्रापी (ϕ) व्यक्त करता है। अत इसका नाम टी फाई ग्राम रखा गया है। चूँकि ϕ विभव तापमान के लघुगणक के समानुपाती होता है, अतः Y- अक्ष पर विभव तापमान (θ) ही अंकित किया जाता है।

1 इस प्रकार क्षैतिज रेखाओं पर विभव तापमान का मान स्थिर होता है और ये विभव तापमान की समरेखाएँ कहलाती हैं। चूँकि शुष्क रुद्धोष्म प्रक्रमों में विभव तापमान अचर रहता है, अत इन रेखाओं को ड्राई एडियाबेट भी कहते हैं। Y- अक्ष पर विभव तापमान निरपेक्ष इकाईयों में दिया गया है। दायीं ओर सगानुपात एनट्रापी पैमाना भी जूल/किग्राम/°C, इकाईयो व्यक्त किया गया है।

2. ऊर्ध्वाधर रेखाएँ समताप रेखाएँ हैं, ये नीचे °C तथा ऊपर निरपेक्ष इकाइयो मे अंकित की गई हैं।

3 बायीं ओर से दायीं सीधी रेखाएँ समदाब रेखाएँ हैं, जिन पर मिलीबार अंकित किया

4. ऊपर को उभरी हुई वक्र रेखाएँ, जो दायी ओर उठ रही हैं, **सतृप्त एडिया वेट** (Saturation adiabate) हैं। ये रेखाएँ एक सतृप्त वायु राशि के तापमान और दाव के सम्बन्ध बतलाती है, जब सतृप्त वायुराशि छद्म रुद्धोष्म अवस्था मे ऊपर या नीचे गति कर रही हो। सतृप्त रुद्धोष्म पथ पर चढ़ती हुई वायुराशि अपना सघनित जल खोती रहती है; अत जब नीचे लौटाई जाती है, तो तुरन्त रुद्धोष्म उष्णन के कारण असतृप्त हो उठती है। **अत शुष्क रुद्धोष्म पथ पर लौटेगी।** स्पष्ट है कि यह प्रक्रिया उत्क्रमणीय नही है।

5. टूटी हुई रेखाएँ, जो दायी से बायी ओर थोडी झुकी हुई है, ओमाक रेखाएँ है। ये समरेखाएँ आर्द्रता मिश्रण अनुपात को व्यक्त करती है और साधारणत आइसोहाइग्रिक कहलाती है। ये रेखाएँ उस दाव और तापमान का बोध कराती है, जिस पर किसी दिए गए मात्रा की जलवाष्प 1 कि. ग्राम शुष्क वायु को सतृप्त कर देगी। आइसोहाइग्रिक पर 'ग्राम' इकाइयाँ अकित की गई हैं। ओमाक पर आइसोहाइग्रिक का मान आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m) तथा शुष्क वल्व तापमान पर आइसोहाइग्रिक का मान सतृप्त आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m_s) के बराबर होता है, (यदि इकाई ग्राम/कि ग्राम मे ली जाए)।

6. मुख्य समदाब रेखाओ, जैसे–1000, 900, 850, 800, 700 मिलीबार आदि के मध्य छोटे-छोटे ऊर्ध्वाधर निशान आभासी तापमान के लिए ऊँचाई की त्रुटि पढते है।

4.82 गुप्त अस्थायित्व (Latent instability)

मान लीजिए वक्र, ADFE वायुमण्डल की सामान्य ह्रास दर प्रदर्शित करती है और ACDE उठाई गई वायु राशि का मार्ग है।
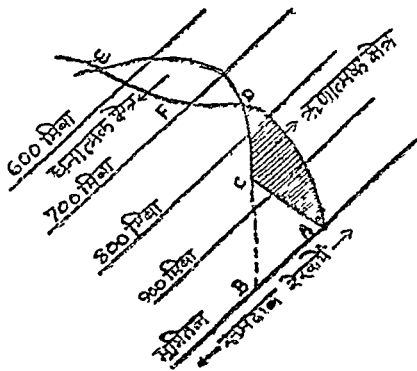
चित्र (4·10)

छायाकित क्षेत्र ACDA में वायु राशि का तापमान आसपास के वायुमण्डल की अपेक्षा कम होगा। अत इस क्षेत्र मे स्थायित्व रहेगा। किन्तु बिन्दु D के पश्चात् उठती हुई वायु राशि आसपास की अपेक्षा गर्म हो जाती है। अत स्वयंमेव रुद्धोष्म

प्रथम से उठनी जाएगी। चित्र (4.10) में स्पष्ट है कि बिन्दु D के नीचे वायुमण्डल में स्थायित्व है किन्तु यदि किसी प्रक्रिया द्वारा वायुराशि D तक उठा दी जाए, तो उसमें अस्थायित्व का गुण स्वत: आ जाएगा।

क्षेत्र ACDA को ऋणात्मक तथा क्षेत्र DFED को धनात्मक कहते हैं। यदि धनात्मक क्षेत्र, ऋणात्मक क्षेत्र से अधिक है, तो वायुमण्डल अस्थायी कहलाएगा। इसे गुप्त-अस्थायित्व कहते हैं। इसका कारण यह है कि D के बाद वायुराशि में गुप्त ऊष्मा मुक्त होने लगती है, जिससे उसका तापमान बढ़ता है और अस्थायित्व का गुण उत्पन्न होता है।

4.83 विभव-अस्थायित्व (Potential Instability)

अपेक्षाकृत मोटी तह की वायुराशि में साधारणत: निचला भाग अधिक आर्द्र होता है। जब यह वायु ऊपर उठाई जाती है तो इसका निम्न भाग पहले संतृप्त हो जाने के कारण, संतृप्त रुद्धोष्म दर से ठंडी होती है जबकि ऊपरी भाग शुष्क रुद्धोष्म दर, अर्थात् तेजी से ठंडा होता जाता है। परिणामस्वरूप निचला भाग अपेक्षाकृत गर्म होने से अस्थायित्व उत्पन्न कर लेता है और ऊपर उठ जाता है। इसे विभव अस्थायित्व कहते हैं। विभव अस्थायित्व के लिए अनुकूल परिस्थिति यह है कि टीफाईग्राम पर आर्द्र बल्ब की रेखा की ढाल (Slope) संतृप्त रुद्धोष्म वक्र से अधिक हो।

4.84 टीफाईग्राम के कुछ उपयोग

ऊष्मा गतिकी के कुछ वायुमण्डलीय प्राचल (पैरामीटर) टीफाईग्राम द्वारा बिना गणना के ज्ञात किए जा सकते हैं जैसे विभव तापमान (θ). शुष्क बल्ब तापमान से शुष्क रुद्धोष्म वक्र के समान्तर 1000 मिलीबार स्तर तक रेखा खींचिए। 1000 मिलीबार पर जो तापमान पढ़ा जाएगा वही θ है।

उत्थापन संघनन स्तर या L. C. L. (lifting condensation level)—शुष्क बल्ब तापमान से शुष्क रुद्धोष्म, आर्द्र बल्ब तापमान से शुद्ध रुद्धोष्म तथा ओसांक से संतृप्त मिश्रण रेखाएँ जिस बिन्दु पर मिलती हैं उस बिन्दु को L. C. L. या नॉर्मन्द बिन्दु कहते हैं और यह नियम नॉर्मन्द का प्रमेय (proposition) कहलाता है।

आर्द्र बल्ब तापमान (T_w) और विभवार्द्र बल्ब तापमान (θ_w)

तुल्यांक-तापमान (Te) = $T + 2.5\ m$

तुल्याक विभव तापमान (θ_e) = $\theta + 3\ m$
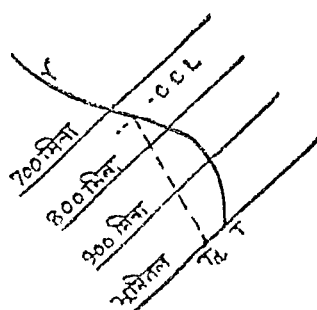
चित्र (4·11)

आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m) – ओसांक पर आइसोहाइग्रिक का मान अन्तर्वशन (interpolation) द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। यही m का मान होगा।

संतृप्त आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m_s) – शुष्क बल्ब तापमान पर आइसोहाइग्रिक का मान m_s होगा।

संवाहनिक संघनन स्तर या C C L. (convective Condensation level)

जिस विन्दु पर वायुमण्डलीय तापमान वक्र को भूमिस्तरीय ओसांक से आइसोहाइग्रिक रेखा काटती है, वह C. C. L. कहलाता है।

4.85 उदाहरण

टीफाईग्राम पर निम्नांकित आंकडो का आलेख तैयार कीजिए

दिल्ली, 9 1 73/05 30 बजे सुबह का रेडियो सोन्दे का प्रेक्षण

दाब स्तर मिलीबार	ऊँचाई (मीटर)	तापमान	ओसांक	वायु दिशा उत्तर से कोण	गति (नारि कल मील/घंटा)
983	भूमितल	10.0	1.0	315	10
954		13.4	3.4	—	—
885	1483	6 8	−4.2	—	—
850	1483	2 4	−5.6	315	12
700	3022	−15 7	−7 0	295	10
500	5700	−15.7		295	35
400	7350	−36 9		300	40
300	10550	−49.9		275	80
200	12010	−51 0		270	85
150	13850	−59 3		275	83
100	16360	−63 5		260	52

1. भूमितल और 850 मिलीवार स्तर पर आर्द्र बल्ब तापमान (Tw) ज्ञात कीजिए ।

2. भूमि व्युत्क्रमण तह की मोटाई ज्ञात कीजिए ।

3. भूमितल और 850 मिलीवार पर विभव तापमान θ, आर्द्र बल्ब विभव तापमान (θw), आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m) तथा संतृप्त आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m_s) का मान ज्ञात कीजिए ।

4. L. C. L. तथा C. C. L. की ऊँचाई ज्ञात कीजिए ।

5. क्षोभ सीमा की ऊँचाई और तापमान क्या होगा ।

6. वायुमण्डल की स्थिरता अवस्था ज्ञात कीजिए ।

हल (1) and (3)

	Tw (°C)	θ(°C)	θw (°C)	m ग्राम प्रति कि.ग्राम	m_s ग्राम प्रति कि.ग्राम
भूमितल	4.7	6.0	10.6	4.2	10.4
850 मिलीवार	0.8	21.0	14.2	3.2	7.8

2. भूमि व्युत्क्रमण तह की मोटाई = 983–955 = 28 मिलीवार
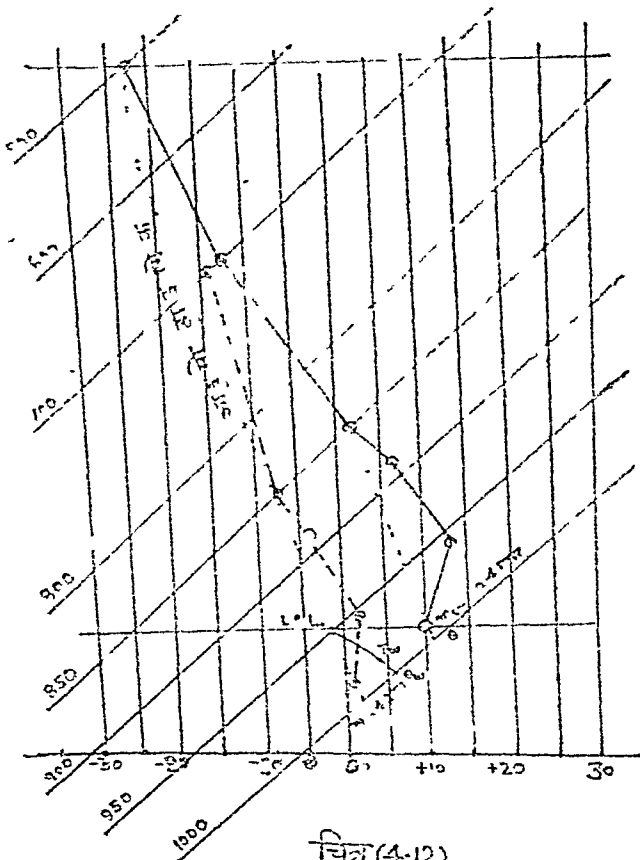
चित्र (4.12)

4. L. C. L. = 868 मिलीबार और

C. C. L. = 700 मिलीबार

5. क्षोभ सीमा स्तर = 250 मिलीबार या 10.550 किलोमीटर क्षोभ सीमा का तापमान = – 50.0°C

6. भूमि व्युत्क्रमण से स्पष्ट है कि निचले तहों की वायु स्थायी है।

उदाहरण निम्नांकित रेडियो सौन्दे प्रेक्षण से 1000 से 600 मिलीबार तक के वायुमण्डल में उपस्थित अवक्षेपण योग्य कुल वाष्प की मात्रा ज्ञात कीजिए।

कलकत्ता, जुलाई 20.1968, 05.30 बजे प्रात

दाव स्तर (मिलीबार)	तापमान (°C)	ओसांक (°C)
1000	27	25
950	24	22
900	22	20
850	18	17
800	16	14
750	14	11
700	11	8
650	8	3
600	3	–1
550	1	–4
500	– 4	—
450	– 9	—
400	–14	—
350	–21	—
300	–29	—
250	–39	—
200	–52	—
150	–66	—
100	–80	—

हल कुल अवक्षेपीय वाष्प की मात्रा ज्ञात करना

सिद्धान्त . एक इकाई क्षेत्रफल के वायु स्तभ में अवक्षेपीय वाष्प की मात्रा उस स्तभ में स्थित कुल जल की मात्रा है। यदि जल का घनत्व ρ_v हो, तो $\triangle z$ ऊँचाई के स्तरभ में स्थित जल की मात्रा

$$\Delta w = \rho_v \Delta z$$

$$= q\rho \Delta z \text{ (जहाँ } \rho \text{ वायु का घनत्व है, } q = \frac{\rho_v}{\rho})$$

$$= \frac{q}{g} \Delta p, \text{ (ऋण चिह्न छोड दिया गया है)}$$

प्रस्तुत प्रश्न मे 600 मिलीबार तक के वायु स्तंभ को निम्नांकित तहो मे बांटा जा सकता है:—

1000–900, 900–800, 800–700, 700–600.

प्रथम तह के लिए $\Delta p = 100 \times 1000$ डाइन/सेमी ^{2}

तथा $g = 980$ डाइन/सेमी.^{2}

औसत आर्द्रता मिश्रण अनुपात $m = 18$ ग्राम/कि.ग्राम

$$\therefore \; q = \frac{m}{1000+m} = \frac{18}{1018} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

इस तह मे कुल अवक्षेपीय जल, $w_1 = \dfrac{18 \times 100 \times 1000}{1018 \times 980}$

$= 1.8$ ग्राम

दूसरे तह (900–800) के लिए औसत $m = 15$ ग्राम/कि.ग्राम

$$\therefore \; q = \frac{15}{1015} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

$$\therefore \quad w_2 = \frac{15 \times 100 \times 1000}{1015 \times 980}$$

$= 1.5$ ग्राम

तीसरे तह (800–700) मिलीबार के लिए औसत $m = 11$ ग्राम/कि.ग्राम

$$\therefore \; q = \frac{11}{1011} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

$$w_3 = \frac{11 \times 100 \times 1000}{1011 \times 980}$$

$= 1.1$ ग्राम

चौथे तह (700–600 मिलीबार) के लिए औसत $m = 7.5$ ग्राम/कि.ग्राम

$$\therefore\ q = \frac{7.5}{1007\ 5} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

$$\therefore\ w_4 = \frac{7{\cdot}5 \times 100 \times 1000}{1007{\cdot}5 \times 980}$$

$$= 0\ 8 \text{ ग्राम}$$

कुल जल वाष्प की मात्रा $= w_1 + w_2 + w_3 + w_4$

$$= 5.2 \text{ ग्राम}$$

5

मेघ और अवक्षेपण

(CLOUDS AND PRECIPITATION)

5.10 वायुमण्डलीय वाष्प का संघनन (Condensation)

तापमान घटने या आर्द्रता बढते रहने से वायुमण्डलीय वाष्प, संतृप्तता बिन्दु तक पहुँच जाती है और फिर जलकणों के रूप मे संघनित होना आरम्भ कर देती है। जब नम हवा ऊपर उठ कर प्रसार द्वारा ओसांक तक शीतल होती है, तो मेघ कणों मे तथा जब सर्दियो मे भूमितल का तापमान घटने से शीतलन होता है, तो वाष्प कुहरा कणो मे संघनित होती है। संघनन के लिए एक सतह की आवश्यकता होती है, जिस पर जलकण अपने आप को स्थापित कर सकें। यह सतह संघनन केन्द्रक कहलाती है। केन्द्रको की अनुपस्थिति या अत्यन्त अभाव के कारण, तापमान के ओसाक से नीचे आ जाने पर भी हवा सघनित नही हो पाती। ऐसी हवा अति-संतृप्त कहलाती है। अतिसंतृप्तता की दशा मे हवा की सापेक्ष आर्द्रता 100% से अधिक सम्भव है। वास्तविक वायुमण्डल मे अतिसतृप्तता बहुत थोडी सीमा तक ही पाई जाती है और वह भी साधारणत ऐसी हवा मे, जो प्रदूषणों से बिल्कुल मुक्त हो।

यूँ तो वायुमण्डल मे पर्याप्त मात्रा में धूल आदि के सूक्ष्म कण विद्यमान रहते हैं, किन्तु सभी कण सघनन केन्द्रक नही बन सकते। सघनन केन्द्रक वही कण बन सकते हैं, जिनमे जल वाष्प के प्रति आकर्षण हो। इन्हे आर्द्रता ग्राही (Hygroscopic) केन्द्रक कहते है। वायुमण्डल मे विद्यमान जलकण स्वत संघनन केन्द्रक का कार्य करते हे। ये सम-केन्द्रक कहलाते है, किन्तु वायु-मण्डल मे बहुत कम मिलते है। दूसरे केन्द्रक जैसे, नमक, धूल के कण, अथवा चिमनियो से निकले वायु प्रदूषक, विषम-केन्द्रक कहलाते है।

केन्द्रक यदि अधिक आर्द्रता ग्राही है, तो संतृप्तता की अवस्था से पूर्व ही सघनन हो सकता है। ऐसी दशा मे हवा **उपसंतृप्त** कहलाती है। सापेक्ष आर्द्रता 100% से कम पर भी कुछ कुहरे या कुहासो का पाया जाना इसी का परिणाम है।

5.11 यदि ओसाक 0^0C से कम है, तो जल वाष्प हिमकणो के रूप में सघनित होगा। गैस से सीधे-ठोस मे परिवर्तित होने की यह क्रिया **उर्ध्व-पातन** (सब्लीमेशन) कहलाती है। अत्यधिक सर्दियो वाली रात्रि मे ओसाक हिमाक बिन्दु से साधारणत नीचे आ जाता है और भूमितल की हवा जब इस सीमा के नीचे

शीतल हो जाती है, तो घास या फसल की पत्तियो पर, हिम कणों के रूप में जम जाती है। इसी को तुषार या पाला के नाम से जाना जाता है।

5.12 वायु विलय (Aerosol)

वायुमण्डल मे निलम्बित ठोस या द्रव के सूक्ष्म कण वायु विलय कहलाते है। वायु विलय की सान्द्रता प्रति घन सेमी प्राकृतिक हवा मे इनकी सख्या से जानी जाती है। इनका आकार साधारणत 10^{-7} से 10^{-3} सेमी व्यास तक का होता है। ये वायु विलय आर्द्रता ग्राही प्रकृति के होने पर सघनन केन्द्रक का कार्य कर सकते हैं। 10^{-7} सेमी से कम व्यास वाले कण, जो वायुमण्डल मे बहुत कम पाए जाते है, ब्राउनियन-कण कहलाते है और इनकी गति ब्राउनियन गति कहलाती है। ये कण इतने छोटे होते हैं कि इन पर सघनन होना सम्भव नही है।

10^{-3} सेमी व्यास से बडे कण भारी होने के कारण, वायु के बहाव में न थम कर बूँदों के रूप मे नीचे गिरना आरम्भ कर देते है।

वायु विलय साधारणत तीन वर्गों मे बाटे जा सकते हैं

(1) एटकन केन्द्रक

ये 10^{-7} से 10^{-5} सेमी व्यास के सूक्ष्मकण होते हैं, जो साधारणत अवक्षेपण मे कोई भाग नही लेते। इनकी सान्द्रता महासागरो के ऊपरी वायुमण्डल मे निम्नतम होती है, जहां प्रति घन सेमी एटकन केन्द्रक कुछ सौ की सख्या मे मिलते हैं। औद्योगिक नगरो मे भूमि तल के आसपास एटकन केन्द्रको की सान्द्रता कुछ लाख प्रति घन सेमी तक पायी जाती है। किसी स्थान विशेष पर इनकी सान्द्रता, मौसम तत्वो, जैसे-वायु वेग, सवाहनिक मिश्रण, आर्द्रता, सौर ऊष्मा आदि पर निर्भर करती है।

(2) बृहत् केन्द्रक

ये कुछ बडे (10^{-5} – 10^{-4} सेमी व्यास) केन्द्रक है, जो मौसमी तत्वो द्वारा अपेक्षा कृत कम प्रभावित होते हैं। इनकी सान्द्रता कुछ से लेकर कुछ सौ केन्द्रक/घन सेमीतक पायी जाती है। औद्योगिक क्षेत्रो में प्रदूषको के कारण सान्द्रता और बढ जाती है।

(3) विशाल केन्द्रक

ये सबसे बडे आकार (10^{-4} – 10^{-3} सेमी व्यास) के वायुविलय हैं, जो अवक्षेपण मे सबसे अधिक भाग लेते हैं। समुद्रो के ऊपर नमक कणो तथा औद्योगिक क्षेत्रो मे प्रदूषको के रूप मे इनकी अधिकता पायी जाती है। जलकणो के बनने के समय, सभी बृहत् और विशाल कण सघनन केन्द्रक बनाने की क्षमता रखते हे।

5.13 वायुविलय के स्रोत

वायुमण्डलीय वायु-विलय निम्नाकित पाच विधियो द्वारा उत्पन्न होते है

(1) जलवाष्प के सघनन या उर्ध्वपातन।

(2) मानव निर्मित औद्योगिक चिमनियो तथा मोटर गाड़ियो द्वारा निकले प्रदूषक।

(3) वायुमण्डलीय ट्रेस गैसो पर सौर विकिरण तथा आर्द्रता के फोटो रासायनिक प्रक्रिया द्वारा ।

(4) पृथ्वी सतह के यान्त्रिक विनाश या अपरदन (erosion) द्वारा उत्पन्न ठोस कणो का वायुमण्डल मे प्रकीर्णन (dispersal) ।

समुद्र से नमक के कणो तथा थल से खनिज धूल कणो का वायुमण्डल मे व्याप्त होना इसका उदाहरण है ।

(5) इन केन्द्रको के स्कन्दन (Coagulation) से जो दूसरे केन्द्रको से मिलकर बडे कणो का निर्माण करते हैं ।

5.14 मेघों का बनना

वायुमण्डल मे जलकणो या हिमकणो का चाक्षुप (Visual) रूप बादल कहलाता है । मेघ कण जलवाष्पो के संघनन द्वारा उत्पन्न होते है ।

हवा का कर्षण (drag) प्रतिरोध इन मेघ कणो को नीचे गिरने से रोकता है । ये कण हवा में तैरते हैं तथा विभिन्न प्रक्रमों के अन्तर्गत विकसित होते रहते है । कोई मेघकण जब पर्याप्त आकार ग्रहण कर लेता है, तो अपने भार के कारण वर्षा की बूँदो के रूप मे गिरने को बाध्य हो जाता है । जब मेघ कण का भार कर्षण प्रतिरोध के ठीक बराबर हो जाता है तो वह जिस वेग से नीचे की ओर गिरता है वह उसका अन्तिम वेग (terminal velocity) कहलाता है । इस अवस्था मे त्वरण शून्य होता है । अन्तिम वेग का मान मेघ कणो के आकार के साथ बदलता जाता है । बडे कण, छोटे कणो की अपेक्षा तीव्र गति से गिरते है ।

कर्षण प्रतिरोध (D), अन्तिम वेग (v) तथा बूँद का व्यास (d) निम्नांकित सम्बन्धो मे बँधे है .

$$D = K\rho v^2 d^2,$$

जहाँ K एक स्थिराक तथा ρ हवा का घनत्व है । जल कणो के विभिन्न आकारो के लिए v का मान सारिणी (5.1) मे दिया गया है ।

सारिणी (5.1)

कणों का विवरण	कणों का व्यास (मिमी)	अन्तिम वेग (मीटर/सैकण्ड)
वर्षा की बडी बूँद	5	8.9
वर्षा की छोटी बूँद	1	4.0
वर्षा की सूक्ष्म बूँद	0.5	2.8
फुहार कण	0.2	1 5
वृहत् मेघ कण	0.1	0.3
साधारण मेघ कण	0.05 से 0.01	0.076 से 0.003
सूक्ष्म कण	0·001	·0007

5–6 मिमी व्यास से बडी जल की बूँदे कई बूँदो मे साधारणत टूट जाती हे, अत वास्तविक रूप मे v की अधिकतम सीमा निर्धारित की जा सकती हैं।

5·15 सामान्य रूप से हवा का, ओसांक के नीचे तक शीतलन निम्नाकिन प्रक्रमो द्वारा होता हे :

(1) ठंडे भूमितल से संचालन द्वारा शीतलन

इस प्रक्रम से भूमि तल और उसके समीप की वायु तह शीतल होती हे, जिससे जल वाष्प ओस कणो के रूप मे सघनित हो जाते हैं। यदि ओसाक 0°C से कम हुआ, तो वाष्प का उर्ध्वपातन तुषार के रूप मे सम्भव है। विक्षुब्ध (turbulent) मिश्रण द्वारा यदि शीतलन कुछ ऊपर तक फेल गया तो कुहरा या कुहासा उत्पन्न हो सकता है।

(2) वायु राशियों के उत्थापन से प्रसार के कारण

रुद्धोष्म शीतलन होता है और इसी शीतलन के कारण, वाष्प सघनित होकर होकर मेघकणो को जन्म देते है।

सवाहनिक धाराओ के अतिरिक्त पर्वतीय ढाल तथा विक्षोभो द्वारा भी वायु राशियो ऊर्ध्वाधर गति प्राप्त कर लेती है।

(3) विकिरण द्वारा शीतलन

(4) शीतल हवा या नमी के अभिवहन से

5.16 उत्थापन सघनन स्तर (L C. L.) पर सघनन क्रिया आरम्भ होती है, अत इस-स्तर को सवाहनिक मेघो का आधार माना जा सकता हे तथा इसकी ऊँचाई टी फाई ग्राम द्वारा सरलतापूर्वक पढी जा सकती है।

उत्थापन संघनन स्तर की ऊँचाई ज्ञात करने की एक विधि और है।

असतृप्त वायु राशि का ह्रास दर (D. A L R) = 10°C प्रति किमी। ऊँचाई के साथ ओसांक भी घटता जाता है, जिसका ह्रास दर सामान्य अवस्था मे लगभग 1.7°C/ किमी पाया जाता है। मान लीजिए, भूमितल पर वायु राशि का ताप मान T तथा ओसाक T_d है। वायु राशि के उठने से T, 10°C/किमी तथा T_d, 1.7°C/ किमी की दर से कम होता जाएगा। उत्थापन संघनन स्तर पर वायु राशि सतृप्त हो जाएगी। अत T और T_d बराबर हो जाएँगे।
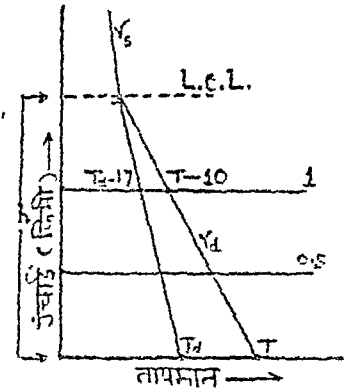
चित्र (5·1)

चूँकि 1 किमी चढ़ने मे T और T_d का अन्तर (10–1·7) = 8.3°C/ किमी. घटता है, अत. अन्तर $T-T_d$ को शून्य कर देने मे वायुराशि को यदि h ऊँचाई तक उठना पड़े, तो

$$h = \frac{1000}{8\,3}(T-T_d) \text{ मीटर}$$

$$= 120\,(T - T_d) \text{ मीटर (लगभग)}$$

h उत्थापन संघनन स्तर की ऊँचाई है।

5.20 वक्रता और विलेय प्रभाव (Curvature and Solute effect)

जब हवा संतृप्त हो जाती है, तो उसका वाष्पदाव, सतृप्त वाष्पदाव कहलाता है। इस अवस्था मे वायुराशि मे वाष्प और जल कण सन्तुलन की अवस्था मे रहते हैं। संतृप्त वाष्प दाव का मान विभिन्न वक्रता सतहों पर अलग-अलग होता है।

यदि किसी समतल सतह पर शुद्ध हवा का संतृप्त वाष्प दाव e_s और किसी वक्र सतह पर e'_s हो तो

$$e'_s = e_s \left(1 + \frac{k}{r} \right)$$

जहा k, एक धनात्मक स्थिरांक तथा r सतह की वक्रता त्रिज्या है। वायु मण्डलीय सघनन साधारणत गोलाकार (उत्तल) सतह वाले केन्द्रको पर होता है। इस सम्बन्ध मे दो निष्कर्ष निकलते है ·

(1) वक्र तलो (उत्तल) पर सतृप्त वाष्प दाव की मात्रा अधिक है। अत सघनन केन्द्रको पर वाष्प को सघनित होने के लिए अति-संतृप्त होना अनिवार्य है। यह प्रभाव सघनन अर्थात् मेघकणो की उत्पादन क्षमता को घटाता है।

(2) r, जितना कम होगा (अर्थात् मेघकण जितने छोटे होंगे) अति-सतृप्तता की आवश्यकता उतनी ही अधिक होगी। बूँदे बड़ी होने पर अपेक्षाकृत सरलता से उन

पर सघनन हो जाता है। स्पष्ट है कि मेघ कणो की वृद्धि दर उनके आकार के समानुपाती होगी अर्थात् बडे कण छोटे कणो की अपेक्षा तेजी से विकसित होगे।

उपर्युक्त प्रभाव सघनन पर वक्रता-प्रभाव कहलाता है।

5 21 वायुमण्डलीय हवा सामान्यत प्रदूषणों से बिल्कुल मुक्त नही होती। इसमे कुछ लवण सदा घुले रहते है। यह विलयन भी संतृप्त दाव पर प्रभाव डालता है, जिसे विलेय-प्रभाव कहते हे। शुद्ध हवा की अपेक्षा दूषित हवा किसी सतह पर शीघ्र सघनित होने की प्रवृत्ति रखती हे। यह प्रभाव मेघ कणो की वृद्धि के अनुकूल और वक्रता प्रभाव के विपरीत होता है।

यदि किसी सतह पर शुद्ध हवा का संतृप्त वाष्प दाव e_s तथा प्रदूषण युक्त हवा का संतृप्त वाष्प दाव e''_s हो, तो

$$e''_s = e_s\left(1 - \frac{C}{r^3}\right)$$

जहाँ r सघनन केन्द्रक (मेघ-कण) की त्रिज्या तथा C एक स्थिराक हे। यह स्थिराक घुले हुए लवण की सान्द्रता तथा उसके आणविक भार पर निर्भर करता है। इस समीकरण के अनुसार, दूषित हवा का संतृप्त वाष्प दाव, शुद्ध हवा के संतृप्त वाष्प दाव से कम होगा, अर्थात् दूषित हवा, शुद्ध हवा से पहले ही संतृप्त हो जाएगी।

5.22 उपर्युक्त दोनो प्रभावो के सयुक्तीकरण से निम्नाकित समीकरण प्राप्त होता है

$$e_{sc} = e_s\left(1 + \frac{A}{r} - \frac{B}{r^3}\right)$$

जहाँ A और B स्थिराक है और e_{sc} परिणामी संतृप्त वाष्प दाव है।

यदि $\left(\frac{A}{r} - \frac{B}{r^3}\right)$ धनात्मक है, तो वक्रता प्रभाव प्रमुख होता है। इस दशा मे सघनन के लिए अतिसंतृप्तता की आवश्यकता होगी। सापेक्ष आर्द्रता 100% से अधिक पायी जाएगी। बडे मेघ कणो के लिए (जहाँ r का मान अधिक हो) यह स्थिति लागू हो सकती है।

बहुत छोटे कणो के लिए साधारणत $\left(\frac{A}{r} - \frac{B}{r^3}\right)$ ऋणात्मक हो जाती है तथा इस अवस्था मे विलेय प्रभाव प्रमुख हो जाता हे, जिससे 100% से कम सापेक्ष आर्द्रता पर भी केन्द्रको पर सघनन हो सकता है।

छोटे कणो पर विलेय प्रभाव तथा बड़े कणो पर वक्रता प्रभाव की प्रमुखता चित्र (5.2) मे स्पष्ट की गई है ।
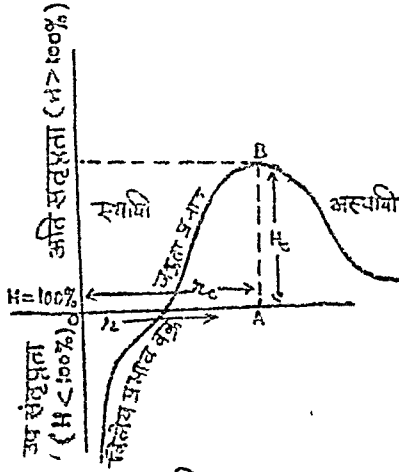
चित्र (5.2)

r बढ़ने से H का मान बढ जाता है, किन्तु यह मान एक उच्चतम विन्दु (H_c) के बाद r के साथ घटने लगता है । H_c को क्रान्तिक सापेक्ष आर्द्रता तथा उसके संगत अर्द्ध व्याम r_c को क्रान्तिक अर्द्ध व्यास कहते है । क्रान्तिक रेखा AB के दायी ओर जलकणो से वाष्पीकरण नही होता, जबकि वायी ओर होता रहता है । दूसरे शब्दो मे AB से वायी ओर जहां H घटने से r का मान घटता है, स्थायी वायुमण्डल की अवस्था रहती है, जबकि दायी ओर का वायुमण्डल अस्थायी होता है । इस प्रकार दायीं ओर H का मान घटने पर γ का घटना समझाया जा सकता है ।

$$\text{क्रान्तिक विन्दु B पर} \frac{dH}{dr} = 0, \text{ जहां } H = 1 + \frac{A}{r} - \frac{B}{r^3}$$

$$\therefore \quad r_c^2 = \frac{3B}{A}$$

5.23 उपर्युक्त व्याख्या से यह स्पष्ट है कि जैसे-जैसे जल कण वडे होते जाते हैं, सघनन के लिए सामान्य संतृप्तता (H = 100%) के निकट होते जाते है तथा इन पर वक्रता और विलेय, दोनो प्रभाव कम हो जाते हैं । एक सीमा के वाद जल की बूंद शुद्ध जल तथा समतल सतह की ही उपगामी वन जाती है ।

5.24 इस प्रकार मेघ कणो की वृद्धि दर निम्नाकित वातो पर निर्भर करती है

1. केन्द्रक का आकार
2. केन्द्रक की प्रकृति
3. हवा की अति-संतृप्तता

4. हवा का प्रसरण-गुणांक
5. केन्द्रक की ताप सचालकता

कणों का अर्द्ध व्यास और समय का ग्राफ अर्द्ध घन परवलीय (semi cubical parabola) चित्र (5.3) होता है। यदि तापमान 0°C, सतृप्तता 105% तथा केन्द्र का प्रारभिक अर्द्ध-व्यास .00075 मि मी. हो, तो कण को,

001 मि.मी. होने मे 2 सैकण्ड,
01 मि.मी होने मे 2700 सैकण्ड
तथा .04 ,, 45000 सैकण्ट लगेंगे।

चित्र (5·3)
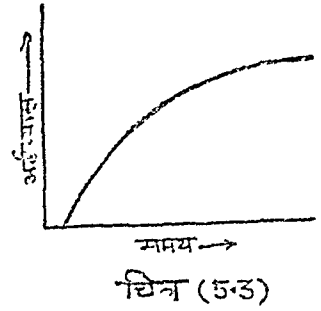
5.30 मेघों का वर्गीकरण

शीतलन तथा संघनन प्रक्रमों के आधार पर, सन् 1803 में पहली बार ल्यूक होवर्ड ने मेघों का, विभिन्न प्रकारो में सफलता पूर्वक वर्गीकरण किया। तब से कई अन्तर्राष्ट्रीय समितियो ने मेघो के नए-नए नाम देकर अनेक वर्गीकरण प्रस्तुत किए। वर्तमान स्वीकृत वर्गीकरण विश्व मौसम सघ के तत्वावधान मे 'मेघ और जलों की अध्ययन समिति' ने तैयार किया, जो सन् 1956 में मेघ-एटलस के नाम से चार भागो मे प्रकाशित किया गया है।

मेघो का बनना, उनमें वृद्धि या ह्रास होना वायुमण्डल में एक अविरत प्रक्रम है, अत व्यष्टित्व (individuality) के आधार पर, अनगिनत प्रकार के मेघ सम्भव हैं, अत उनके वर्गीकरण के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण धाराएँ निश्चित करली गई हैं, जैसे —

1 भूमितल से मेघ के आधार तथा शीर्ष की ऊँचाई
2 मेघ के उर्ध्वाधर विस्तार का माप
3. मेघ कणों की प्रकृति (वाष्प कण, जल कण या हिम कण) .

5 31 प्रेक्षणो से यह ज्ञात हो चुका है कि मेघों के आधार (निचला तल जो भूमि से दिखाई देता है) की ऊँचाई अलग-अलग प्रकारो के लिए अलग-अलग होती है। उष्ण कटिबन्धो मे यह ऊँचाई समुद्रतल से 18 किमी ऊँचाई तक साधारणत: हो सकती है। उच्च अक्षांशो मे यह ऊँचाई कम होती जाती है, क्योकि मेघ सामान्य रूप से क्षोभ सीमा के नीचे ही बनते है और यह सीमा अक्षांशों के साथ घटती जाती है।

आधार तल की ऊँचाई के अतिरिक्त मेघो का उर्ध्वाधर विस्तार अलग-अलग पाया जाता है। कुछ मेघ पतली तह के 'स्तरी प्रकार' के होते हैं, तो कुछ उर्ध्वाधर वायुमण्डल मे बहुत ऊँचाई तक स्तम्भ की भाति विकसित रहते हैं, जैसे— वज्रपात के मेघ। सवाहनिक धाराएँ तथा वायुमण्डलीय अस्थिरता मेघो का उर्ध्वाधर विकास करने मे सहायक होती है।

मेघ कणो का प्रकार भी कुछ सीमा तक मेघ को अलग-अलग पहचानने मे सहायक हो सकता है। निचले स्तर पर बनने वाले मेघ, वाष्प या जल कणो से बनते

है जबकि हिमांक तल से ऊपर मेघ साधारणत हिम कणो या कुछ मात्रा मे अति-शीतल, जल कणो से युक्त रहते है ।

5 32 आधार तल की ऊँचाई के आधार पर मेघ तीन समूहो मे विभक्त किए गए है;

(1) निम्न मेघ (2) मध्यम मेघ (3) उच्च मेघ ।

इन मेघो के आधार तलो की ऊँचाइयां वायु मण्डलीय कारणो से उष्ण कटिबन्ध, मध्य अक्षांश तथा ध्रुवीय क्षेत्रों के लिए अलग-अलग निश्चित की गई है । इस प्रकार .

सारिणी (5.1)

मेघ-आधार तलों की ऊँचाई सीमा

मेघ समूह	उष्ण कटिबंध	शीतोष्ण कटिबंध	ध्रुवीय क्षेत्र
निम्न मेघ	भूमि तल–2 किमी.	भूमि तल–2 किमी	भूमि तल–2 किमी.
मध्यम मेघ	2–8 किमी.	2–7 किमी.	2–4 किमी
उच्च मेघ	6–18 किमी	5–13 किमी	3–8 किमी.

उच्च मेघो की ऊपरी सीमा विभिन्न अक्षांशो मे वहा की क्षोभ सीमा की औसत ऊँचाई मे लगभग बराबर ही रखी गई है ।

5.33 मेघ-वंशो के आधार पर उपर्युक्त समूहो का पुन. उप विभाजन किया गया है । मुख्य मेघ प्रकार सारिणी (5.2) मे दिये गये है । अन्तिम कॉलम मे इन प्रकारो का संक्षिप्त नाम दिया गया है, जो इनके लैटिन नामो के संक्षिप्ती करण से बनाया गया है ।

निम्न मेघ पुन दो उप-समूहो मे बाँट दिए गए है

1 वे मेघ, जिनका ऊर्ध्वाधर विस्तार नही होता है । ये साधारणतः एक पतली तह के रूप मे क्षैतिज विस्तार के मेघ है । इन्हे स्तरी-मेघ कहते है ।

2. वे मेघ जिनमे अत्यधिक ऊर्ध्वाधर विस्तार होता है । ऊर्ध्वाधर वायु-धाराओ द्वारा आर्द्रता के उत्थापन के परिणामस्वरूप ही इन मेघो का विकास होता है । ये कपासी या ऊर्ध्व विस्तार के मेघ कहलाते है ।

सारिणी 5 2

मेघ समूह	उप विभाजन	सक्षिप्त नाम
उच्च मेघ	1 पक्षाभ (Cirrus) 2. पक्षाभ स्तरी (Cirrostratus) 3. पक्षाभ कपासी (Cirrocumulus)	Ci Cs Cc
मध्यम मेघ	1 मध्य स्तरी (Altostratus) 2. मध्य कपासी (Altocumulus)	As Ac
निम्न मेघ 1. निम्न स्तरी मेघ	1 स्तरी (Stratus) 2 स्तरी कपासी (Strato cumulus)	St Sc
2 ऊर्ध्व विस्तार के मेघ	3. कपासी (Cumulus) 4 कपासी वर्षी या वज्रपात मेघ (Cumulonimbus or Thundercloud)	Cu Cb

5 34 उपर्युक्त मेघ प्रकारो का सक्षिप्त परिचय निम्नाकित है

(1) पक्षाभ मेघ

श्वेत तन्तुओ या सकीर्ण बैंड के धब्बो जैसी आकृति का मेघ है, जो भूमितल मे रेशम के रेशो की तरह दिखाई देता है। यह मेघ मुख्यत हिमकणो से बना होता है और अनुकूल परिस्थितियो मे स्तरी पक्षाभ या कपासी पक्षाभ मे विकसित हो सकता है। ह्रास होने पर यह मेघ समाप्त हो जाता है।

(2) पक्षाभ कपासी

यह पतले श्वेत धब्बो या तहो का मेघ है लेकिन ये तहे दानो या उर्मिकाओ की आवृति की छोटी-छोटी लहरो द्वारा बनी होती है। ये लहरे एक दूसरे के समानान्तर स्थापित होकर एक नियमित व्यवस्था प्रस्तुत करती है। अधिकाश लहरो की पट्टी 1 अश से कम चौड़ी होती है।

समझते, अत इसे मेघ प्रकारो की प्रस्तुत विभाजन सूची मे स्थान नही दिया गया है।

मध्य स्तरी मेघ साधारणत: जलकणो तथा आंशिक तौर पर हिमकणो से बना होता है। इसकी वृद्धि घने मध्य स्तरी या स्तरी मेघ मे होती है। कही-कही कपासी स्तरों मे भी यह परिवर्तित हो जाता है। ह्रास के समय यह विरल होता जाता है और अन्त मे समाप्त हो जाता है।

(6) स्तरी कपासी

यह सफेद या भूरी चादर अथवा तहो वाला सामान्य रूप से अविच्छिन्न मेघ है। तहो की मोटाई 100 से 1000 मीटर तक पाई जाती है। अधिक भूरे भाग साधारणतः गोलाकार मेघ राशियो अथवा बेलनाकार मेघ राशियो से बने होते है, जो कही-कही नियमित और कही अनियमित आकृतियाँ धारण किए रहते है। नियमित गोलाकार वायुराशियो की चौडाई लगभग 5 अंश होती है। यह मेघ जल-कणो से बना होता है, जिसमे अक्सर बडी बूँदे पर्याप्त सख्या मे विद्यमान रहती है। इसकी वृद्धि साधारणत विशाल कपासी मेघो मे तथा ह्रास छोटे कपासी मेघो मे हुआ करता है।

(7) स्तरी

यह भूरे बादलो की अविच्छिन्न समतह होती है, जो आकाश मे एक क्षैतिज चादर की तरह विस्तृत होती है। यह मेघ भूमि तल से कुछ ही ऊँचाई पर (लगभग 600 मीटर) साधारणत तेज गति से चलता हुआ दिखाई देता है। ऊंचे स्थानो पर यह कुहरे का आभास देता है। इसका ऊर्ध्वाधर विस्तार 50 मीटर से 300 मीटर तक हो सकता है। तह इतनी पतली होती है कि सूर्य-किरणो को रोक नही पाती। परिस्थितियो के अनुसार, स्तरी मेघ, कपासी या मध्य-स्तरी मे रूपान्तरित हो सकता है।

(8) कपासी

यह तीक्ष्ण रूप रेखा का गहरा ऊर्ध्वाधर विस्तार वाला मेघ है, जो क्षैतिज रूप से अपेक्षाकृत बहुत कम जगह घेरता है। इसका ऊपरी भाग गुबद या मीनार की आकृति जैसा दिखाई देता है, कभी-कभी ऊपरी भाग क्षैतिज दिशाओ मे प्रसारित होकर गोभी के फूल जैसा आकार ग्रहण कर लेता है। किरणो के परावर्तन के कारण, ऊपरी भाग चमकीला दिखाई देता है, जबकि आधार काफी गहरे रग का होता है। आधार की ऊँचाई 300 से 1600 मीटर तक हो सकती है। शीर्ष साधारणत 6–7 किमी की ऊँचाई तक पहुँचता है।

कभी-कभी यह मेघ कई छोटे टुकडो मे खंडित हो जाता है, या छोटे आकार मे ही विकसित हो पाता है। इन्हे स्वच्छ मौसम कपासी कहा जा सकता है। कपासी मेघ साधारणत जलकणो और जल की बड़ी बूँदो से मिलकर बना होता है। इसकी वृद्धि कपासी वर्षी अथवा स्तरी कपासी मे तथा ह्रास मध्य कपासी मे हुआ करता है।

क्षेत्रों की केवल वही वर्षा इस सिद्धान्त से समझाई जा सकती है, जहाँ मेघ उर्ध्वाधर विस्तार के कारण हिमाक तल से बहुत आगे तक जा सकें। इसका कारण यह है कि इस सिद्धान्त मे यह कल्पना कर ली गई है कि मेघ मे अतिशीतल जल कण तथा हिमकण साथ-साथ स्थित है।

0°C से –10°C तक मेघ मुख्यत अतिशीतल जलकणो से ही बना होता है, किन्तु –10°C से –41°C तक अतिशीतल जलकण तथा हिमकण दोनो पाए जाते हे। जैसे-जैसे तापमान कम होता जाता है, हिमकणो की सख्या बढती जाती है। –41°C से कम तापमान पर मेघ पूर्णत हिमकणो से बना होता है। यह स्थिति उच्च मेघो मे रहती हे जिनसे साधारणत कोई अवक्षेपण नही पाया जाता है।

अतिशीतल जलकण के ऊपर सतृप्त वाष्प दाब, हिमकण के ऊपर के सतृप्त वाष्पदाब से अधिक होता है। इसका तात्पर्य यह हे कि हिमकण के ऊपर की हवा पहले सतृप्त हो जाएगी।

विभिन्न तापमानो पर अतिशीतल जलकण तथा हिमकणो के ऊपर सतृप्त वाष्प दाब की मात्रा सारिणी (5 3) मे दी गई हे,जिससे दोनो का अन्तर स्पष्ट हो जाता हे। यह अन्तर –12°C पर सर्वाधिक पाया गया है और इसके बाद तापमान कम होने पर अन्तर भी कम होने लगता है। इसलिए बर्जरान का सिद्धान्त इसी तापमान के आसपास सबसे अच्छी तरह लागू होता है।

जब अतिशीतल जल और हिमकण, दोनो साथ-साथ स्थित होते है, तो हिमकण के आसपास सतृप्त अवस्था पहले ही स्थापित हो जाती है, जबकि जल का वाष्पीकरण जारी रहता ह। यह वाष्पीकरण हिमकणो पर अति सतृप्तता की स्थिति उत्पन्न कर देता है, जिससे वाष्प उर्ध्वपातन द्वारा हिमकणो पर सघनित होता रहता है। इस प्रकार हिमकण मेघ कणो के निक्षेपण (deposition) से वृद्धि करते रहते है।

हिमकणो पर मेघ कणो के उर्ध्वपातन से वाष्प दाब पुन: घट जाता है, जिससे जल का वाष्पीकरण अविच्छिन्न रूप से चलता रहता है और हिमकण अतिशीतल जलकणो के मूल्य पर वृद्धि करते रहते हैं।

अपेक्षित आकार के बाद अन्तिम वेग मे ये हिमकण गिरना आरम्भ करते है तथा मार्ग मे आने वाले मेघ कणो के सघट्टन से आकार मे और वृद्धि प्राप्त करते हैं। नीचे गिरते समय उनका तापमान भी बढता जाता है। यदि तापमान पर्याप्त मात्रा मे बढ़ा, तो वे भूमि पर जल की बूँदो के रूप मे, अन्यथा तुषार के रूप मे पहुँचते हैं।

सारिणी (5.3)

तापमान (°C)	संतृप्त वाष्प दाव (मिलीवार)	
	अतिशीतल जल पर	हिम पर
0	6 11	6.11
–2	5.27	5.17
–4	4.55	4 37
–8	3 35	3.10
–10	2.86	2.60
–12	2 44	2 17
–14	2 08	1.81
–20	1 25	1.03
–30	0.51	0.38
–40	0.19	0.13
–50	0.06	0.04

5 42 सम्मिलन सिध्दान्त (Coalescence Theory)

उष्ण कटिवन्धो मे कपासी वर्षा के अलावा, वर्षा करने वाले सभी मेघ साधारणत हिमांक स्तर से बहुत नीचे ही रह जाते है और पूर्णत. जलकणो से बने होते है। इन मेघो से होने वाली वर्षा की व्याख्या सम्मिलन सिद्धान्त से होती है।

इस सिद्धान्त मे भी यह पूर्व कल्पना की गई है कि मेघ मे पहले से ही कुछ इतने वडे जल कण उपस्थित है, जो मेघ की आरोही धाराओ के विरुद्ध नीचे गिरने योग्य भार रखते है। ऐसा समझा जा सकता है कि कुछ मेघ कण, आसपास के कणो के सम्मिलन के निक्षेपण से प्रारम्भ मे ही पर्याप्त वृहत् वन जाते हैं।

नीचे गिरते हुए ये कण, मार्ग मे आरोही प्रवाह के कारण ऊपर उठते हैं तथा अन्य मेघ कणो के सघट्टन से आकार मे बढते जाते है। इसके अतिरिक्त, गिरती बूँद के कारण एक धारा रेखी (stream line) प्रवाह स्थापित हो जाता है। बूँद के मार्ग से आगे दाब कुछ बढ जाता है तथा पीछे कम हो जाता है। इस प्रकार, एक नियमित दाब प्रवणता स्थापित हो जाती है (चित्र 5 5)। इस दाब प्रवणता मे त्वरित होकर मेघ कण स्वत बडी बूँद के ऊपर बैठने लगते है।
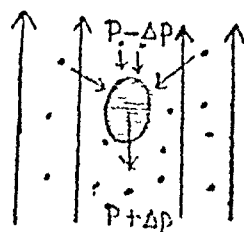
चित्र (5 5)

मेघकणो के इस दोहरे निक्षेपण मे बडा मेघ कण और तेजी से वृद्धि प्राप्त करता है। काफी बडे हो जाने से, वायु प्रतिरोध के कारण यह कई छोटे कणो मे टूट कर बिखर जाता है, जो ऊर्ध्व धाराओ द्वारा पुन ऊपर उठने लगते है। आरोही गति मे भी ये कण अन्य कणो के सम्मिलन से वृद्धि करते जाते है और क्रान्तिक अवस्था मे पहुँच कर पुन भार से नीचे गिरने लगते है तथा उपर्युक्त प्रक्रम दोहराते जाते है।

इस प्रकार, केवल कुछ बडी बूँदे शृंखला प्रक्रम द्वारा असंख्य बडी बूँदे उत्पन्न कर देती है, जिससे वर्षा आरम्भ हो जाती है।

स्पष्ट है कि इन प्रक्रमो के लिए तीव्र ऊर्ध्व वायु धाराएँ होनी आवश्यक है। ऐसी दशा अस्थायी वायुमण्डल मे पायी जाती है, जिसमे साधारणत कपासी समूह के मेघ विकसित होते है।

5 43 अत. विषम आकार के मेघ कणो, जिनमे कुछ पर्याप्त बडे हो, की उपस्थिति मे सम्मिलन द्वारा गुरुत्व क्षेत्र मे मेघ कण वृद्धि करते रहते है। इस प्रक्रम मे वृद्धि दर मेघकणो के आकार तथा सान्द्रता पर निर्भर करेगी।

लेगमूर (1948) की गणना के अनुसार, यदि सम मेघ (1 ग्राम प्रति घन मीटर, वाष्प), 02 मिमी व्यास के समान जलकणो से बना हो और बडे कणो का व्यास 03 मिमी. हो, तो सम्मिलन द्वारा बडे कण की वृद्धि दर सारिणी (5.4) के अनुसार होगी;

सारिणी 5 4

बूँद का व्यास (मिमी)	सचयी समय (मिनट)	सचयी अवतलित दूरी (मीटर)
0 03	0	0
0 04	45	65
0 06	74	163
0 1	92	322
0 2	105	650
0 5	116	1475
1 0	123	2675

ये आँकडे केवल एक उदाहरण के तौर पर लिए जाने चाहिए, न कि इन प्रक्रियाओ के आकिक मान के तौर पर।

5 44 हिम क्रिस्टल सिद्धान्त प्रारम्भिक अवस्था मे सम्मिलन सिद्धान्त से अधिक क्रियाशील रहता है किन्तु बाद मे सम्मिलन प्रक्रियाओ मे वृद्धिदर अधिक तीव्र हो जाती है। ऐसा सोचा जा सकता है कि उन सभी मेघो मे, जिनमे हिमकण विद्यमान है, हिम क्रिस्टल की विधि का ही, अवक्षेपण प्रक्रम के प्रारम्भीकरण मे प्रमुख हाथ रहता है। सम्मिलन क्रिया-विधि, हिमकणो की अनुपस्थिति मे अवक्षेपण प्रक्रम प्रारम्भ कर सकती है। किन्तु क्रान्तिक आकार (त्रिज्या = r_c) के बाद सघटन और सम्मिलन से ही मेघ कण प्रमुख रूप से संवृद्ध होते रहते है।

5.45 यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि सम्मिलन और सघटन प्रक्रिया के अन्तर्गत, क्यो नही सभी मेघ विकसित होकर अवक्षेपण देते? गणना द्वारा यह निष्कर्ष निकाला गया है कि प्रत्येक मेघकण का कम से कम एक निश्चित आकार होता है, जिसके नीचे वे सघटन करने मे असमर्थ रहते हैं। जैसे 0.045 मि.मी. व्यास मे छोटा मेघकण 012 मि मी. व्यास के कणो से सम्मिलित नही हो सकता। वास्तव मे छोटे कणो से युक्त मेघ अवक्षेपण मुक्त करने की क्षमता नही रखते। सैद्धान्तिक गणनाओ से ज्ञात होता है कि सम्मिलन योग्य वही मेघ कण है जिसका व्यास कम से कम 0.3 मि.मी. है। डीम (1948) के अनुसार, स्वच्छ मौसम कपासी

तथा स्तरी कपासी मेघ, वृहत् कपासी तथा स्तरी मेघो की अपेक्षा सूक्ष्म कणों से बने होते है।

इसके अतिरिक्त कुछ मेघ ऐसे अवक्षेपण मुक्त करते है, जो वाष्पीकरण के कारण मार्ग मे ही लुप्त हो जाते है।

5 50 अवक्षेपण के प्रकार

(1) फुहार (drizzle)

यह सूक्ष्म जलकणों (व्यास 0.5 मि मी. से कम) का सम अवक्षेपण है। फुहार साधारणत शान्त या धीमी वायु-धारा मे ही गिरती है। आरोही वायु धारा तेज होने से, फुहार कण छोटे होने के कारण नीचे नही गिर सकेंगे। फुहार साधारणत स्तरी मेघ द्वारा उत्पन्न होते है।

(2) वर्षा (rain)

0.5 मि मी व्यास से बडी बूँदो का अवक्षेपण वर्षा कहलाता है। इन बूँदो की दीर्घतम सीमा 5.5 मि मी. है। इससे बडी बूँदें साधारणत टूट जाया करती है। वर्षा As, Sc, St, Cb और Cu बादलो से हो सकती है।

(3) बौछार (shower)

थोडे समय की तेज और बडी बूँदो वाली वर्षा, बौछार कहलाती है। यह साधारणत Cu और Cb मेघो से सम्बन्धित घटना है। अन्य मेघ स्टेशन से गुजरते समय बौछार दे सकते हैं।

(4) हिमकारी वर्षा (freezing rain)

वह वर्षा, जो भूमि पर जल के रूप मे पहुँचती है, पर भूमि पर पहुँचने के बाद जम जाती है, हिमकारी वर्षा कहलाती है।

(5) तुषार पात (Snow fall)

सफेद बर्फ के रवेदार टुकडो की वर्षा तुषार कहलाती है। ये रवे अपारदर्शी तथा सितारो जैसी आकृति के 4 या 5 मिलीमीटर व्यास के सुन्दर टुकडे होते है। बडे रवे भूमि पर तभी गिरते है, जब भूमि का तापमान कम से कम 0°C हो। भूमि का तापमान थोडा अधिक (1 से 4°C) होने से तुषार-पात पाऊडर के रूप मे होता है। तुषार पात साधारणत As, Sc, St Cu, तथा Cb मेघों से सम्बन्धित होता है।

(6) तुषार गोली (Snow pellet)

यह सफेद अपारदर्शी गोलाकार या शंक्वाकार बर्फ के दानो का अवक्षेपण है, जिसका व्यास 2 से 5 मि.मी तक हो सकता है। साधारणत भूमि से टकराने पर ये दाने टूटे जाते है। सम्बन्धित मेघ Sc या Cb हो सकता है।

(7) हिमगोली तथा हिम सूचिका (Ice pellet and Ice needle)

पारदर्शी, गोलाकार या अनियमित आकार (व्यास 5 मि मी. से कम) की गोलियाँ, मध्यस्तरी या कपासीवर्षी बादलों में प्राप्त होती हैं। बर्फ के कुछ रवे सूइयों के आकार (2 मि.मी. लम्बे) के भी अवक्षेपित होते हैं। सूइयाँ बहुत हल्की होती हैं और कभी-कभी वायुमण्डल में निलम्बित होकर प्रकाशीय घटनाएँ उत्पन्न करती हैं।

(8) सहिम वृष्टि (Sleet)

जब भूमि तल का तापमान कुछ अधिक होता है, तो तुषारपात भूमि तक आते-आते जल में पिघल जाता है। यत जल और तुषार दोनों का अवक्षेपण साथ-साथ प्रतीत होता है। यह सहिम वृष्टि कहलाती है।

(9) ओला (hail)

बर्फ के अपेक्षाकृत बड़े टुकड़ों (व्यास 5 से 50 मि मी या कभी-कभी इससे भी बड़े) का गिरना ओला कहलाता है। कुछ टुकड़े साधारणतः अल्प पारदर्शी तथा कई तहों में बने होते हैं तथा कुछ टुकड़े बहुत छोटे मुलायम सफेद बर्फ के गोले होते हैं।

ओले साधारणतः कपासी वर्षी मेघ से गिरते हैं। इस मेघ में ऊर्ध्व-प्रवाह द्वारा जलकण, जब हिमांक स्तर से ऊपर पहुँचते हैं, तो कुछ छोटे हिमकण के रूप में जम जाते हैं। ये कण अतिशीतल जल के सह-अस्तित्व में बर्जेरान प्रक्रम के अनुसार आकार में वृद्धि प्राप्त करते हैं तथा भार के कारण नीचे गिरते समय संघटन द्वारा और बढ़ते जाते हैं। अत्यधिक तीव्र ऊर्ध्व प्रवाह में कण पुनः उठते हैं और उसी प्रक्रम से उन्हें और वृद्धि करने का पर्याप्त समय मिल जाता है। अतः ओलों के विकास के लिए आवश्यक है कि ऊर्ध्वाधर विकास के मेघ बहुत तीव्र वायुधाराओं से युक्त हों। हर बार उठने और गिरने से इन टुकड़ों पर तुषार की नई तहें चढ़ती जाती हैं। यह दोलन क्रिया तबतक चलती रहती है, जबतक कि बर्फ के टुकड़ों का आकार ऊर्ध्व धाराओं को सन्तुलित करने में सक्षम नहीं हो जाता। यही कारण है कि साधारणतः ओलों में विभिन्न घनत्वों के बर्फ और तुषार की कई तहें पायी जाती हैं। छोटे ओले प्रायः भूमि तक आते-आते पिघल कर या तो समाप्त हो जाते हैं या बहुत छोटे हो जाते हैं।

5 60 ऊर्ध्व विस्तार के मेघ

वायुमण्डल का अस्थायित्व और नमी, ऊर्ध्व विस्तार के मेघ, जिन्हें संवाहनिक मेघ भी कहते हैं, जनित करते हैं। अस्थायित्व की तह जितनी गहरी और नमी की

चित्र (5.6)

मात्रा जितनी अधिक होगी, मेघो का ऊर्ध्व विस्तार उतना ही विशाल होगा। यदि सघनन तल के ऊपर वायुमण्डल स्थायी हो जाता है, तो वह मेघो के ऊर्ध्वविस्तार को दवा देता है, जिससे मेघ मीनार की तरह बढने के बजाय छिछले तथा चपटे होकर छोटे-छोटे टुकडो मे फैल जाया करते है। ये मेघ स्वच्छ मौसम कपासी कहलाते है और साधारणत अवक्षेपण उत्पन्न करने की क्षमता नही रखते है। स्वच्छ मौसम कपासी के लिए वायुमण्डलीय अवस्था का आकलन (estimation), चित्र (5.6) मे दिया गया है। इस प्रकार के मेघ साधारणत. गर्मियो मे दिन के समय बनते है।
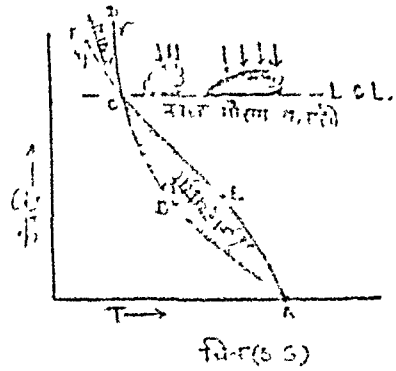
रेखा ABCD वायुमण्डलीय ह्रास दर (γ) दर्शाती है तथा AECF उठती हुई वायुराशियो का ह्रास दर (γ_p)। इन रेखाओ के कटान बिन्दु C के नीचे ABCEA भाग मे वायु अस्थायी है, अतः अवतलन प्रवाह उत्पन्न करेगी। यह अवतलन-प्रवाह, वृद्धि करते हुए बादलो का प्रतिरोध करेगा तथा उन्हे छिछला और चपटा बना देगा।

स्वच्छ मौसम कपासी बनने की अनुकूल परिस्थितिया ये है

(1) भूमितल का तीव्र उष्मन (2) पर्याप्त आर्द्रता तथा (3) ऊर्ध्व वायुमण्डल का स्थायित्व।

5.61 सघनन तल से ऊपर वायुराशियाँ साधारणत सतृप्त हो जाया करती है और सतृप्त रुद्धोष्म ह्रास दर से ऊपर बढती है। सतृप्त हवाएँ स्वत वायुमण्डल को अस्थायी रखने की प्रवृत्ति रखती है। अत सामान्य रूप से यदि हवा संघनन तल तक अस्थायी है, तो यह अस्थायित्व और अधिक ऊँचाइयो तक स्वत विकसित हो जाती है। इससे मेघ कणो के उर्ध्व विस्तार को प्रोत्साहन मिलता है और वे वृहद् कपासी या कपासी वर्षी मेघ बना सकते है।

इन मेघो का विस्तार इस बात पर निर्भर करता कि अस्थायित्व तह, सघनन तल से कितनी ऊँचाई तक व्याप्त है। γ और γ_p के कटान बिन्दु 'c' द्वारा इन मेघो का विस्तार नियन्त्रित होता है अत. बिन्दु c को मेघ का शीर्ष माना जा सकता है। चित्र (5.7)

चित्र (5.7)
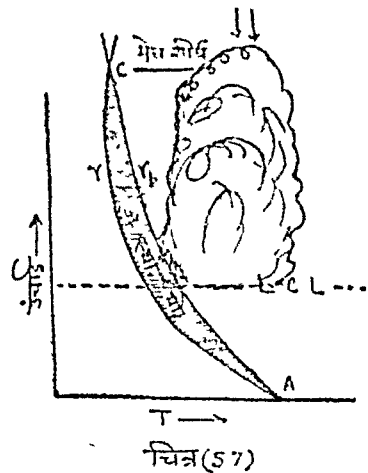
5·62 कपासी वर्षी बादलो की तीव्रता और ऊँचाई साधारणत. उष्ण कटिबन्धो मे उच्च अक्षांशो की अपेक्षा अधिक होती है। इसका कारण यह है कि क्षोभ सीमा की ऊँचाई उष्ण कटिबन्धो मे अधिक है। इस सीमा से आगे मेघ नही बढ सकते क्योकि स्थिर मण्डल स्वयं एक बहुत गहरी और स्थायी व्युत्क्रमण-तह है। इसके अलावा, उष्ण कटिबन्धो मे संघनन तल का तापमान अधिक होता है। अत वायुमण्डल अधिक वाष्प ग्रहण करने की क्षमता रखता है, जिससे स्वभावत मेघ की तीव्रता बढ़ जाएगी।

5.62 तड़ित झंझा (Thunderstorm)

जब प्रतिबंधी स्थायित्व की तह अत्यधिक गहरी होती है (कम से कम 3 किलोमीटर) और वायुमण्डल मे नमी की मात्रा भी यथेष्ट होती है, तो मेघ हिमाक स्तर से बहुत अधिक ऊँचाई तक विकसित होता है। इसका ऊपरी भाग स्वाभाविक रूप से हिमकणो तथा अतिशीतल जल कणो से मिलकर बना होता है। अधिक विकसित अवस्था मे यह कपासी वर्षी मेघ बन जाता है और बौछार, ओला तथा तडित झझा की घटनाएँ घटित करता है।

सक्षेप मे थडरस्टॉर्म के लिए निम्नांकित वायुमण्डलीय दशाएँ अनिवार्य है

(1) 3 या 4 कि० मी० ऊँचाई तक तीव्र ह्रास-दर। अर्थात् सघनन स्तर तक γ_d तथा इसके ऊपर γ_s से वायुमण्डलीय ह्रास-दर अधिक होनी चाहिये।

(2) भूमितल पर पर्याप्त नमी की मात्रा।

(3) यथेष्ट ट्रिगर क्रिया-विधि जो वायुराशियो मे प्रारम्भिक उठान उत्पन्न कर सके। यह ट्रिगर (अ) सौर ऊष्मा (ब) पर्वतीय ढाल या (स) वाताग्र-उत्थापन (Frontal-lifting) द्वारा साधारणत. मिलता है।

(4) उच्च स्तरो पर धीमी क्षैतिज वायु-प्रवाह। तीव्र क्षैतिज प्रवाह से मेघ-कणो मे क्षैतिज खिचाव पैदा होने से उनके उर्ध्वाधर विकास मे बाधा पडेगी।

5 63 जब कपासी वर्षी मेघ –20°C से ऊपर पहुँच जाते है, तो साधारणत. जल-कण बडी-बडी राशियो मे जमने लगते है। इसके लिए आवश्यक है कि निम्न तलो मे ये वायु-राशियाँ पर्याप्त उष्ण और नम हो। केवल तीव्र ऊर्ध्वाधर वायु-धारा ही इन बृहत् जल राशियो को अधिक ऊंचाइयो तक ले जाने की क्षमता रखती है।

जमी हुई राशियो मे बृहद् मात्रा मे विद्युत आवेश एकत्र हो जाते है। ये आवेश धनात्मक होते है । यो तो मेघ रहित वायुमण्डल मे भी किंचित् मात्रा मे धनात्मक आवेश वर्तमान रहते है किन्तु कपासी वर्षी मेघो की उपस्थिति मे उच्च स्तर से भूमि तक तीव्र विभव प्रवणता स्थापित हो जाती है। विद्युत बल तड़ितझझा मे अधिकतम होता है, जिससे चिनगारी विसर्जन और परिणामस्वरूप तडित जनित होती है। इन्ही विसर्जनो की ध्वनि हमे गर्जन (thunder) के रूप मे सुनाई पडती है।

5.64 गर्जन मेघ की संरचना (Structure of Thunder cloud)

गर्जन मेघ का जीवन चक्र [illegible] रणत 2–3 घन्टे मे पूरा हो जाता है। इस बीच यह ती [illegible] से [illegible] ।

1 विकासशील अवस्था या कपासी अवस्था

इस स्थिति में यह ऊपर की ओर वृद्धि करता कपासी मेघ होता है, जिसमें तीव्र ऊर्ध्वाधर वायुधाराएं (10–15 मीटर प्रति सैकण्ड) होती हैं। सम्पूर्ण मेघराशि केवल ऊर्ध्वधाराओं से भरी होती है। ये धाराएं ऊंचाई के साथ तीव्र होती जाती हैं। इस अवस्था में बादल मुख्यत उष्ण मेघ कणों तथा हिमांक स्तर के ऊपर कुछ अतिशीतल जलकणों से बना होता है। शीर्ष के आसपास हिमकण भी किंचित् मात्रा में बन जाते हैं। मेघ पदार्थ साधारणत आसपास के वातावरण से काफी उष्ण होता है।

ऊर्ध्वाधर धाराओं के कारण अक्सर विभिन्न स्तरों से क्षैतिज हवा का खिंचाव मेघ राशियों की ओर होता रहता है। यह खिंचाव मेघ राशियों को बिखरने से रोकता है तथा संगठित रूप में विकसित होने में सहायक होता है।

यह अवस्था चित्र (5.8) में दिखाई गई है।
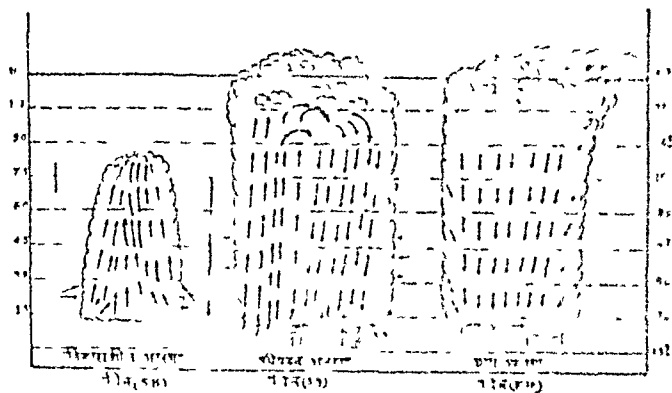
(2) परिपक्व-अवस्था (Mature-Stage)

इस स्थिति में मेघ शीर्ष –20°C के तापमान स्तर से ऊपर पहुंच चुका होता है और अवक्षेपण साधारणत प्रारम्भ हो जाता है। पूर्णत परिपक्व हो जाने पर मेघ, शीर्ष हिमांक स्तर 6–7 किमी या इससे भी अधिक ऊंचाई तक पहुंच जाते हैं। कम ऊंचाई वाले शीर्ष के बादल साधारणत अपरिपक्व होते हैं और विकसित होने की प्रवृत्ति रखते हैं। इस दशा में मेघ का ऊपरी भाग आरोही धाराओं से भरा होता है, जबकि निचले भाग में अवक्षेपण प्रारम्भ हो जाने के कारण अवतलन धाराएं प्रमुख होती हैं।

अवतलन वायुप्रवाह के कारण, निम्न भागों का तापमान S.A.L.R की दर से बढता रहता है। किन्तु ऊपर उठती हवा की तापमान-ह्रास-दर इससे तीव्र होती है। परिणामस्वरूप, अवतलित होती मेघ-राशियां उतनी गर्म नहीं हो पाती, जितनी वे ऊपर उठते समय ठंडी हुई थी। इस प्रकार, इनका तापमान आसपास की अपेक्षा कम रह जाता है। ठंडी होने के कारण अवतलित होती वायुराशियां, अवतलन के

लिए और अधिक प्रोत्साहित होती है। इस तरह अवतलन प्रवाह एक वार प्रारम्भ होकर तीव्रतर होता जाता है।

पूर्ण परिपक्वता की अवस्था मे ऊपरी भाग पर्याप्त सख्या मे बडे हिमकणो से भर जाते है, जो आरोही धाराओ के विपरीत नीचे गिरने लगते है। इस प्रकार, मेघ की परिपक्वता के साथ-साथ अवतलन प्रवाह भी ऊँचाई के प्रति बढता जाता है।

परिपक्वता की स्थिति (चित्र-5. 9) मे आरोही और अवतलन धाराएँ साथ-साथ वर्तमान रहती है। अवतलन प्रवाह साधारणत मेघ के मध्य से प्रारंभ होता है।

3. विसरण या क्षयकारी अवस्था (Dissipating-Stage)

इस अवस्था मे आरोही धाराएँ, वहुत क्षीण या नगण्य हो जाती है। मेघ के सम्पूर्ण निचले भागो मे अवतलन धाराएँ प्रमुख हो जाती है। आरोही धाराओ की क्षीणता के कारण, मेघ का आकार विक्षुब्ध होने लगता है तथा पार्श्वीय प्रसार आरंभ हो जाता है। यह प्रसार मेघ के विकास को रोककर उसका क्षय आरभ कर देता है।

मेघ अधिकतम ऊर्ध्वाधर वृद्धि को पा चुका होता है तथा शीर्ष जेट धाराओ के प्रभाव क्षेत्र मे आजाने के कारण, निहाई के रूप मे पार्श्व मे खिंच जाता है। यह निहाई मेघ का पूर्ण क्षय हो जाने के वाद पक्षाभ मेघ के रूप मे वची रहती है। तीव्र अवतलन धारा के परिणामस्वरूप, एकाएक ठडी हवाओ का तेज झोका स्क्वाल (Squall) के रूप मे पृथ्वी पर पहुंचता है।

अनिरत वर्षा तथा पार्श्वीय खिचाव के कारण, कपासी वर्षी मेघ क्षय तथा विघटन को प्राप्त होता जाता है। यह दशा चित्र (5 10) मे दिखाई गई है।

5.65 उष्ण कटिबन्धो मे तडित झझा, सौर ऊष्मा द्वारा उत्पन्न अस्थायित्व के कारण, नमी की उपस्थिति मे होती है किन्तु शीतोष्ण कटिबन्धो मे अधिकाश तडित झंझाऐं वाताग्र प्रक्रियाओ द्वारा उत्पन्न होती हैं, जिनका विवरण अध्याय 8 मे दिया गया है। सौर ऊष्मा के कारण उत्पन्न, गर्जन मेघ प्राय: दोपहर के वाद विकसित होते है और शाम तक विसरित हो जाते है।

उपर्युक्त कारणो के अतिरिक्त, दाव प्रणालिया भी साधारणत तडित झंझाऐ उत्पन्न करती है। इन प्रणालिओ मे अभिसरण द्वारा अस्थायित्व तथा नमी सरलता से आ जाती है। इनके लिए दैनिक समय का कोई वधन नही है। विभिन्न प्रणालियो द्वारा उत्पन्न झझाएँ, जो भारतीय क्षेत्रो को प्रभावित करती है, अध्याय 14 मे वर्णित है।

5 66 तडित झझा, स्थान विशेष को निम्नाकित प्रकार मे प्रभावित करती है

1 स्थान के तापमान को एकाएक घटा देती है, विशेष तौर पर जव ठण्डी हवा का झोका (Squall) आता है।

2. वायु दाब मे वृद्धि हो जाती है ।

3. अवतलन प्रवाह के कारण झोंकीला पवन बार-बार आने से वायुगति और दिशा बहुत विक्षुब्ध रहती है ।

4 उपल वृष्टि, ठण्डक उत्पन्न करने के अलावा फसलों के लिए विशेष क्षतिकारक है ।

5 67 वृष्टि प्रस्फोट (Cloud burst)

यह शब्द साधारणत कपासी वर्षी मेघो द्वारा जनित बहुत तीव्र वर्षा के लिए प्रयुक्त किया जाता है । कभी-कभी अल्पकाल मे ही अत्यन्त मूसलाधार वृष्टि होती है जो अधिकतर पहाड़ी प्रदेशो मे पायी जाती है । विकसित सवाहनिक मेघो मे जब ऊर्ध्व धाराएँ किन्ही कारणो से एकाएक रुक जाती है तो वर्षा और ओले भार के कारण तेजी से गिरने लगते है और थोड़े ही समय मे तीव्र वर्षा के रूप मे सब के सब भूमि पर आ जाते है । पहाड़ी पर चढ़ते मेघराशि मे ठण्डक के कारण और उष्ण हवाओ की पूर्ति कट जाने से ऊर्ध्व धारायें एकाएक रुक सकती है ।

5.70 कुहरा और कुहासा (Fog and Mist)

जब भूमितल के निकट की हवा सतृप्त हो जाती है, तो उसका वाष्प जलकणों मे सघनित हो जाता है । ये जलकण मेघकणो की तरह भूमितल से कुछ ऊँचाई तक निलम्बित रहते हैं और दृश्यता कम कर देते हैं । यदि जलकणो की सान्द्रता बहुत अधिक है तो वे कुहरा कहलाते है तथा कम सान्द्र होने पर कुहासा । दोनो की सीमा रेखा दृश्यता (visibility) के माप से बाध दी गई है । इस प्रकार जलकणो के निलबन से यदि दृश्यता । कि मी से कम हो जाती है, तो उसे कुहरा और यदि दृश्यता इससे अधिक है, तो उसे कुहासा कहा जाता है । सघन कुहरे मे दृश्यता कभी-कभी केवल कुछ मीटर तक सीमित रह जाती है ।

5.71 भूमि तल की असतृप्त-हवा दो प्रक्रमो से सतृप्त हो सकती है —

(अ) भूमि तल की हवा का ओसाक के नीचे तक शीतलन ।

(ब) हवा मे जल का वाष्पीकरण ।

इन दो भौतिक प्रक्रियाओ के आधार पर कुहरा कई विधियो से बन सकता है । जनन विधियो के अनुसार कुहरा निम्नाकित प्रकारो मे बांटा जा सकता है—

(अ) शीतलन प्रक्रम द्वारा उत्पन्न कुहरे

1. विकिरण कुहरा (Radiation fog)
2 अभिवहन कुहरा (Advection fog)
3 आरोही या पर्वतीय कुहरा (Upslope or mountain fog)
4 दो लगभग सतृप्त वायुराशियो के मिश्रण से उत्पन्न कुहरा ।

(ब) वाष्पीकरण प्रक्रम द्वारा उत्पन्न कुहरे

1. आर्कटिक सागर धुन्ध या वाष्प कुहरा (Steam fog)

2. पूर्व उष्णाग्र तथा उत्तर शीताग्र कुहरा (Pre warm front and post cold front fog)

5.72 विकिरण कुहरा

सर्दियो मे स्वच्छ आकाश की रातो मे बिना किसी रुकावट के अधिकतम भू-विकिरण वायुमण्डल से बाहर जाता है, जिससे भूमितल पर्याप्त ठण्डा हो जाता है। इससे कुछ ऊँचाई तक की वायु-पर्ते, सचालन द्वारा अपनी ऊष्मा धरातल को खो देती है। ताप के कुचालक होने के कारण, केवल बहुत छिछली वायु-तह ही शीतल हो पाती है। यदि शीतलन ओसाक से नीचे पहुँच जाता है, तो हवा मे उपस्थित वाष्प सघनित होकर कुहरा उत्पन्न कर देता है।

इस प्रकार के कुहरे के लिए स्वच्छ आकाश के अलावा, पर्याप्त नमी तथा बहुत धीमी हवा होनी आवश्यक है। सागर तलो पर विकिरण कुहरे की सम्भावना नही होती, क्योकि जलीय तल विकिरण द्वारा अपेक्षाकृत बहुत कम शीतल हो पाता है। विकिरण कुहरे के लिए अनुकूल दशाएँ थल के आन्तरिक भागो मे पाई जाती है, जहा ऊपर अवतलन प्रवाह प्रमुख होता हो, जो बादलो को विसरित करके उनकी नमी भूमि पर ला सके।

5 73 अभिवहन कुहरा

वायुराशियो की गति के साथ उनकी विशेषताएँ भी एक स्थान से दूसरे स्थान को अभिवहित होती रहती हैं। वायुराशियाँ स्वत नये स्थानो की विशेषताएँ आत्मसात् करके सशोधित होती रहती है।

जब कोई नम वायुराशि किसी ठडे भूमि-तल पर बहती है, तो वायुराशि शीतल हो जाती है। यदि शीतलन यथेष्ट हुआ, तो वाष्प सघनित होकर कुहरा बना देता है।

सागर तलो या तटीय क्षेत्रो मे इस प्रकार के कुहरे अधिक बनते होते हैं, जो सामान्यत. थलीय कुहरो से अधिक घने होते हैं।

अभिवहन कुहरे के लिए हवा का प्रवाह, बहुत अधिक या बहुत कम नही होना चाहिए, क्योकि कम वायु-वेग शीतलन के लिए अनुकूल नही है और अधिक वेग ऊर्ध्वाधर विक्षोभ उत्पन्न करके कुहरा कणो को बिखरा देगा। 8 से 20 किमी/घटा की हवा सामान्यत उपयुक्त होती हैं।

5 74 पर्वतीय कुहरा

पर्वतीय ढालो पर बहती आरोही हवाओ मे रुद्धोष्म शीतलन होता रहता है,जो किसी स्थान पर ओसाक के नीचे पहुँच सकता है। यदि हवाओ मे नमी की मात्रा अधिक है, तो बहुत कम ऊँचाई पर ही कुहरा बन जाता है। अन्यथा काफी ऊँचाई तक पहुँचने के बाद हवा सतृप्त होकर कुहरा उत्पन्न कर पाती है।

आरोही प्रवाह द्वारा उत्पन्न विक्षोभ (turbulence) कुहरा उत्पत्ति का विरोध करते हैं। अधिक विक्षुब्धावस्था मे कुहरे उत्पन्न नही हो पाते।

5.75 मिश्रण-कुहरा

दो लगभग संतृप्त वायुराशियाँ जब मिश्रित होती हैं, तो बिना तापमान घटाए या अतिरिक्त वाष्प दिए ही मिश्रण, संतृप्त होने की प्रवृत्ति रखता है।
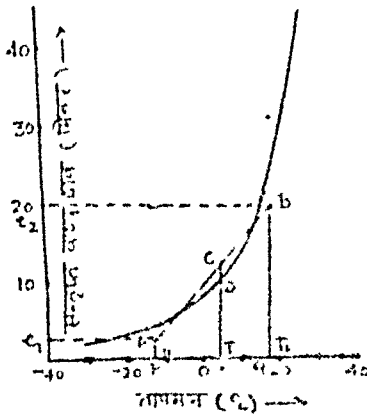
चित्र (5·11)

चित्र (5.11) के (T – e) आरेख में मान लीजिए, पहली वायुराशि का तापमान T_1 और वाष्पदाब $e_1 = AP$ तथा दूसरी वायुराशि का तापमान T_2 और वाष्पदाब $e_2 = BQ$ है।

मिश्रण का तापमान वायुराशियों की मात्राओं पर निर्भर रहता है। यदि दोनों वायुराशियों की मात्राएँ बराबर हों, तो मिश्रण का तापमान $T = \frac{T_1 + T_2}{2}$

चित्र से स्पष्ट है कि तापमान T पर मिश्रण का वाष्पदाब RC है, जो संतृप्त वाष्पदाब RD से अधिक है। अतः मिश्रण अतिसंतृप्त हो जाता है। यह अवस्था कुहरा उत्पन्न करने के लिए बहुत अनुकूल है।

वायुराशियों के सम्मिलन से उत्पन्न सीमाओं में इस प्रकार का कुहरा उत्पन्न होना बहुत सामान्य है।

5.76 वाष्प-कुहरा

यदि जलीय तल का संतृप्त वाष्पदाब (e_w) तथा इसके ठीक ऊपर की वायु तह का वास्तविक वाष्प दाब e है तो, ($e_w - e$) संतृप्तता कमी (Saturation deficit) कहलाती है। जलीय तल से वाष्पीकरण, संतृप्तता कमी के समानुपाती होता है। वाष्पीकरण तबतक होता रहेगा, जबतक वायु तह का वाष्पदाब e_w के बराबर न हो जाए।

यदि जल का तापमान, संलग्न वायु तह के तापमान से अधिक है, तो e_w का मान वायु-तह के संतृप्त वाष्पदाब (e_s) से अधिक होगा। इस दशा में वायु-तह के संतृप्त हो जाने के बाद भी, संतृप्तता कमी, ($e_w - e_s$) के बराबर विद्यमान रहेगी; फलतः वाष्पीकरण जारी रहेगा, जिससे वायु तह में अतिसंतृप्त होने की प्रवृत्ति आ जाएगी। किन्तु साधारणतः संघनन केन्द्रों की उपस्थिति में यह अतिरिक्त वाष्प, सघनित होकर कुहरा उत्पन्न कर देती है।

अतः उष्ण जल सतह पर शीतल हवा के आगमन से कुहरा आसानी से उत्पन्न हो जाता है। यह स्थिति सर्दियों में आर्कटिक सागर क्षेत्रों में साधारणतः

उपलब्ध रहती है, जहा समीप के महाद्वीपो से उत्पन्न ठडी हवाएँ सागर पर बहा करती है।

5.77 वाताग्र कुहरा

ऊपर दिए गए कारणो से स्पष्ट है कि जब उष्ण जल की वर्षा शीतल वायु-तहो के बीच से गुजरती है, तो बूँदे तेजी से वाष्पीकृत होने की प्रवृति रखती हैं। वाष्पीकरण यथेष्ट मात्रा मे होने से कुहरा उत्पन्न हो सकता है।

ऐसी स्थिति वाताग्रो से सम्बन्धित पाई जाती है। उष्ण वाताग्र के आगे तथा शीत वाताग्र के पीछे, कुहरे उत्पन्न होते है जिनका विवरण अध्याय 8 मे किया गया है।

5 78 उष्मन तथा वायुवेग की अधिकता कुहरे को क्षीण कर देते है। स्पष्ट है कि घने कुहरे (साधारणत. अभिवहन तथा पर्वतीय कुहरे) विरल कुहरो की अपेक्षा देर मे क्षीण होते है। यही कारण है कि सुबह के समय कुहरा सबसे अधिक देखा जाता है और दोपहर के बाद सबसे कम।

हवा का तापमान अधिक होने से कुहरा शीघ्र क्षीण होता है क्योकि वाष्पीकृत होने के बाद, कुहरे के जलकणो को आत्मसात् करने की क्षमता हवा के तापमान के ही समानुपाती होती है। अत सर्दियो मे उत्पन्न होने वाले कुहरे अपेक्षाकृत देर से विसरित होते हैं और उच्च अक्षांशो मे बनने वाले कुहरे तो कई दिनो तक स्थिर रहा करते हैं।

5.80 हिम अभिवृद्धि (Ice-accretion)

हिमांक स्तर से ऊपर उडने वाले विमानो के पंखो, नोदक (प्रोपेलर) या स्ट्रट आदि पर अतिशीतल जल सघनित होकर बर्फ की तह की तरह जम जाता है। यह स्थिति विमान के लिए सकटपूर्ण है क्योकि बर्फ की तह विमान पर कर्षण प्रतिरोध बढा देती है, तथा उत्थापन क्षमता 50% तक कम कर देती है, जिससे विमान को हवा मे सन्तुलित रखने के लिए अधिक ईंधन का अपव्यय करना पडता है। हिम अभिवृद्धि बादलो के अन्दर तथा बाहर दोनो स्थितियो मे सम्भव है। 0 से $-15°C$ की सीमा के मध्यम-मेघो से हिम अभिवृद्धि सर्वाधिक होती है। हिम-अभिवृद्धि के कुछ प्रकार निम्नाकित है। ये प्रकार इन बातो पर निर्भर करते है .

1. जलकणों का आकार
2. जलकणो का तापमान
3. सापेक्ष गति, जिसमे जलकण वायुयान की सतह से टकराते है।
4. हवा के इकाई आयतन मे स्थित जलकणो की सख्या।

(1) ग्लेज हिम

यह पारदर्शी और कडा हिम है, जो आगे के किनारो पर साधारणत. जमा हो जाता है। ग्लेज वडे जलकरणो या वौछार करणो के ऊर्ध्वपातन से वनता है। यह वहुत दृढता से चिपकता है।

(2) राइम हिम

यह अपारदर्शी, तथा आसानी से टूटने वाली वर्फ है, जो ग्लेज की अपेक्षा कम दृढता से चिपकती है। राइम वनने के लिए हवा मे छोटे-छोटे जलकरण वहुत अधिक सख्या मे उपस्थित होने चाहिएँ।

(3) पिच्छ तुषार (feather frost)

जव विमान ठडे क्षेत्रो से उष्ण क्षेत्र मे प्रवेश करता है, तो हवा के अदृश्य वाष्पकरण ऊर्ध्वपातन द्वारा मुलायम तुषार के रूप मे पखो या शीशो पर जम जाते है। इससे दृश्यता कम हो जाती है। अन्यथा यह तुषार विशेप सकटपूर्ण नही है।

(4) कारवुरेटर हिम

कारवुरेटर का पिस्टन खीचने से अन्दर की हवा का प्रसार होता है, जिसके शीतलन से यदा-कदा कारवुरेटर के अन्दर वर्फ जमा हो जाती है। यह जमाव गर्म करके हटाया जा सकता है।

5 81 अवतलन और व्युत्क्रमण (Subcidence and inversion)

वायु-राशि के क्रमिक अवतलन से, उसका रुद्धोष्म उष्मन होता है तथा तापमान लगभग 10°C प्रति किमी की दर से वढता जाता है। इस अवस्था मे मेघ विसरित होने लगते है तथा आसमान स्वच्छ हो जाता है। प्रतिचक्रवातो मे वृहत् वायुराशियाँ साधारणत 300 – 400 मीटर प्रति दिन की गति से अवतलित होती है।

5 82 क्षोभ मण्डल मे साधारणत तापमान ऊँचाई के साथ घटता जाता है किन्तु विशेप परिस्थितियो मे ह्रास-दर का व्युत्क्रमण सम्भव है, अर्थात् हवा की किसी तह मे तापमान, ऊँचाई के साथ अस्थायी रूप से वढता जाता है। यह क्रिया व्युत्क्रमण तथा सम्वन्धित वायुतह, व्युत्क्रमणतह कहलाती है। व्युत्क्रमण भूमितल के पास तथा उच्च वायुमण्डल—दोनो मे हो सकता है। शान्त वायु और मेघरहित आकाश वाली सर्दियो की रात मे साधारणत भूमि के विकिरण-शीतलन के कारण कुछ ऊँचाई तक व्युत्क्रमण विकसित हो जाता है। इस प्रकार का भूमि व्युत्क्रमण ध्रुवीय अक्षाशो की सर्दियो मे लगभग स्थायी विशेपता है। तटीय क्षेत्रो मे निम्न तहो का शीतलन कम होने के कारण व्युत्क्रमण सामान्यत. स्थापित नही हो पाता।

इस प्रकार के व्युत्क्रमण सूर्योदय से पूर्व सार्वाधिक तीव्र होते है, जो सूर्योदय के पश्चात् क्षीण होने लगते हैं।
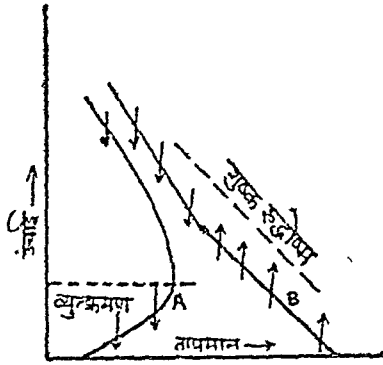
चित्र (5·12)

जब कोई उष्ण वायुराशि शीतल प्रदेश पर होकर बहती है, तो भी व्युत्क्रमण उत्पन्न हो सकता है। यदि हवा की गति तीव्र है, तो व्युत्क्रमण, तह-भूमि पर न होकर कुछ ऊपर पाया जाता है।

5.83 उच्चस्तरीय व्युत्क्रमण प्राय. अवतलन प्रवाह के कारण उत्पन्न होते है। अवतलित वायुराशि साधारणत 10°C प्रति किमी की दर से उष्ण होती जाती है। अत· किसी स्तर AB पर अवतलित वायु (B) का तापमान आसपास की वायु (A) से अधिक रहेगा। इनके मिश्रण से उत्पन्न तापमान, सामान्य तापमान से अधिक रहेगा। हो सकता है यह तापमान निम्न तल की वायु (D) के तापमान से अधिक हो जाए। इस स्थिति मे 'CD' व्युत्क्रमण तह बन सकती है।
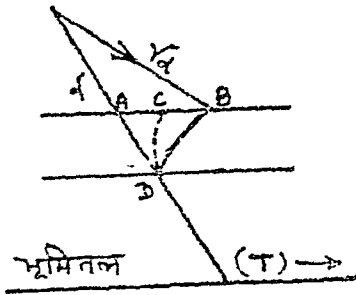
चित्र (5 13)

इस प्रकार के व्युत्क्रमण साधारणत भूमि पर नही पहुँचते है।

5.84 वाताग्र तथा विभिन्न तापमानो की वायुराशियां जब किसी स्थान विशेष से गुजरती है, तो उध्व तापमान वंटन कुछ समय के लिए विक्षुब्ध हो उठता है। ऐसी परिस्थितियो मे व्युत्क्रमण उत्पन्न हो सकता है। यदि उष्ण हवा का अभिवहन हो रहा हो, तो अभिवहन प्रवाह के निचले भाग मे तथा यदि शीतल हवा अभिवहित हो रही है, तो प्रवाह के ऊपरी भाग मे, व्युत्क्रमण बनने की प्रवृत्ति आ जाती है।
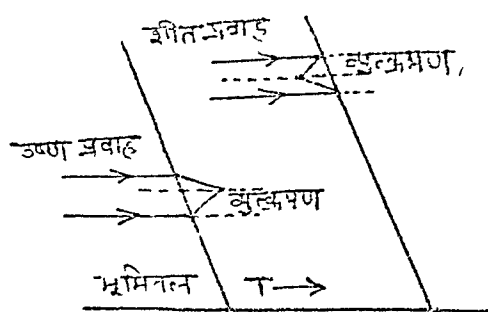
चित्र (5·14)

5 85 व्युत्क्रमण तह अत्यधिक स्थायी होती है। अत: किसी भी प्रकार के आरोही प्रवाह का विरोध करती है। सवाहनिक धाराओ के लिए यह छत की तरह रुकावट डालती है।

भूमि तल का व्युत्क्रमण प्रदूषको को प्रसरित होने से रोकता है। अत. इस समय वायुमण्डलीय प्रदूषण की सान्द्रता निम्नतम तहो मे, जिनमे हम साँस लेते है, सर्वाधिक होती है।

5 90 कृत्रिम वर्षा का सिद्धान्त

पहले लोग यज्ञो, मन्त्रो, जादू या अन्य चमत्कारो मे वर्षा के देवता वरुण या इन्द्र को प्रसन्न करके वृष्टि कराने मे आस्था रखते थे। इन देवताओ की प्रार्थना के अनेक श्लोक ऋग्वेद मे भी मिलते है, जिनका आशय है कि वे उचित समय पर वर्षा करके मनुष्य को दुर्भिक्ष और अकाल की सम्भावनाओ से मुक्त रखे। बल्कि आज भी भारत और दुनिया की अनेक आदिम जातियाँ, वर्षा के लिए नग्न नृत्यो, ढोल पीटना तथा जादू आदि की तरकीबे इस्तेमाल करती पाई जाती है। तात्पर्य यह है कि प्राचीनकाल से ही मनुष्य की यह महत्वाकाक्षा रही है कि वह जब चाहे, जहाँ चाहे, वर्षा उत्पन्न करने की क्षमता प्राप्त कर सके।

किन्तु वैज्ञानिक तथ्यो की रोशनी मे कृत्रिम वर्षा के जो सिद्धान्त प्रकट हुए है, वे अत्यन्त सरल तथा रोचक होने हुए भी प्रायोगिक तौर पर दुरुह और अनिश्चित है।

आपने खिडकी या दरवाजे के छिद्रो से आती प्रकाश किरणो की रेखा मे चमकते धूल के कण देखे होगे। इसी प्रकार वाष्प के कण वायुमण्डल मे सदा निलम्बित रहते है। साधारण अवस्था मे ये कण धूल के कणो से भी सैकडो गुनो छोटे होते है। बादलो मे वाष्प कण अपेक्षाकृत बडे और सघन होते है। किन्तु ये वाष्प या मेघ कण इतने सूक्ष्म होते है कि हवाओ के प्रतिरोध के विपरीत, पृथ्वी पर वर्षा के रूप मे गिर नही पाते। जब कभी मेघ कणो को ऐसी सुविधा प्राप्त होती है कि वे एक दूसरे से मिलकर या किसी अन्य प्रणाली द्वारा बूँदो के आकार मे यथेष्ट बडे हो जाए, तो वे भार के कारण भूमि की ओर बरसने लगते है। इस

सुविधा के अभाव मे बादल होते हुए भी, हमे वर्षा से वंचित रह जाना पडता है। मेघ कणो की यथेष्ट आकार वृद्धि ही वास्तव मे वर्षा का कारण और इस वृद्धि के लिए, सुविधा प्रदान कराना ही कृत्रिम वर्षा का सिद्धान्त है।

क्या है यह सुविधा ? इसका उत्तर ढूँढने के लिए यह अध्ययन आवश्यक है कि प्रकृति स्वय किस प्रकार मेघ कणो को वर्षा की बूंदो मे रूपान्तरित करती है।

बादलो द्वारा वर्षा होने के लिए, उनके अन्दर पर्याप्त मात्रा मे आर्द्रताग्राही सघनन केन्द्रको की उपस्थिति अनिवार्य शर्त है। जलकण, नमक, हिमकण तथा औद्योगिक चिमनियो के धुएँ मे विद्यमान प्रदूषक कण अच्छे सघनन केन्द्रक साबित होते है।

इन्ही केन्द्रको की अनुपस्थिति या अभाव मे मेघ, बिना वर्षा किए या तो विलीन हो जाते हैं या स्थानान्तरित हो जाते है। राजस्थान के वायुमण्डल मे यो तो 9–10 किमी. ऊँचाई तक धूल या रेत के कण व्यापक मात्रा मे भरे हुए है, परन्तु आर्द्रताग्राही कणो का नितान्त अभाव होने के कारण ही बहुधा देखा जाता है कि आकाश पूर्णत मेघाच्छन्न हो जाने पर भी वर्षा की बूँदे उपलब्ध नही होती।

कृत्रिम वर्षा का सिद्धान्त यही है कि आर्द्रताग्राही कणो को विमानो द्वारा बादलो के भीतर छिडक दिया जाए या फिर उन्हे भूमितल से ही धुओ के रूप मे बादलो मे बिखेर दिया जाए। इस क्रिया को बादलो की सीडिंग (Seeding) कहते हैं।

सागरो तथा अन्य स्रोतो से उठता वाष्प ठण्डा होकर, कुछ ऊँचाई के बाद सघनित होने लगता है। ये सघनित जलकण ही हमे बादलो के रूप में दिखलाई देते हैं। किन्तु वर्षा के लिये यह आवश्यक है कि छोटे-छोटे असख्य जलकण सम्मिलन द्वारा कुछ बडी बूँदो मे परिवर्तित हो जाएँ। आर्द्रताग्राही केन्द्रक इसी सम्मेलन की सुविधा प्रदान करके बादलो को वर्षा करने पर बाध्य करते है। मेघ राशियो मे सम्मिलन जितना तीव्र होगा वर्षा उतनी ही शीघ्र और तेज होगी।

5 91 बादलो को 'सीड' करने की अनेक विधियाँ प्रयोग मे लाई जा चुकी है। शुष्क बर्फ अर्थात् ठोस कार्बन डाइ आक्साइड के टुकडे बादलो मे बिखेर देना इस कडी का पहला प्रयास था। सिल्वर आयोडाइड के कण, विमानो द्वारा मेघ राशियो मे छिडकने का सफल प्रयोग हो चुका है। सिल्वर आयोडाइड भूमितल पर स्थित जनरेटरो द्वारा भी धुएँ के रूप मे बादलो मे पहुँचाए जा सकते हैं। अमेरिका और आस्ट्रेलिया मे नमक के कण और जल की बडी बूँदों द्वारा आधार से 300 मीटर की ऊँचाई मे बादलो को सीड करने का प्रयोग हो चुका है।

भारत मे पहला प्रयोग सन् 1952 मे किया गया। सिल्वर आयोडाइड और गनपाउडर युक्त एक बाक्स को गुब्बारे द्वारा बादलो मे भेजा गया, ताकि बादलो मे पहुँचते ही गनपाउडर के विस्फोट से बाक्स फट जाए।। उष्ण बादलो के ऊपर शीतल जल का छिडकाव भी किया गया। सन् 1954 और 55 मे दिल्ली—

और राजस्थान के बीच स्थित बादलो को नमक के घोल से सीड करने का प्रयोग किया गया।

इन प्रयोगो के परिणाम उत्साहवर्धक तो है किन्तु इनके आर्थिक महत्त्व को आकलित करने के लिए यह जानकारी आवश्क है कि किस सीड किए गये बादल से सामान्यावस्था की अपेक्षा कितनी अधिक और किस स्थान पर वर्षा प्राप्त हुई। सीडिंग का बिल्कुल सही-सही परिणाम ज्ञात करना, हमारे नियन्त्रण के बाहर होने के कारण, कठिन कार्य है किन्तु इस सन्दर्भ मे प्रयोग होने आवश्यक है।

5·92 वायुमण्डल विज्ञान के अध्ययन से हमे विभिन्न प्रकार के बादलो की संरचना और प्रकृति की पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो चुकी है। अत सीड करने के लिये उपयुक्त बादलो का चुनाव एक सरल कार्य है। शीतोष्ण कटिबन्धो मे, जहां हिमाक स्तर नीचे होने के कारण बादलो के ऊपरी भाग 0°C से 15–20°C नीचे तक पहुँच जाते है, शुद्ध हिम कणो द्वारा सीड किए जाने पर बर्जरान प्रक्रम के अनुसार शीघ्र वर्षा दे सकते है। भारत तथा अन्य उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों मे, जहाँ बादल साधारणत हिमाक स्तर से नीचे रह जाते और पर्याप्त ऊष्ण रहते है, जलकणो, नमक या सिल्वर आयोडाइड द्वारा अच्छी तरह सीड किए जा सकते है। साधारणत विकासशील कपासी मेघो को सीड करना अधिक लाभप्रद देखा गया है।

यह स्पष्ट है कि कृत्रिम वर्षा प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक रूप से बादलो का होना अनिवार्य है। अत कृत्रिम विधियो से एक स्थान पर वर्षा करा लेने का अर्थ है, किसी दूसरे स्थान को उस वर्षा से वचित कर देना। इस प्रकार अन्तर्क्षेत्रीय झगडो की एक और समस्या खडी हो सकती है। इसके अलावा एक स्थान पर सीड किया गया बादल हवाओ के साथ किसी अन्य स्थान पर जाकर बरस सकता है।

कुल मिलाकर, अभी तक अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, जापान, अफ्रीका, भारत तथा यूरोप के अनेक देशो मे जो प्रयोग कृत्रिम वर्षा के लिए किए गए है, उनकी तकनीकी सफलता तो साबित हुई किन्तु आर्थिक पहलू अभी तक अज्ञात है, अत सन्देहपूर्ण है।

सारिणी

मेघ प्रकारो का सक्षिप्त परिचय

मेघ प्रकार	अवयव	वनावट	आधार की ऊँचाई	ऊर्ध्व विस्तार	वृद्धि तथा ह्रास
1 पक्षाभ	हिमकण	विच्छिन्न	6 किमी से ऊपर	—	Cs मे वृद्धि कर सकती है या Cb में मिल जाती है ।
2. पक्षाभ स्तरी	हिमकण	सतत	6 किमी से ऊपर	बहुत पतला	वृद्धि As तथा ह्रास की अवस्था मे समाप्त हो जाती है ।
3. पक्षाभ कपासी	हिमकण तथा अतिशीतल जलकण	विच्छिन्न रोल मेघराशियाँ	6 किमी से ऊपर	—	Cs मे मिल सकता है ।
4. मध्यस्तरी	हिमकण तथा जलकरण	सतत	2 से 5 किमी	बहुत थोडा	सघन As मे
5. मध्य कपासी	जलकण	रोल मेघराशि	2 से 5 किमी	साधारणतः पतला	वृद्धि Sc मे तथा ह्रास Cc मे
6. कपासी	जलकण	ऊर्ध्व विस्तार युक्त	300 से 1600 मीटर	6 से 9 किमी	वृद्धि Cb मे
7. कपासी वर्षी	निम्नतहो मे जलकण तथा ऊर्ध्वतहों मे अति शीतल जल एवं हिमकण	5 से 15 वर्ग किमी व्यास	200 से 1500 मीटर	10 किमी से ऊपर	और अधिक विकसित हो सकता है ।
8. स्तरी कपासी	जलकण	सतत रोल मेघराशियाँ	200 से 1000 मीटर	100 से 1000 मीटर	वृद्धि Cu या Cb मे
9. स्तरी	जलकण	सतत	भूमितल से 600 मीटर	50 से 300 मीटर	सघन होता है ।

6

वायुमण्डल की गति

(MOTION OF THE ATMOSPHERE)

6.10 भूमिका

न्यूटन के नियमानुसार, किसी जड पदार्थ को गति मे लाने के लिए वाह्री वल की आवश्यकता होती है । वायुराशियां भी कुछ वाह्य वलो के अधीन गतिशील रहती है । इन वलो का मूल स्रोत सूर्य की ऊष्मा तथा पृथ्वी की घूर्णन गति है । इनकी विस्तृत परिभाषा अगले अनुच्छेदो मे दी गई है ।

वायुराशियो की क्षैतिज गति हवा (**Wind**) तथा ऊर्ध्वाधर गति **वायु-धारा (Air-Current)** कहलाती है । हवा का वहाव समतल न होकर, साधारणत उतार-चढाव वाला होता है, जिसे **विक्षुब्ध प्रवाह (Turbulent flow)** कहा जाता है । यो तो उपर्युक्त वलो के अधीन भूमण्डलीय पैमाने पर कुछ विशाल वायु तरगे वहती है, जो ऋतुओ के साथ संशोधित होती रहती हैं, किन्तु अधिकाश हवाएँ द्वितीयक विक्षोभो तथा स्थानीय कारणो के फलस्वरूप छोटे पैमानो पर होती है । इन हवाओ की प्रकृति को यन्त्रों द्वारा लगातार उनके माप लेकर समझा जा सकता है ।

सवसे छोटे पैमाने पर वायु गति का उदाहरण अणुओ की गति हो सकती है किन्तु इसके कारण और प्रभाव सामान्य वायुप्रवाह से विलकुल अलग है । वायु की आणविक गति, संघट्टन द्वारा दाव और तापमान उत्पन्न कर सकती है किन्तु उसका मौसम पर कोई सीधा प्रभाव नही पडता । अत आणविक गतियो को वायु-राशियो के प्रवाह के अध्ययन मे सम्मिलित करने का कोई औचित्य नही ।

6 20 वायु-गति के कारक वल

(1) पृथ्वी की सतह पर सौर विकिरणो की विभिन्नता के कारण, स्थान-स्थान पर वायुदाव मे अन्तर आ जाता है ।यदि कई स्थानो के एक समय पर लिए गए वायुदाव के माप मानचित्र पर अंकित करके समदाब रेखाएँ खीचे, तो स्पष्ट दिखाई देगा कि एक तरफ को दाव कम होता जाता है और दूसरी तरफ को अधिक । दाव की यह ढाल, वायु गति के लिए एक वल उत्पन्न करती है, जिसे **दाव-प्रवणता वल**

(Pressure gradient force) कहते है। वायु गति के लिए यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वल है। यदि और वल न होते, तो हवा दाव के ढाल पर उसी प्रकार वहती, जैसे पानी सतह के ढाल पर वहता है, अर्थात् उच्चदाव से निम्नदाव की ओर।

(2) पृथ्वी अपने ध्रुवीय अक्ष पर 7.3×10^{-5} रेडियन/सैकड़ के कोणिक वेग से, पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है। यह घूर्णन एक वल उत्पन्न करता है, जो सदा क्षैतिज वायुवेग या हवा के लम्बवत कार्य करता है इसे **भूव्यावर्ती-वल** या इसके आविष्कारक के नाम पर **कोरियालिस वल** कहते है। लम्बवत् दिशा मे होने के कारण कोरियालिस वल हवा की गति को नही वदल सकता। यह केवल हवा की दिशा मे विक्षेप उत्पन्न करता है। इसी वल के कारण, हवा उत्तरी गोलार्द्ध मे दाहिनी ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे वायी ओर विक्षेपित हो जाती है।

(3) लगभग 1 किलोमीटर ऊँचाई से नीचे की हवा पर पृथ्वी तल (जल या थल) का घर्पण वल भी प्रभावकारी होता है, जो अपनी प्रकृति के अनुसार सदा वायुगति के विपरीत दिशा मे कार्य करता है। घर्षण वल की मात्रा सतह की रुक्षता पर निर्भर करती है तथा पृथ्वी तल पर सर्वाधिक होती है। जैसाकि आगे वताया जाएगा दाव प्रवणता तथा कोरियालिस वलों के अधीन हवा, समदाव रेखाओ के समानान्तर वहती है। किन्तु घर्पण वल न केवल इसकी गति कम कर देता है, वल्कि दिशान्तर भी इस प्रकार उत्पन्न कर देता है कि हवाएँ समदाव रेखाओ को 15 से 45 अंश के कोणो पर काटती हुई निम्नदाव की ओर वहती है।

वाह्य घर्पण के अतिरिक्त वायु तहो का आन्तरिक घर्पण भी जिसे विस्कासी वल (Viscous-force) कहते है, वायुगति के विपरीत लगा रहता है। 1 किमी से अधिक ऊँचाई पर भी, जहा वाह्य घर्पण प्रभावहीन हो जाता है, विस्कासी वल क्रियाशील रहता है। किन्तु यह अपेक्षाकृत नगण्य है। अत अधिक ऊँचाइयो पर हवाएँ समदाव रेखाओं के समानान्तर वहती मानी जा सकती है।

(4) गुरुत्व का वल वायु की ऊर्ध्वाधर गति के लिए एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है, किन्तु क्षैतिज प्रवाह के लिए इसका कोई महत्व नही।
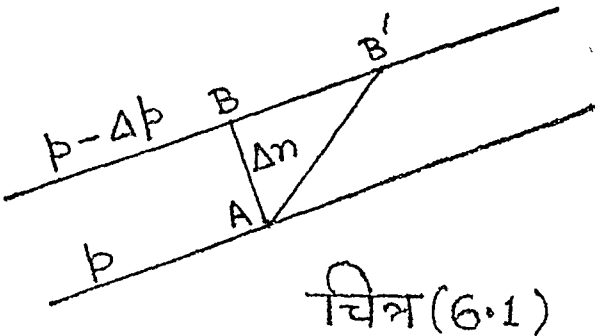
चित्र (6·1)

क्षैतिज प्रवाह के लिए इन वलों के निम्नांकित सूत्र स्थापित किए जा सकते है :

6 21 दाव-प्रवणता

दूरी के प्रति दाव परिवर्तन की अधिकतम दर **दाव प्रवणता** कहलाती है ।

मान लीजिए $p, p-\triangle p$ की

समदाव रेखाएँ (चित्र 6 1) मे दी गई है । दोनो के वीच दावान्तर $= \triangle p$,

$$\text{दाव परिवर्तन की दर} = \frac{\triangle p}{\text{समदाव रेखाओ के वीच की दूरी}}$$

विन्दु A पर दाव प्रवणता = दाव परिवर्तन की अधिकतम दर

$$= \frac{\triangle p}{\text{समदाव रेखाओ के वीच की निम्नतम दूरी}}$$

$$= \frac{\triangle p}{\text{समदाव रेखाओ के वीच की लम्ववत् दूरी}}$$

$$= \frac{\triangle p}{\triangle n}.$$

अतः किसी विन्दु पर दाव प्रवणता, उस विन्दु से समदाव रेखा के लम्ववत् दिशा मे दाव परिवर्तन दर के वरावर होती है । दाव प्रवणता निम्न दाव से उच्च दाव की ओर नापी जाती है । अत उपर्युक्त उदाहरण मे दाव प्रवणता धनात्मक होगी ।

6 22 दाव-प्रवणता वल

एक वायुराशि लीजिए जिसके क्षैतिज तलो पर दाव क्रमश p और $p+\triangle p$ है । अतः तल के इकाई क्षेत्र पर लगने वाला वल $= \triangle p$ यह वल उच्च
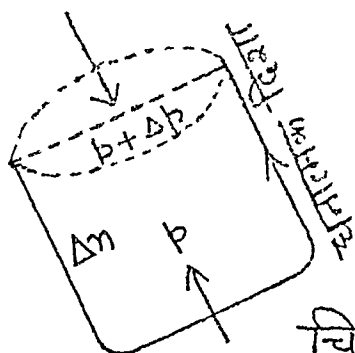
चित्र(6·2)

दाव से निम्नदाव की ओर लगता है । अत. दाव प्रवणता की दिशा के विपरीत है । यदि दाव प्रवणता की दिशा को धनात्मक माना जाए, तो तल के ऊपर लगने वाला कुल वल $= -A\triangle p$

जहाँ A, तल का क्षेत्रफल है। ऋणात्मक चिन्ह दाव प्रवणता की घनात्मक दिशा को ध्यान मे रख कर लगाया गया है।

वायु राशि की मात्रा $= \rho A \triangle n$,

जहाँ ρ वायु का घनत्व तथा $\triangle n$ दोनो क्षैतिज तलो के वीच की लम्ववत् दूरी है। इस वायु राशि की प्रति इकाई मात्रा पर लगने वाला वल ही दाव प्रवणता वल होगा।

अत. प्रवणता वल $= -\dfrac{1}{\rho}\,\dfrac{\triangle p}{\triangle n}$

टिप्पणी . यदि $\triangle Z$ ऊँचाई के अन्तर पर दाव मे कमी $= \triangle p$,

तो ऊर्ध्वाधर दाव प्रवणता $= \dfrac{\triangle p}{\triangle Z}$

तथा ऊर्ध्वाधर दाव प्रवणता वल $= -\dfrac{1}{\rho}\,\dfrac{\triangle p}{\triangle Z}$

6.23 कोरियालिस बल

पृथ्वी के घूर्णन प्रभाव को स्पष्ट करने के लिए निम्नाकित प्रयोग पर विचार कीजिए। मान लीजिए, एक गोलाकार चवूतरा कुम्हार के चक्के की भाति केन्द्र 0 से लम्ववत् अक्ष पर वामावर्त (Anticlockwise) दिशा मे घूम रहा है और इसका कोणिक वेग w है। केन्द्र 0 पर वैठा शिकारी विन्दु A पर स्थित पक्षी को निशाना लगाकर गोली चलाता है। जवतक गोली वेग v से विन्दु A तक पहुँचती है, पक्षी घूर्णन के कारण विन्दु B पर आ जाता है। पक्षी का स्थानान्तरण वास्तविक है किन्तु केन्द्र पर वैठे शिकारी के सापेक्ष पक्षी की स्थिति मे कोई अन्तर नही है। अर्थात् शिकारी अपनी दृष्टि से पक्षी को पूर्व स्थान पर ही स्थिर देखेगा और यही समझेगा कि किसी वल के द्वारा उसकी गोली दाहिनी ओर विक्षेपित कर दी गई है, जिसके कारण उसका निशाना BA दूरी से चूक गया।

चित्र (6 3)
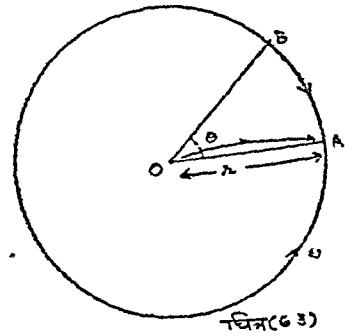
यदि चवूतरे का घूर्णन दक्षिणावर्त (Clockwise) है तो शिकारी को गोली का विक्षेप वायी ओर प्रतीत होगा।

यही विक्षेपक वल, जो किसी सीमा तक काल्पनिक है, कोरियालिस वल कहलाता है। गति के सामान्य नियमों के आधार पर इसका परिमाप ज्ञात किया जा सकता है। इस प्रकार :

मान लीजिए विक्षेप का त्वरण f और समय t है।

$$\therefore \quad \tfrac{1}{2}ft^2 = AB = r\Theta = rwt$$

$$\therefore \quad t = 2rw/f.$$

गोली द्वारा दूरी OA तय करने का समय = पक्षी द्वारा दूरी AB तय करने का समय

$$\therefore \quad \frac{r}{v} = \frac{2rw}{f}$$

$$\text{or} \quad f = 2vw$$

अर्थात् इकाई मात्र पर लगा कोरियालिस बल = 2 × घूर्णन का कोणिक वेग × गोली का रैखिक वेग।

6 24 पृथ्वी तल के अक्षाश ϕ पर कोई विन्दु P लीजिए। इस विन्दु से गुजरने वाले अक्षाश और देशान्तर रेखाओ को क्रमश X तथा Y अक्ष मान लिया जाए, तथा ऊर्ध्वाधर को z – अक्ष, तो

OA रेखा के चारो ओर पृथ्वी के घूर्णन (Ω) की दिशा $\overrightarrow{OA}$ अथवा $\overrightarrow{PB}$ है।
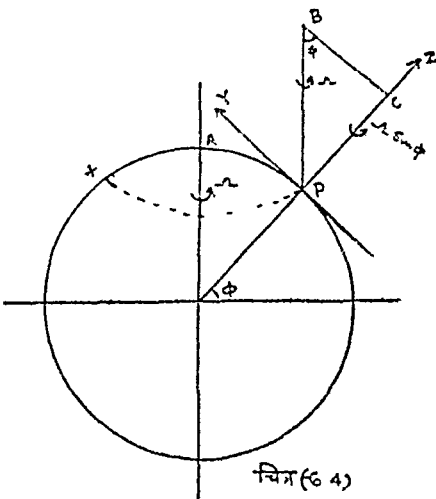
चित्र (6 4)

विन्दु P, पर लिए गए इकाई क्षेत्र को क्षैतिज दिशाओ (X – Y तल) मे घूर्णित करने वाला वेग Ω_z होगा, जो Ω का z, दिशा के अवयव है। इसकी दिशा विन्दु P पर वामावर्त होगी।

चित्र 6.4 से $\angle PBC = \phi$,

$$\therefore \quad \Omega_z = \Omega \sin \phi$$

विन्दु P के प्रति इकाई मात्रा पर क्षैतिज दिशा मे लगने वाला कोरियालिस बल,

$$C = 2\Omega \sin\phi . V.,$$

जहा V वायु का वेग है।

6 25 स्पष्ट है कि अक्षांशो (ϕ) के साथ C का मान बढता जाता है।

विपुवत् रेखा ($\phi = 0$) पर, $C = 0$

30° अक्षांश पर, $C = \Omega V$

तथा उत्तरी ध्रुव ($\phi = 90^\circ$) पर, $C = 2\Omega V$.

जिस ओर को हवा जा रही हो, उधर को मुँह करके प्रेक्षक यदि खड़ा हो, तो निम्न दाब का क्षेत्र उत्तरी गोलार्द्ध मे उसके बायें हाथ की ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे उसके दाहिने हाथ की ओर पड़ेगा।

यह नियम वायज वेलट का नियम कहलाता है तथा प्रायोगिक मौसम पूर्वानुमान मे काफी उपयोगी सिद्ध होता है।

6.32 किसी स्थान के मौसम मानचित्रो मे समदाब रेखाएँ साधारणत: 2 या 4 मिलीबार के अन्तराल से खीची जाती है। अत: वहां के लिए ρ, ϕ, और Ω के साथ Δp भी स्थिरांक हैं।

$$\text{अत. } V_g \propto \frac{1}{\Delta n}$$

अर्थात् भूव्यावर्ती हवा की तीव्रता समदाब रेखाओं के बीच की दूरी के व्युत्क्रमानुपाती होती है। सघन समदाब रेखाओ के क्षेत्र मे वायु गति तीव्र तथा विरल रेखाओ के क्षेत्र में वायु गति धीमी होगी।

इसके अतिरिक्त V_g, $\sin\phi$ के भी व्युत्क्रमानुपाती होता है, अर्थात् जैसे-जैसे निम्न अक्षाशो की ओर बढेगे, यदि दाब प्रवणता समान रहे तो वायुगति तेज होती जाएगी, विषुवत् रेखा पर $\sin\phi = 0$ अत यहाँ V_g का मान अनन्त हो जाना चाहिए। किन्तु यह प्रायोगिक रूप से असम्भव है। इस प्रकार, भूव्यावर्ती हवा का सूत्र विषुवत् रेखा तथा उसके बहुत निकट के स्थानो पर लागू नही हो पाता। वास्तव मे ऊष्ण कटिबन्धीय अक्षाशो के बाद ही भूव्यावर्ती हवा का सूत्र अधिक उपयोगी हुआ करता है।

यदि दाब प्रवणता हर अक्षाश पर समान मान ली जाए तो अक्षाशो के प्रति भूव्यावर्ती हवाओ का परिवर्तन निम्न तालिका द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

अक्षांश (अंश)	90	75	60	45	30	15
भूव्यावर्ती हवा ('नाट')	21	22	25	39	40	82

किन्तु वास्तव मे उष्ण कटिबन्धो मे इतनी तेज गति की हवा केवल अवदाबो तथा चक्रवातो मे ही मिलती हे, सामान्य दशा मे नही। इसका कारण यही है कि निम्न अक्षांशो मे दाब प्रवणता बहुत कम होती हैं।

6.33 घर्षण का प्रभाव

घर्षण का वल (F) वायु दिशा के विपरीत कार्य करता है। इस वल की उपस्थिति मे हवा समदाव रेखाओ के समान्तर होने से पूर्व ही चित्र (6.6) की स्थिति मे सन्तुलित हो जाती है। इस स्थिति मे C और F का परिणामी वल R, P के
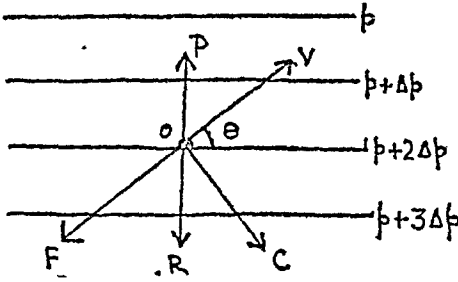
चित्र (6·6)

वरावर और विपरीत दिशा मे आ जाता है। स्पष्ट है कि सन्तुलन की अवस्था मे वायुदिशा $\vec{OV}$, समदाव रेखाओ से θ कोण वनाएगी। इस प्रकार घर्षण वल, भून्यावर्ती प्रवाह को क्रास समदावरेखीय वना देता है।

थल सतह पर घर्षण वल अधिक प्रभावकारी होता है, जहाँ हवा समदाव रेखाओ से 30° से 45° अश तक का कोण वनाती हुई वहती है। सागर तलो पर रुक्षता काफी कम होती है। यहाँ वायु-दिशा समदाव रेखाओ से 15° से कम कोण पर ही झुकी रहती है।

दाव प्रणालियाँ जव सागरीय क्षेत्रो से थल भाग पर पहुँचती है, तो साधारणत. वे कमजोर होती जाती है, अर्थात् उनमे 'भराव' आता जाता है। इसका एक कारण थल सतह का अधिक घर्षण प्रभाव भी है, जो वायु तीव्रता को कम करने की प्रवृति रखता है। एक अनुमान के अनुसार, सागरीय तल का घर्षण, भून्यावर्ती प्रवाह की गति को एक-तिहाई तथा स्थलीय तल का घर्पण आधा कम कर देने मे सक्षम है।

6.34 अभून्यावर्ती-हवा (Ageostrophic Wind)

भून्यावर्ती हवा अचर गति की एक परिशुद्ध (Precise) हवा है, जो दाव-प्रवणता और कोरियालिस वलो के ठीक सन्तुलित होने पर, समदाव रेखाओ के समानान्तर स्थापित होती है; अत यह आवश्यक है कि समदाव रेखाएँ आपस मे समानान्तर हो। किन्तु वास्तविक मौसम मानचित्रो मे ये रेखाएँ अनियमित वक्रताओ से युक्त होती है। अत वास्तविक हवाएँ पूर्णरूप से भून्यावर्ती नही होती। अनियमित समदाव रेखाओ के अलावा असमतल वायु-प्रवाह, तथा स्थानीय कारणो से दाव-प्रवणता मे समय के अनुसार तीव्र उतार-चढ़ाव भी वलो मे सन्तुलन स्थापित होने नही देते और वास्तविक हवा को .र्ती क और दूर कर देते है।

निम्न वायु तहो मे घर्षण का बल सबसे प्रभावशाली तत्त्व है, जो भूव्यावर्ती दशाओ से वास्तविक हवाओ को विक्षेपित करता है। यही कारण है कि जैसे-जैसे ऊपर जाते है, घर्षण का प्रभाव कम होने से वास्तविक हवाएँ भूव्यावर्ती के अधिक निकट होती जाती है और प्रायोगिक उपयोगो के लिए 1 किमी से ऊपर की हवा बहुधा भूव्यावर्ती मान ली जाती है।

वास्तविकता से दूर होने पर भी भूव्यावर्ती हवाओ की धारणा महत्त्वपूर्ण है। इसे एक औसत क्षैतिज हवा की तरह समझा जा सकता है जिसके ऊपर-नीचे वास्तविक हवा उच्चावचन करती है।

अत. वास्तविक हवा = भूव्यावर्ती हवा + भूव्यावर्ती से विक्षेप। मान लीजिए X और Y दिशाओ मे वास्तविक हवाएँ क्रमश. u और v तथा भूव्यावर्ती हवाएँ क्रमश· u_g और v_g है। उपर्युक्त समीकरण को गणितीय रूप मे इस प्रकार लिखा जा सकता है।

$$u = u_g + u'$$

तथा $$v = v_g + v'$$

या $$u' = u - u_g \text{ और } v' = v - v_g.$$

u' और v' क्रमश. X और Y दिशाओ मे अभूव्यावर्ती हवाएँ कहलाती हैं, जो वास्तविक हवा का भूव्यावर्ती सन्निकटन (Approximation) से विचलन प्रदर्शित करती है। u_g और v_g का मान निम्न सूत्रो द्वारा दिया जा सकता है.

$$u_g = \frac{1}{f\rho} \frac{\Delta p}{\Delta x} \quad \text{.. (i)}$$

और $$v_g = -\frac{1}{f\rho} \frac{\Delta p}{\Delta y} \quad \text{....(ii)}$$

समीकरण (2) मे ऋण चिन्ह कारण यह है कि Y–दिशा (देशान्तर) मे p का मान घटता जाता है। अत दाव प्रवणता $\frac{\Delta p}{\Delta y}$, Y–अक्ष की ऋणात्मक दिशा मे धनात्मक होता है।

6 35 भूव्यावर्ती हवा का एक और सूत्र

ऊपरी वायुमण्डल के मौसम विश्लेषण मे समदाव रेखीय मानचित्रो की अपेक्षा स्थिर दाब मानचित्रो का प्रयोग अधिक उपयोगी होता है। इसमे विभिन्न स्थानों पर निश्चित दाब-स्तर (साधारणत 850,700,500,200 या 100 मिलीबार) की ऊँचाइयो (साधारणत भूविभव मीटर की इकाई मे) मे अकित कर देते है। यह चार्ट समदाब पृष्ठ के उतार-चढाव का चित्र प्रस्तुत करता है।

दाब की समरेखाओ की जगह ऊँचाइयो की समरेखाएँ खीचकर इन स्थिर दाब मानचित्रो का विश्लेषण किया जाता है। इन रेखाओ को **समतुंग रेखाएँ** या **कन्टूर रेखाएं** कहते है।

मान लीजिए, दो समदाब पृष्ठो के बीच दाबान्तर $\triangle p$ तथा किसी स्थान पर संगत ऊँचाई का अन्तर $\triangle z$ है तो,

$$\triangle p = -g\rho \triangle z$$

$\triangle p$ का यह मान भूव्यावर्ती हवा के समीकरणो मे रखने से उस स्थान पर

$$u_g = -\frac{g}{f} \frac{\triangle z}{\triangle x} \quad \text{तथा}$$

$$v_g = \frac{g}{f} \frac{\triangle z}{\triangle y}$$

जहाँ $\frac{\triangle z}{\triangle x}$ तथा $\frac{\triangle z}{\triangle y}$ क्रमश X और Y दिशाओ मे कन्टूर-प्रवणता है।

स्पष्ट है कि भूव्यावर्ती वल, कन्टूर-प्रवणता के समानुपाती है। यह सूत्र वायु घनत्व के चलन से मुक्त है।

6 36 भूव्यावर्ती पैमाना (Geostrophic scale)

यदि घनत्व का चलन छोड़ दिया जाए, तो किसी स्थान पर भूव्यावर्ती हवा, समदाब रेखाओ के बीच की लम्बवत् दूरी ($\triangle n$) के व्युत्क्रमानुपाती होती है।

अर्थात् $Vg \triangle n = K$ (स्थिराक)

अत $\triangle n$ और Vg का ग्राफ एक आयताकार अति परवलय (rectangular-hyperbola) होगा (चित्र 6.7)। इस ग्राफ से $\triangle n$ के किसी मान के लिए Vg का मान ज्ञात किया जा सकता है। अत. विभिन्न दूरियो पर वायु-गति का मान अकित करके एक पैमाना इस प्रकार का तैयार किया जा सकता है कि दो समदाव रेखाओ के बीच जव पैमाने को रखे तो उनकी दूरी के संगति वायु गति का मान पढा जा सके। इस पैमाने को भूव्यावर्ती पैमाना कहा जाता है।
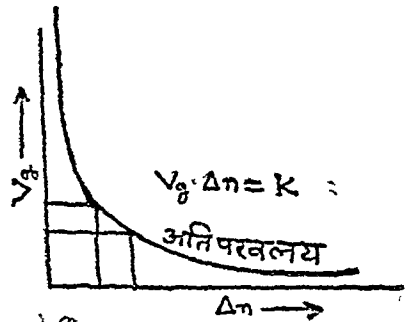
चित्र (6·7)

6.40 प्रवणता हवा (Gradient Wind)

यदि दाव प्रवणता (P) और कोरियालिस वल (C) एक-दूसरे को ठीक-ठीक सन्तुलित न कर सके, तो दो स्थितिया सम्भव है .

(i) $P > C$ और (ii) $P < C$

यदि P और C का परिणामी बल R है, तो P और C का संयुक्त प्रभाव वायु प्रवाह V पर वही होगा, जो अकेले बल R का है। R वायु प्रवाह के लम्बवत् लगता है, अत. केन्द्राभिसारी बल की तरह कार्य करके वायु प्रवाह का पथ वृत्ताकार कर देगा।
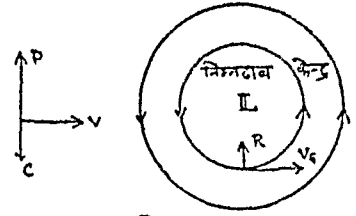
चित्र (6 8)

1 पहली स्थिति मे R दाब प्रवणता बल की दिशा मे V के लम्बवत् रहेगा। अत वायु प्रवाह वामावर्त दिशा मे वृत्ताकार हो जाएगा, जिसमे R केन्द्राभिसारी बल की तरह कार्य करेगा। यह वृत्ताकार वायु प्रवाह **चक्रवाती प्रवणता हवा** कहलाती है। इसमे हवाएँ निम्न दाब केन्द्र के चारो ओर घड़ी की सुइयो के विपरीत (वामावर्त) दिशा मे वहती है।

यदि चक्रवाती प्रवणता हवा का वेग V_G तथा वृत्ताकार प्रवाह पथ की त्रिज्या r मान ली जाए, तो गति का समीकरण इस प्रकार लिखा जा सकेगा —

R = केन्द्राभिसारी बल

$$\text{या} \quad -\frac{1}{\rho}\frac{\Delta p}{\Delta n} + fV_G = -\frac{V_G^2}{r}, \qquad (1)$$

केन्द्राभिसारी बल के साथ ऋणात्मक चिन्ह, इसी कारण लगा है कि दाब प्रवणता बल (ऋणात्मक) कोरियालिस बल से अधिक है।

(2) दूसरी स्थिति मे जब C>P, तो परिणामी R, दाब प्रवणता बल के विपरीत, अर्थात् उच्चदाब की ओर V के लम्बवत् लगता है। यह उच्चदाब के चारो ओर दक्षिणावर्त दिशा मे वृत्ताकार गति उत्पन्न कर देगा। यह वृत्ताकार वायु-प्रवाह **प्रतिचक्रवाती-प्रवणता हवा** कहलाती है।

प्रति चक्रवाती प्रवणता हवा का समीकरण इस प्रकार होगा :

$$-\frac{1}{\rho}\frac{\Delta p}{\Delta n} + fV_G = \frac{V_G^2}{r},$$

जहा V_G प्रतिचक्रवाती प्रवणता हवा का वेग है।
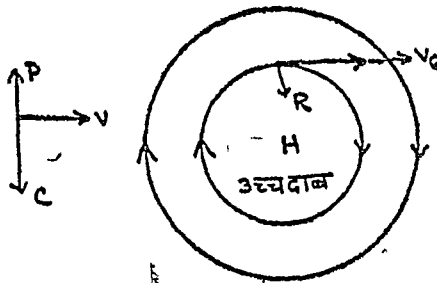
चित्र (6·9)

6.41 स्पष्ट है कि चक्रवाती और प्रतिचक्रवाती हवा मे प्रवाह-पथ के समानान्तर समदाब रेखाएँ भी वृत्ताकार हो जाती है। चक्रवाती

प्रवाह मे समदाव रेखाएँ निम्नदाव क्षेत्र को घेरती है, जिसमे केन्द्र पर दाब निम्नतम होता है। प्रतिचक्रवाती प्रवाह मे उच्चदाव केन्द्र के चारो ओर वृत्ताकार रूप से घेरती है। प्रवणता हवाएँ इन रेखाओ के समानान्तर वायज वैलट नियम का पालन करती हुई वहती है।

6·42 प्रवणता वायु-प्रवाह की दिशा दक्षिणी गोलार्द्ध मे ठीक विपरीत हो जाती है। अर्थात् चक्रवाती प्रवाह मे निम्न दाव केन्द्र के चारो ओर दक्षिणावर्त दिशा मे हवा वहती हे तथा प्रतिचक्रवाती प्रवाह मे उच्चदाव केन्द्र के चारो ओर वामावर्त दिशा मे।

6.43 अनुच्छेद 6.33 के अनुसार, घर्षण के प्रभाव से प्रवणता हवाओ का प्रवाह-पथ, समदाव रेखाओ के समान्तर न होकर क्रास समदावरेखीय हो जाता है। चक्रवाती दिशा में हवा, समदाव रेखाओ को काटती हुई निम्न दाव केन्द्र की ओर अग्रसर होती है, जिससे केन्द्र पर अभिसरण उत्पन्न होता है—चित्र 6 10 स्थिति (1)। प्रतिचक्रवाती दशा मे हवा समदाव रेखाओ को काटती हुई उच्चदाव केन्द्र से वाहर निकलने की प्रवृत्ति रखती है। अतः केन्द्र पर अपसरण उत्पन्न करती है—चित्र (6.10), स्थिति (2)।
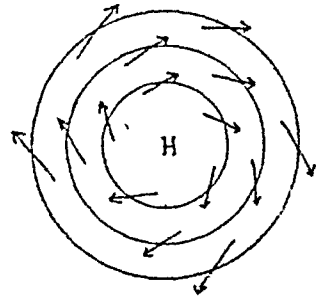
चित्र (6·10)

6 44 भूव्यावर्ती तथा प्रवणता हवा में सम्बन्ध

प्रवणता हवा का समीकरण निम्नाकित प्रकार से लिखा जा सकता हे :

$$-\frac{1}{\rho}\frac{\triangle p}{\triangle n}+fV_G=\frac{V_G^2}{r} \qquad ....(i)$$

जहां r का मान चक्रवाती प्रवाह के लिए ऋणात्मक तथा प्रतिचक्रवाती प्रवाह के लिए धनात्मक होगा।

भूव्यावर्ती हवा का समीकरण;

$$-\frac{1}{\rho}\frac{\triangle p}{\triangle n}+fV_g=0. \qquad ....(ii)$$

समीकरण (i) और (ii) को मिलाने से

$$-fV_g+fV_G=\frac{V_G^2}{r}$$

या $$V_g\left(\frac{1}{V_G^2}\right)-\frac{1}{V_G}+\frac{1}{rf}=0$$

या $$\frac{1}{V_G} = \frac{1 \pm \sqrt{1 - \frac{4V_g}{rf}}}{2V_g}$$

अतः $$V_G = \frac{2v_g}{1 \pm \sqrt{1 - \frac{4V_g}{rf}}}$$

यदि $r = \infty$ तो V_G और V_g का मान बराबर होना चाहिए, क्योंकि अनन्त त्रिज्या का वृत्त सीधी रेखा ही हो सकती है। यह शर्त केवल + चिन्ह द्वारा सही होती है।

अत $$V_G = \frac{2V_g}{1 + \sqrt{1 - \frac{4V_g}{rf}}} \quad \text{.. (iii)}$$

समीकरण (iii) मे यदि r का मान ऋणात्मक रखा जाए, तो हर (Denominator) दो या दो से अधिक हो जाएगा और V_G का मान V_g से कम होगा।

अत चक्रवाती प्रवणता हवा $\leq$ भूव्यावर्ती हवा।

समीकरण (iii) मे r, का मान धनात्मक रहने से हर का मान 2 या 2 से कम ही रहेगा इस दशा मे V_G का मान V_g से अधिक होगा।

अत. प्रतिचक्रवाती प्रवणता हवा $\geqslant$ भूव्यावर्ती हवा।

इस प्रकार निम्नांकित नियम सिद्ध हुआ।

V_G प्रतिचक्र $\geqslant V_g \geqslant V_G$ चक्र

6.45 V_G का मान अधिकतम, तब होगा जब

$$1 - \frac{4V_g}{fr} = 0$$

अर्थात् $$4V_g = fr \quad \text{....(iv)}$$

और इस शर्त के पूरा होने पर, समीकरण (iii) से V_G का अधिकतम मान $= 2V_g$. इस प्रकार प्रतिचक्रवाती हवा (V_G) का मान भूव्यावर्ती से अधिक होता है, जो अधिक से अधिक भूव्यावर्ती हवा के दुगने के बराबर हो सकता है।

6.46 साइक्लोस्ट्राफिक प्रवाह (Cyclostrophic Flow)

विषुवत् रेखा के आसपास ϕ का मान कम होने के कारण, कोरियालिस बल $2\Omega V \sin \phi$ का मान नगण्य हो जाता है। इस दशा मे दाब प्रवणता बल P पूर्णत. केन्द्राभिसारी बल की तरह कार्य करता है, जिसमे प्रवाह-पथ निम्न दाब केन्द्र के चारो ओर वृत्ताकार बन जाता है। स्पष्टत यह प्रवाह विरोधी बल C के हट जाने के कारण चक्रवाती प्रवणता-प्रवाह की अपेक्षा अधिक तीव्र होगा।

इस चक्रवाती प्रवाह को साइक्लोस्ट्राफिक-प्रवाह कहते हैं। उष्ण कटिबन्धीय चक्रवाती तूफान तथा टौरनैडो इस प्रवाह के उदाहरण हैं। टौरनेडो में दाब-प्रवणता बल इतना शक्तिशाली होता है कि अन्य सभी विरोधी बल नगण्य हो जाते है।

6.47 वायज-बैलट नियम का उल्लंघन

साधारणत. पृथ्वी पर हवा इस नियम के अनुसार ही वहती है। किन्तु कभी-कभी बहुत छोटे पैमाने की स्थानीय हवाएँ इन नियमो का उल्लघन भी करती हे। इसका एक उदाहरण, खुले स्थानो पर गर्मियो मे उठने वाले धूलभरे बवंडर (Dust devil) है। बवडर वास्तव मे निम्नदाव केन्द्र के चारो ओर एक वृत्ताकार प्रवाह है। किन्तु वास्तविक प्रेक्षणो से यह प्रवाह, चक्रवाती और प्रतिचक्रवाती दोनो प्रकार का पाया जाता है।
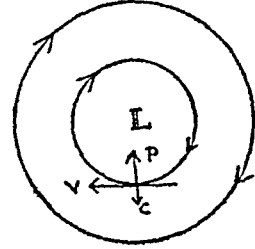
चित्र (6 11)

- अत. कुछ बवडर, जो निम्नदाव केन्द्र के चारो ओर घडी की सुइयो की दिशा मे (प्रतिचक्रवाती) वायु प्रवाह रखते है, स्पष्ट रूप से वायज वैलट नियम का उल्लघन करते है।

6.50 हवाओं का ऊर्ध्वाधर चलन

साधारणत अधिक तापमान वाले क्षेत्र में भूमि तल पर निम्नदाव तथा उच्चतर स्तर पर उच्चदाव क्षेत्र स्थापित हो जाता है। इसी प्रकार, कम तापमान के क्षेत्रो मे नीचे उच्चदाव तथा ऊपर निम्न दाब बन जाता है।

जल स्थितिकी समीकरण

$$\frac{\triangle p}{\triangle z} = -g\rho = -\frac{pg}{RT},$$

से स्पष्ट है कि ऊँचाई के साथ दाब की परिवर्तन-दर औसत तापमान (T) के व्युत्क्रमानुपाती होती है। तापमान जितना अधिक होगा, ऊँचाई के साथ दाब परिवर्तन उतना ही धीमा होगा। वायुमण्डल की निचली तहों का तापमान भूमध्य रेखा पर ध्रुवो की अपेक्षा अधिक होता है। फलतः ध्रुवो पर ऊँचाई के साथ दाब अपेक्षाकृत तेजी से घटता है। इस प्रकार विषुवत् रेखा से ध्रुवो की ओर एक रेखांशिक (Meridional) दाब प्रवणता स्थापित होती है, जो ऊँचाई के साथ लगभग 10 से 12 किमी तक तीव्रतर होती जाती है। स्थिर दाब मानचित्रो पर यह प्रवणता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है, विशेषकर मध्य अक्षांशो मे। फलस्वरूप पछुवा हवाएँ ऊँचाई के साथ तीव्रतर होती जाती है।

उत्तरी गोलार्द्ध तल पर जिन क्षेत्रो की दाब प्रवणता की दिशा उत्तर से दक्षिण (निम्न अक्षाशो) की ओर है, पृथ्वी तल पर वहा पूर्वी हवाएँ चलती है। जैसे, उपउष्णकटिबन्धीय उच्चदाब तथा विषुवत् रेखीय निम्न दाब के बीच और ध्रुवीय

उच्चदाब तथा उप ध्रुवीय निम्नदाब के बीच। चूँकि, ऊँचाई के साथ दाब प्रवणता की प्रवृत्ति निम्न से उच्च अक्षांशों की ओर होती जाती है, अत. पूर्वी हवाएँ ऊँचाई के साथ घटती जाती है तथा कुछ ऊँचाई के बाद पश्चिमी हवाओं में बदल जाती है, जो ऊँचाई के साथ बढ़ने लगती हैं।

पूर्वी हवाओं के ऊँचाई के साथ बढ़ने का एकमात्र उदाहरण भारतीय उपमहाद्वीप और सागरों पर (20°उ अक्षांश से नीचे) मानसून ऋतु (जून से सितम्बर) का पूर्वी प्रवाह है। इस क्षेत्र में इन महीनों में पूर्वी हवा ऊँचाई के साथ बढ़ती है तथा लगभग 9 किमी से ऊपर पूर्वी जेट धारा स्थापित करती है। इसका विशेष विवरण अध्याय 14 में दिया गया है। इसका कारण सम्भवत. यही है कि उच्च ताप (Thermal high) का क्षेत्र इन दिनों विषुवत् रेखा से उच्च अक्षांशों की ओर स्थानान्तरित हो जाया करता है।

पश्चिमी हवाओं की ऊँचाई के साथ वृद्धि लगभग क्षोभ सीमा तक पाई जाती है। सर्दियों में जब रेखाशिक ताप प्रवणता अधिक तीव्र होती है, यह वृद्धि स्थिर मण्डल में भी काफी ऊँचाई तक जारी रहती है। किन्तु साधारणत: स्थिर मण्डल की निम्नतहों में रेखाशिक तापप्रवणता उल्टी हो जाती है, अर्थात् ध्रुवों पर उच्च तथा विषुवत् रेखा पर निम्न तापमान-क्षेत्र स्थापित हो जाता है। स्पष्ट है कि क्षोभ मण्डल की पश्चिमी हवाएँ स्थिर मण्डल में ऊँचाई के साथ साधारणत. घटती जाती है और हो सकता है कि काफी ऊँचाई पर व्युत्क्रमित होकर वे पुन पूर्वी प्रवाह में बदल जाएँ।

सर्दियों में मध्य अक्षांशों में लगभग 30 किमी की ऊँचाई तक, लगभग 60 किमी प्रति घण्टा की पश्चिमी हवाएँ मिलती है। किन्तु गर्मियों में 18 किमी के बाद पूर्वी हवाएँ स्थापित हो जाती है, जो ऊँचाई के साथ बढ़ती है और 30 किमी के आसपास 70–80 किमी प्रति घण्टा की गति तक पहुँच जाती है।

6.51 ताप हवा (Thermal Wind)

किसी वायु तह के ऊपरी और निचले स्तर पर वायुप्रवाह का अन्तर, तह की तापमान-प्रवणता पर निर्भर करता है। क्षैतिज तापमान प्रवणता के कारण ही
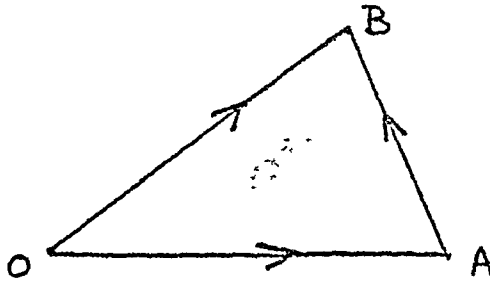
चित्र (6·12)

ऊँचाई के साथ दाब प्रवणता तथा भूव्यावर्ती हवाओं में परिवर्तन होता है। हवाओं

का परिवर्तन गति और दिशा, दोनो या किसी एक मे भी हो सकता है। वायु दिशा का घड़ी की सुइयों की दिशा मे परिवर्तन दक्षिणावर्त (Veering) तथा विपरीत दिशा में परिवर्तन वामावर्त (Backing) कहलाता है। यह सोचा जा सकता है कि ऊपरी स्तर पर वायु वेग, दो अवयवों का परिणामी है

(1) निचले स्तर का वायु वेग।

(2) क्षैतिज ताप-प्रवणता से उत्पन्न अवयव।

यह तापीय वायु अवयव ताप-हवा कहलाती है। दो स्तरो के बीच की ताप हवा ऊपरी तथा निचले स्तर के भूव्यावर्ती हवाओ के सदिश (Vector) अन्तर के बराबर होगी।

चित्र (6.12) मे यदि दिशा और मान मे निम्न और उच्च तलों पर भूव्यावर्ती वायु-वेग क्रमश: $\overrightarrow{OA}$ तथा $\overrightarrow{OB}$ द्वारा प्रदर्शित किए जाएँ, तो इन तलो के बीच की ताप हवा $= \overrightarrow{OB} - \overrightarrow{OA}$

$$= \overrightarrow{AB}$$

औसत तापमान का क्षैतिज आवंटन जिस पर ताप-हवा निर्भर करती है, समताप रेखाओ द्वारा व्यक्त किया जाता है। अतः ताप-हवा समताप रेखाओं के समानान्तर इस प्रकार वहती है, कि उत्तरी गोलार्द्ध मे निम्नताप क्षेत्र ताप हवा के वायी ओर रहे तथा दक्षिणी गोलार्द्ध के दायी ओर। ताप-हवा की गति, ताप-प्रवणता के समानुपाती होती है।

z_o और z ऊँचाई स्तरों के बीच ताप हवा के X और Y अक्षो मे अवयव (क्रमश u_T और v_T) निम्नांकित सूत्रो द्वारा ज्ञात किए जा सकते है .

$$u_T = -\frac{g}{fT}\frac{\Delta T}{\Delta y}(z - z_o)$$

तथा $$v_T = -\frac{g}{fT}\frac{\Delta T}{\Delta x}(z - z_o),$$

जहाँ T वायु-तह का औसत तापमान तथा $\frac{\Delta T}{\Delta x}$ और $\frac{\Delta T}{\Delta y}$ क्रमश: X और Y दिशाओं में तापमान की क्षैतिज प्रवणता है।

6 52 विभिन्न दशाओ मे ताप हवाओं की प्रवृत्ति निम्नलिखित उदाहरणो से स्पष्ट की जा सकती है।

(1) जब निम्न तापमान (K) के साथ निम्न दाब (L) तथा उच्च तापमान (W) के साथ उच्च दाब क्षेत्र (H) संयुक्त हो।

यह दशा चित्र (6.13) मे दिखाई गई है । वायज वेलट-नियम के अनुसार, निचले स्तर पर भूव्यावर्ती हवा V_l पछुआ होगी । ताप हवा (V_T) भी पछुआ ही है । फलत· ऊँचाई के साथ वायु वेग बढ़ेगा और ऊपरी स्तर पर भूव्यावर्ती हवा (V_u) उमी दशा मे $(V_T + V_l)$ गति से बहेगी ।
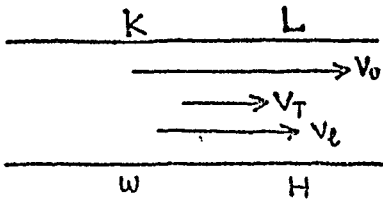
चित्र (6.13)

(2) जब निम्न तापमान के साथ उच्च दाब तथा उच्च तापमान के साथ निम्न दाब सयुक्त हो ।

निचले स्तर पर हवा पछुवा होगी तथा ताप हवा पूर्वी । फलत· V_u का मान ऊँचाई के साथ घटता जाएगा । अर्थात्

$$V_u = V_l - V_T$$
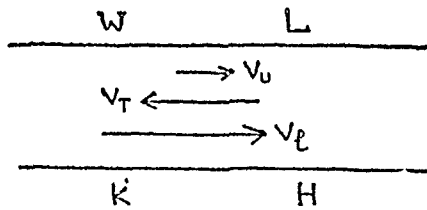
चित्र (6 14)

(3) जब हवा, समताप रेखाओं को काटते हुए उच्च तापमान (W) से निम्न तापमान (K) की ओर बहे, अर्थात् जब गर्म हवा का अभिवहन होता हो ।

इस दशा मे H, L, W और K की स्थितिया चित्र (6.15) मे दिखाई गई है ।
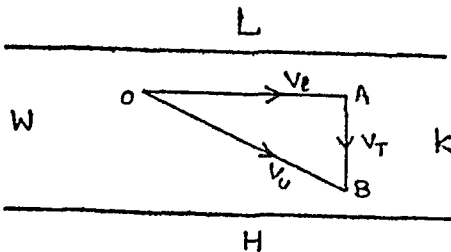
चित्र (6.15).

V_T की दिशा चित्र के अनुसार होगी, जिसमे K ताप हवा के वायी ओर पडता है ।

$$\therefore \quad \vec{V_u} = \vec{V_l} + \vec{V_T}$$

$$= \vec{OB}$$

इस प्रकार ऊँचाई के साथ हवा दक्षिणावर्त दिशा मे घूमती जाती है। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जब गर्म हवा का अभिवहन होता हो, तो हवा ऊँचाई के साथ दक्षिणावर्त घूमती है। दक्षिणी गोलार्द्ध मे इस अवस्था मे घुमाव वामावर्त होता है।

(4) जब ठंडी हवा का अभिवहन होता हो, अर्थात वायुप्रवाह समताप रेखाओ को काटते हुए K से W की ओर हो।

इस अवस्था मे $\vec{V}_u$ ($= \vec{OB}$) ऊँचाई के साथ वामावर्त दिशा मे घूमती जाती
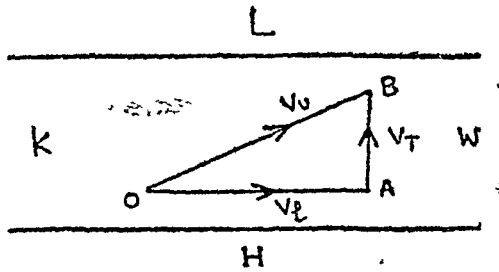
चित्र (6.16)

है। दूसरे शब्दो मे, ठडी हवा के अभिवहन मे हवा ऊँचाई के साथ बैक (back) करती है। इस स्थिति मे हवा दक्षिणी गोलार्द्ध मे दक्षिणावर्त दिशा मे घूमेगी।

6 53 दाब प्रणालियों का ऊँचाई के साथ परिवर्तन

ताप हवाओ की उपर्युक्त प्रवृत्तियो के कारण, माध्य समुद्रतल की दाब प्रणालिया ऊँचाई के साथ परिवर्तित होती जाती है। इस विषय मे कुछ सामान्य नियम इस प्रकार है

(1) शीत कोर का समुद्रतलीय निम्न दाब, ऊँचाई के साथ तीव्र होता जाता है। वायु-प्रवाह भी ऊँचाई के साथ तीव्र होता जाता है। दिशा मे थोडा परिवर्तन हो सकता है।

(2) उष्ण कोर का समुद्र तलीय निम्न दाब ऊँचाई के साथ कमजोर होता जाता है। कुछ ऊपर जाकर यह उच्चदाब क्षेत्र का रूप धारण कर सकता है। वायु-गति ऊँचाई के साथ घटती है और उच्चदाब बन जाने के बाद मे दिशा मे उलटी हो जाती है।

(3) शीतकोर का समुद्रतलीय प्रतिचक्रवात, ऊँचाई के साथ कमजोर होता जाता है तथा उच्च तल पर निम्म दाब मे रूपान्तरित हो सकता है। वायु-गति भी ऊँचाई के साथ घटती जाती है तथा प्रतिचक्रवात के रूपान्तरण के समय उलटी दिशा में हो जाती है।

(4) उष्ण कोर का समुद्रतलीय प्रतिचक्रवात ऊँचाई के साथ तीव्रतर हो जाता है। वायु-प्रवाह भी थोडा दिशान्तरण के साथ तेज होता जाता है।
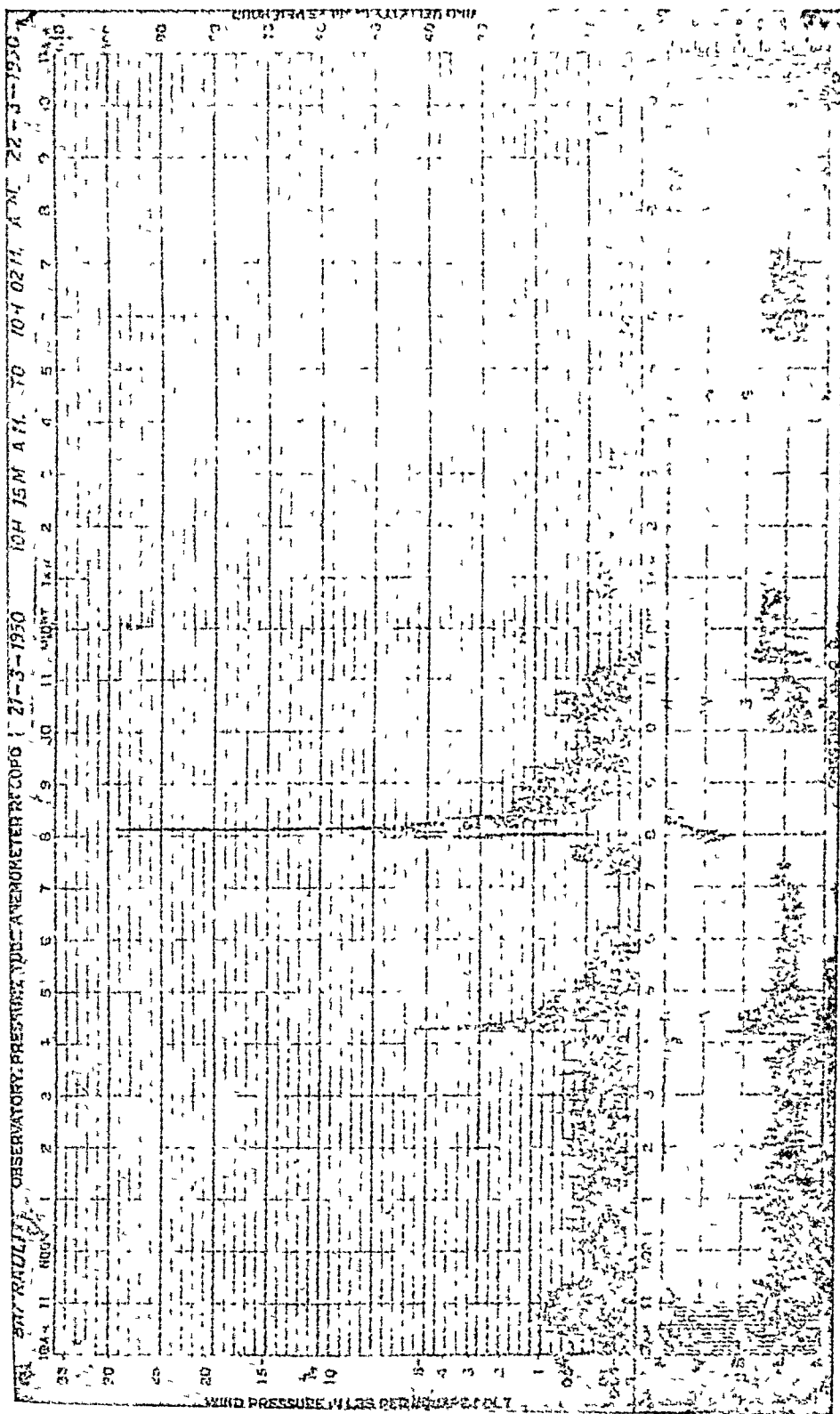
चित्र (6.17)

(5) ऊर्ध्वाधर तल में निम्नदाव का अक्ष शीत क्षेत्र की ओर तथा उच्चदाव का अक्ष उष्ण क्षेत्र की ओर झुक जाता है ।

6.54 विक्षुब्ध प्रवाह (Turbulent flow)

एनीमोग्राफ (स्वत. अभिलेखी वायु मापी) द्वारा रिकार्ड किए गए दैनिक चार्ट से पता चलता है कि वायुगति तथा दिशा, दोनो के क्षणिक आवृत्ति काल के छोटे-छोटे असख्य उच्चावचो (fluctuations) से पूरा चार्ट भरा पड़ा है, चित्र (6.17) । अर्थात् वायु प्रवाह अपरिवर्ती (Steady) नही है । ऐसे प्रवाह को **विक्षुब्ध प्रवाह** कहते हैं ।

एक मध्यमान रेखा AB, इस प्रकार खीची जा सकती है कि उसके ऊपर और नीचे आन्दोलनो का आयाम (Amplitude) बरावर हो । यह रेखा किसी निश्चित्त समय पर वायु गति का औसत मान दे सकती है ।

मध्यमान रेखा से ऊपर का उच्चावचन, **निर्वात** (Gust) तथा नीचे का उच्चावचन, **लल** (Lull) कहलाता है । इन उच्चावचो का माप **निर्वातीय-गुणक** (coefficient of gustiness) कहलाता है जिसकी परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है .—

$$\text{निर्वातीय गुणक} = \frac{\text{उच्चावचन का परास (Range)}}{\text{औसत वायु गति}} \times 100$$

6.55 विक्षुब्ध प्रवाह जलीय तलो की अपेक्षा भूमितल पर अधिक पाया जाता है, जो ताप तथा घर्पण दोनो प्रभावो से उत्पन्न हो सकता है ।

जव हवा रुक्ष धरातल, वृक्षो, इमारतो या अन्य रुकावटो से होकर गुजरती है, तो घर्षण विक्षोभ उत्पन्न होता है । इस प्रवाह मे रुकावटो के समीप छोटे-छोटे भँवरे (Eddies) या बुलबुले स्वत पैदा हो जाते है । जव वायुमण्डल स्थायी हो, तो विक्षोभ रुकावटो की ऊँचाइयो तक ही पाये जाते है और उसके ऊपर वायु प्रवाह समतल हो जाता है । किन्तु अस्थायी वायुमण्डल मे विक्षोभ और अधिक ऊँचाई तक उठ जाता है । सक्षेप मे घर्पण विक्षोभ की तीव्रता वायुमण्डलीय ह्रास पर, वायु गति तथा रुकावट की क्षमता पर निर्भर करती है ।

भूमि तल के सौर ऊष्मा से अपेक्षाकृत अधिक गर्म हो जाने से, ताप-विक्षोभ उत्पन्न होते हैं, जो बहुधा भूमितल पर ऊर्ध्वाधर वायु गति उत्पन्न कर देते है । दोपहर के वाद जव वायुमण्डलीय ह्रास दर सर्वाधिक अतिप्रवण (Steep) होती है, ताप विक्षोभ काफी ऊँचाई तक पहुँच जाता है, अन्यथा इसका प्रभाव 100 मीटर की वायु तह के ऊपर साधारणत नही पहुँच पाता है । ताप-विक्षोभो की तीव्रता, वायुमण्डलीय ह्रास दर तथा सतह के उष्मन पर निर्भर करती है ।

6 56 अल्पकालिक झंझा या स्क्वाल (Squall)

कभी-कभी वहुत तेज हवा का झोका एकाएक उठता है और कुछ मिनट (साधारणत. 1 से 10 मिनट) के बाद एकाएक ही शान्त हो जाता है यह झोका साधारणत. तत्कालीन प्रचलित वायु दिशा से न आकर, किसी दूसरी दिशा से आता

है। इस प्रकार के झोके कभी-कभी अत्यधिक विकसित ताप विक्षोभ के कारण उत्पन्न हो जाते है। किन्तु साधारणत ये वज्रपात (कपासी वर्षा) के बादलो मे उत्पन्न होने वाली अवरोही वायु धाराओ के फलस्वरूप भूमि पर पहुँचते है। वर्षा के बीच-बीच आने वाली तेज झझावात, इसी प्रकार की धाराये हैं। इस परिस्थिति मे एकाएक ठडी हवा के तीव्र अभिवहन से तापमान गिर जाता है। इन झोंको को स्क्वाल या अल्पकालिक झझा कहते है।

स्क्वाल और निर्वात का मुख्य अन्तर उनकी अवधि है। निर्वात मे वायु-गति की वृद्धि केवल कुछ क्षणो की होती है, जबकि स्क्वाल मे अपेक्षाकृत अधिक तीव्र-हवा कुछ मिनटो तक स्थापित रहती ह। भारत मे स्क्वाल के लिए जो शर्त निर्धारित की गई है, उसके अनुसार वायु-गति कम मे कम ब्यूफर्ट पैमाने की तीन अवस्थाएं पार कर 22–27 नाटिकल मील/घण्टा या इससे अधिक पहुँच जानी चाहिए।

6.57 हवा का दैनिक चलन

उत्तरी गोलार्द्ध मे धरातलीय और उच्च स्तरीय हवाओ का दैनिक चलन इस प्रकार है

दिन मे सौर ऊष्मा के कारण भूमितल से कुछ ऊँचाई तक विक्षोभ मिश्रण पर्याप्त मात्रा मे होता है, जिससे वायु-गति तीव्र होती है। समदाब रेखाओ से इसका विक्षेप अपेक्षाकृत कम होता है। अत दिन की हवा भूव्यावर्ती दशाओ से अधिक निकट होती। रात्रि मे हवाएँ धीमी और समदाब रेखाओ को अधिक कोण पर काटती रहती है। धरातलीय हवाएँ कुछ ऊँचाई तक दिन मे दक्षिणावर्त-पवन तथा रात्रि मे वामावर्त-पवन की प्रवृत्ति रखती है।

रात्रि के समय मिश्रण नही होने के कारण घर्षण का प्रभाव कम ऊँचाई तक सीमित रहता है। इससे थोडी ही ऊँचाई (200–300) मीटर के बाद हवा स्वतत्र प्रवाह मे आ जाती है, जो भूव्यावर्ती दशाओं के अधिक निकट होती है। दिन मे मिश्रण के कारण घर्षण-तह काफी ऊँचाई तक उठ जाती है। अत 300 मीटर से 1000 मीटर तक की हवा, जो रात्रि मे भूव्यावर्ती होती है, दिन मे घर्षण के कारण धीमी और सम दाब रेखाओ से विक्षेपित हो जाती है।

रात और दिन मे हवा का यह परिवर्तन, सागरीय क्षेत्रो पर नगण्य होता है। भूमितल पर केवल मेघ रहित दिनो मे दैनिक चलन स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है।

6.58 हवाओं की ऋतु-विभिन्नता (Seasonal Variation)

तापमान और दाब मे सर्दियो मे गर्मियो और गर्मियो से सर्दियो मे व्यापक परिवर्तन होता है, जिसके परिणामस्वरूप भूतितल और निम्न क्षोभ मण्डल की हवाओ मे बहुत अधिक परिवर्तन होना स्वाभाविक है, क्योकि वायु-पवाह दाब प्रवणता द्वारा ही मुख्य रूप से नियन्त्रित होता है।

घर्षण प्रभाव की नगण्यता के कारण मौसमी परिवर्तन सागरीय क्षेत्रो मे अधिक स्पष्ट होता है। 20 उ से 40 उ अक्षाशो के महाद्वीपीय भागो मे सर्दियो मे

उच्चदाब तथा गर्मियों में गम्भीर निम्न दाब स्थापित रहता है। फलतः इन क्षेत्रो मे भूमितल की हवाएँ गर्मियो और सर्दियो मे लगभग विपरीत दिशाओं में बहती रहती है। भारतीय उपमहाद्वीप का ग्रीष्म और शीत मानसून-प्रवाह, मौसमी परिवर्तन का एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमे सागरीय क्षेत्रों मे गर्मियो के 6 महीने दक्षिणी-पश्चिमी तथा सर्दियो के 6 महीने उत्तरी-पूर्वी मानसून धाराएँ चलती हैं।

विषुवत् रेखा के आसपास तापमान की ऋतु विभिन्नता कम होने से हवाओ का मौसमी चलन कम पाया जाता है।

6.60 भूमितल की कुछ स्थानीय हवाएँ

उत्तरी उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र (0–30 उ) मे उपउष्ण कटिबन्धीय उच्चदाब से, विषुवत् रेखीय निम्न दाब की ओर ताप प्रवणता स्थापित रहती है। फलत उत्तर से दक्षिण की ओर हवा चलती है, जो पृथ्वी के घूर्णन के कारण, दायीं ओर विक्षेपित होकर साधारणत. उत्तर पूर्व से बहती रहती है। इसे **उत्तरी पूर्वी व्यापारिक हवा** कहते हैं। इसी प्रकार, दक्षिणी उष्ण कटिबन्ध मे दक्षिण से उत्तर की ओर बहती हवा घूर्णन के कारण, बायीं ओर विक्षेपित होकर दक्षिणी-पूर्वी हो जाती है। यह **दक्षिणी पूर्वी व्यापारिक हवा** कहलाती है।

मध्य अक्षांशो मे दाब प्रवणता, उपउष्ण कटिबन्धीय उच्चदाब से उपध्रुवीय निम्न दाब (60° उ. और द) की ओर होती है। फलत इन क्षेत्रो मे हवाएँ उत्तरी गोलार्द्ध मे दक्षिण से उत्तर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में उत्तर से दक्षिण की ओर बहेगी। यह प्रवाह कोरियालिस बल के अन्तर्गत विक्षेपित (उत्तरी गोलार्द्ध मे दायीं ओर तथा दक्षिणी, मे बायीं ओर) होकर उत्तरी गोलार्द्ध मे दक्षिणी-पश्चिमी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे उत्तरी-पश्चिमी हो जाता है। इन हवाओ को **मध्य अक्षांशीय पश्चिमी हवाएँ** (mid latitude westerlies) कहते है।

इसमे ऊपरी अक्षांशो मे दाब प्रवणता पुनः ध्रुवीय उच्चदाब से उपध्रुवीय निम्नदाबो की ओर पाई जाती है। इसके कारण उत्तरी ध्रुवीय क्षेत्रो मे उत्तरी-पूर्वी तथा दक्षिणी ध्रुवीय क्षेत्रो मे दक्षिणी-पूर्वी प्रवाह प्रचलित रहता है, जिन्हे ध्रुवीय पूर्वी हवाएँ (polar easteolies) कहते हैं।

भूमितल के प्रारूप, समतलता तथा प्रकृति के कारण, जगह-जगह हवा का सामान्य प्रवाह परिवर्तित होकर स्थानीय हवाओ का रूप धारण करता है। सतह की प्रकृति मे अन्तर होने के कारण (जैसे जल और थल), ताप ग्राह्यता की क्षमता स्थान-स्थान पर बदल सकती है, जिससे हवाएँ ऊष्मा द्वारा नियन्त्रित हो जाती है। इस प्रकार के कुछ प्रमुख स्थानीय प्रवाह निम्नांकित है ·

(1) आरोही तथा अवरोही हवा (Anabatic and Katabatic Wind)
(2) पर्वतीय तथा सागर समीर (Mountain and Valley breeze)
(3) थल समीर तथा सागर समीर (Land Breeze and sea Breeze)
(4) फोहन हवा या चिनूक (Fohn Wind)
(5) लू (Loo)

6 61 आरोही तथा अवरोही हवा

अधिक ढाल वाली भूमि पर अथवा पहाडी क्षेत्रो मे हवा का प्रवाह ढाल की सतह पर ऊपर या नीचे की ओर होता रहना है। ऊपर चढने वाला प्रवाह, **आरोही हवा** तथा नीचे अवतरित होने वाला प्रवाह **अवरोही हवा** कहलाती है। इन प्रवाहो का मुख्य कारण ताप जनित है।

दिन मे ढाल की सतह सौर उष्मा से पर्याप्त गर्म हो जाती है। इससे सतह के सम्पर्क की वायु, उसी स्तर की और वायु राशियो की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाती है। फलस्वरूप हल्की होने के कारण, सम्पर्क वायु ढाल पर ऊपर वहने लगती है। साथ ही ढाल से कुछ ऊपर की स्वतन्त्र वायु मे, अपेक्षाकृत ठडी होने से अवतलन प्रवाह होता है। पहाडियो पर आरोही हवा दोपहर के वाद सर्वाधिक तीव्र होती है। पहाडी की चोटी छोड़ने के बाद इसमे तेजी से शीतलन होता है और यदि हवा मे नमी अधिक हुई, तो कपासी प्रकार के मेघ वनने की सम्भावना रहती है।

रात्रि से ढाल पर अवरोही हवाएँ चलती हैं, क्योकि इस समय ढाल की सतह भू-विकिरण के कारण आसपास के वायुमण्डल की अपेक्षा अधिक शीतल होती है। फलस्वरूप भारी होने के कारण, सतह के सम्पर्क की हवा नीचे उतरने लगती है। यदि ढाल हिमाच्छादित है, तो दिन मे भी अवरोही हवाएँ प्राप्त होती है।

कम ढालू भूमि पर भी रात्रि मे धीमी गति मे अवरोही हवाएँ चलती है तथा निचले क्षेत्रो मैं ठडी हवाएँ अभिवहन करती है। पहाड़ी ढालो मे अवरोही हवाएँ काफी तेज बहती हैं। ये हवाएँ आर्द्रता की उपस्थिति मे साधारणत कुहरा तथा पाला उत्पन्न कर सकती है।

6.62 पर्वतीय और घाटी हवा

यदि कोई क्षेत्र चारो ओर ऊँचे पर्वतो से घिरी हुई घाटी हो, तो आरोही और अवरोही प्रभाव और तीव्र हो जाता है। दिन मे चारो ओर से हवाएँ ढाल पर चढती है। यदि वायुमण्डलीय ह्रास दर अधिक हो और हवा नम हो, तो संवाहनिक मेघ वनने की वहुत सुविधा रहती है।

पहाडी पर चलती हवाएँ घर्षण के कारण पवनाभिमुखी तथा अनुवर्ती, दोनो दिशाओ मे भँवर उत्पन्न करती हैं। अनुवर्ती भाग की भँवरे विशेष प्रभावकारी होती हैं।

रात्रि मे सँकरी घाटिओ मे अवरोही हवाएँ तेजी से ठडी वायु तथा नमी अभिवहित करती है। इन घाटियो मे सुवह तक इतना कुहरा या पाला आदि उत्पन्न हो जाता है कि जो वहुधा दिन मे भी नही टूट पाता। यह स्थिति घाटी-क्षेत्रो मे वहुत हानिकारक असर डालती है।

यदि घाटी पर्वत श्रृंखलाओ के वीच मे खण्डित होने से वनी है और चारो ओर से नही घिरी है, तो खण्डित भाग से वहुत तेज हवाएँ घाटी मे बहने को वाध्य होती है, जो साधारणत एक ही दिशा से बहती रहती है।

साधारण तौर पर पर्वतीय और घाटी हवाओं की प्रकृति मे विशेष अन्तर नही है। दोनों ही ढाल पर चलने वाले ताप जनित प्रवाह है।

6.63 थल और सागर समीर

तटीय क्षेत्रो मे दिन के समय, विशेषत. दोपहर के बाद धरातलीय हवा सागर से थल की ओर बहती है। इसे सागर समीर कहते है। स्वभावत सागर समीर प्रभावित क्षेत्र का तापमान कम तथा आर्द्रता अधिक कर देता है।

दिन मे सौर उष्मा से थल का भाग (A) सागरीय क्षेत्र की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाता है, जिससे वहाँ की हवा ऊपर उठ कर कुछ ऊँचाई (100–300 मीटर) (B) पर उच्च दाब तथा (A) पर निम्न दाब उत्पन्न कर देती है। (B) के स्तर पर सागरीय क्षेत्र मे (C) का दाब स्थिर रहने से (B) की अपेक्षा कम रहता है। अत भूमि से सागर की ओर दाब प्रवणता स्थापित हो जाती है, जिससे हवा (B) से (C) की ओर बहने लगती है। सागरीय सतह (D) पर दाब (A) की अपेक्षा स्वतः कुछ
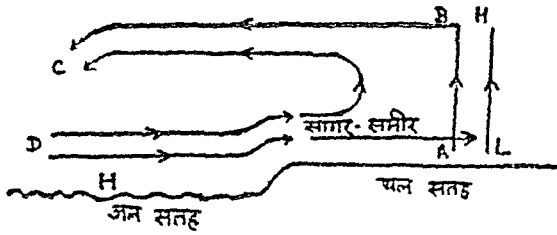
चित्र (6.19)

अधिक हो जाता है, जिससे धरातलीय हवा (D) से (A) की ओर बहने लगती है। यही सागर समीर है।

सागर समीर का अभ्युदय सर्वप्रथम तट पर होता है, जहाँ से वह थल के आन्तरिक भागो की ओर शनैः शनैः बढ़ता है। साधारणत: तट से 20–25 किलोमीटर तक का क्षेत्र सागर समीर से प्रभावित होता है; किन्तु अनुकूल पर्वतीय परिस्थितियो के कारण या आन्तरिक भू-भाग पर स्थित के निम्न दाबो के आकर्षण से सागर समीर महाद्वीपो की ओर अधिक अन्दर तक प्रभावित कर सकता है। उदाहरणार्थ समुद्र से लगभग 60 किलोमीटर दूर स्थित पूना और आसपास के क्षेत्रो मे गर्मियों मे, लगभग हर दिन 2 बजे के बाद सागर समीर पहुचता है और वायुमण्डल मे एकाएक शीतलता उत्पन्न कर देता है। सागर तट से 100 किमी से अधिक दूर स्थित कलकत्ता मे लगभग साढे तीन बजे दोपहर के बाद सागर समीर प्रवेश करता है। सूर्यास्त के बाद सागर समीर मन्द पड जाता है।

रात्रि मे प्रवाह इसके ठीक विपरीत होता है। रात्रि-शीतलन के कारण भू भाग (A) पर सागरीय क्षेत्र (D) की अपेक्षा उच्च दाब स्थापित हो जाता है। फलत थल से सागर की ओर शुष्क हवा बहने लगती है। इसे थल समीर कहते है। थल समीर सामान्यत स्थिर वायुमण्डल मे ही प्रचलित होता है।

सागर और थल समीर का उन्मुक्त प्रवाह, मेघ रहित दिन और रात्रि मे ही सभव है क्योंकि इस प्रवाहों का मुख्य कारण थल और जल पर उष्मा के प्रभाव की भिन्नता है। मेघाच्छन्न दिनो मे थल भाग, न तो दिन मे सौर विकिरणो द्वारा पर्याप्त गर्म हो पाता है और न रात्रि मे भू-विकिरणो के कारण पर्याप्त ठडा।

6.64 फोहन हवा (Foehn Wind)

पर्वत के पवनाभिमुखी ढाल पर चढती हुई हवा मे रुद्धोष्म शीतलन होता है, जिससे कुछ ऊँचाई पर हवा सतृप्त होकर बादल बनाती है। सन्तृप्त हवा जब और ऊपर चढती है, तो उसमे सन्तृप्त रुद्धोष्म ह्लास दर (5°C/किमी) से तापमान घटता है। ऊपर चढते हुए यदि कोई सघनन होता है, तो सघनित जल वर्षा के रूप मे गिर जाता है।

जब यह हवा शिखर पर पहुचने के बाद अनुवर्ती भाग की ओर उतरने लगती है, तो वह गर्म हो जाती है तथा तुरन्त असन्तृप्त हो उठती है, जिससे शुष्क रुद्धोष्म
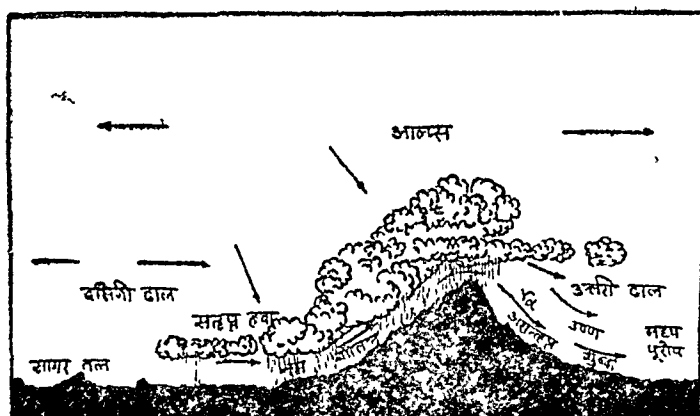
चित्र (6.20)

ह्लास दर (10°C/किमी) से हवा का तापमान बढने लगता है। फलत अनुवर्ती ढाल पर उतरने वाली हवा अधिक गर्म तथा शुष्क होती है।

इस प्रकार की हवा का उदाहरण आल्पस पर्वत के उत्तरी ढाल पर बहने वाली गर्म हवा है। यह हवा मध्य यूरोप के ठडे क्षेत्रो के लिए आनन्ददायक मौसम उत्पन्न करती है। इस हवा का स्थानीय नाम फोहन हवा है।

अमेरिका मे राकी के अनुवर्ती भाग से ऐसी ही हवाएँ चलती है, जहा वे चिनूक के नाम से विख्यात है। भारत मे इस प्रकार का उदाहरण, पश्चिमी घाट के अनुवर्ती भागो मे बहने वाली हवाएँ है, जो गर्म और शुष्क होती है। पूना मे इसी प्रकार की हवाएँ पहुँचती है। इसीलिए पूना के वायुमण्डल मे बम्बई की अपेक्षा कम ऊमस पायी जाती है।

6 65 लू (Loo)

पूर्व मानसून काल (अप्रेल, मई, जून) मे उत्तरी भारत मे चलने वाली गर्म और अत्यधिक शुष्क पश्चिमी या उत्तरी-पश्चिमी हवा लू कहलाती है, जिसमे हवा की आर्द्रता 10% से भी कम तथा गति 20 किमी प्रति घटा से साधारणत. अधिक होती हे। इस प्रवाह का कारण सौर ऊष्मा के आधिक्य से उत्पन्न तीव्र दाब प्रवणता है। तेज ताप के कारण भूमितल की हवा विशेषकर दोपहर के बाद अति शुष्क रुद्धोष्म अवस्था मे आ जाती है। धूल उडाती हवाएँ उत्तरी भारत मे साधारणत· ग्रीष्म ऋतु मे दोपहर से कुछ पहले आरम्भ होकर सूर्यास्त तक बहती हैं, किन्तु कभी-कभी विशेप मौसम दशाओ के कारण रात्रि मे भी लू का चलना जारी रहता है। धूप मे भ्रमण करने वाले लोग कभी-कभी लू के प्रभाव मे जलाभाव (Dehydration) रोग से आक्रान्त हो जाते है। उत्तरी भारत के सभी प्रान्तो मे लू के कारण प्रति वर्ष कुछ लोग मृत्यु के शिकार होते है।

मानसून धाराओ के अभ्युदय होने से लू-प्रवाह, शनैः शनैः खत्म हो जाता है।

6.66 मध्य अक्षाशीय महाद्वीपीय क्षेत्रो की सर्दियो में उच्च दाब तथा गर्मियो मे निम्न दाब जनित करने की प्रवृत्ति होने के कारण, भारतीय उपमहाद्वीप तथा दक्षिणी चीन मे छ महीने तक परस्पर विपरीत दिशाओ की मौसमी हवाएँ प्रवाहित होती रहती है। इन मौसमी हवाओ को अरबी भाषा के शब्द **मानसून** द्वारा सम्बोधित किया जाता है, जिसका अर्थ 'मौसम' को व्यक्त करता है। उपर्युक्त क्षेत्रो मे सर्दियो मे मानसून उत्तर पूर्व से तथा गर्मियो मे दक्षिण पश्चिम से बहता है। इन मानसून हवाओ का विस्तारपूर्वक वर्णन अध्याय 14 मे किया गया है।

6.67 छोटे पैमाने पर ताप और दाब चलन तथा भूमितल के प्रारूप के कारण अनेक स्थानो की हवाएँ विशेप गुणो से युक्त हो उठती है तथा स्थानीय रूप से अपने प्रभाव के कारण इतनी महत्वपूर्ण हो जाती है कि इन्हे अलग नामो से जाना जाता हे। इस प्रकार की कुछ हवाएँ निम्नाकित है :—

(1) ब्लिजर्ड

उत्तरी अमेरिका मे सर्दियो मे अवदाबो के तत्काल बाद उदित होने वाली अतिशीत और तेज हवा स्थानीय रूप से ब्लिजर्ड के नाम से जानी जाती है। इस हवा के साथ तुपार के कण भी प्रवाहित होते रहते हैं।

उत्तरी भारत मे भी सर्दियों मे पश्चिमी विक्षोभो के पीछे साधारणत दो तीन दिनों तक शीत तरंग बहती है, पर इन्हें किसी स्थानीय नाम से नही जाना जाता।

एन्टार्कटिक प्रदेशो मे भी भूमितल पर इसी प्रकार की तुपार भरी ठडी हवाएँ तीव्र गति से चलती है। यहा पर ब्लिजर्ड हवाएँ सतह की अतिशीत वायु राशि हटाकर, कुछ हद तक तापमान बढाने का काम करती हे।

(2) बोरा

एड्रियाटिक सागर के उत्तर और उत्तर-पूर्व मे स्थित पठार से सर्दियो मे तेज अवरोही हवाएँ सागर के उत्तरी तट पर बहती है। इन हवाओ का तापमान बहुत कम होता है तथा अनुकूल परिस्थितियो मे 100 से 150 किमी/घण्टा की गति पायी जाती है । कालासागर के उत्तरी-पूर्वी तट पर भी ऐसी हवाएँ चलती है। इन्हे स्थानीय रूप से बोरा के नाम से जाना जाता है।

(3) सीस्टन-हवा

ईरान के सीस्टन प्रान्त मे गर्मियो की तीव्र तूफानी हवा जो उत्तर से लगभग 4 महीने तक बहती रहती है, सीस्टन हवा के नाम से जानी जाती है।

(4) शमाल

मेसोपोटामिया के मैदानी भागो मे ग्रीष्म ऋतु मे बहने वाली उत्तरी-पूर्वी उष्ण वायु प्रवाह, वहाँ शमाल के नाम से विख्यात है।

(5) सिमूम

अफ्रीका और अरब के रेगिस्तानो मे गर्म और शुष्क रेत उड़ाती तूफानी आंधियाँ अचानक उठा करती है। इनकी अवधि साधारणत: आधे घन्टे से कम होती है। बहुधा सिमूम हवाएँ बवंडर की भाति चक्रवाती होती है। बसन्त तथा ग्रीष्म ऋतुओ मे इस प्रकार की हवाएँ बहुत प्रचलित होती है।

(6) सिरोक्को

मध्य अक्षांशीय वाताग्र अवदाबो मे बहने वाली उष्ण और दक्षिणी हवाएँ अफ्रीका के उत्तर तट तथा दक्षिणी यूरोप मे सिरोक्को के नाम से जानी जाती है। सहारा मरुस्थल मे उत्पत्ति के कारण ये हवाएँ अफ्रीका के उत्तरी तट तक उष्ण तथा शुष्क होती है। भूमध्यसागर पार करने के बाद माल्टा, सिसली तथा इटली आदि मे ये उष्ण किन्तु नम हवाओ के रूप मे पहुँचती है।

(7) हर्मतन

सर्दी के महीनो मे पश्चिमी अफ्रीका मे बहुत ही शुष्क हवा प्रचलित रहती है। वास्तव मे सहारा की शुष्क हवा ठंडी होकर निम्न दाब (सागर क्षेत्र) की ओर प्रवाहित होती है। हर्मतन तटवर्ती क्षेत्रो के उष्ण और ऊमस भरे वायुमण्डल से व्याकुल लोगो को राहत देती है और प्राय स्वास्थ्य वर्द्धक समझी जाती है।

(8) गरजती चालीसा (रोरिंग फार्टीज)

दक्षिणी गोलार्द्ध मे 40 अक्षांश के पूरे वृत्त के आरपार, कोई महाद्वीपीय भाग नही है। अत वायु प्रवाह पर घर्षण का प्रभाव अपेक्षाकृत बहुत कम होता है, जिसके परिणामस्वरूप हवाएँ बहुत तेज गति से सागर सतह पर चलती है। ये हवाएँ पछुवा होती है और गर्जन के साथ ऊँची लहरे उठाती है। इन हवाओ को गरजती चालीसा के नाम से जाना जाता है।

इसके विपरीत 40° उत्तर के सागरीय क्षेत्रो मे बहुत ही धीमी हवाएँ चलती है। वायुमण्डल अधिकतर शान्त और आकाश स्वच्छ रहता है। इन क्षेत्रो को अश्व

अक्षांश (हार्स लैटिच्यूड) कहते है। यह नाम पडने का कारण यह है कि प्राचीन काल मे पाल युक्त जहाजो द्वारा अमेरिका और वेस्ट इण्डीज को घोडो का निर्यात इन क्षेत्रो से होता था और शान्त क्षेत्रो मे जब जहाज फस जाते थे और नावो को पतवार द्वारा सेना पडता था तो अधिकाश घोडो को भार और खाद्य सामग्री के अभाव के कारण समुद्र मे फेक दिया जाता था।

(9) डोल्ड्रम की शांत हवाएँ

विषुवत् रेखा के आसपास का क्षेत्र लगभग समदाब का क्षेत्र है, जहा दाब प्रवणता नगण्य होती है। अत यहा वायुमण्डल सामान्यत शांत होता है या बहुत धीमी हवाएँ बहती है, जिनकी दिशा बहुत तेजी से परिवर्तित होती रहती है। वायु-दिशा की अनिश्चितता के कारण ही इस क्षेत्र को डोल्ड्रम कहा जाता है।

डोल्ड्रम के ही किसी भाग मे दोनो गोलार्द्धों की व्यापारी हवाएँ अभिसरित होती है, जिससे उर्ध्वाधर वायु-धाराएँ उठकर मेघ और वर्षा उत्पन्न करती है। इस क्षेत्र को अन्तर्उष्ण कटिबन्धीय अभिसरण क्षेत्र (Inter Tropical Convergence Zone या I. T. C. Z) कहते है। I. T C. Z. के अतिरिक्त डोल्ड्रम मे मौसम प्राय साफ रहता है।

सूर्य के स्थानान्तरण के साथ डोल्ड्रम और I. T. C. Z ग्रीष्म गोलार्द्ध की ओर स्थानांतरित होते रहते है। किन्तु उत्तरी गोलार्द्ध मे इनका स्थानातरण अपेक्षाकृत अधिक होता है। गत औसत रूप से डोल्ड्रम की स्थिति विषुवत् रेखा से थोडी उत्तर मे होती है।

6 68 पर्वत तरंगे (Mountain Waves)

पर्वतीय भूमि-प्रदेशो मे वायु-प्रवाह, समतल प्रदेशो की अपेक्षा अधिक विक्षुब्ध होता है। पर्वत शृखलाएँ, सामान्य वायु प्रवाह पर अनेक प्रकार के प्रभाव डालती है। उपलब्ध आँकडो तथा सिद्धान्तो के आधार पर कुछ प्रभावों की जानकारी प्राप्त की जा सकी है। हिमालय तथा राकी जैसे बडे पर्वत, छोटे वायु-भँवर से लेकर अनुवर्ती निम्न दाब तथा भूमण्डलीय पैमाने पर वायु-प्रवाह मे विक्षोभ उत्पन्न किया करते है। इन्ही विक्षोभो के परिणामस्वरूप वायुयानो की अधिकतम दुर्घटनाएं पर्वतीय क्षेत्रो में होती रही है।

पर्वतीय ढाल पर आरोह और अवरोह के परिणामस्वरूप, वायु-प्रवाह में तरंग धाराएँ उत्पन्न हो जाती है; जिनका क्षैतिज तरंग दैर्ध्य 1 से 20 किमी तक साधारणत पाया जाता है। ये तरंगे अर्द्ध अप्रगामी गुरुत्व तरंगो (Quasi Stationary Gravity Waves) के रूप मे होती है और पर्वत तरंगे कहलाती है।

धाराएँ अक्सर विशिष्ट गुणों से युक्त पर्वतीय मेघ उत्पन्न करती है, जिनकी विशेषताओं के आधार पर वायु-प्रवाह की प्रकृति का अध्ययन किया जा सकता है। वायु-प्रवाह तेज होने पर भी ये मेघ साधारणत स्थिर रहते हैं और हवा इनके मध्य से होकर गुजर जाती है। पर्वतीय मेघ, शिखर के ऊपर या नीचे कही भी हो सकते है। इन मेघो के कुछ मुख्य प्रकार ये है —

(1) छत्रक मेघ (Cap cloud)

यह निम्न स्तर पर निलबित (hanging) मेघ है, जिसका आधार शिखर के समीप तथा ऊँचाई लगभग एक किलोमीटर होती है। मेघ का अधिकाश भाग पवनाभिमुखी दिशा मे रहता है।

(2) रोटर या वर्तुल (roll) मेघ

अनुवर्ती भाग मे कभी-कभी कपासी या स्तरी कपासी मेघो की कतार वर्तुलाकार रूप मे विकसित होती है, जिसका आधार पर्वत शृ ग के निकट तथा ऊँचाई कुछ किलोमीटर पायी जाती है। ये मेघ विशाल आयाम के अनुवर्ती तरगो के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होते है। मेघो के बीच से धनात्मक उर्ध्व वायु अपरूपण (Shear) गुजरता है, इसलिये इनका ऊपरी भाग घूमता सा प्रतीत होता है।

(3) मसूराकार मेघ (Lenticular Cloud)

ये लेन्स के आकार के अप्रगामी या अर्द्ध अप्रगामी मेघ है, जो साधारणत पवनाभिमुखी भाग मे पर्वत के समानान्तर बैन्डो के रूप मे उत्पन्न होते है। दो या तीन बैंड बहुधा दिखाई देते है।

मसूराकार मेघ विभिन्न ऊँचाइयो पर पाये जाते है तथा एक के ऊपर एक, कई तहे एक साथ भी देखी जाती है। निम्न स्तरो के पर्वतीय मसूराकार मेघ स्तरी कपासी के सदृश दिखाई देते है किन्तु अधिक ऊँचाईयो पर इनका आकार काफी चिकना प्रतीत होता है। इनका रग सफेद के अलावा पीला, नारगी या गहरा भूरा भी हो सकता है।

(4) मुक्ताभ मेघ (Nacreous or Mother of Pearl Cloud)

ये सबसे चमकीले पर्वतीय मेघ है, जो स्थिर मण्डल मे सामान्यत. 20 से 30 किमी ऊँचाई पर उत्पन्न होते है। ऊँचाई के कारण सूर्यास्त के बाद भी ये प्रकाशमान रहते है। उत्तरी ध्रुव क्षेत्र में उच्च अक्षाशो के शीत कालीन अवदाबो के कारण, तीव्र पश्चिमी हवाएं पहाडी भागो से गुजरती हुई लगभग 30 किमी ऊँचाई तक विक्षोभ पहुचा पाती है। इन्ही अक्षाशो मे मुक्ताभ मेघ दिखाई देता है। इसके बनने के लिए इतनी ऊँचाई (तापमान—40°C के आसपास) पर जल या हिमकण का होना भी आवश्यक है। वैसे इन मेघो की भौतिक संरचना अभी तक अज्ञात है।

6.70 आदर्श सामान्य वायु-प्रवाह (Idealised General Circulation)

सूर्य की ऊष्मा और पृथ्वी के घूर्णन द्वारा वायुमण्डल का सामान्य प्रवाह उत्पन्न होता है। इन दोनों के संयुक्त प्रभाव को समझने के लिए, इनका अलग अलग विवेचन करना उचित है।

सर्व प्रथम, मान लीजिए पृथ्वी अपनी धुरी पर स्थिर है। इस अवस्था मे केवल सौर विकिरणों की मात्रा मे अक्षांशों पर भिन्नता के कारण वायु मे प्रवाह उत्पन्न होगा। कैसे?

विपुवत् रेखा के पृथ्वी तल (A) पर अधिक ऊष्मा के कारण वायु गर्म होकर ऊपर उठेगी, जिससे A पर अपसरण के कारण निम्नदाब क्षेत्र उत्पन्न हो जाएगा। उच्च वायुमण्डल के किसी क्षेत्र B पर यही हवा अभिसृत होकर उच्च दाब स्थापित करेगी। फलस्वरूप उच्च वायुमण्डल मे विपुवत् रेखा से ध्रुवों की ओर प्रवाह आरम्भ हो जाएगा। ध्रुवीय क्षेत्र C पर शीतलन के कारण इस वायु का अवतलन स्वाभाविक है, जिससे ध्रुवीय तल D पर उच्च दाब बन जाता है। अतः सतह पर उच्च दाब D से निम्न दाब A की ओर, अर्थात् ध्रुव से विपुवत् रेखा की ओर हवा बहेगी। इस प्रकार, वायु-प्रवाह का पथ कोशिका ABCDA द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।
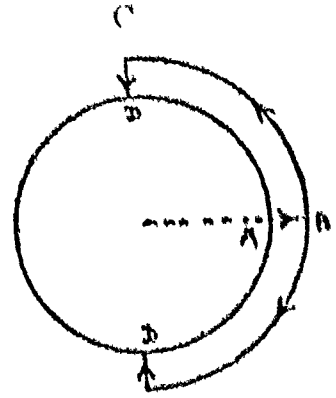
चित्र (6.21)

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि निम्न दाब क्षेत्र से वायु ऊपर उठती है तथा उच्च दाब क्षेत्र पर उसका अवतलन होता है।

अब भूमण्डल पर दाब क्षेत्रों के वास्तविक वितरण पर विचार कीजिए। विपुवत् रेखा पर निम्न दाब, 30° के अक्षांशों के आसपास उप उष्ण कटिबन्धीय उच्च दाब, 60° अक्षांशों पर उपध्रुवीय निम्न दाब तथा ध्रुवों पर उच्चदाब के क्षेत्र स्थायी रूप मे स्थित हैं।

अतः B से ध्रुवों की ओर बहती वायु उप उष्ण कटिबन्धीय उच्च दाबों (30 अंश अक्षांश) पर अवतलित हो जाती है। भूमि तल पर प्रवाह स्वतः F से A की ओर होगा। इस प्रकार एक कोशिका ABEFA पूर्ण हो जाती है।

इस प्रकार स्थिर भूमण्डल पर ताप-प्रवणता के कारण भूमि तथा उच्च स्तर पर आदर्श वायु प्रवाह, निम्नांकित तीन कोशिकाओ द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। ये प्रवाह पूर्णत. रेखांशिक (Meridional) है।

(i) ABEFA

(ii) GHEFG

(iii) GHCDG

स्पष्ट है कि कोशिकाए (i) और (ii) का प्रवाह एक ही दिशा मे है तथा बीच की कोशिका (ii) का प्रवाह इनके ठीक विपरीत होगा। इन्हे क्रमश हैडली तथा विपरीत हैडली कोशिकाए भी कहा जाता है।

पृथ्वी के घूर्णन के कारण यह रेखाशिक प्रवाह विक्षेपित हो जाता हे; उत्तरी गोलार्द्ध दायी ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे बायी ओर। इस विक्षेप के कारण ही प्रवाह मे मडलीय (Zonal) अवयव विकसित होता हे। शनै. शनै' भूमि तथा उच्च स्तर पर सम्पूर्ण प्रवाह मुख्यत मडलीय अर्थात् पूर्वी या पश्चिमी हो जाना चाहिए।

किन्तु पूर्णत मंडलीय प्रवाह पृथ्वी के तापमान सन्तुलन को विक्षुब्ध कर देगा, क्योकि रेखाशिक अवयव की अनुपस्थिति मे विषुवत् रेखीय तापमान उच्च अक्षाशो की ओर नही ले जाया जा सकेगा। अत यह आवश्यक है कि हर अक्षाशो मे उत्तरी-दक्षिणी अवयव युक्त हवा वहे।

यह अवयव चक्रवाती तथा प्रतिचक्रवाती स्थायिवत् दाब प्रणालियो द्वारा विकसित होता है।

इन परिस्थितियो से उत्पन्न परिणामी सामान्य वायु प्रवाह चित्र (6 22) मे दिखाया गया हे।
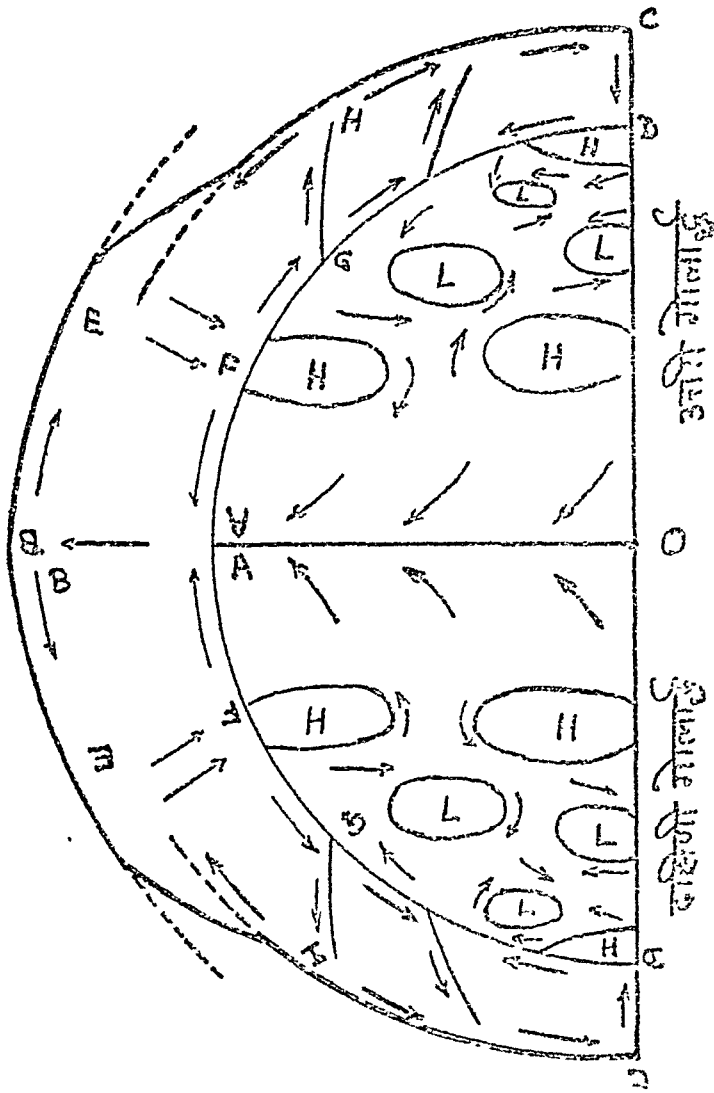
चित्र (6.22)

भूमि तल पर सामान्य प्रवाह का विवरण धारा 6.60 तथा चित्र (6.23) में स्पष्ट किया गया है।
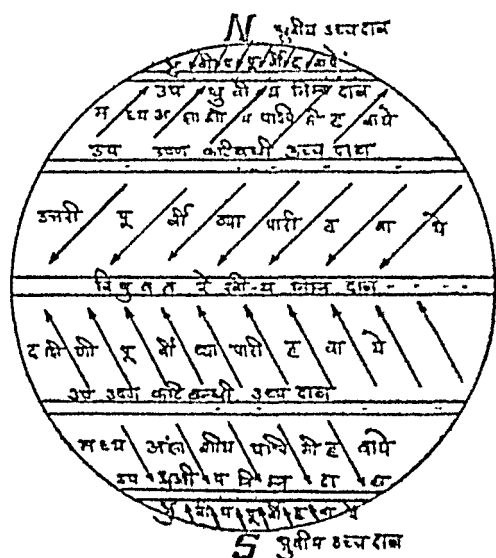
चित्र (6.23)

6.80 अभिसरण और अपसरण (Convergence and Divergence)

क्षैतिज प्रवाह मे किसी स्थान विशेष पर वायु का सचयन (Accumulation) हो सकता है। जैसे स्थान A पर कई दिशाओ से वायु केन्द्रित हो सकती है—चित्र (6.24) स्थिति (i), अथवा A पर पहुँचने वाली हवा की गति, A से
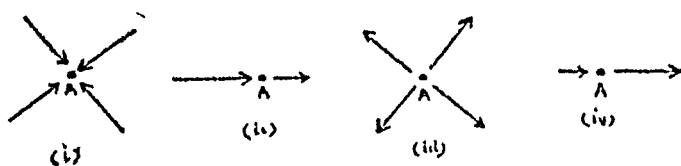
चित्र (6.24)

वाहर जाने वाली हवा की गति से अधिक हो सकती है, स्थिति (ii)। इन दशाओ मे विन्दु A पर अभिसरण हो रहा है।

किन्तु स्थितियाँ (iii) और (iv) इसके विपरीत है। यहाँ स्थान A से वायु-राशि अपसरित हो रही है। इस स्थिति को अपसरण कहते है।

हवा के क्षैतिज सचयन से ऊर्ध्वधाराएँ उत्पन्न हो जाती है, जिससे अतिरिक्त वायु-राशि ऊपर की ओर अभिवहित होने लगती है। अपसरण की स्थिति मे वायु का अवतलन होता है और यही अवतलित वायु-राशि वाहर की ओर होने वाले क्षैतिज अपसरण को सन्तुलित करती है।

अभिसरण का वास्तविक उदाहरण सागर समीर द्वारा दिया जा सकता है। जव यह समीर थल भाग मे प्रवेश करता है, तो घर्षण के कारण इसकी गति वहुत कम हो जाती है। फलत. तट के आसपास, हवा का अभिसरण स्वाभाविक है।

चक्रवाती प्रवाह मे घर्षण के कारण हवाएँ समदाब रेखाओ को काटते हुए केन्द्र की ओर अभिसरित होती है। प्रति चक्रवाती प्रवाह मे केन्द्र से बाहर की ओर हवाओ का अपसरण होता है।

6 81 क्षैतिज अपसरण का माप

X–अक्ष पर दो बिन्दु A और B लीजिए, जहा वायु-गति धनात्मक दिशाओ मे क्रमश. u तथा $u+du$ हैं।

$$\text{AB के मध्य बिन्दु O पर अपसरण का X–अवयव} = \frac{du}{dx},$$

जहां $AB = dx$।

इसी प्रकार Y–अक्ष के बिन्दुओं C और D पर यदि धनात्मक दिशा की ओर वायु गति v और $v+dv$ हो, तो

$$\text{बिन्दु O पर अपसरण का Y–अवयव} = \frac{dv}{dy},$$

जहां $CD = dy$ और O, CD का मध्य बिन्दु है।

अत बिन्दु O पर कुल क्षैतिज अपसरण

$$D = \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy}$$
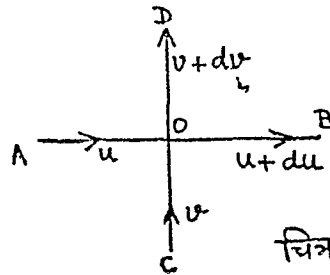
चित्र (6·25)

6 82 अभिसरण (C) अपसरण के ठीक उत्क्रम (reverse) होता है।

$$\therefore C = -D$$

6 83 अभिसरण (C) ऊर्ध्व दिशा मे वायु वेग उत्पन्न कर देता है और उर्ध्वाधर अपसरण द्वारा सन्तुलित होता हे।

$$\therefore \quad C = \text{उर्ध्वाधर अपसरण} = \frac{dw}{dz},$$

जहां w ऊपर की ओर उर्ध्वाधर वायु वेग है।

$$\therefore \quad \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy} = -\frac{dw}{dz}$$

$$\text{या} \quad \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy} + \frac{dw}{dz} = 0$$

6.84 उदाहरण—निम्नाकित चित्र से बिन्दु O पर क्षैतिज अपसरण की मात्रा ज्ञात कीजिए। वायु गति की इकाइया किमी/घण्टा मे दी गयी है।
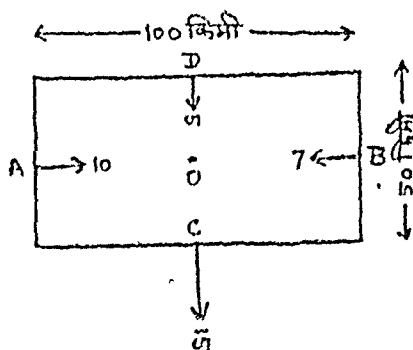
चित्र (6·26)

हल— du = B पर गति—A पर गति

$= (-7) - (10) = -17$

और $dx = 100$ किमी।

$$\therefore \quad \frac{du}{dx} = -\frac{17}{100} \text{ प्रति घण्टा}$$

$$= -\frac{17}{100 \times 3600} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

$= -4.7 \times 10^{-5}$ प्रति सेकण्ड

dv = D पर वायुगति—C पर वायुगति

$= (-5) - (-15) = 10$

और $dy = 50$

$$\therefore \quad \frac{dv}{dx} = \frac{10}{50 \times 3600} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

$= 5\ 6 \times 10^{-5}$ प्रति सेकण्ड

$$\therefore \quad D = \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy} = 0.9 \times 10^{-5} \text{/सेकण्ड}$$

6.85 भ्रमिलता (Vorticity)

व्यन्जक $q = \frac{dv}{dx} - \frac{du}{dy}$,

भ्रमिलता कहलाती है। यह वह गुणक है, जो किसी स्थान पर वायु-प्रवाह की चक्रवाती प्रवृति का माप बतलाती है। हवा पूर्णत चक्रवाती न होने पर भी आंशिक रूप से घूर्णन-अवयव रख सकती है। q का धनात्मक मान चक्रवाती तथा ऋणात्मक मान प्रतिचक्रवाती घूर्णन की ओर संकेत करता है। उपर्युक्त उदाहरण में,

$$\frac{dv}{dx} = \frac{10}{100 \times 3600} = 2 \cdot 8 \times 10^{-5}/\text{सेकण्ड}$$

तथा
$$\frac{du}{dy} = \frac{17}{50 \times 3600} = -9 \cdot 4 \times 10^{-5}/\text{सेकण्ड}$$

$$\therefore \quad q = \frac{dv}{dx} - \frac{du}{dy} = 12 \cdot 3 \times 10^{-5}/\text{सेकन्ड} \text{ ।}$$

6·86 ऊर्ध्वाधर वायु गति (Vertical motion of air)

उपर्युक्त विवरणों से स्पष्ट है कि किस प्रकार अभिसरण आरोही प्रवाह तथा अपसरण अवतलन प्रवाह को जन्म देता है। यह क्रिया पृथ्वी तल के अलावा ऊर्ध्व वायु-मण्डल के किसी भी स्तर पर सभव है।

वायुमण्डल मे ऊर्ध्व प्रवाह छोटे तथा क्षणिक-विक्षोभो से लेकर कई दिनो तक स्थायी रहने वाले नियमित आरोही या अवतलन प्रवाह तक होता है। ये नियमित प्रवाह साधारणत दाब प्रणालियो के अधीन हुआ करते है। निम्नदाब क्षेत्र आरोही तथा उच्चदाब क्षेत्र अवतलन प्रवाह से सम्बन्धित होते है।

ऊर्ध्व गति, क्षैतिज हवा की तुलना मे बहुत क्षीण होती है। अत. सामान्य प्रवाह पर विचार करते समय इसे नगण्य कर दिया जाता है। साधारणतः ऊर्ध्व गति कुछ सेन्टीमीटर प्रति सैकण्ड के क्रम की पायी जाती है किन्तु गभीर अवदाबो या चक्रवातो मे आरोही प्रवाह कुछ मीटर प्रति सैकण्ड तक पहुच जाता है, जो क्षैतिज वायु प्रवाह के ही क्रम का होता है।

आंकिक मान मे कम होते हुए भी ऊर्ध्व गति का महत्त्व इसलिए बहुत अधिक है कि इसी के कारण मौसमी घटनाएं उत्पन्न होती है। आरोही गति के कारण ही वायुराशि का शीतलन तथा सघनन हो पाता है, जो बादल और फिर वर्षा मे परिवर्तित होता है। अवतलन प्रवाह रुद्धोष्म उष्मन के कारण बादलो को क्षीण करने तथा साफ मौसम उत्पन्न करने की प्रवृति रखता है।

ऊर्ध्वाधर गति जनित करने के कारण निम्नांकित है—

(1) ताप-किरणो द्वारा वायुमण्डल का उष्मन या शीतलन

गर्म होने से आरोही धाराएँ तथा ठडा होने तक अवतलन प्रवाह उत्पन्न हो जाता है।

(2) रुद्धोष्म अवस्था मे तापमान या आर्द्रता का अभिवहन

आर्द्र हवा, सूखी हवा से हल्की होती है। अत. वायुमण्डल मे यदि आर्द्रता बढाई जाए, तो वह स्वत ऊपर उठने लगेगी और ऊर्ध्व-प्रवाह उत्पन्न हो जाएगा।

(3) भ्रमिलता अभिवहन (Vorticity-advection)

भ्रमिलता अभिवहन का तात्पर्य अभिसरण तथा अपसरण की वृद्धि से है। चक्रवाती प्रवाह मे केन्द्र पर अभिसरण बढने लगता है। फलस्वरूप आरोही प्रवाह

आरम्भ हो जाता है। इसके विपरीत प्रतिचक्रवाती प्रवाह में केन्द्र से हवा का अभिवहन बाहर की ओर होता है, जिसके परिणामस्वरूप केन्द्र पर अपसरण की वृद्धि हो जायगी, इसे सन्तुलित करने के लिए अवतलन प्रवाह स्थापित हो जाता है।

(4) घर्षण प्रभाव

पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि भूमितल के घर्षण से विक्षुब्ध प्रवाह उत्पन्न हो जाता है। यह विक्षोभ सूक्ष्म पैमाने से लेकर पर्याप्त ऊँचाई तक नियमित ऊर्ध्व धारा तक हो सकता है। इसकी तीव्रता, रुकावट की प्रकृति तथा आकार पर निर्भर करती है।

(5) पर्वतीय ढाल

पर्वतीय ढाल पर चढने वाली आरोही हवा भी ऊर्ध्वाधर प्रवाह का अवयव रखती है। पर्वत तरंगे नियमित ऊर्ध्वाधर गति उत्पन्न करने की क्षमता रखती है।

6 87 ऊर्ध्वाधर गति (w) की गणना करने की सबसे सरल विधि समीकरण $\frac{du}{dx}+\frac{dv}{dy}+\frac{dw}{dz}=0$ है।

इसके अनुसार,

$$\frac{dw}{dz} = -\left(\frac{du}{dx}+\frac{dv}{dy}\right) = -\text{D (क्षैतिज अपसरण)}$$

$$\therefore \quad dw = -\text{D}dz \qquad (1)$$

इस समीकरण के दाये पक्ष को क्रम बद्ध रूप से (step wise) समाकलित करने से w का मान ज्ञात किया जा सकता है। किन्तु यह विधि केवल उन्ही गतियो की गणना कर सकेगी, जो अभिसरण के कारण उत्पन्न हुई है।

6 88 तापमान अभिवहन से उत्पन्न w की गणना निम्नांकित सूत्र से ज्ञात की जा सकती है। यह सूत्र रुद्धोष्म दशाओं मे ऊष्मा गतिकी के प्रथम नियम द्वारा प्राप्त किया गया है।

$$w = \frac{\frac{\partial T}{\partial t} + u\frac{\partial T}{\partial x} + v\frac{\partial T}{\partial y}}{\gamma - \gamma d}$$

जहां $\frac{\partial T}{\partial t}$ = तापमान परिवर्तन की स्थानीय दर,

$\frac{\partial T}{\partial x}$ और $\frac{\partial T}{\partial y}$ = क्रमश X और Y–दिशाओं मे तापमान परिवर्तन की दर,

u, v = क्रमश. X और Y-दिशाओ मे हवा का अवयव

γ = वायुमण्डलीय ह्रास दर, और

γd = D A.L. R.

6 89 वृहद पैमाने पर ऊर्ध्वाधर गति की गणना करना एक दुरूह कार्य है, जिसमे उपर्युक्त सभी कारको के गणितीय समीकरणो का समावेश करना पडता है। मौसम वैज्ञानिक उपर्युक्त समीकरण तैयार करने तथा आधुनिकतम कम्प्यूटर की सहायता से उसका हल निकालने में संलग्न है।

6 90 जेट-धाराएँ (Jet-Streams) १५१

जब द्वितीय महायुद्ध मे अमेरिका के B–29 बम वर्षक के एक पायलेट ने पहली बार जापान के ऊपर 6 से 9 किमी ऊँचाई के बीच 200 'नाट' की वायुगति रिपोर्ट की, तो मौसम विशेषज्ञो को इसका विश्वास करना कठिन हो गया। किन्तु अब प्रचुर मात्रा मे उच्चतर वायु प्रेक्षणो के आधार पर यह स्पष्ट हो गया है कि उत्तरी गोलार्द्ध के 30–35 तथा 50 अंश अक्षाशो के लगभग पूरे वृत्त पर सकीर्ण बैंड मे अत्यधिक तीव्र हवाएँ स्थायिवत् रूप से उच्चतर क्षोभ मण्डल मे बहती रहती है।

उत्तरी गोलार्द्ध के उन अक्षांशो मे, जहाँ उच्चतर वायुमण्डल मे पछुआँ हवाएँ प्रमुख रहती है, क्षोभ सीमा के कुछ नीचे तीव्र हवाएँ पश्चिम मे पूर्व की ओर बहती हैं। कुछ अक्षाक्षो पर ये हवाएँ सकीर्ण नलिका की भाँति तग धाराओ के रूप मे, अपेक्षाकृत और तीव्र (60 नाट से अधिक) गति से बहती है। मौसम चार्ट पर इन धाराओ के बीच मे एक ऐसा अर्द्ध क्षैतिज अक्ष खीचा जा सकता है, जिस पर धाराएँ केन्द्रित होती हुई मान ली जाएँ। इन्हे जेट-धाराएं कहा जाता है। संकीर्णता के कारण ही इन धाराओ मे ऊर्ध्व और पार्श्व वायु अवरूपण (Shear) बहुत तीव्र होता है। शीत ऋतु मे जेट धाराओ की तीव्रता तथा विस्तार, दोनो ही अधिक हो जाते हैं।

साधारणत जेट धाराएँ 200 मिलीबार (11–12 किमी) ऊँचाई-स्तर पर पायी जाती है। ये धाराएँ सामान्य रूप से कुछ हजार किमी लम्बी, कुछ सौ किमी चौड़ी तथा कुछ किमी गहरी होती है। हवा का ऊर्ध्व अवरूपण 5–10 मीटर/सैकण्ड प्रति किमी तथा पार्श्व अपरूपण, 5 मीटर/सैकण्ड प्रति 100 किमी पाया गया है। जेट धाराओ मे वायु की केन्द्रीय गति 100 नाट के क्रम की होती है, जो यदा-कदा 200 नाट तक भी पहुच जाती है।

जेट धाराएँ प्रमुख रूप मे ताप हवाओ के कारण ही जनित होती है और इनकी तीव्रता वायुमण्डल के तापमान विपर्यास (Temperature Contrast) के समानुपाती होती है। निम्न क्षोभ मण्डल मे तापमान विधुवत् रेखा से ध्रुवो की ओर तीव्रता से घटता है T तापमान का अधिकतम विपर्यास 35 अश उत्तरी अक्षाँश के आस-पास पाया जाता है–जो तीव्रतम जेट धाराओ का क्षेत्र है। वाताग्र अवदावो मे भी पर्याप्त ऊँचाई तक तीव्र तापमान विपर्यास जनित होता है। यही कारण है कि इस प्रकार के अवदावो के क्षेत्र, ध्रुवीय वाताग्र क्षेत्रो (50–60 उ) मे भी जेट धाराएँ स्थायिवत् रूप मे पायी जाती हैं।

6 91 प्रमुख विशेषताएँ

(1) क्रोड (core) के पास जेट धाराओ की गति 60 से 200 'नाट' तक पायी जाती है। 60 नाट की राशि एक स्वेच्छ मान है, जिसे जेट धाराओ की निम्नतम सीमा के लिए निर्धारित कर दिया है।

(2) जेट-अक्ष से हर ओर वायु-गति तेजी से घटती जाती है। ध्रुवो की ओर 100 नाट प्रति 160 किमी तथा विषुवत रेखा की ओर 100 नोट प्रति 500 किमी की दर से गति का ह्रास होता है।

(3) जेट धाराएँ प्राय तीव्र तापमान विपर्यास से सम्बन्धित होती हैं। यह विपर्यास प्राय. मध्य अक्षाशो मे पछुवाँ क्षेत्र के उन वाताग्रो मे पाया जाता है, जो लगभग पूरे अक्षाशीय वृत्त पर व्याप्त होते हैं।

(4) सामान्यत जेट धाराएँ पश्चिम से पूर्व की ओर बहती है, किन्तु कही-कही धाराओ का आयाम पर्याप्त बढ जाने के कारण रेखाशिक (meridional) अवयव उत्पन्न हो जाता है।

(5) तीव्र वायु अवरूपण के कारण कही-कही जेट धाराओ के नीचे पर्याप्त उच्छलन (Bumping) से युक्त विक्षुब्ध तरगे पायी जाती है, जो विमानो के लिए खतरनाक स्थिति उत्पन्न कर सकती है। इस उच्छलन को **स्वच्छ वायु विक्षोभ** (Clear Air Turbulence या CAT) कहते है।

6 92 जेट धाराओं के प्रकार

जेट धाराओ के दो प्रमुख और स्थायिवत् क्षेत्र है, जिनके आधार पर उन्हे निम्नाकित दो प्रकारो मे बाट दिया गया है। जेट धाराएँ सर्दियो मे अधिक तीव्र और सगठित होती है।

(1) ध्रुवीय सीमाग्र जेट धारा (Polar front jet stream)

ये जेट धाराएँ ध्रुवीय सीमाग्र क्षेत्रो (40 से 60 अंश अक्षाश) मे बहती है, इनकी स्थिति और तीव्रता परिवर्तनशील रहती है। तीव्रता साधारणत 125 से 150 नाट के क्रम की पायी जाती है। यदाकदा वायु गति 200 नाट तक भी पहुँच जाती है।

(2) उप उष्ण-कटिबन्धीय जेट धारा (Sub-tropical jet stream)

दोनो ही गोलार्द्धो मे 25 से 35 अक्षाँश के बीच बहने वाली 200 मिलीबार के आसपास 100 नाट के क्रम की तीव्र हवाएँ उप उष्ण कटिबन्धीय जेट धाराएँ कहलाती है। सर्दियो मे ये तीव्रतर हो जाती है और निम्न अक्षाशो की ओर खिच जाती है तथा 25 अक्षाश की मध्य स्थिति ग्रहण करती है। गर्मियो मे जेट धाराए उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर 35° अक्षाश पर स्थापित हो जाती है।

इन जेट धाराओ की औसत भौगोलिक स्थिति जनवरी और जुलाई मे क्रमश चित्र 6.27 और 6 28 मे प्रदर्शित की गयी है।
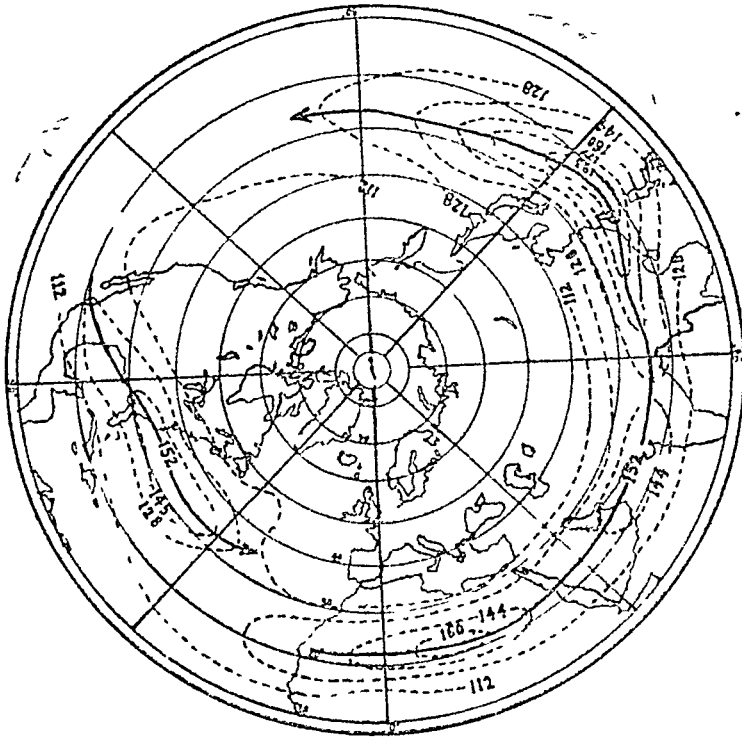
जेट धाराग्रो का भौगोलिक ग्रावंटन–जनवरी
वायुगति की इकाई–किमी./घण्टा
चित्र (6 27)
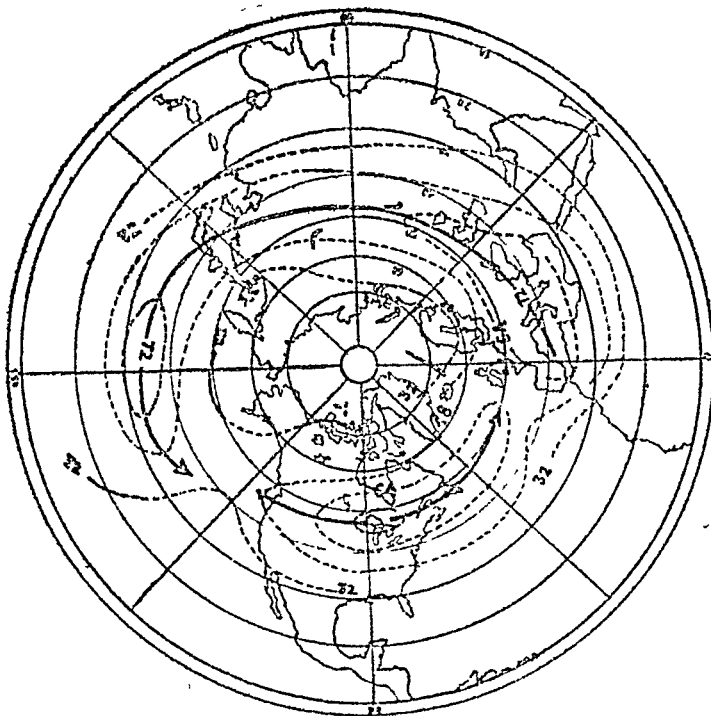
चित्र (6 28)

6.93 भारत मे जेट धाराएं

अक्टूबर से मई तक उप-उष्ण कटिबन्धीय जेट धारा उत्तरी भारत के क्षेत्रो से होकर गुजरती है। इसकी औसत स्थित लगभग 27·5° उत्तरी अक्षाश मे मानी जा सकती है। औसत वायुगति पूर्व मानसून काल (मार्च-मई) तथा उत्तर मानसून काल (अक्टूदर-नवम्बर) मे कम रहती है, 60 नाट के लगभग; जो सर्दियो मे वढ कर 100 नाट के आसपास पहुँच जाती है।

ग्रीष्म मानसून के अभ्युदय के साथ जेट धारा उच्च अक्षाशों की ओर स्थानान्तरित होकर भारतीय क्षेत्र के वाहर चली जाती है। ग्रीष्म मानसून समाप्त होने के तत्काल वाद ही पुन' स्थापित हो जाती है। फरवरी मे इसकी स्थिति सबसे नीचे, अर्थात् 25°उ० अक्षाश तक आ जाती है जवकि भारत मे जेट धारा तीव्रतम होती है।

मानसून काल मे 15° उ अक्षाश के वृत के आसपास उत्तरी पूर्वी एशिया से अफ्रीका तक उच्चतर क्षोभ मण्डल मे तीव्र पूर्वी हवाओ का अभ्युदय होता है, जो ऊँचाई के साथ वढती जाती है। फलत. 13 से 15 किमी ऊँचाई पर इन अक्षाशो के आसपास **पूर्वी जेट धाराएं** उत्पन्न हो जाती है।

इसका कारण संभवत यह है कि मई से जुलाई या सितम्वर तक सूर्य के स्थानान्तरण के कारण, निम्न क्षोभ मण्डल का सर्वाधिक उष्म क्षेत्र विपुवत् रेखा पर न होकर, एशिया और अफ्रीका के उप-उष्ण कटिवन्धीय महाद्वीपीय भागो पर स्थापित हो जाता है। फलत ताप जन्य हवाएँ उत्क्रमित (reversed) होकर पश्चिम से पूर्व की ओर वहने लगती है जिससे इन क्षेत्रो मे पश्चिमी मानसून हवाएँ ऊँचाई के साथ घटने तथा पूर्वी हवाएँ ऊँचाई के साथ वढ़ने लगती है।

भारतीय प्रायद्वीप पर पूर्वी जेट धाराएँ अनुकूल परिस्थितियो मे 19–20° उ अक्षाश तक आ जाती है, जवकि उनके अक्ष की गति लगभग 100 नाट तक पहुंच जाती है। साधारणत. पूर्वी जेट धारा 60 नाट के क्रम की पायी जाती है।

दक्षिणी-पश्चिमी मानसून की तीव्रता तथा मानसून के अवदावो के प्रभाव मे पूर्वी जेट अत्यधिक परिवर्तन शील रहती है और मानसून क्षीण होते ही समाप्त हो जाती है।

7

मौसम प्रेक्षण और यंत्र

(Weather Observations and Instruments)

7.10 मौसम प्रेक्षणों की आवश्यकता अनेक उद्देश्यो के लिए होती है। ये उद्देश्य सामान्यत. दो विभिन्न वर्गों मे बाटे जा सकते है।

(1) समकालीन उद्देश्य—जिसमे प्रेक्षण, मौसम पूर्वानुमान और चेतावनिया तैयार करने के लिए प्रयुक्त होते है।

(2) जलवायु सम्बन्धी उद्देश्य—जिसमे प्रेक्षण, औसतीकरण द्वारा जलवायु निर्धारण तथा शोध कार्यों के लिए प्रयुक्त होते हैं।

समकालीन उद्देश्य से लिए गए प्रेक्षणो को सुरक्षित रखना अनिवार्य है क्योकि बाद मे ये जलवायु सम्बन्धी अनुप्रयोगो के काम आते है। इसके अतिरिक्त विशेष जलवायुविक अध्ययन, जैसे कृषि, औषधि विज्ञान, जल विज्ञान आदि के लिए आवश्यकतानुरूप विशेष मौसम प्रेक्षण भी लिए जाते हैं। इन उद्देश्यो की पूर्ति के लिए संसार भर मे समकालीन और जलवायुविक वेधशालाओं (आब्जरवेटरीज) का जाल बिछा हुआ है।

वस्तुत समकालीन और जलवायुविक उद्देश्यो से लिए गए प्रेक्षणो की क्रिया विधि मे कोई आधार-भूत अन्तर नही है। समकालीन उद्देश्य के लिए कुछ निर्धारित मौसम तत्वों के प्रेक्षणों की बहुलता से आवश्यकता होती है, जिन्हें मौसम केन्द्रों तक अति-शीघ्र पहुँचने के लिए तीव्र संचार व्यवस्था अनिवार्य है।

7.11 वेधशालाओं का जाल (Net work of Observatory)

मौसम उत्पन्न करने वाली दाब प्रणालिया राष्ट्रों की राजनैतिक सीमाओं की मुहताज नहीं होती। ये प्रणालियां अपने उद्गम से दूर अनेक देशो मे पहुंचकर मौसम उत्पन्न किया करती है। इनकी स्थिति एवं गति की सही जानकारी के लिए यह आवश्यक है कि भूतल पर वेधशालाओ का व्यवस्थित जाल बिछा हो। इसके लिए अन्तराष्ट्रीय सहयोग अनिवार्य है।

ससार के लगभग सभी देश विश्व-मौसम वैज्ञानिक सगठन (World Meteorological Organisation) के सहयोजन मे काफी सीमा तक वेधशालाओं का जाल बिछा चुके हैं। दुर्गम क्षेत्रो मे यह सगठन वेधशालाओ की स्थापना का कार्यभार स्वय संभालता है। यही सगठन विश्व भर मे प्रेक्षणो और प्रेक्षण-समयों का मानकीकरण करता है, ताकि समन्वय की दृष्टि से प्रेक्षण सर्वत्र तुलनात्मक हो सके। 00 जी० एम० टी० (0530 भारतीय मानक समय) से आरम्भ होकर हर तीन घटे बाद की घडी प्रेक्षण लेने के लिए नियत की गई है, जो समकालीन घडी (Synoptic Hour) कहलाती है। इन 8 समकालीन घडियो मे 00, 06, 12 और 18 जी० एम० टी० का समय मुख्य समकालीन घडी कहलाता है। भारत मे सरकारी मौसम सेवा सन 1875 मे आरम्भ हुई थी। तब से वेधशालाओ के जाल मे निरन्तर वृद्धि होती गई। इस समय पूरे देश मे धरातलीय प्रेक्षण (Surface observation) के लिए लगभग 500 वेधशालाएँ तथा उच्चतर वायुमडलीय प्रेक्षण के लिए लगभग 60 पायलट बैलन केन्द्र एव 19 रेडियो सोंदे केन्द्र हैं।

इनके अतिरिक्त राज्य और केन्द्र सरकारो के अधीन हजारो वर्षा मापी केन्द्र है, जो केवल वर्षा के प्रेक्षण लेते हैं।

7.12 एक पूर्ण समकालीन वेधशाला, समकालीन घडियों मे निम्नांकित प्रेक्षण रिकार्ड करती है।

पवन की दिशा और चाल

जिस दिशा से हवा आ रही हो वह पवन की दिशा मानी जाती है और यह दिशा पवन दर्शक (Wind-vane) द्वार नापी जाती है। हवा की गति पवन वेग मापी (एनीमोमीटर) या एनीमोग्राफ द्वारा ज्ञात की जाती है। मौसम विज्ञान मे पवन गति की इकाई साधारणत: 'नाट' (Knot) ली जाती है। एक 'नाट' लगभग 2 किमी प्रति घण्टा के बराबर होता है।

वायुदाब

यह वायुदाब मापी द्वारा मिलीबार की इकाइयो मे व्यक्त किया जाता है। दाब के सतत और स्वचालित माप के लिए बेरोग्राफ प्रयुक्त किया जाता है।

तापमान और आर्द्रता

भूमि से लगभग 4 फुट ऊपर की हवा का तापमान और आर्द्रता स्टीवेन्सन स्क्रीन में रखे गए तापमापियो से नापे जाते हैं। इसके तापमान का माप साधारणत: सेन्टीग्रेड (सेल्सियस) मे लिया जाता है। तापमान और आर्द्रता के सतत तथा स्वचालित प्रेक्षणों के लिए क्रमश. थर्मोग्राफ और हाइग्रोग्राफ नामक उपकरण प्रयोग मे लाये जाते है।

वर्षा

साधारण वर्षा मापी और स्वालेखी (self recording) वर्षा मापी द्वारा मिलीमीटर की इकाई में वर्षा का माप लिया जाता है।

उपर्युक्त यन्त्रों के अतिरिक्त बिना उपकरण के आकलन (estimation) द्वारा कुछ प्रेक्षण लिए जाते है, जैसे दृश्यता, मेघाच्छन्नता की मात्रा और प्रकार तथा वर्तमान और पिछली मौसम अवस्था। इनका विवरण अनुच्छेद 7.20 मे दिया गया है।

7.20 दृश्यता

यह वह क्षैतिज दूरी है जहाँ तक प्रेक्षण के समय वस्तुएँ स्पष्ट देखी और पहचानी जा सके। इसका अनुमान मीटर या किलोमीटर की इकाइयो मे लगाया जाता है। आकलन की सहायता के लिये निश्चित दूरियो पर पूर्व निर्धारित भू-चिह्नो, जैसे मीनार, पहाडियाँ या विशिष्ट इमारतो को देखा जाता है। भू-चिह्नो के चयन मे यह सावधानी रखनी चाहिये कि वे वातावरण के पार्श्व मे स्पष्ट पहचाने जा सके। चिह्न हर दिशाओ मे होने चाहिये। दृश्यता का भान बहुत कुछ मौसम अवस्थाओ पर निर्भर करता है : गहरे कुहरे मे दृश्यता 50 मीटर से भी नीचे गिर जाती है। मृदु कुहरे में भी दृश्वता 1 किमी से कम हो जाती है। कुहासे मे दृश्यता 1 से 2 तथा हेज मे 2 से 4 किमी के बीच रहती है। भारी वर्षा मे भी दृश्यता सामान्यत: 4 कि. मी. से घट जाती है। हल्की वर्षा का दृश्यता पर प्राय· कोई प्रभाव नहीं पडता।

रात्रि मे दृश्यता का आकलन अपेक्षाकृत क्लिष्ट है और केवल उन्हीं वेध-शालाओं मे इसका प्रेक्षण लिया जा सकता है जहाँ ज्ञात केंडिल पावर के प्रकाश स्तम्भो का भू-चिह्नो के स्थान पर व्यवस्था हो। दृश्यता की यात्रिक माप के लिये कुछ उपकरण भी अब तैयार कर दिये गये है जैसे दृश्यतामापी, स्कोपोग्राफ और ट्रान्समिसोमीटर।

7.21 मेघ प्रेक्षण

सम्पूर्ण मेघ प्रेक्षण 4 भागो मे विभक्त है :

(1) मेघ की मात्रा का आकलन
(2) मेघ प्रकार की पहचान
(3) मेघ के आधार तल की ऊँचाई का आकलन या यान्त्रिक माप
(4) मेघ की गति और दिशा की माप

साधारणत. समकालीन प्रेक्षणों मे पहले तीन भाग ही सम्मिलित करते हैं।

मेघच्छन्नता की मात्रा अष्टमांशों (Oktas) में नापी जाती है। पूरे दृश्य आकाश का आठवाँ हिस्सा एक अष्टमांश कहलाता है। यदि आधा आकाश मेघाच्छन्न है तो मेघ की मात्रा चार अष्टमांश होगी और यदि आकाश पूर्णत: मेघाच्छन्न है तो मेघ की मात्रा आठ अष्टमांश होगी। यह माप प्रेक्षक के चाक्षुप आकलन (Visusl estimation) पर निर्भर करता है।

प्रेक्षण में मेघ प्रकार की पहचान भी अंकित करनी पड़ती है। अध्याय 5 मे विभिन्न मेघ प्रकारो की विशिष्टताएँ सक्षिप्त रूप मे बतलाई गई है। प्राय.

आकाश मे एक साथ एक से अधिक प्रकार के मेघ, तह-दर-तह छाये रहते है। इनकी पहचान प्रेक्षको को अपनी बुद्धिमत्ता और अनुभव के आधार पर ही करनी पडती है।

पक्षाभ, कपासी तथा स्तरी रूप के मेघो (जिनका विवरण अध्याय 5 मे किया जा चुका है) के अलावा भी अनेक प्रकार के मेघो का वर्णन **मेघ-एटलस** मे किया गया है, जो कुछ विशेषताओ के कारण मुख्य प्रकारो से अलग किए गए हैं। इन मेघो के लैटिन नाम दिए गए है। उन सबका विवरण प्रस्तुत पुस्तक के क्षेत्र से बाहर है। इनमें मे कुछ मुख्य मेघ ये है।

(1) **पर्वतीय या लेन्टीकुलर मेघ**—इनका विवरण अध्याय 6 मे दिया जा चुका हे। ये C*c*, A*c* तथा S*c* प्रकार के तीक्ष्ण किनारो वाले मेघ है, जो प्राय लेन्स के अनुप्रस्थ काट की भाति दिखाई देते हैं।

(2) **कैस्टेलेटस**—ये मेघ प्राय गर्मियो मे द्रष्टिगोचर होते है तथा कंगूरी या क्रनेलैटेड जैसी आकृति रखते है।

(3) **मेम्मेटस**—कभी-कभी कोई मेघ-तह कही से फूल कर पाउच या स्तन की तरह दिखाई देने लगती है। इसे **मेम्मेटस-मेघ** कहते है।

7 22 मेघ के आधार तल की ऊँचाई मापने या आकलित करने की अनेक विधिया है जिनमे कुछ निम्नांकित है :

(1) **सीलिंग-बेलून**—यह दिन मे निचले मेघ के आधार तल की ऊँचाई (H) ज्ञात करने की मानक विधि है। हाइड्रोजन भरा एक छोटा रबर का गुबारा छोड़ा जाता है तथा मेघ मे गुब्बारे के विलीन होने का समय (T), विराम घडी से नोट कर लिया जाता है। हाइड्रोजन की मात्रा के आधार पर गुब्बारे की आरोहण गति (V) (पूर्व निर्धारित होती है। स्पष्टत $H = VT$.

भारतीय वेधशालाओ मे सामान्यत 15 ग्राम के गुब्बारे प्रयुक्त किए जाते है, जिनमे V का मान लगभग 10 किमी/घण्टा के बराबर होता है।

यह विधि निम्न मेघो के लिए बहुत उपयोगी है। ऊँचे मेघों के लिए इसका उपयोग इसलिए उचित नही है कि उच्चस्तरीय हवाएँ गुब्बारे को ऊर्ध्वाधर मार्ग से बहुत विक्षेपित कर सकती हैं।

गुब्बारे के साथ लालटेन या मोमबत्ती संलग्न करके यह विधि रात्रि में भी प्रयुक्त हो सकती है। इस स्थिति में गुब्बारे की आरोहण दर ज्ञात करने में लालटेन का भार भी सम्मिलित करना होगा।

(2) **सर्चलाइट और एलीडेड**—सर्चलाइट से मेघ के आधार-तल पर प्रकाश पुंज उर्ध्वाधर दिशा मे फेंकते है और सर्चलाइट से ज्ञात दूरी (d) पर रखे गए एक यंत्र द्वारा प्रकाशित मेघ तल का उन्नताश (θ) पढ लेते है। इस यत्र का नाम एलीडेड है। सर्चलाइट और ऐलीडेड साधारणत एक ही तल पर लगभग 300 मीटर की दूरी पर रखे जाते हैं।
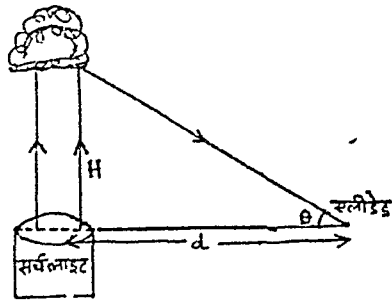
चित्र (7·1)

आधार की ऊँचाई, $H = d \tan \theta$

यदि बादल सिर के ठीक ऊपर नही है, तो प्रकाश पुन्ज किसी कोण α पर प्रक्षेपित करना पडेगा। इस स्थिति मे जैसा कि चित्र (7 2) से स्पष्ट है,

$$H = \frac{d}{\cot \alpha + \cot \theta}.$$
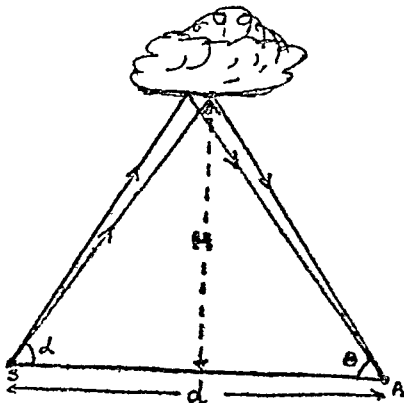
चित्र (72)

(3) **सीलोमीटर (Ceilometer)**—यह यंत्र और इसकी क्रियाविधि चित्र चित्र (7.3) द्वारा समझाई गई है। एक माड्डुलित (modulated) प्रकाश पुन्ज मेघ तल पर प्रक्षेपित किया जाता है और प्रकाशित तल का उन्नताश सीलोमीटर के रिसीवर द्वारा ज्ञात किया जाता है। रिसीवर सयत्र एक प्रकाश विद्युत दूरबीन (Photo electric tele-scope) होता है, जो केवल माडुलित प्रकाश के लिए ही सवेदन शील होता है, अन्य किसी प्रकाश के लिए नही।

सीलोमीटर का सिद्धान्त
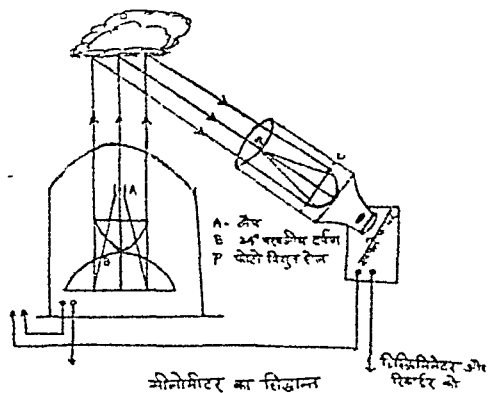
चित्र (7·3)

7.23 उपर्युक्त विधियो के बावजूद भी मेघ तल की ऊँचाई प्रायः आकलित करने की आवश्यकता पडती है। प्रर्वतीय अचंलो में, जहां पर्वतो पर मेघ जनित होते हैं, मेघ तल की ऊँचाई शिखरों की तुलना द्वारा पर्याप्त यथार्थता से ज्ञात की जा सकती है। मैदानी भागो पर, विशेपकर रात्रि मे, यह आकलन केवल प्रेक्षक के अनुभव और विभिन्न मेघ प्रकारो की मानक ऊँचाइयो के आकडो के आधार पर किया जाता है।

7.24 नेफोस्कोप प्रेक्षण

नेफोस्कोप वह यत्र है जो मेघ-गति की दिशा तथा कोणिक वेग (w) नापता है। यदि मेघ की ऊँचाई H हो, तो मेघ की गति (v) सूत्र, $v = Hw$ द्वारा सरलता से ज्ञात की जा सकती है।

नेफोस्कोप दो प्रकार के होते है—(1) परावर्तन नेफोस्कोप जैसे फाइनमैन दर्पण नेफोस्कोप (2) डाइरेक्ट विजन नेफोस्कोप जैसे बैसन कोम्ब नेफोस्कोप।

यहा केवल फाइन मैन दर्पण नेफोस्कोप का वर्णन किया जा रहा है। इसमे एक गोलाकार अकित काले का दर्पण होता है, जो क्षैतिज कारी पंचो से युक्त एक ट्राईपोड स्टैंड पर स्थित कर दिया जाता है।
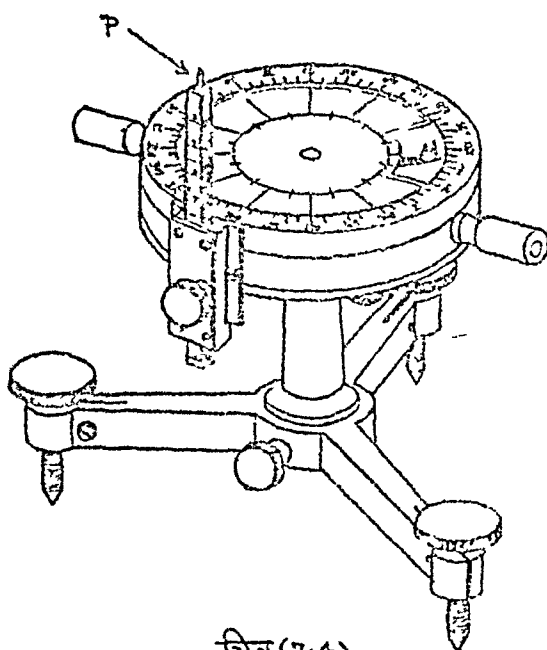
चित्र (7.4)

दर्पण एक पीतल के फ्रेम मे बन्द कर दिया जाता है जिस पर अशो का पैमाना अकित होता है। फ्रेम मे एक उर्ध्वाधर सूचक (P) लगा होता है, जिसे ऊपर-नीचे खिसकाने की पेच-व्यवस्था होती है। सूचक पर एक मिलीमीटर पैमाना भी लगा होता है, जिसमे सूचक के शिखर की दर्पण-तल से ऊँचाई ज्ञात की जा सके।

दर्पण पर 25 मिमी त्रिज्यान्तर के दो समकेन्द्रक वृत्त अंकित किए जाते हैं। व्यवस्था इस प्रकार की जाती है कि बड़ा वृत्त फ्रेम के किनारे से भी 25 मिमी का त्रिज्यान्तर रखे। अभिविन्यास (orientation) के लिए दर्पण के नीचे एक कम्पास सुई (N) इस प्रकार स्थित की जाती है कि उसका अग्रभाग काले शीशे में कटी एक छोटी सी खिड़की के द्वारा देखा जा सके।

प्रेक्षण के लिए नेफोस्कोप किसी समतल पर रखकर दर्पण को स्पिरिट लेविल की सहायता से समतल कर लिया जाता है। अब यंत्र इस प्रकार समायोजित किया जाता है कि 180 अंश का निशान ठीक उत्तर की ओर पड़े।

एक उपयुक्त मेघ-राशि इस प्रकार चुनली जाती है कि उसका बिम्ब दर्पण के केन्द्र पर पड़े। अब प्रेक्षक सूचक को घुमाकर उसकी लम्बाई इस तरह समायोजित करता है कि उसके नोक का परावर्तित बिम्ब भी केन्द्र पर पड़े। प्रेक्षक अपना सिर इस प्रकार हिलाता है कि मेघ राशि और सूचक का बिम्ब संलग्न रहे।

अंकित शीशे का वह बिन्दु, जहां मेघ राशि शीशे से बाहर चली जाती है, नोट कर लिया जाता है। यह मेघ-गति की दिशा बतलाती है। केन्द्र से भीतरी वृत्त की परिधि तक मेघ-राशि के पहुँचने का समय भी नोट कर लिया जाता है।

मान लीजिए, वृत्त की त्रिज्या a (= 25 मिमी) तथा सूचक के नोक की ऊँचाई h मिमी है। यदि A से B तक मेघ राशि (t) समय में पहुँची है, तो

$$\frac{AB}{a} = \frac{H}{h}$$

$$\therefore \quad AB = \frac{aH}{h}$$

जहां, H मेघ की ऊँचाई है।

$$\text{मेघ की गति, } v = \frac{aH}{ht}$$

7.26 वर्तमान और पिछला मौसम

इस शीर्षक के अन्तर्गत मौसम घटनाओं, जैसे वर्षा, फुहार, ओला, तुषार, कुहरा, कुहासा, झंझा-तड़ित, आंधियां, रवबाल आदि का उल्लेख किया जाता है। यह उल्लेख सांख्यिक कोड के रूप में होता है। वर्तमान मौसम का अध्ययन प्रेक्षण समय से 10 मिनट पूर्व आरम्भ कर दिया जाता है। 'पिछला मौसम' शीर्षक में 1 घण्टे पूर्व घटित मौसम का उल्लेख किया जाता है।

वर्तमान मौसम को 100 प्रकारों में उपविभाजित किया गया है, जिनकी कोड संख्याएँ 00 से 99 तक दी गई हैं। प्रथम 50 संख्याएँ अवक्षेपण रहित मौसम प्रकारों के लिये नियत की गई हैं। 50–99 तक के कोड अवक्षेपण युक्त मौसमी घटनाओं को व्यक्त करते हैं। 50–59. कोड-समूह फुहार और उसके उप प्रकारों

के लिए, 60-69 वर्षा के लिए, 70–79 तुषार. हिमपात तथा अन्य ठोस प्रकार के अवक्षेपणो के लिए तथा 80–99 समूह बौछार, मिश्रित अवक्षेपण, ओले आदि के लिए बनाए गए है ।

7.30 उल्काएं और मौसम घटनाएँ (Meteors and weather phenomena)

मेघो के अतिरिक्त अन्य घटना, जो वायुमण्डल या पृथ्वीतल पर देखी जाती है, उल्का कहलाती है । यह घटना वर्षा तथा आर्द्र या अनार्द्र कणो का हवा मे निलम्बन हो सकती है । उल्काएं प्राकाशिक वैद्युतिक प्रारूप मे भी देखी जा सकती है, जिनसे यदा कदा ध्वनि भी सम्बन्धित होती है । अत उल्काओ को निम्नांकित मुख्य वर्गो मे विभक्त किया जा सकता है ।

7.31 (अ) **जलोल्काएँ (Hydrometeors)**—जैसे फुहार, वर्षा, बौछार, तुषार तथा ठोस हिमकणो का अवक्षेपण । इनका विवरण अध्याय 5 मे दिया जा चुका है ।

कुहरा, कुहासा, तथा हेज यद्यपि मेघो की प्रकृति के ही होते है, क्योकि ये जलकणो के हवा मे निलम्वन से उत्पन्न होते है, तथापि इन्हे, भूमितल के पास जनित होने के कारण मेघो से अलग करके जलोल्काओ मे सम्मिलित कर लिया गया है ।

कुहरा और कुहासा मे आर्द्रता 75% से अधिक होती है तथा दृश्यता क्रमश 1 किमी से कम और 1 से 2 किमी के बीच होनी चाहिए । हेज भी भूमितल के निकटतम वायुमण्डल मे अति सूक्ष्म कणो (प्राय आर्द्रता ग्राही) का निलम्वन है । ये सूक्ष्म कण बहुत बडी सख्या मे उपस्थित होते है । हेज मे दृश्यता 3 से 5 किमी तक हो सकती है ।

भूमितल के आसपास की नमी, जल या ठोस कणों के रूप मे सतह या वनस्पतियो पर निक्षेपित हो जाती है । इन्हे भी जलोल्काएँ कहा जाता है । ये मुख्यत चार प्रकार के होते हैं .

(1) ओस (Dew)

यह भूमि के आस-पास किसी सतह पर जलकणो का निक्षेपण है, जो निकट की स्वतत्र नम हवाओ के सघनन से बनता है ।

(2) पाला या तुषार (Frost)

जब ओसांक 0°C से कम होता है, तो वायुमण्डलीय नमी का ऊर्ध्वपातन तुषार कणो के रूप मे हो जाता है जो पत्तियो और भूमि तल पर जम जाते है । ये साधारणत मुलायम और रवेदार ठोस के रूप मे होते है ।

(3) राइम (Rime)

अतिशीतल सूक्ष्म जल कणो के जमने से छोटे-छोटे हिमकण तैयार हो जाते हैं । शीघ्र जमने के कारण राइम के दानों के मध्य हवा फसी रहती है । अधिक मात्रा मे होने से राइम तहो के रूप मे जम जाते है ।

(4) ग्लेज (Glaze)

यह हिम का सम और पारदर्शी निक्षेपण है जो वर्षा की बूंदों के जमने से बनता है।

7.32 लिथोउल्काएं (Lithometeors)

धूल या अन्य अजलीय ठोस कणों का वायुमण्डलीय निलंबन लिथो-उल्का कहलाती है। धूल, धुंध, चिमनियों से निकले कार्बनिक धूम्रकण तथा समुद्र से निकले नमक के कण, लिथो-उल्का के कुछ उदाहरण हैं। रेगिस्तान और मौसमों में उठने वाली धूल के बगूले या रेतीली आंधियां भी इसी श्रेणी में आती हैं। मुख्य प्रकारों का संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है —

(1) धूल-धुंध (Dust-Haze)

यह वायुमण्डल की निकटतम तहों में भूमि तल से उठाई गई धूल या रेत के कणों का निलम्ब है, जिसमें आर्द्रता निश्चित रूप से 75% से कम और दृश्यता धुंध के समान ही होती है।

(2) धूम (Smog)

यह औद्योगिक चिमनियों तथा मोटर गाड़ियों से निकले धूम्र कणों का वायुमण्डल में निलम्बन है।

(3) धूल या रेत भ्रमिल (Dust or Sand Whirl)

कभी-कभी ग्रीष्म काल के दोपहरों में भूतल के अत्यधिक तपन से वायुमण्डल के निचले तह काफी गर्म हो जाते हैं। स्थल की आकृति और प्रकृति के कारण जब कोई सीमित भू-भाग अपेक्षाकृत अधिक गर्म हो जाता है, तो वहां स्वतः संवाहनिक धाराएं (Auto Convective Currents) उत्पन्न हो जाती हैं। ये धाराएं अपने साथ धूल या रेत की पर्याप्त मात्रा कुछ ऊंचाई तक उठा लेती हैं। निम्न दाब क्षेत्र के चारों ओर प्रवाह चक्रवाती या प्रतिचक्रवाती रूप में भ्रमिल पैदा कर देता है। धूल-भ्रमिल साधारणतः कुछ फुट व्यास तथा कुछ मीटर ऊंचाई के आकार का होता है।

(4) धूल या रेत उड़ाती हवाएं (Dust or Sand Raising Winds)

तीव्र दाब प्रवणता के कारण तेज धूल उड़ाती हवाएं गर्मियों में चलती हैं। यह विक्षुब्ध प्रवाह है जो दृश्यता को साधारणतः एक किमी से भी कम कर देता है।

(5) धूल भरी या रेतीली आंधी (Dust or Sandstorm)

अस्थायी वायुमण्डल और गर्मी की अनुपस्थिति में धूल या रेत की भारी राशियां ऊर्ध्वधाराओं द्वारा बहुत ऊपर तक उठाई जाती हैं। इस घटना में साधारणतः कपासी वर्षी बादल बन जाते हैं। आर्द्रता की कमी से वर्षा प्रायः नहीं होती किन्तु गर्जन और तड़ित की घटनाएं सामान्य रूप से पाई जाती हैं।

उल्काएं, मृग तृष्णा, (mirage) शिमर (Shimmer), हरित क्षण दीप्ति (Green flash), सांध्य प्रकाश स्तम्भ (Twilight Columns) आदि है। मेघयुक्त आकाश मे आभामण्डल, करोना, इन्द्रधनुष, धुंध धनुष, क्रेपगुलर किरणें आदि घटनाएं देखी जाती है। इनमे से कुछ के विवरण निम्नांकित हैं—

(1) आभामण्डल (Halo)

यह प्रकाश घटनाओ का एक समूह है जो प्रकाश के घेरा (ring), स्तम्भ तथा चमकीले धब्बो की आकृति जैसी आकाश मे दिखाई देती है। ये घटनाएँ निलवित हिम कणो द्वारा किरणो के आवर्तन के फलस्वरूप जन्म लेती है।

–20°C स्तर से ऊपर मेघ-कण मुख्यत. हिम-कणो मे ही बने होते हैं। जब हिम-कणो की सान्द्रता कम होती है (साधारणत पक्षाभस्तरी मेघ मे), तो इनमे आवर्तित किरणे भूमि तक पहुचती है और सूर्य या चन्द्रमा धुंधले रूप मे बादलो से झलकते है। अनुकूल परिस्थितियो मे रात्रि मे चन्द्रमा तथा दिन मे सूर्य को केन्द्रित किए हुए, रगीन वृत्त के आभामण्डल स्पष्ट रूप से दिखाई देते है। कभी-कभी बड़े वृत्त का एक और आभामण्डल भी दृष्टिगोचर होता है। चन्द्र आभामण्डल प्राय: सौर आभामण्डल से कम चमकीले होते है। साधारणत 22 अश अर्द्ध व्यास के आभामण्डल ही दिखाई देते है। बडा आभामण्डल 46 अश त्रिज्या का होता है (शिरोविन्दु (Zenith) से क्षितिज के पूरे चाप का नाप 90 अंश लिया जाता है।)

विभिन्न आकारो के हिम कणो द्वारा आवर्तन से, भिन्न-भिन्न प्रकाशीय आकृतिया दिखलाई दे सकती है।

(2) करोना

जब प्रकाश की किरणे पतली तह के हिम कणों से युक्त मेघ से गुजरती है, तो हिम कणो द्वारा विवर्तन के फलस्वरूप आभामण्डल से बहुत छोट कई चमकीले वृत्त, सूर्य या चन्द्रमा का घेरा बना लेते है। साधारणत. तीन से अधिक वृत्त दृष्टिगोचर नही होते। यह घटना करोना कहलाती है। चन्द्र करोना अधिक सामान्य घटना है। यद्यपि सूर्य के चारो ओर भी करोना उसी बहुलता से उत्पन्न होते है, तथापि तीव्र चमक के कारण दिन मे अधिकतर दिखाई नही देते।

करोना मण्डल मे रगो की स्थिति और क्रम आभामण्डल के ठीक विपरीत होते है।

(3) इन्द्र धनुष (Rainbow)

यह वर्षा की गिरती बूंदो से, सौर किरणो के आवर्तन तथा परावर्तन का परिणाम है, जिसमे रंगीन प्रकाश वृत्ताकार चाप की तरह दिखाई देता है। सूर्य, प्रेक्षक की आँख तथा इन्द्र धनुष का केन्द्र एक सरल रेखा पर पडता है। इस प्रकार इन्द्र धनुष के उच्चतम विन्दु का दिगश (Azimuth) सूर्य के दिगश से 180° विपरीत होता है।

अच्छी तरह विकसित इन्द्र धनुष मे द्वितीयक तथा तृतीयक रगीन चाप भी स्पष्ट दिखाई देते है। इन्द्रधनुष का वर्ण–पट अन्दर से क्रमशः बैगनी, नीला, हरा, पीला, नारगी तथा लाल के क्रम मे होता है। लेकिन द्वितीयक इन्द्रधनुष पर रंगो का क्रम बिल्कुल विपरीत होता है।

प्रारम्भिक इन्द्रधनुष और किरणो के, गोलाकार जल बूँदों द्वारा एक वार पूर्ण आन्तरिक परावर्तन से बनते है तथा द्वितीयक धनुष दो वार पूर्ण आन्तरिक परावर्तन के फलस्वरूप बनते है। मान लीजिए, जल की बूँद के स्थान A पर कोई किरण आपतित होती है, जहा पर आवर्तन के बाद यह किरण, दिशा AB ग्रहण करती है। यदि B पर इसका पूर्ण आन्तरिक परावर्तन होता है, तो परावर्तित किरण BC विन्दु C से आवर्तन द्वारा बूँद के वाहर आ जाती है। इस बीच मान लीजिए, किरण बूँद की आन्तरिक तहो से n वार पूर्ण परावर्तित हुई। तब आगत और वहिंगत किरणो के बीच का कुल विक्षेप,

$$D = 2(i - r) + n(180 - 2r), \qquad \text{.. (i)}$$

जहाँ i और r क्रमश A पर आपतन तथा परावर्तन कोण है। चूँकि निम्नतम विक्षेप के लिए किरणे सबसे अधिक चमकीली होती है, अत इस स्थिति मे,

$$\frac{dD}{di} = 2 - \frac{dr}{di} - n\frac{dr}{di} = 0$$

या $$\frac{dr}{di} = \frac{1}{n+1}$$

चूँकि $\sin i = \mu \sin r$, .. (ii)

$$\therefore \cos i \frac{di}{di} = \mu \cos r$$

$$\therefore \cos i = \frac{\mu}{n+1} \cos r \qquad \text{....(iii)}$$

(ii) और (iii) से—

$$\cos i = \sqrt{\frac{\mu^2 - 1}{n^2 + 2n}}$$

तथा $$\cos r = \frac{n+1}{\mu}\sqrt{\frac{\mu^2 - 1}{n^2 + 2n}}$$

अब मान लीजिए, $n = 1$,

बैंगनी किरणो के लिए $i = 58° \ 48'$, $r = 39° \ 33'$ तथा

$180 - D = 40° \ 36'$ और लाल किरणो के लिए $i = 59° \ 29'$
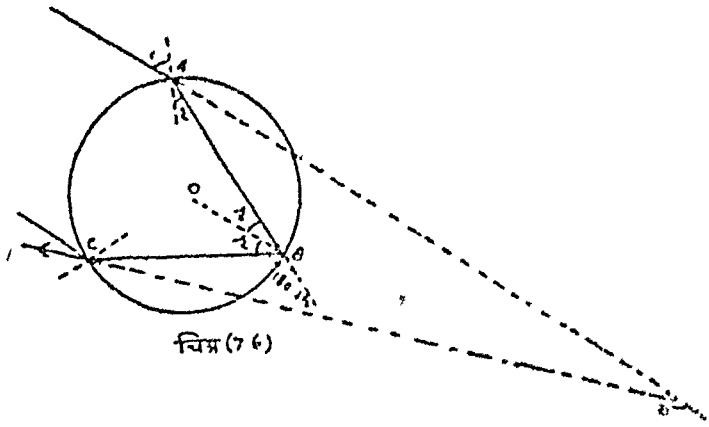
चित्र (76)
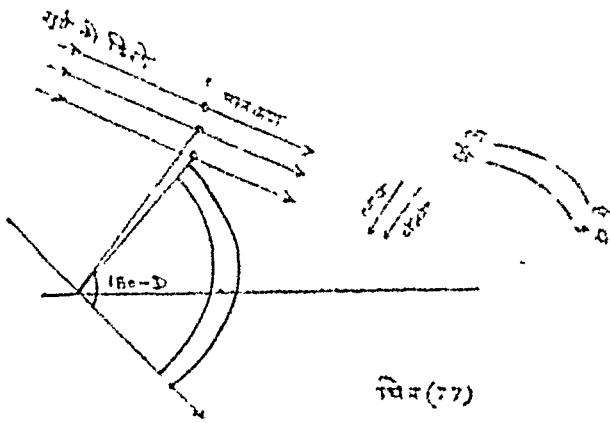
चित्र (77)

यदि $n = 2$ हो, तो $180 - D$ का मान बैंगनी रंग के लिए $(53° 38')$ लाल $(50° 40')$ से अधिक हो जाता है। फलत द्वितीयक इन्द्रधनुष में, रंगों का क्रम विपरीत होता है।

7·34 विद्युतोल्काएं (Electro Meteors)

ये वायुमण्डलीय स्थिर विद्युत के दृश्य या श्रव्य प्रमाण हैं—जैसे तड़ित या मेघ गर्जन जो आवेशों के अनियमित विसर्जन से उत्पन्न होते हैं। ये घटनाएं सामान्यतः संवाहनिक मेघों से सम्बन्धित हैं।

सेंट एल्मों अग्नि तथा ध्रुवीय अरोरा अविच्छिन्न और नियमित विद्युतोल्का हैं। ध्रुवीय क्षेत्रों की रात्रि में अरोरा एक दिव्य वक्र या धन्वे की तरह दिखाई देती है, जिसके नीचे से आकाश अपेक्षाकृत अधिक गहरा प्रतीत होता है।

7·40 मौसम के यान्त्रिक प्रेक्षण दो प्रकार के होते हैं—

(1) धरातलीय मौसम वैज्ञानिक प्रेक्षण

(2) उच्चतर वायु प्रेक्षण

धरातलीय वायुदाव, तापमान, आर्द्रता, वायुवेग और वर्षा–मापन के लिए, मौसम वेधशालाओ मे सामान्य यत्रो के अतिरिक्त स्वालेखी (Self recording) यत्र भी प्रयुक्त किए जाते हैं। इनका सक्षिप्त परिचय निम्नाकित है।

7 41 वायुदाब का माप

फोरटिन अथवा क्यू (kew) प्रकार के दावमापी जिसमे वर्नियर पैमाने की व्यवस्था होती है, वायुदाब को मापने के लिए प्रयुक्त होते है। कुंडिका समायोजन के पहले दावमापी की नली को धीरे से थप-थपा लेना चाहिए। दावमापी से सलग्न तापमापी द्वारा तापमान का पाठांक ज्ञात करके, दावमापी के पाठाक को तापमान, गुरुत्व तथा निदेशांक त्रुटि के लिए सशोधित कर लेना आवश्यक है।

अधिक ऊंचाई पर स्थिति वेधशालाओं के लिए फोरटिन दावमापी उपयुक्त है, क्योंकि दाब कम होने से नली का जो पारा नीचे गिरता है, उसे फोरटिन की कुंडिका मे स्थान मिल सकता है। क्यू प्रकार मे यह व्यवस्था नही होती। दाव का माप साधारणत. मिलीबार की इकाई मे अकित किया जाता है। पाठाक के लिए वर्नियर पैमाने का समायोजन पारद के उत्तल मेनिस्कस के शीर्ष स्तर पर करना चाहिए।(चित्र 7.8)।

7 42 तापमान और आर्द्रता का माप

स्टीवेन्सन स्क्रीन (चित्र 7·9) तथा उसमे रखे गए शुष्क बल्ब, आर्द्र बल्ब, उच्चतम और निम्नतम तापमापियो का विवरण अध्याय 3 मे दिया गया है। ये क्रमश हवा का तापमान, आर्द्र बल्ब तापमान तथा 24 घण्टो मे उच्चतम और निम्नतम तापमान का पाठाक देते है। आर्द्र बल्व तापमापी के बल्ब को सदा नम रखने के लिए, मस्लिन (मलमल) के धागो का आसवित जल मे डूबा रहना आवश्यक है।

आर्द्र बल्व और शुष्क बल्ब तापमान से ओसाक ज्ञात करने के लिए आर्द्रता मापी सारणियां उपलब्ध है, जिनके प्रयोग से ओसाक ज्ञात कर लिया जाता है। वायु तापमान और ओसाक से सापेक्ष आर्द्रता भी उपलब्ध सारणियों से पढ़ ली जाती है। कुछ ठडे स्थानों पर जब आर्द्र बल्व तापमान 0°C से नीचे पहुच जाता है, तो पानी जम जाने के कारण धागो द्वारा जल शोषण रुक जाने की आशका उत्पन्न हो जाती है। ऐसे अवसरो पर प्रेक्षण से एक घण्टा पहले निरीक्षण कर लेना चाहिए। यदि जल का सभरण (Supply) रुक गयी है, अर्थात् शुष्क और आर्द्र तापमापी पाठाक मे कोई अन्तर नही दर्शाते, तो आर्द्र बल्व के ऊपर लिपटा कपडा हटा कर, बल्व के ऊपर जमी बर्फ को जल मे रख कर पिघला देना चाहिए। इस क्रिया के लगभग आधे घण्टे बाद ही आर्द्र बल्व तापमापी अपरिवर्ती (steady) अवस्था मे आ पाता है।
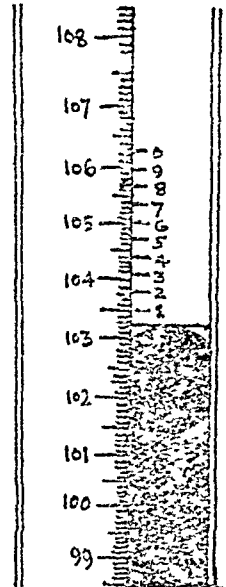
दावमापी पैमाने का पाठांक

चित्र (7·8)
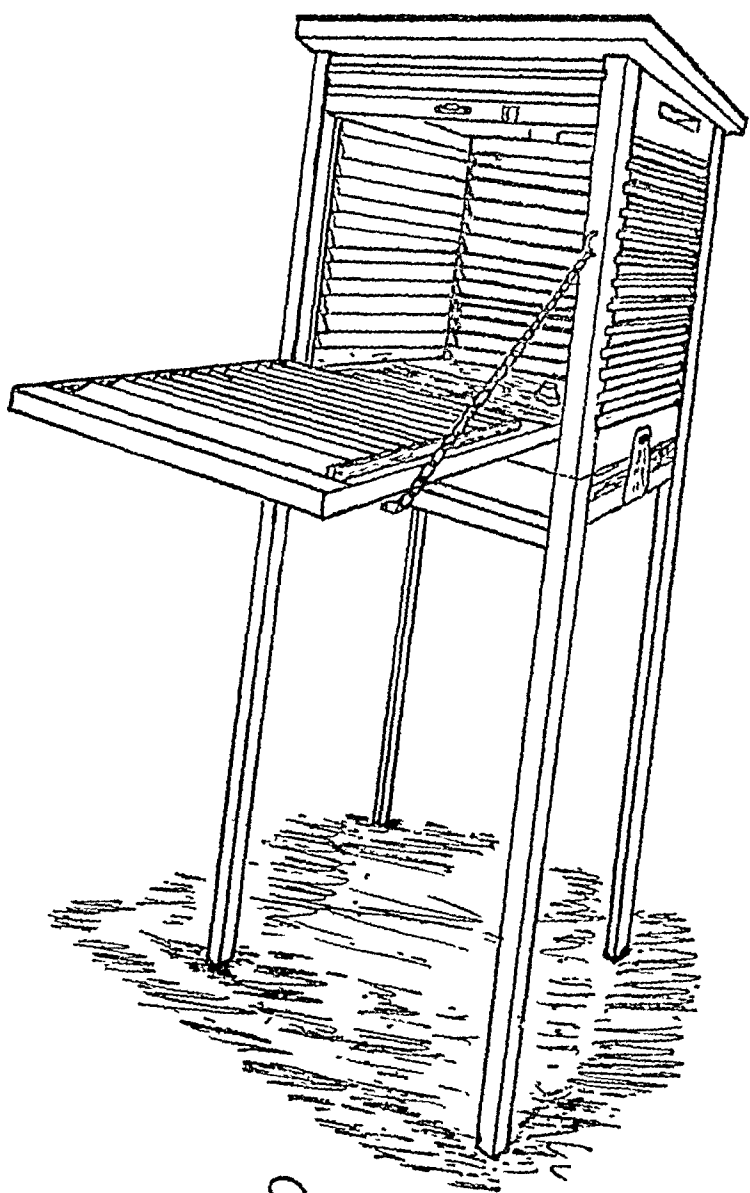
चित्र (7.9)

7 43 वायुवेग का माप

वायु दिशा और गति के माप के लिये, अलग-अलग यंत्र है । वायु दिशा पवन दर्शक द्वारा ज्ञात की जाती है । यह एक सन्तुलित लीवर है, जो एक उर्ध्वअक्ष के चारो ओर स्वतंत्रता से घूम सकता है । लीवर का एक सिरा, जो कुछ चौड़ा होता है, उस दिशा मे रहता है जिधर से हवा आ रही हो और दूसरा तीर की तरह नुकीला सिरा हवा के बहने की दिशा प्रदर्शित करता है । लीवर के नीचे दिशाओ के निशान बने होते है ।

हवा की दिशा साधारणत: उस कोण के रूप मे व्यक्त की जाती है, जो उत्तर दिशा और उस दिशा के वीच वनता है, जिधर से हवा आ रही है। जैसे, यदि
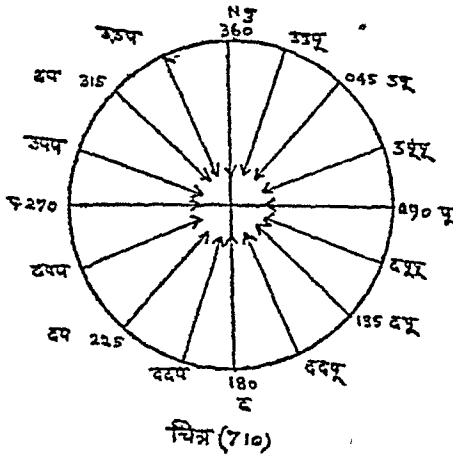
चित्र (7·10)

हवा ठीक पूर्व से वह रही है, तो उसकी दिशा 90 अंश और यदि पश्चिम से वह रही है, तो 270 अंश मानी जायगी। चित्र (7·10) मे दिशाओ के कोणिक मान स्पष्ट किए गए हैं।

वायुगति या वायु वल का मान 'पवन वेग मापी (एनीमोमीटर) नामक यंत्र से ज्ञात किया जाता है। इसमे तीन या चार अर्द्ध गोलाकार प्याले (व्यास = 76 मिमी), धातु की छड़ों के सिरों पर एक दूसरे से वरावर कोण बनाते हुए लगे होते हैं। यदि चार प्याले हैं तो एक दूसरे के समकोण पर और यदि तीन है तो 120° पर लगे होते हैं। छड़ का कटान विन्दु केन्द्र पर एक उर्ध्वाधर नली के सहारे स्थिर रहता है। इसी नली के नीचे एनीमोमीटर वक्स लगा होता है जिसमे वायु वल का पाठांक पढने की व्यवस्था होती है। वायुवल से प्याले घूमते है। घूमने की गति वायु वल के समानुपाती होती है। यह गति गियर प्रणाली से एनीमोमीटर वक्स मे स्थित साइक्लोमीटर (Cyclometer) संचालित कर देता है।

पवन दर्शक और पवन वेग मापी, सामान्यत: भूमि से 10 मीटर ऊँचाई पर वृक्षो या भवनों की रुकावटो से ऊपर लगाए जाते है, जिससे वे स्वतंत्र हवा की दिशा और गति का ज्ञान दे सकें।

7 44 कभी-कभी विना यंत्र की सहायता से भी वायुगति का अनुमान लगाने की आवश्यकता होती हे। इसकी सफलता प्रेक्षक की दक्षता और अनुभव पर निर्भर करती है। एडमिरल वीफोर्ट (Beaufort) ने, सन् 1805 मे अनुभव के आधार पर,

वायुगति का बीफोर्ट-पैमाना

बीफोर्ट संख्या	सामान्य विवरण	सीमाकन	भूगितल से 6 मीटर ऊपर वायुगति का मान (किमी/घंटा)
3	धीमा समीर	वृक्षो की पत्तिया हिलती है। हल्की ध्वजा तन जाती है।	13–18
4	मृदु समीर	धूल या कागज के टुकडे गतिमान हो जाते हैं।	19–26
5	ताजा समीर	छोटे वृक्षों की टहनिया हिलती है।	27–35
6	तीव्र समीर	बडी टहनियाँ गतिमान हो उठती है, टेलीफोन के तारो मे सीटी सी बजने लगती है।	36–44
7	मृदु गेल	पूरा वृक्ष हिलने लगता है।	45–55
8	ताजा गेल	टहनियाँ टूट जाती है।	56–66
9	तीव्र गेल	हल्की छते उड सकती है या कमजोर निर्माण क्षति ग्रस्त हो सकता है।	67–77
10	पूर्ण गेल	वृक्ष उखड जाते है और निर्माण की क्षति थोडी बहुत होती है।	78–90
11	तूफान	निर्माण कार्य की पर्याप्त क्षति	91–104
12	हरीकेन	—	105 से अधिक

7.45 वायुगति और दिशा का सीधा माप एक विद्युत चालित यन्त्र वायु पेनल द्वारा भी लिया जाता है। इस यत्र मे एक छोटा जनरेटर जिसे मौसम-प्रूफ रखा जाता है, लगा होता है। यह जनरेटर शक्वाकार वायु वेग मापी-प्यालो के ऊर्ध्वाधर तर्कु (Spindle) के चारो ओर घूमने से चलता है। जनित वोल्टेज, प्यालों की गति, अर्थात् वायु बल के समानुपाती होता है। अत सलग्न गोलाकार पैमाना नाट (Knot) मे वायु गति पढने के लिए अकीकृत होता है। इसी प्रकार, पवन दर्शक की गति भी विद्युत-विधि से अकित पैमाने मे प्रेपित कर दी जाती है।

7·46 वर्षामापन

भारत मे मुख्यत. जिस मानक वर्षामापी को प्रयुक्त किया जाता है, उसे **साइमन वर्षा मापी** कहते है। इसके मुख्य भाग निम्नलिखित है :—

(1) **फनेल**—जिसके रिम का व्यास निश्चित (127 मिमी) होता है।

(2) **संग्रहक**—यह प्लास्टिक या धातु का बर्तन होता है जिसकी ग्राहिता साधारणत. 175 मिमी होती है। अधिक वर्षा के क्षेत्रों मे 375 या 1000 मिमी ग्राहिता के सग्रहक भी प्रयोग मे लाए जाते हैं।

(3) **बेलनाकार ढक्कन**—जिसका आधार भूमि मे जड दिया जाता है।

(4) **नपना गिलास**—यह 20 या 25 मिमी ग्राहिता का एक अंकित-बेलनाकार ग्लास होता है, जिससे 0 1 मिमी तक सही वर्षा नापी जा सकती है।

चित्र (7 12)
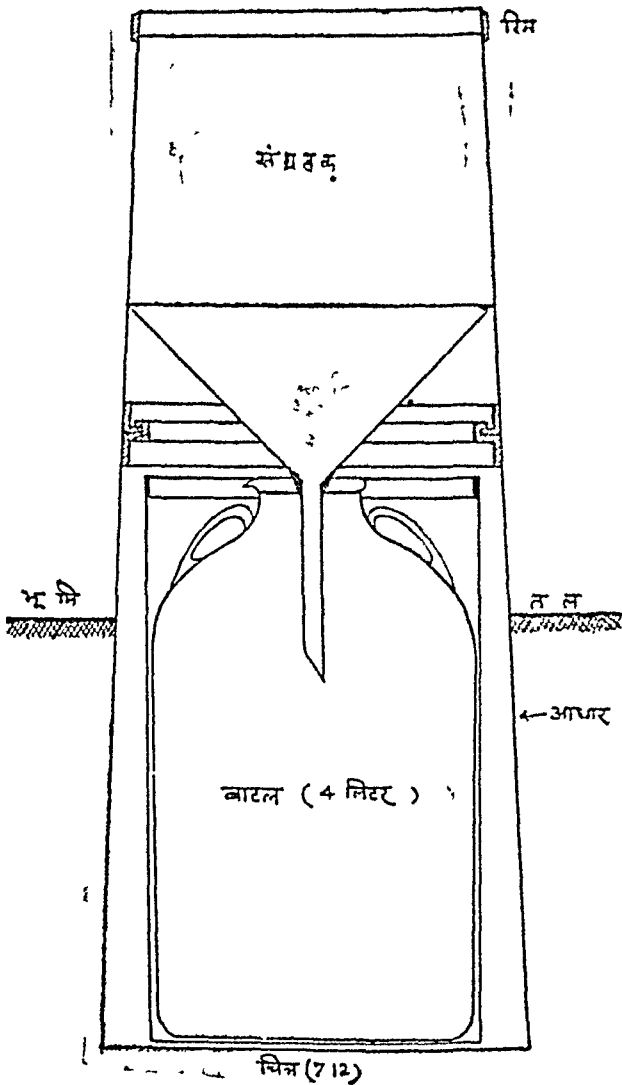
वर्षा मिमी या सेमी की इकाइयों मे नापी जाती है। किसी स्थान पर 1 सेमी वर्षा की राशि वह है, जो भूमितल पर एक सेमी गहरे पानी की तह बना दे बशर्ते कि भूमि सर्वत्र समतल मानली जाए और शोषण, अपवाह (Runoff) तथा वाष्पीकरण द्वारा वर्षा की एक भी बूंद नष्ट न हो।

कुछ समय से विभिन्न वेधशालाओ मे एक और वर्षामापी प्रयोग मे लाया जा रहा है, जिसे F.R P (Fibre glass Reinforced Polyster) वर्षा मापी कहते है। इसमे फनेल, ढक्कन के साथ सम्बन्धित होता है तथा संग्रहक और आधार पोलिस्टर के बने होते हैं।

तिर्यक पडती बूँदे, वृक्षो या भवनो आदि से रुक न जाएँ, इसके लिए वर्षामापी स्थापित करते समय यह सावधानी रखनी चाहिए कि निकटतम रुकावट से वर्षा मापी की दूरी कम से कम रुकावट की ऊँचाई से दूनी हो।

7 47 यदि वर्षा के साथ तुषार या ओले पड़े हों। तो उन्हे नपना गिलास से ज्ञात राशि का गर्म जल छोड कर पिघला लिया जाता है और कुल जल का माप लेने के बाद मिलाए गए जल का माप घटा दी जाती है।

यदि वर्षामापी तुषार से पूर्णतया ढक जाता है, तो जमे तुषार की ऊँचाई एक छड़ द्वारा नाप लेनी चाहिए। इस ऊँचाई का दसवाँ भाग सम्बन्धित वर्षा का लगभग 'मान' देगा।

7.50 स्वत: अभिलेखी यंत्र (Self Recording Instruments)

विभिन्न मौसम तत्वो के अविरत और स्वअकित पाठाक प्राप्त करने के लिए, अनेक स्वत: अभिलेखी यंत्रो को डिजाइन किया गया है। सभी स्वत: अभिलेखी यंत्रो मे निम्नाकित तीन अनिवार्य भाग होते है :—

(1) **एक संवेदन शील तत्व**, जो मौसम तत्वो के परिवर्तन की अनुक्रिया (response) दे सके। इसी अनुक्रिया को यत्र रिकार्ड करता है।

(2) **एक लीवर प्रणाली**, जो सवेदनशील तत्व की सूक्ष्म गति को, ज्ञात अनुपात मे अभिवर्धित कर देती है। यही प्रणाली आवर्धित गति को पेन भुजा तक पहुंचाती है।

(3) **एक परिभ्रमक ड्रम**, जो घडी की सुइयो के अनुसार धीरे-धीरे घूमता है और समय का ज्ञान करता है। इस ड्रम पर चार्ट लपेटा जाता है, जिस पर पेन भुजा, सवेदक तत्व की आवर्धित गति को अकित करती है।

7 51 मुख्य मौसम तत्वो के स्वाँकित और अविरत माप के लिए निम्नाकित यंत्र प्रयुक्त होते हैं :—

(1) **दाब लेखी (बैरोग्राफ)**—यह वायुदाब का अविरत, स्वांकन करता है। इसमे निर्द्रव दाब मापी तत्व वायुदाब के सवेदन के लिए प्रयुक्त होता है। यह दाब परिवर्तन के साथ सकुचित होता है या फैलता है। यह प्रसार या सकुचन लीवर

प्रणाली द्वारा आवर्धित होकर पेन भुजा द्वारा ड्रम से लिपटे चार्ट पर अंकित होता है। चार्ट पर गति के सानुपातिक दाब की इकाइयाँ छपी होती हैं। चित्र (7.15)
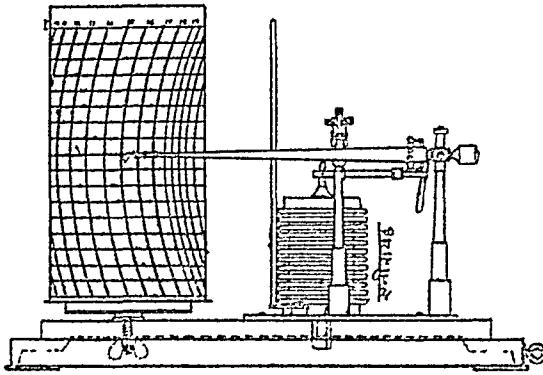
चित्र (7.18)

7.52 तापमानलेखी (थर्मोग्राफ)

इसमे सवेदक तत्व एक सर्पिल (Spiral) होता है, जो दो विभिन्न प्रसार गुणाक वाली धातु पत्तियो से बनाया जाता है। तापमान बदलने से यह सर्पिल कु डलित अथवा अनकु डलित होता है। यह क्रिया लीवर प्रणाली से परावर्धित होकर पेन भुजा को नियत्रित करती है।

7.53 केश आर्द्र ता लेखी (हेयर हाइग्रोग्राफ)

यह यत्र इस सिद्धान्त पर काम करता है कि मनुष्य के केश की लम्बाई, सापेक्ष आर्द्र ता के साथ बढती है। किन्तु यह वृद्धि सर्वत्र समान नही होती। आर्द्र ता 30 से 40% होने मे बाल की लम्बाई जितनी बढेगी, वह 70 से 80% सापेक्ष आर्द्र ता बढने मे होने वाली वृद्धि की अपेक्षा अधिक होगी। किन्तु लीवर प्रणाली की क्रिया-विधि इस प्रकार समायोजित कर दी जाती है कि बाल की वृद्धि द्वारा उत्पन्न गति, पेन भुजा की सम गति मे अनुक्रियान्वित होती है।

इस यत्र की एक कठिनाई यह है कि उपर्युक्त सावधानियो के बावजूद केश के भौतिक गुण शनै. शनै· बदलते रहते है। परिणामस्वरूप, समान दशाओ मे आर्द्र ता के पाठाँक सदा समान नही आते। केश बदलना भी अनुपयुक्त है क्योकि इस दशा मे यत्र का सम्पूर्ण अकन फिर से करने की आवश्यकता होगी।

7.54 पवन वेग लेखी या एनीमोग्राफ (Anemograph)

हवा की गति और दिशा का अविरत एव स्वाकित मान डाइन्स दाब नली (Pressure Tube) पवन वेग लेखी (आविष्कारक-डब्ल्यू० एच० डाइन्स) द्वारा ज्ञात किया जाता है। यह यत्र निम्नाकित सिद्धान्त पर कार्य करता है।

एक ओर बन्द और दूसरी ओर खुली नली को क्षैतिज अवस्था मे यदि इस प्रकार रखा जाय कि खुला सिरा हवा की ओर हो, तो नली का अन्दर का दाब बढ जाएगा। यह वृद्धि वायुगति के समानुपाती होगी।

कक्ष से सम्बन्धित रहती है। जब संग्रहक मे जलस्तर उठता है, फलोट भी उठ जाता है, जिसे पेन भुजा क्लाक ड्रम पर लिपटे चार्ट पर रेखाकित करती जाती है।
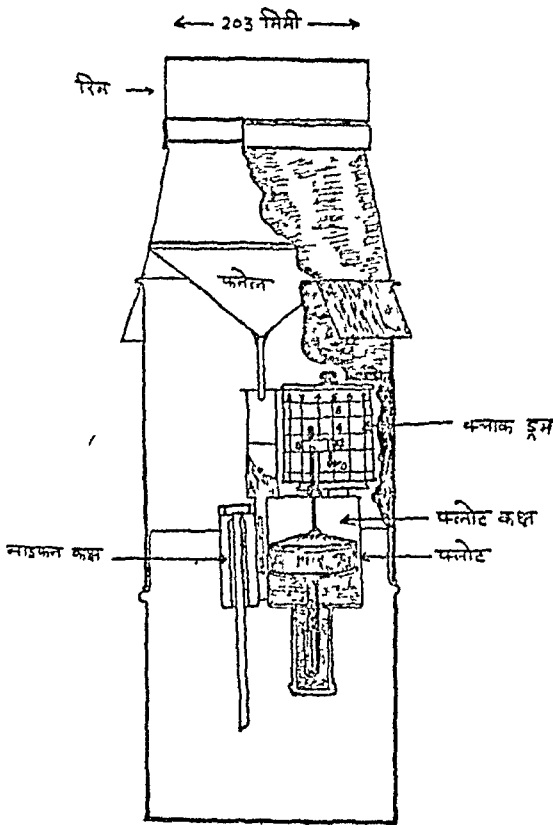
स्वत अभिलेखी वर्षा मापी
चित्र (7 15)

जब पेन, चार्ट के शिखर विन्दु पर पहुच जाती है तो संग्रहक मे भरा जल साइफन द्वारा स्वत बाहर आ जाता है और फ्लोट के साथ पेन, चार्ट की शून्य रेखा पर उतर आती है। जिस दिन कोई वर्षा नही होती उस दिन पेन एक क्षैतिज सरल रेखा अकित करती है।

7 60 उच्चतर वायु प्रेक्षण (Upper Air Observation)

भूमितल पर उत्पन्न होने वाली दाव प्रणालियाँ उर्ध्वाधर मे पर्याप्त ऊँचाई तक विकसित होती है। कभी-कभी द्रोणिकाएँ तथा चक्रवाती भ्रमिल केवल उच्चतर वायुमण्डल मे ही उत्पन्न होते हैं, भूमितल पर उनका कोई आभास नही मिलता। गति और इनकी तीव्रता के अध्ययन के लिए उच्चतर वायु के तापमान, आर्द्रता, दाव तथा वेग के प्रेक्षणो की आवश्यकता होती है। प्रक्षणो के लिए सर्वाधिक प्रचलित यंत्र, पायलट गुब्बारा, रेडियोसोन्डे, राडार तथा मौसम उपग्रह है।

7·61 विकास का संक्षिप्त इतिहास

सन् 1643 में सबसे पहले प्रसिद्ध वैज्ञानिक [illegible] ने [illegible] चढ़ कर पता लगाया कि दाब ऊँचाई के साथ घटता है। [illegible] वर्ष बाद कुछ पर्वतारोहियों ने अनेक स्थानों से एण्डीज पर्वत पर चढ़ाई करके [illegible] पर हिमांक स्तर की ऊँचाई ज्ञात की। सन् 1749 में [illegible] करके अलेक्जेन्डर विल्सन ने कुछ ऊँचाई की हवा का [illegible] तत्पश्चात् पतंगों का प्रयोग इस काम के लिए [illegible] होने लगा।

फिर मानवयुक्त गुब्बारों का समय आया। सन् 1784 में [illegible] ने मौसम प्रेक्षणों के लिए गुब्बारे पर पहली उड़ान भरी। सन् 1804 में [illegible] और बायट ने 7 कि. मी. ऊँचाई तक उड़कर दिखाया। तब से [illegible] उड़ानें [illegible] रहीं। सन् 1852 में वेल्स ने गुब्बारों पर सर्वप्रथम दाब, तापमान और आर्द्रता के प्रेक्षण एक साथ लिए।

सन् 1873 में पायलट गुब्बारों का युग आरम्भ हुआ जो [illegible] में आज भी उच्चतर वायु की गति और दिशा ज्ञात करने का सर्वाधिक [illegible] साधन है। 1912 में पहली बार विमान में कुछ यन्त्र रखकर मौसम प्रेक्षण प्राप्त किए गए। 1915 से ब्रिटेन और अमेरिका में विमानों द्वारा उच्चतर वायु के तापमान, दाब और आर्द्रता के नियमित प्रेक्षण लिए जाने लगे।

1927 में स्थिर मण्डल से रेडियो संकेत द्वारा वायु-मण्डल का ज्ञान करने का पहला प्रयास किया गया और रूसी वैज्ञानिक मोलचेनोव ने पहला सफल रेडियो-सोन्डे सन् 1928 में डिजाइन कर दिया। सन् 1939 तक अनेक देशों में रेडियो[illegible] तैयार किए जाने लगे। सन् 1940 में अमेरिका में पहला रेडियो थियोडोलाइट [illegible] तैयार कर लिया गया।

सन् 1943 में पहली बार उच्चतर वायु वेग ज्ञात करने के लिए [illegible] प्रयोग किया गया। 1946 में राकेट का उपयोग भी किया जाने लगा, [illegible] धातुओं की छोटी-छोटी असंख्य पत्तियाँ वायुमण्डल में बिखेर दी [illegible] गति और दिशा का ज्ञान कराती थीं। सन् 1957 में कृत्रिम उपग्रहों [illegible] हुआ तो मौसम उपग्रह भी डिजाइन किए गए। पहला मौसम उपग्रह [illegible] को अन्तरिक्ष में अमेरिका द्वारा छोड़ा गया जिसका नाम 'टाइरस [illegible] टाइरस (TIROS), टेलिविज़न. इन्फ्रारेड आब्ज़र्वेशनल सैटेलाइट [illegible] है। तब से 11 टाइरस उपग्रह छोड़े जा चुके हैं। प्रथम 8 टाइरस [illegible] कक्षा में पृथ्वी की परिक्रमा करते थे, किन्तु इसके बाद उपग्रहों [illegible] रखी गई।

भारत मे पहला उच्चतर वायु प्रेक्षण पायलट गुब्बारे की सहायता से सन् 1926 मे आगरा मे लिया गया।

7·62 पायलट गुब्बारे द्वारा प्रेक्षण

'पायलट गुब्बारा' नाम सभवत. वडे-वडे गुब्बारो पर स्वयं चढकर उडान भरने वालो द्वारा उस छोटे गुब्बारे को दिया गया है, जो उडान से पहले सभावित दिशा की जानकारी प्राप्त करने के लिए छोडा जाता था।

हाइड्रोजन भरा पायलट गुब्बारा हवा मे छोडने के वाद थियोडोलाइट नामक यन्त्र से लगातार प्रेक्षित किया जाता है। इस यन्त्र की सहायता से निश्चित समय अन्तरालो के वाद गुब्बारे का उन्नतांश कोण तथा एजिमथ (दिगंश) पढ लिया जाता है। ठीक उत्तर दिशा से गुब्बारे का कोणीय विचलन एजिमथ कहलाता है।
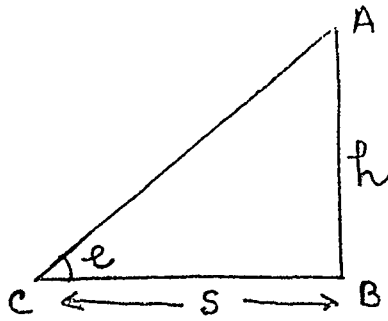
चित्र (7·18)

गुब्बारे की ऊँचाई ज्ञात करने की सबसे सरल विधि यह है कि उसके आरोह की दर स्थिर मान ली जाए। उदाहरण के लिए, यदि आरोहण दर 12 किमी/घण्टा मानली जाए तो गुब्बारे की ऊर्ध्वाधर ऊँचाई प्रति मिनट 200 मीटर की दर से वढती रहेगी। इस स्थिति मे प्रेक्षण निम्नांकित सारिणी द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है —

समय (मिनट)	गुब्बारे की ऊचाई (मीटर)	उन्नतांश	पवन दिशा (एजिमथ)	S = (पवन की गति) (मीटर प्रति मीटर)
1	h_1	e_1	a_1	s_1
2	h_2	e_2	a_2	s_2
3	h_3	e_3	a_3	s_3
4	h_4	e_4	a_4	s_4
....	....	...	...	....
...	..	.		..
....	.	.	.	.

वायुगति अर्थात् एक मिनट मे गुब्बारे द्वारा चली गई दूरी त्रिभुज ABC द्वारा ज्ञात की जा सकती है।

$$S = \frac{h}{\tan e}$$

7 63 किन्तु गुब्बारे का आहोरण दर स्थिर मान लेना स्पष्टत त्रुटिपूर्ण है। विशेपकर दिन मे ऊर्ध्व-वायु धाराएँ प्रबल होती है और आरोहण दर को विक्षुब्ध किया करती है। इसके अतिरिक्त आरोहण दर वायु घनत्व पर भी निर्भर करती है।

गैस भरे गुब्बारे पर लगा कुल उत्थापन बल (L_T) कुल लिफ्ट कहलाता है। यह गुब्बारे द्वारा हटाई गई हवा के भार के बराबर होता है। यदि V गुब्बारे का आयतन, ρ हवा घनत्व तथा g गुरुत्व जनित त्वरण हो, तो

$$L_T = V\rho g \qquad \text{....(1)}$$

स्वतन्त्र लिफ्ट (L), कुल लिफ्ट और गुब्बारे (सलग्न सामानो सहित) के भार के अन्तर को कहते है। अत.

$$L_T = L + W \qquad \text{....(ii)}$$

स्वतन्त्र लिफ्ट के कारण गुब्बारे मे आरोही त्वरण उत्पन्न हो जाता है। जब गुब्बारा गतिशील होता है, तो हवा के कर्षण (drag) का प्रतिरोध (D) लगने लगता है।

$$D = K\rho\, v^2 d^2, \qquad \text{...(iii)}$$

जहा K स्थिरांक है तथा v और d क्रमश गुब्बारे की गति और व्यास हैं।

स्पष्टत आयतन $V = \frac{1}{6}\pi d^3$ or $d^2 = \left(\frac{6V}{\pi}\right)^{\frac{2}{3}}$

$$\text{या} \quad d^2 = \left[\frac{6(L+\omega)}{\pi\rho g}\right]^{\frac{2}{3}} \qquad \text{... (iv)}$$

जब D और L एक दूसरे को सन्तुलित कर लेते हैं, तो आरोहरण दर (v) स्थिर हो जाती है। इस स्थिति मे,

$$L = K\rho v^2 \left[\frac{6}{\pi}\left(\frac{L+\omega}{\rho g}\right)\right]^{\frac{2}{3}}$$

$$= K_1\rho v^2 \left[\frac{L+\omega}{\rho g}\right]^{\frac{2}{3}}$$

$$\text{या} \quad v^2 = K_2 \frac{L\rho^{-3}}{(L+\omega)^{2/3}}$$

मान लीजिए

$$\omega = \omega_E + \omega_H$$

जहा ω_E = खाली गुब्बारे का भार और ω_H = हाइड्रोजन का भार

$$\therefore \quad \omega = \omega_E + V\rho_H g = \omega_E + \frac{L+\omega}{\rho}\rho_H$$

$$\therefore \quad L+\omega = L+\omega_E + \frac{L+\omega}{\rho}\rho_H$$

$$= (L+\omega_E) \left(\frac{\rho - \rho_H}{\rho}\right) \qquad \text{....(vi)}$$

$\therefore$ (v) और (vi) से

$$v = K_2 \rho^{-\frac{1}{6}} \left(\frac{\rho - \rho_H}{\rho} \right)^{\frac{1}{3}} \frac{L^{\frac{1}{2}}}{(L+\omega_E)^{\frac{1}{3}}} \qquad \text{...(vii)}$$

इस सूत्र के अनुसार यदि भूमितल और किमी ऊचाई पर वायु घनत्व क्रमशः ρ_o तथा ρ तथा गुब्बारे की उर्ध्वगति v_o तथा v हो, तो

$$\frac{v}{v_o} = \left(\frac{\rho_o}{\rho} \right)^{\frac{1}{6}}$$

विभिन्न ऊचाईयो के लिए $\left(\frac{\rho_o}{\rho} \right)^{\frac{1}{6}}$ का मान इस प्रकार है :

ऊचाई (किमी)	0	2	4	6	8	10
$\left(\frac{\rho_o}{\rho} \right)^{\frac{1}{6}}$	1	1 04	1.08	1 11	1.15	1.19

अत. घनत्व परिवर्तन का प्रभाव कुछ ऊँचाइयो तक नगण्य किया जा सकता है। इस अवस्था मे

$$K_2 \rho^{-\frac{1}{6}} \left(\frac{\rho-\rho_H}{\rho}\right)^{\frac{1}{3}} = K \text{ (स्थिराक)}$$

यदि v का मान मीटर प्रति मिनिट मे लिया जाय, तो $K = 84$.

$$\text{अत आरोहण दर } v = 84 \frac{\sqrt{L}}{(L+w_E)^{\frac{1}{3}}} \qquad \text{....(viii)}$$

7 64 गुब्बारे मे एक सलगनी को, जिसे टेल (tail) कहते है, सलग्न करके प्रेक्षण लेने से आरोहण दर की कठिनाई दूर हो जाती है। गुब्बारे तथा टेल के

सम्मिलित भार के लिए, स्वतन्त्र लिफ्ट (L) का मान उपलब्ध सारणियो द्वारा निश्चित किया जाता है। ये सारणिया सूत्र (viii) द्वारा ω_E और v के विभिन्न मानो से L के मानो को समायोजित करके बनाई गई है।

7.65 प्रकाशीय थियोडोलाइट

इसमे एक दूरबीन होता है, जो क्षैतिज और उर्ध्वाधर, दोनो तलो मे घूम सकता है। यह बीच से 90^0 पर इस प्रकार मुडा होता है कि नेत्रिका (eye-piece) का क्षेतिज अक्ष स्थिर रहता है जबकि अभिदृश्यक (object glass) उर्ध्व तल मे घुमाया जा सकता है। समकोण मोड के समीप घनाकार बक्स मे एक त्रिपार्श्व इस प्रकार रखा जाता है कि अभिदृश्यक से आती किरणे इसके द्वारा नेत्रिका की ओर परावर्तित हो जाएँ।

नेत्रिका मे क्रास तार या रेखा जाल (graticule) लगा होता है जिसको फोकस करने की व्यवस्था साथ मे संलग्न रहती है। दूरदर्शी मे गुब्बारे के उन्नतांश तथा एजिमथ पढने के लिए पैमाने लगे होते है।

7.66 रेडियो पवन प्रेक्षण (Radio Wind or Rawind)

मेघाच्छन्न दिनो मे जब गुब्बारा शीघ्र ही बादलो मे खो जाता है, तो प्रकाशीय थियोडोलाइट उसका अनुसरण करने मे असमर्थ हो जाता है। स्वच्छ आकाश मे भी पायलट बेलून साधारणत. 10–12 किमी ऊँचाई तक पवन देने मे समर्थ हो पाता है। जेट वायुयानो की उडान के लिए, और अधिक ऊँचाई के प्रेक्षण आवश्यक है। पर्याप्त ऊचाई तक और मेघाच्छन्न स्थितियो मे पवन प्रेक्षण प्राप्त करने के लिए, रेडियो विधि प्रयुक्त की जाती है। एक छोटा रेडियो ट्रासमीटर गुब्बारे से सलग्न कर देते है, जिसके द्वारा सकेत प्राप्त करके धरती पर से रेडियो थियोडोलाइट, गुब्बारे के उन्नताश और एजीमथ अङ्कित करता जाता है।

रेडियो थियोडोलाइट एक दिशाई (directional) शक्तिशाली एन्टेना होता है, जिसमे एक एरियल लगा होता है, जो सदा ट्रासमीटर की ओर अभिविन्यस्त (Oriented) रहता है।

7 70 उच्चतर वायु तापमान और आर्द्रता मापन–रेडियो सोंदे

रेडियो सोन्दे वह यन्त्र है, जो वायुमण्डलो के विभिन्न स्तरो (जहा से होकर वह गुजरता है) के वायुदाब, तापमान और आर्द्रता का मान, रेडियो सकेतो द्वारा धरती पर स्थित एन्टेना को भेजता है। इस यन्त्र को एक बडे हाइड्रोजन भरे रबर के गुब्बारे के साथ संलग्न करके वायुमण्डल मे छोडते है। इससे आने वाले सकेत धरती पर, रेडियो रिसीवर द्वारा ग्रहण किए जाते है, जो आवर्धित होकर एक रिकार्डर द्वारा अङ्कित होते रहते है। मध्य समुद्रतल से लगभग 30 किमी ऊँचाई तक के प्रेक्षण रेडियो सोंदे द्वारा प्राप्त किए जा सकते है।

रेडियो सोन्दे के मुख्य भाग निम्नाकित है

(1) संवेदक तत्व

जो विभिन्न मौसम तत्वो के प्रति सवेदनशील होते है और उनका परिवर्तन नोट करते है। अधिकतर रोडियो सौन्दे मे निर्द्रव कैपसूल ही दाव गापने के लिए प्रयुक्त होता हे। तापमान के लिए एक द्विधातु (स्टील और ब्रोज) की पत्ती संवेदक तत्त्व होता हे। इस पत्ती के साथ कोई आर्द्रता ग्राही पदार्थ या केश (hair) भी सलग्न कर देते है जो आर्द्रता की माप देता रहता ह।

चित्र (7.16)

एक नवीन रेडियो सौन्दे, जिसे 1680 मैगा साइकिल सैकण्ड के नाम से जाना जाता है, मे सवेदक तत्वो का एक वक्स होता है। इसमे दाब के लिए निर्द्रव डायाफ्राम से युक्त एक वैरोस्विच, तापमान के लिए एक थर्मिस्टर छड तथा आर्द्रता के लिए एक हाइग्रिस्टर प्रयुक्त किया जाता है।

(2) एक प्रणाली, जो सवेदक तत्वो के सकेतो को विद्युत कम्पन मे परिवर्तित कर दे। यही प्रेषक को माडुलित करता है।

(3) रेडियो प्रेषक (Radio transmitter)

(4) वैटरी, जो यन्त्र को कार्य करने की शक्ति देता है।

धरती पर स्थित सग्रहक उपकरण मे एन्टेना सहित एक रेडियो रिसीवर तथा एक रिकार्डर होता है।

7 71 गुब्बारो की पहुच से ऊपर वायुमण्डल के प्रेक्षणो के लिये मौसम वेज्ञानिक राकेटो का भी प्रयोग यदा-कदा किया जाता है। भारत मे पहला राकेट 21 नवम्वर, 1963 को त्रिवेन्द्रम के निकट थुम्बा से छोडा गया था।

7 80 राडार प्रेक्षण

द्वितीय विश्व युद्ध के समय राडार प्रणाली पर्याप्त विकसित हुई जब इसका प्रयोग अत्यधिक ऊंचाई पर उडने वाले शत्रु के विमानो का पता लगाने के लिए प्रायः किया जाता था। परिभाषा के अनुसार, राडार वह यन्त्र है जो रेडियो प्रतिध्वनि द्वारा किसी पिंड की उपस्थिति का अभिज्ञान कर लेता है, उसकी दिशा और दूरी निश्चित करता है तथा उसकी प्रकृति को पहचानता है।

राडार यन्त्र द्वारा रेडियो स्पदे (Pulses) अन्तरिक्ष मे विकोर्ण की जाती हैं। ये रेडियो स्पदे वायुमण्डल मे स्थित पदार्थो, जैसे–विमान, मेघ, जलकणो आदि से टकराकर परावर्तित होती है। यदि इनका कुछ भाग राडार यन्त्र को पुन. प्राप्त हो जाए, तो इन पदार्थो की दूरी और दिशा का सकेत इन परावर्तित स्पदो द्वारा प्राप्त हो सकता है।

सिद्धान्त–प्रेषक अत्यन्त उच्च वारवारता (फ्रीक्वेसी) की विद्युत चुम्बकीय स्पदे उत्पन्न करता है, जिसे एन्टेना एक निर्धारित दिशा मे विकीर्ण कर देता है। अन्तरिक्ष मे स्थित किसी वस्तु से टकरा कर ये विकिरण चारों ओर प्रकीर्ण हो जाते हैं। इस प्रकीर्ण विकिरण का एक भाग एन्टेना द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है। लौटी हुई स्पदे प्रतिध्वनि कहलाती है। प्रेपित और प्राप्त स्पदो के वीच का समयान्तर सही-सही इलेक्ट्रानिक्स विधियो द्वारा ज्ञात कर लिया जाता है। चूंकि विद्युत चुम्बकीय स्पदो की गति ज्ञात होती है, अत वस्तु की तिर्यक दूरी आसानी से ज्ञात हो जाती है।

वस्तु का उन्नतांश और एजिमथ, एन्टेना को वस्तु की दिशा मे सैट करके पढ लिया जाता है।

7.81 मेघकणो तथा जलकणो की वृद्धि के साथ स्पदो की परावर्तन क्षमता मे तेजी से वृद्धि होती है और जब राडार यन्त्र इन मेघकणो की दिशा मे समायोजित किया जाता है, तो उसके पर्दे पर मेघकण चमकीले धब्बे मे प्रतिबिम्बित होते रहते है। राडार विधि से लगभग 300 कि. मी दूरी तक आकाश पर दृष्टि रखी जा सकती है। फलत चक्रवाती तूफानो को तट से पर्याप्त दूरी पर अभिज्ञात करने मे ये बहुत सहायक सिद्ध होते है।

150 किमी दूर स्थित चक्रवाती प्रमिल राडार पर्दे पर चमकीले सर्पिल आकार के धब्बो मे स्पष्ट हो जाता है।

7.82 एक राडार सैट चार भागो से मिलकर बना होता है —

(1) **प्रेपक**–यह रेडियो ऊर्जा उत्पन्न करता है।

(2) **एन्टेना**–यह रेडियो ऊर्जा को स्पदो के रूप मे विकीर्ण करता है तथा परावर्तित होकर लौटती तरगो को अन्तः खण्डित (intercept) करता है।

(3) **रिसीवर**–यह वस्तु का अभिज्ञान करता है, प्रवर्धन करता है तथा प्राप्त सकेतो को चाक्षुप रूप मे रूपान्तरित करता है।

(4) सूचक (Indicator)–जिसके ऊपर प्राप्त संकेतों का प्रदर्शन होता है।

अधिकतर मौसम राडारों में प्रेषण और प्राप्ति, दोनों के लिये एक ही एन्टेना प्रयुक्त होता है। अल्प समय के लिये, जब प्रेषक सक्रिय रहता है, तो स्व-चालित स्विच द्वारा रिसीवर को बन्द कर दिया जाता है।

7.83 मौसम के राडारों में रेडियो तरंगों की बारबारता (फ्रीक्वेन्सी) साधारणतः 1500 से 30000 मेगा साइकिल/सेकंड तक प्रयुक्त होती है। तरंग दैर्घ्य के पदों में परिसर 1 सेमी. से 20 सेमी तक होगा। भारत में प्रायः 3 और 10 सेमी के राडार प्रयोग में लाए जा रहे हैं।

राडार की अभिज्ञान क्षमता इन तरंगों की दैर्घ्य पर निर्भर करती है। साधारणत छोटी वस्तुओं की पहचान के लिए कम दैर्घ्य की तरंगें अधिक उपयुक्त होती हैं।

हर राडार के लिए निम्नतम ग्रहणीय संकेत की एक सीमा निश्चित होती है, जिससे छोटी वस्तुओं की उस राडार में पहचान नहीं की जा सकती।

7.84 प्रदर्शन सूचक दो प्रकार के होते हैं।

(1) पी० पी० आई० (प्लान पोजीशन इण्डीकेटर) जो प्रतिध्वनियों का क्षैतिज बंटन दर्शाते हैं। यह ध्रुवीय नियामक (Polar-coordinate) ग्रिड पर, प्राप्त संकेतों का व्यवस्थित दृश्य प्रस्तुत करते हैं।

चित्र (7.10)
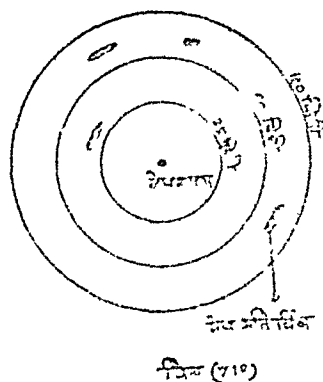
(2) आर० एच० आई० (रेंज हाइट इण्डीकेटर)—यह प्रतिध्वनि के उर्ध्व विस्तार की सूचना देता है। यह प्रतिबिम्ब को उस नियामक पर प्रदर्शित करता है, जिसकी भुज पर प्रतिध्वनि की तिर्यक ऊंचाई (कि०मी०) अंकित होती है। कोटि प्रतिध्वनि की खड़ी ऊंचाई (मीटर) व्यक्त करती है। कोटि का पैमाना साधारणत अभिवर्धित कर दिया जाता है।

7.85 मौसम उपग्रह

दुर्गम स्थानों पर अथवा सागर तलों पर वेधशालाओं की स्थापना कठिन होने के कारण प्रेक्षणों का जाल इन क्षेत्रों में संतोषजनक नहीं है। ऐसे स्थानों के प्रेक्षणों की कठिनाई कुछ सीमा तक मौसम उपग्रहों द्वारा हल कर दी गई है, जो नियमित रूप से मेघ और सौर विकिरण के प्रेक्षण भू स्थिति ग्राही केन्द्रों को प्रेषित करते रहते हैं।

ये उपग्रह लगभग 800–1500 कि मी की ऊंचाई से पृथ्वी की परिक्रमा करते है और 1 5 से 2 घण्टे के अन्दर ध्रुवीय कक्षा में एक चक्कर पूरा कर लेते हैं। गुरुत्व परिवर्तन तथा पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र से उपग्रह में जनित विद्युत क्षेत्र की अन्योन्य क्रिया (Interaction) के कारण उपग्रह की ऊचाई मे उतार चढाव होता रहता है। उपग्रह परिक्रमा करते हुए स्वयं 10 से 12 चक्कर प्रति मिनट अपने अक्ष पर परिभ्रमित होते हैं। इसी परिभ्रमण के कारण उपग्रह अपना आधार पृथ्वी की सतह के समान्तर रख पाता है।

7.86 उपग्रह के सतुलन का समीकरण सरलीकृत रूप मे इस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है।

यदि h ऊचाई पर v रैखिक गति से उपग्रह (Q) घूम रहा है तो, इस पर लगा गुरुत्व बल केन्द्रापसारी बल द्वारा सन्तुलित होगा अत:

$$G\frac{Mm}{(R+h)^2} = \frac{mv^2}{R+h},$$
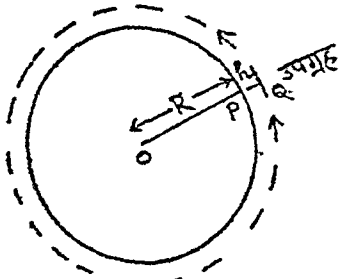
चित्र (7·9)

जहा M और R क्रमश पृथ्वी की मात्रा और त्रिज्या है; m उपग्रह की मात्रा और G गुरुत्वाकर्षण स्थिराक है।

$$\therefore v^2 = \frac{GM}{R+h} \quad \text{.. (i)}$$

$$\text{चूंकि } g = \frac{GM}{R^2}, \quad \text{...(ii)}$$

जहां g भूमितल पर गुरुत्व जनित त्वरण है।

(i) मे (ii) का भाग देने से

$$\frac{v^2}{g} = \frac{R^2}{R+h}$$

$$\therefore v^2 = g\frac{R^2}{R+h} \quad \text{.. .(iii)}$$

7 87 टाइरस उपग्रह 107 सेमी. व्यास और 56 सेमी ऊचाई की एक बेलनाकार यन्त्र है, जिसका भार लगभग 130 कि ग्राम होता है। इसके साथ टेलीविजन कैमरा सलग्न होता है। इसके अतिरिक्त टेपरिकार्डर, ट्रासमीटर, सोलर बेट्रिया तथा अन्य दूरमापी उपकरण भी होते है। टाइरस लगभग 800 किमी की ऊँचाई पर पृथ्वी की एक परिक्रमा 90 से 100 मिनट मे पूरा करते थे। कैमरा लगभग 1200 वर्ग किमी. का क्षेत्र एक साथ दृष्टिगत रखता था।

निम्बस, एस्सा और आईटास उपग्रह अपेक्षाकृत अधिक क्लिप्ट उपकरणों से युक्त होते है।

टेलिविजन कैमरा पृथ्वी तल की ओर अभिविन्यस्त (oriented) होते है अत. वादलो के चित्र और स्वच्छ आकाश वाले भू-भागो मे हिमाच्छादन, मरुस्थल तथा विस्तृत वनो के चित्र खीचते हैं। उपग्रह मे इन्फारेड वैन्ड के विकिरण का माप लेने के लिए भी उपकरण सलग्न होते है। इसमे मेघ या वायुमण्डल के तापमान का पता चल सकता है।

7 88 उपग्रह द्वारा प्रेपित मेघ-चित्रो के सकेतो को, हर देश जब उसके ऊपर से उपग्रह गुजर रहा हो, धरती पर ग्राही (रिसीवर) उपकरण द्वारा प्राप्त कर सकता है। इस उपकरण को ए०पी०टी० (आटोमेटिक पिक्चर ट्रासमिशन) कहते हैं। एपीटी रिसीवर लगभग 1600 किमी त्रिज्या के क्षेत्र के फोटोग्राफ सीधा उपग्रह द्वारा प्राप्त करता है।

7 89 ए०पी०टी० केन्द्रो द्वारा प्राप्त मेघ-चित्रो से मेघ प्रकार और ऊँचाई, वायु दिशा तथा जेटधारा का ज्ञान भी प्राप्त किया जा सकता है। फोटोग्राफ की चमक, प्रतिरूप, (कोशिका युक्त, बैंड युक्त, रोमयुक्त आदि) गठन (रेशेदार, चिकना, गुम्वदाकार आदि सरचना, आकृति तथा आकार के सूक्ष्म विश्लेषण से विभिन्न मेघ प्रकार पहचाने जाते हैं। यथेष्ट अनुभव के आधार पर यह स्पष्ट हो गया है कि ए०पी०टी० मेघ-चित्रो के अध्ययन के लिए, मेघो को केवल तीन मुख्य प्रकारो मे बाटना उपयुक्त है, ताकि वे एक दूसरे से अलग, सही-सही पहचाने जा सके। ये प्रकार (1) कपासी मेघ (2) स्तरी मेघ (3) पक्षाभ मेघ है।

विकसित कपासी वर्षी मेघ, अपनी छाया वाले अधेरे भाग तथा निहाई आकृति के कारण सरलता से पहचान लिया जाता है।

मेघ रहित आकाश के नीचे हिमाच्छादित भू-भागो तथा रेगिस्तानो के चित्र भी वादलो की भाति ही सफेद और चमकीले दिखाई देते है। किन्तु सामान्य भूगोल और समकालीन दाव प्रणालियो की जानकारी से इन्हे पहचान लेना सरल कार्य है। सूक्ष्म निरीक्षण से इनके प्रतिरूप और गठन का अन्तर भी नोट किया जा सकता है।

चक्रवाती तूफान मे मेघ, वायुप्रवाह के प्रभाव से सर्पिल प्रतिरूप ग्रहण कर लेते है, जिससे उन्हे आसानी से पहचाना जा सकता है। पर्याप्त विकसित अवस्था मे चक्रवात की आँख (मेघ रहित) सर्पिल मेघ के चमकीले वैन्ड मे एक काले विन्दु की तरह स्थित रहती है। एक समुद्री चक्रवात के चार विभिन्न अवस्थाओ के फोटोग्राफ चित्र (7.20) मे दिए गए है।
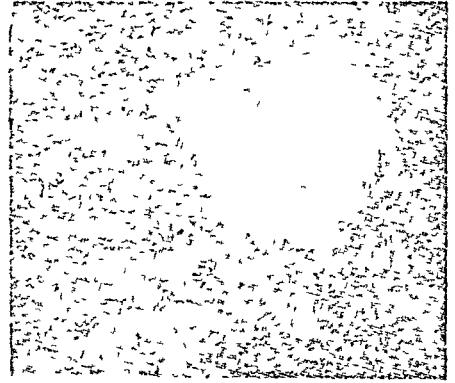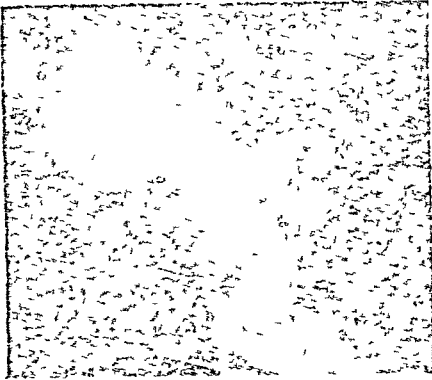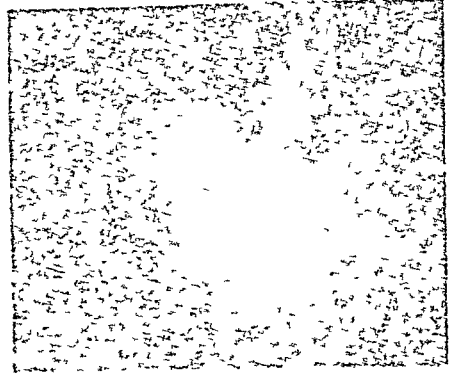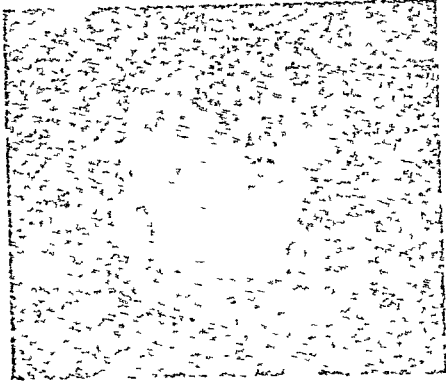
चित्र (7.20)

7.90 प्रेक्षणों के संग्रह और वितरण की संचार व्यवस्था

समकालीन आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए ससार की हजारों वेधशालाओं तथा समुद्री जहाजो द्वारा लिए गए प्रेक्षणो का तुरन्त (2--3 घन्टे के भीतर) सभी पूर्वानुमान केन्द्रो को प्राप्त हो जाना अभीष्ट है। इसके लिए एक मजबूत दूर-संचार व्यवस्था अनिवार्य है।

भारत मे सभी वेधशालाएँ प्रेक्षण लेने के तत्काल वाद उन्हे प्राथमिकता के भू लाइन तारो, वेतार, टेलीफोन अथवा टेलीप्रिंटरो द्वारा क्षेत्रीय मौसम केन्द्रो को प्रेपित कर देते है, जहा से वे टेलीप्रिन्टर और टेलेक्स परिपथ द्वारा सभी कन्द्रो को वितरित कर दिए जाते है। सभी क्षेत्रीय केन्द्र टेलीप्रिन्टर परिपथ द्वारा वम्वई स्थित मुख्य संचरण केन्द्र से जुडे होते है।

अन्तर्क्षेत्रीय प्रसारण के लिए साथ-साथ ही सभी प्रेक्षण, नई दिल्ली स्थित अन्तक्षत्रीय सचरण केन्द्र मे एकत्र होते है। साथ ही रूस, वर्मा, मलाया, तथा सलग्न

महासागरो के प्रेक्षण भी इस केन्द्र मे आते है। इन सभी प्रेक्षणों को प्राप्त होते ही काफी शक्ति से यह अन्तर्क्षेत्रीय केन्द्र पुनः अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका जापान, आस्ट्रेलिया तथा अन्य देशों के लिये प्रसारित कर देता है। एशिया में दिल्ली की ही भांति टोकियो तथा खाबारोवस्क (रूस) मे अन्तर्क्षेत्रीय संग्रहण केन्द्र और है।

इनके अतिरिक्त, नई दिल्ली मे एक उत्तरी गोलार्द्ध मौसम विनिमय केन्द्र है, जिसमे दिल्ली–मास्को तथा दिल्ली–टोकियो के बीच द्विमार्गी रेडियो टेलिप्रिंटर की व्यवस्था है। संसार के कुल 5 विनिमय केन्द्र [illegible], मास्को, नई दिल्ली, न्यूयार्क और टोकियो, एक दूसरे से सीधे या परोक्ष रूप से जुड़े होते हैं और पूरे उत्तरी गोलार्द्ध की मौसम सामग्रियों का एकत्रीकरण और वितरण करते है।

इस प्रकार, कुछ घण्टो मे पूरे उत्तरी गोलार्द्ध के मौसम प्रेक्षण नई दिल्ली मे प्राप्त हो जाते है, जिन्हे मानचित्रों पर अंकित करके मौसम चार्ट तैयार किया जाता है। इसी प्रकार पूना मे हिन्द महासागर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध के प्रेक्षण [illegible] पर के अंकित किए जाते है तथा मौसम चार्ट तैयार किए जाते है।

7 91 मौसम मानचित्रों का अंकन

इतने व्यापक मौसम प्रेक्षणों के त्वरित संचरण के लिये यह आवश्यक है कि प्रेक्षणों का सांकेतिक रूप मे संक्षिप्तीकरण हो। यह कार्य विश्व मौसम वैज्ञानिक संघ के तत्वावधान मे तैयार किए गए मानक संख्यात्मक कोड प्रणाली द्वारा किया जाता है। ये कोड मौसम कार्यालयों मे इस प्रकार प्रचलित है, जैसे साधारण बोल-चाल की भाषा।

उदाहरण के लिए भारतीय वेध शालाएं, धरातलीय प्रेक्षणों के मुख्य तत्व इस प्रकार रिपोर्ट करती है।

(i) YYGG — दिनांक (YY) और प्रेक्षण का समय (GG)

(ii) $RRRD_L D_M$ — पिछले प्रेक्षण से बाद हुई वर्षा (मिमी) (RRR), निम्न और माध्यम मेघो के गति की दिशा क्रमशः D_L और D_M

(iii) Nddff — कुल मेघाच्छन्नता का मान (अष्टमांशों मे) (N), वायु की दिशा (dd) और गति (ff)

(iv) VVwwW — दृश्यता का मान (VV), वर्तमान मौसम अवस्था (ww) तथा पिछला मौसम (W)

(v) PPPTT — वायुदाब (PPP) तथा तापमान (TT)

(vi) $N_hC_L hC_MC_H$ — निम्न मेघो की मात्रा (N_h) निम्न मेघ प्रकार (C_L), निम्नतम मेघ की ऊँचाई (h) मध्यम मेघ प्रकार (C_M) तथा उच्चमेघ प्रकार (C_H)

(vii) $T_dT_d9p_{24}p_{24}$ — ओसांक (T_dT_d) तथा पिछले 24 घण्टो मे दावान्तर ($p_{24}p_{24}$)

(viii) 7RR $\frac{TnTn}{T_xT_x}$ — वर्षा की मात्रा सेमी मे (RR) जो RRR मे दिए गए वर्षा को प्रमाणित करने के लिए प्रयुक्त होती है, निम्नतम तापमान (TnTn) या उच्चतम तापमान (T_xT_x)

इन कोडित प्रेक्षणो को मौसम मानचित्रो मे यथा स्थान एक मानकीकृत माडल की आकृति मे अंकित करते है। उपर्युक्त प्रकार के प्रेक्षणो के लिए निम्नांकित माडल प्रयुक्त होता है।

धरातलीय प्रेक्षण का अंकन
चित्र (7 21)
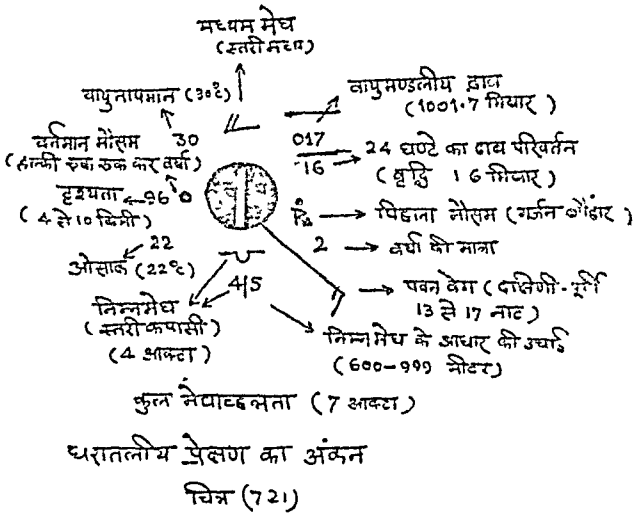
विभिन्न प्रकार के प्रेक्षणो, जैसे जहाजो के प्रेक्षण, पायलट गुब्बारा प्रेक्षण, रेडियो सौन्दे, राडार तथा उपग्रहो के प्रेक्षणो आदि के लिए अलग–अलग प्रकार के कोड निर्धारित किए गए है।

7.92 उदाहरण

एक समाकालीन मौसम सदेश का वास्तविक नमूना इस प्रकार है
0303 0202 70215 60910 95612 04825 42464 20953

सामान्य भाषा मे इसका तात्पर्य निम्नाकित है।

पहला ग्रुप 0303 महीने की तीसरी तारीख और 03 जी.एम.टी. (0830 भारतीय मानक समय) व्यक्त करता है।

RRR	(020)	वर्षा (पिछले 24 घन्टो मे) 020 मिमी
D_L	(2)	निम्न मेघो की गति की दिशा–पूर्वी
D_M	(1)	मध्यम मेघो की दिशा–अनिश्चित
N	(6)	कुल मेघच्छन्नता–6 अष्टमाश
dd	(09)	वायु दिशा–पूर्वी (090 अंश)
ff	(10)	धरातलीय वायुगति–(10 नाट)

VV (95) धरातलीय दृश्यता—2000 से 4000 मीटर
ww (61) वर्तमान मौसम-अविरत वर्षा
W (2) पिछला मौसम—आधे से अधिक आकाश मेघाच्छन्न
PPP (048) वायुदाब—1004.8 मिलीबार
TT (25) तापमान = 25°C
Nh (4) निम्न मेघों से मेघाच्छन्नता = 4 अष्टमांश
C_L (02) निम्न मेघ का प्रकार—ऊर्ध्व विकास का कपासी
h (4) निम्न मेघ के आधार की ऊँचाई—300-599 मीटर
C_M (6) मध्यम मेघ का प्रकार—स्तरकपासी
C_H (4) उच्च मेघ का प्रकार—पक्षाभ
TdTd (20) ओसांक = 20°C
$P_{24}P_{24}$ (53) पिछले 24 घण्टों में दाब का परिवर्तन — -0.3 मिलीबार
RR (02) पिछले 03 जी.एम.टी. से वर्षा (राशि) में = 2 मिमी
TnTn (15) निम्नतम तापमान = 15°C

8

वायु राशियां और वाताग्र

(Airmasses and Fronts)

8.10 वायु राशि (Airmass)

हवा के भौतिक गुण मुख्यत उसके तापमान और आर्द्रता पर निर्भर करते है। प्रायः कुछ सौ या कभी-कभी कुछ हजार वर्ग किलोमीटर के क्षैतिज विस्तार की वायु मे, ये तत्व लगभग समान पाए जाते है। क्षैतिज रूप से विस्तृत, मोटी तह वाली हवा की एक बड़ी राशि, जिसके भौतिक गुण, जैसे तापमान, आर्द्रता, ह्रास दर आदि का क्षैतिज आवटन, न्यूनाधिक समान हो, वायु राशि कहलाती है। जहाँ से उपर्युक्त भौतिक गुणो मे एकाएक असमानता प्रगट होने लगती है, वही वायु राशि की सीमा समझी जाती है। किसी स्थान की वायु राशि के, समान भौतिक गुणो से युक्त होने का कारण यह है कि एक ही स्थान पर, जिसे स्रोत-क्षेत्र कहते है, वायु राशि को पर्याप्त समय तक स्थिर रहना पडता है। इस स्थिरता के कारण वायु राशि की निम्न तहे, अपने नीचे के धरातल के भौतिक विशेषताओं को ग्रहण कर लेती है, जो कालान्तर मे ऊपर की तहो तक पहुच जाती है। यह प्रक्रम पूरा होने मे प्राय 4-5 दिन लग जाते है, परन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि वायु राशि के नीचे की सतह स्वय पर्याप्त सम (homogeneous) हो। विस्तृत थल या जल के भाग प्राय. वायु राशियो के लिए अच्छे स्रोत क्षेत्र बन सकते है।

उच्च दाब क्षेत्र साधारणत पूर्ण रूप मे या तो थल पर या महासागरो पर विस्तृत रहते है। इनमे अवतलन प्रवाह के कारण, वायु स्वत. जल या थल के सम सतह पर फैलती जाती है तथा धीरे-धीरे सतह के भौतिक गुण प्राप्त कर वायु-राशि का रूप धारण कर लेती है। इसके विपरीत निम्न दाब क्षेत्र मे, जहा अभिसरण और आरोही वायु धाराएँ प्रमुख होती है, ऊपर उठती वायु सदा नवीन वायु द्वारा विस्थापित होती रहती है। इस प्रकार निम्न दाब क्षेत्र की वायु अपने भौतिक गुण तेजी से बदलती रहती है, अत वायु-राशियाँ जनित करने मे असमर्थ है। पृथ्वी पर स्थित स्थायिवत् उच्चदाब क्षेत्र ही वास्तव मे वायु राशि जनित करने के मुख्य स्रोत है।

8.11 वायु राशियाँ अपने स्रोत क्षेत्रो को छोडकर दूसरे क्षेत्रो पर से गुजरते समय अपने गुणानुसार उस क्षेत्र का मौसम परिवर्तित करती जाती है तथा स्वय भी प्रतिक्रिया स्वरूप परिवर्तित होती रहती है। किसी वायु राशि की प्रकृति तथा उसके भौतिक गुण निम्नांकित बातो पर निर्भर करते है :

(1) स्रोत क्षेत्र (source-region)

पृथ्वी के वे विस्तृत और सम क्षेत्र जहाँ से वायु राशि अपने मौलिक भौतिक गुणों को आत्मसात करती है, स्रोत-क्षेत्र कहलाते हैं।

(2) वायु राशि का मार्ग

पर्याप्त दूर चलने के बाद विभिन्न प्रकृति और गुणों से युक्त सतह से गुजरने के कारण, वायु-राशि के संगठन (Composition) में पर्याप्त परिवर्तन आ सकता है।

(3) वायु राशि की आयु

वह समय जो वायु राशि, स्रोत स्थल से अन्तिम स्थान तक की यात्रा में लगाती है, वायु-राशि की आयु कहलाती है। यात्रा के दौरान विभिन्न सतहों के सम्पर्क में आने से तथा दाब प्रणालियों द्वारा विक्षुब्ध होते रहने से, वायु राशि शनैं शनैं अपने मौलिक गुण खोती रहती है और एक स्थल पर उसके तमाम मौलिक गुण आसपास के वायु मण्डल में, इस प्रकार विलीन हो जाते हैं कि इस वायु राशि को अलग करके पहचान पाना सम्भव नहीं हो पाता। यही उसके यात्रा का अन्तिम स्थल माना जाता है।

8.12 स्रोत क्षेत्र की प्रकृति

वायु राशि में तापमान और आर्द्रता की क्षैतिज समता एक अनिवार्य विशेषता है। इसके लिए स्रोत क्षेत्रों की एक विस्तृत सम सतह होनी आवश्यक है, जो सामान्यतः स्थायिवत् दाब प्रणालियों में ही पायी जाती है।

यदि वायु-राशि इस प्रकार की सतहों पर 3 से 5 दिन तक स्थित रहे, तो विकिरण और विक्षुब्ध मिश्रण द्वारा वायु राशियों में इन गुणों का समावेश तह-दर-तह होता जाता है। इस क्रिया के लिए विशेष सुविधाजनक स्थिति यह है कि वहां के भूमि तल की हवा का सामान्य प्रवाह बहुत धीमा और बहिर्गामी अथवा अपसरण की विशेषताओं से युक्त हो। अपसरण युक्त वायु की गति, सतह पर फैलने की प्रवृत्ति के कारण अधिक सम होने का सुविधा पा सकेगी। इसके विपरीत अभिसरण (Convergent) प्रवाह में तापमान विपर्यास (Contrast) अधिक होने के कारण वायु विक्षुब्ध होकर ऊपर उठती रहेगी जिसके स्थान पर नई नई वायु राशियाँ अभिसरित होकर असमान हवाओं का सिलसिला जारी रखेगी।

अतः स्पष्ट है कि वायु राशियों के सबसे उत्तम स्रोत क्षेत्र पृथ्वी के वे स्थायित्वत् उच्च दाब क्षेत्र ही बन सकते हैं, जो पर्याप्त सम सतह पर जनित हुए हों।

8.13 जल और थल के विपर्यास के कारण, प्रतिचक्रवातों की स्थितियाँ ग्रीष्म और शीत काल में अलग-अलग पाई जाती हैं। इसी कारण वायु-राशियों के स्रोत क्षेत्र भी ऋतुओं के अनुसार ही पाये जाते हैं। सर्दियों में प्रतिचक्रवात मुख्यतः महाद्वीपीय क्षेत्रों में स्थित होते हैं, जबकि गर्मियों में महासागरीय क्षेत्रों की ओर स्थानान्तरित हो जाते हैं और इनकी तीव्रता भी अपेक्षाकृत बहुत कम हो जाती है।

8.14 उत्तरी गोलार्द्ध के स्रोत क्षेत्र--सर्दियों से

उत्तरी गोलार्द्ध मे शीत ऋतु मे वायु राशियो के निम्नाकित 8 प्रमुख स्रोत क्षेत्र हैं :—

(1) आर्कटिक क्षेत्र (Arctic region)

ये आर्कटिक क्षेत्र (ध्रुवीय क्षेत्रो का उत्तरी भाग 70-90° अक्षाश) के तुषार और हिम से ढके वे भाग हे जहा ध्रुवीय प्रति चक्रवात स्थायी रूप से स्थित होता है। यहाँ अवतलन प्रवाह प्रमुख होता हे, हवा वहुत धीमी तथा साधारणत उत्तर दिशा मे वहती हे और वायु-राशि लम्वे समय तक अति शीतल सतह के सम्पर्क मे रही होती हे। हिम क्रिस्टल कुहरा इस वायु राशि की प्रमुख जलोल्काए (hydro-meteor) है। वायु-राशि से कभी-कभी स्तरी मेघ वन जाते है। यह वायु-राशि प्रवल रूप से स्थायी होती है।

(2) ध्रुवीय महाद्वीपीय क्षेत्र (Polar Continental region)

महाद्वीपीय उच्च दाव क्षेत्र के अन्तर्गत ये तुषार से ढके थल भाग हैं, जहा अत्यन्त शीतल, शुष्क और स्थायी वायु-राशि जनित होती है। वायु धीमी तथा उत्तरी दिशा वाली होती है। ह्रास दर वहुत कम होना है तथा भूमि तल व्युत्क्रमण साधारणत प्रमुख होता है। कनाडा तथा उत्तरी यूरोप और एशिया के तुषार युक्त भूभाग, इस प्रकार के क्षेत्र हैं। ये क्षेत्र प्राय. 55 अश अक्षाश से ऊपर ही मिलते है।

(3) महासागरीय उष्ण कटिवन्धीय क्षेत्र (Tropical maritime region)

ये मुख्यत. दो क्षेत्र है (i) प्रशान्त महासागर और (ii) अटलाटिक महासागर जो उप उष्ण कटिवन्धीय प्रतिचक्रवात के प्रभाव क्षेत्र मे पड़ते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य खाडिया तथा जलीय भाग भी इसी प्रकार के स्रोत क्षेत्र है, जो महासागरीय उष्ण तथा नम वायु राशिया जनित करते है। ये स्रोत क्षेत्र प्राय 40 से 45 अक्षाँशो के वीच सीमित है। उप उष्णकटिवन्धीय प्रतिचक्रवातो के पश्चिमी भागो मे वायु राशि अस्थायी होती हे, जिसके फलस्वरूप वहा कपासी मेघ सामान्य होते हैं। परन्तु पूर्वी किनारो पर वायु राशि स्थायी होती है और अवतलन प्रवाह प्रमुख होता है।

क्षैतिज वायु प्रवाह वहुत धीमा तथा प्राय. पछुवा होता है।

(4) उष्ण कटिवन्धीय महाद्वीपीय क्षेत्र

उत्तरी अफ्रीका के विस्तृत मरूस्थल पर सर्दियो मे प्रतिचक्रवाती प्रवाह प्रमुख रहता है, जो शुष्क, अपेक्षाकृत उष्ण तथा ऊपर से स्थायी वायु राशियो का प्रजनन करता है। इस वायु राशि मे साधारणत आसमान स्वच्छ रहता है। अफ्रीका का यह क्षेत्र प्राय 20 से 40 अ श उ० अक्षाशो के वीच सीमित है।

(5) और (6) संक्रमण के क्षेत्र (Region of transition)

ये दो क्षेत्र हैं (i) वह क्षेत्र जहाँ, अतिशीतल आर्कटिक और ध्रुवीय वायु राशियाँ ठण्डी महासागरीय धाराओ के ऊपर से वहती है। (ii) वह क्षेत्र, जहाँ आर्कटिक और ध्रुवीय राशियाँ उष्ण महासागरीय धाराओ के ऊपर से प्रवाहित होती

है। इस अवस्था मे ये शीतल हवाएँ तेजी से परिवर्तित होती है। ये तापमान तथा आर्द्रता का लाभ करती है, जिसके परिणाम स्वरूप इनमे अस्थायित्व का गुण आ जाता है। इस प्रकार के संक्रमण क्षेत्रो मे कपासी मेघ और बौछार युक्त वर्षा सामान्य घटना है। वायु प्रवाह इन क्षेत्रो मे प्राय उत्तरी होती है।

इस प्रकार के स्रोत क्षेत्रो की एक विशेषता यह भी है कि ये प्रमुख रूप मे उच्च दाब क्षेत्र न होकर, अपेक्षाकृत निम्न दाब क्षेत्र होते है। ऐसे संक्रमण क्षेत्र 55 से 70 अंश अक्षाशो के बीच पडने वाले सागरीय क्षेत्र होते है।

(7) विषुवत् रेखीय क्षेत्र

यह व्यापारिक हवाओ के बीच की अत्यधिक समान प्रकृति की विषुवत् रेखीय पेटिका है, जिसका अधिकाश भाग महासागरीय है। परिणाम स्वरूप इन क्षेत्र मे उत्पन्न वायु राशियां उष्ण, अत्यधिक आर्द्र तथा अस्थायित्व के गुणो से युक्त होती है। ये क्षेत्र उत्तरी गोलार्द्ध मे 8 से 10 अश अक्षाश के मध्य स्थित है, जो प्रमुख रूप से निम्न दाब प्रणालियो से प्रभावित रहते हैं। इस क्षेत्र मे उष्ण और धीमी पूर्वी हवाएँ चलती है। ऊर्ध्व विस्तार के मेघ तथा उनसे सम्बन्धित झंझा और तीव्र वर्षा इस क्षेत्र की सामान्य विशेषताएँ है।

(8) मानसून क्षेत्र

ये शीत मानसून प्रकार की एक विशिष्ट वायु-राशि के जनक क्षेत्र है, जो दक्षिण तथा दक्षिणी-पूर्वी एशिया मे विस्तृत है। शीत मानसून वे ठण्डी और शुष्क हवाएँ है, जो उच्च अक्षाशो के महाद्वीपीय भागो मे चलकर, प्रतिचक्रवाती प्रवाह के प्रभाव मे भारत और दक्षिणी-पूर्वी एशिया मे बहती है। इन्ही वायु राशियो के कारण इन क्षेत्रो की सर्दियाँ ठण्डी और शुष्क होती है।

8. 15 उत्तरी गोलार्द्ध के स्रोत क्षेत्र-गर्मियों में

गर्मियो मे जल और थल के तापमान-विपर्यास मे पर्याप्त कमी आ जाती है। निम्न और उच्च अक्षाशो के बीच भी तापमान-प्रवणता घट जाती है। परिणाम-स्वरूप प्रतिचक्रवाती प्रवाह मद हो जाता है और वायु राशियो के स्रोत-क्षेत्र सर्दियो की तुलना मे सामान्यत. कमजोर पाए जाते है। उत्तरी गोलार्द्ध की गर्मियो मे 6 प्रमुख स्रोत क्षेत्र पाए जाते है।

(1) आर्कटिक क्षेत्र

सर्दियो के आर्कटिक स्रोत क्षेत्र, सामान्यतः गर्मियो मे भी अपरिवर्तित रहते है। किन्तु ध्रुवीय महाद्वीपीय क्षेत्र और उत्तर की ओर सिमट जाते है, क्योकि महाद्वीपीय क्षेत्रो से ध्रुवीय प्रतिचक्रवात हट कर प्रमुख रूप से आर्कटिक क्षेत्रो पर ही केन्द्रित हो जाते है। अत. आर्कटिक वायु राशि की सीमा उष्ण और आर्द्र हवाओ से घिर जाती है। आर्कटिक वायु राशियो मे कुहरे तथा स्तरी मेघ की घटनाएँ प्रचुरता से देखी जाती है।

(2) ध्रुवीय महाद्वीपीय क्षेत्र

ध्रुवीय महाद्वीपीय ठण्डी हवाओ का प्रजनन क्षेत्र, सिमट कर एक संकीर्ण बैंड मे केवल उत्तरी कनाडा और साइबेरिया के थल भागों मे सीमित रह जाता है। यह वास्तव मे उष्ण कटिबन्धीय और आर्कटिक वायु-राशियो के बीच एक पतली तह है।

(3) उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपीय क्षेत्र

सम्पूर्ण एशिया तथा अफ्रीका और दक्षिणी यूरोप के विस्तृत उष्ण और शुष्क भू-भाग, उष्ण व शुष्क वायु राशियों के प्रमुख जनक क्षेत्र है। उत्तरी अमेरिका मे मिसीसिपी के पश्चिम मे स्थित शुष्क भू-भाग भी इसी प्रकार की वायु राशियाँ जनित करते हैं। ये वायु-राशियाँ उच्चतर वायु मण्डल मे स्थायी रहती हैं और अवक्षेपण के लिए सर्वथा प्रतिकूल परिस्थितियाँ रखती है। 20 से 40 अंश अक्षाशो के बीच इन्ही क्षेत्रो मे संसार के मुख्य मरुस्थल स्थित है।

(4) उष्ण कटिबन्धीय महासागरीय क्षेत्र

ये वे महासागरीय क्षेत्र है, जहाँ उप उष्ण कटिबन्धीय प्रतिचक्रवात उत्तर दिशा मे स्थानान्तरण के बाद स्थापित हो जाते हैं। सर्दियो की अपेक्षा गर्मियों में ये स्रोत-क्षेत्र अधिक विस्तृत होते है। सर्दियो की अपेक्षा इस ऋतु मे महासागरीय वायु राशियो का तापमान अधिक पाया जाता है। इन महासागरीय क्षेत्रों का उत्तरी भाग, विशेष रूप से प्रतिचक्रवातो के पूर्व मे पड़ने वाले भाग, इस प्रकार की वायु-राशियाँ जनित करते है जो उच्चतर वायु मे स्थायी और शुष्क होती है। यह परिस्थिति अवक्षेपण प्रक्रमो पर प्रतिकूल असर डालती है। दक्षिणी भाग अस्थायी प्रकार की वायु राशियाँ जनित करते है, जो मेघ विस्तार तथा वर्षा की परिस्थितियो के लिए बहुत अनुकूल होती है।

(5) विषुवद् रेखीय क्षेत्र

सर्दियो की अपेक्षा यह क्षेत्र सूर्य के स्थानान्तरण के कारण, और उत्तरी अक्षांशो तक खिच आता है। चूँकि इस क्षेत्र मे महासागरीय भाग प्रमुख है, अत अत्यन्त उष्ण, नम तथा अस्थायी वायु-राशियां जनित होती है जो तपासी समुदाय के मेघ और तड़ित झँझा युक्त अवक्षेपण की झड़ी सी लगा देती है।

(6) मानसून क्षेत्र

भारत तथा दक्षिणी-पूर्वी एशिया के भू-भाग, जो सर्दियो मे प्रतिचक्रवाती प्रवाह के प्रभाव क्षेत्र मे ठण्डी और शुष्क हवाएँ जनित करते है, गर्मियो मे तीव्र निम्न दाब क्षेत्र के प्रभाव मे आ जाते है। निम्न दाबो के प्रवाह मे इन क्षेत्रो के ऊपर विषुवत् रेखीय अक्षाशो की महासागरीय उष्ण और नम हवाएँ, मानसून धाराओ के रूप मे बहती है तथा अत्यधिक वर्षा उत्पन्न करती है। इस प्रकार, मानसून क्षेत्र सर्दियो और गर्मियो मे सर्वथा विपरीत वायु-राशियो के प्रभाव में होते है।

8 20 वायु राशियों का वर्गीकरण

वायु राशियो की मौसम सम्बन्धी विशेषताए उनके स्रोत-क्षेत्रो पर ही प्रमुख रूप से निर्भर करती है। किन्तु कुछ सीमा तक इन विशेषताओ मे अन्य प्रभावो के अधीन भी परिवर्तन होते रहते है, विशेषकर उन वायु राशियो मे, जो स्रोत-क्षेत्र को छोड कर पर्याप्त दूर तक की यात्रा करती है।

स्रोत-क्षेत्रो की भौगोलिक स्थितियो के आधार पर, वायु राशिया मुख्य रूप से दो वर्गो मे रखी जा सकती हैं

(1) ध्रुवीय वायु' राशियाँ (P)—आर्कटिक स्रोत-क्षेत्रो की वायु राशियाँ भी, इनमे एक सशोधित रूप मे सम्मिलित है।

(2) उष्ण कटिबन्धी वायु राशिया (T)—विपुवत् रेखीय और मानसून क्षेत्रों मे जनित होने वाली वायु राशियाँ इनमे सम्मिलित हैं जो अस्थायी उष्ण कटिबन्धीय हवाओ के रूप मे समझे जा सकती है।

P और T वायु राशियो को महाद्वीपीय (*c*) और महासागरीय (*m*) हवाओ मे, उद्गम के अनुसार, पुनः उप विभाजित किया जा सकता है। '*c*' सकेत से युक्त वायु राशियाँ महाद्वीपीय मूल की होने के कारण शुष्क तथा '*m*' सकेत वाली वायु राशिया महासागरीय उद्गम के कारण आर्द्र और वर्षा उत्पन्न करने की विशेषताओ से युक्त होती हैं।

इस प्रकार, स्रोत-क्षेत्रो के प्रकार के आधार पर निम्नांकित चार प्रमुख वायु राशिया पाई जाती है :—

(i) *c*P—ध्रुवीय महाद्वीपीय
(ii) *m*P—ध्रुवीय महासागरीय
(iii) *c*T—उष्ण कटिबन्धी महाद्वीपीय
(iv) *m*T—उष्ण कटिबन्धी महासागरीय

8 21 वायु राशियों की प्रकृति मे परिवर्तन, उनकी यात्राओ के दौरान होता रहता है। इन परिवर्तनो के दो मुख्य कारण होते हैं–

(1) ऊष्मा गतिकी (Thermodynamic) (2) यान्त्रिकी (mechanical)

(1) ऊष्मागतिकी परिवर्तन

वायु राशि और उसके नीचे की सतह के बीच ऊष्मा का स्थानान्तरण, वायु राशियो के गुणो मे परिवर्तन उत्पन्न करने का प्रमुख ऊष्मा गतिज कारण है। जब सतह वायु राशि की अपेक्षा उष्ण होती है तो ऊष्मा का सचार सतह से वायु राशि मे होता है। फलत वायु राशि उत्तरोत्तर अधिक अस्थायी होती जाती है। ऐसी वायु राशियो को सकेत '*k*' से प्रकट किया जाता है, जिसका तात्पर्य है कि '*k*' नाम वाली वायु राशि अपने निचले भूसतह की अपेक्षा ठंडी है।

इसी प्रकार, उन वायु राशियो को '*w*' सकेत से प्रकट किया जाता है, जो अपने नीचे के उस पृथ्वी तल की अपेक्षा उष्ण होती है, जिस पर वे गति कर रही

हैं। इसमें ऊष्मा का संचार वायु राशि से पृथ्वी तल की ओर होता है, फलत वायु राशि मे शीतलन होता है जिससे स्थायित्व का गुण आता जाता है।

अत. k और w वायु राशिया अपनी यात्रा के दौरान क्रमश: नीचे से गर्म और ठंडी होती रहती हैं। किसी स्थान पर वायु राशि में परिवर्तन की कुल मात्रा, इस बात पर निर्भर करती है कि अपने स्रोत से उस स्थान तक वायुराशि किस गति से और कितनी दूरी तय कर चुकी है तथा इस बीच वह जिन-जिन सतहो से गुजरी है, उनकी प्रकृति (मुख्यतः उष्णता) क्या है? उष्ण सतहो के ऊपर से गुजरने वाली हवा में अस्थायित्व जनित होता जाता है, जिससे नमी की अनुकूल परिस्थितियो मे वर्षा उत्पन्न हो सकती है।

किन्तु वायु की ताप कुचालकता के कारण उष्मन या शीतलन, वायु राशि मे सर्वत्र नही आ पाता है। वायु राशियों की निचली तहे सर्वाधिक प्रभावित होती हैं। यही कारण है कि जब वायुराशि ठडी सतह से गुजरती है, तो सतही हवा कपकपी पैदा करने वाली शीत लहर की तरह चलती है। ऐसी वायु राशियो मे सामान्यत' व्युत्क्रमण तह भी जनित हो जाती है, जो स्थायित्व की मात्रा बढाने मे सहयोग देती है। एक कारण यह भी है कि ठडी सतहो से गुजरने वाली वायु राशि मे भवर या विक्षोभ बुलबुले नही उत्पन्न हो पाते, जिससे शीतलन प्रभाव अधिक ऊपर तक ले जाने का कोई साधन नही मिलता और शीतलन केवल निचली तहो तक ही सीमित रह पाता है। लेकिन उष्ण सतहो से गुजरने वाली वायु राशियो मे नीचे से ऊष्मा संचार के कारण उत्पन्न बुलबुले, ऊपर तक ऊर्ध्व मिश्रण तथा सवहन अपेक्षाकृत अधिक ऊचाई तक उष्मन प्रभाव खीच ले जाते है। इसके अतिरिक्त, उष्मन या शीतलन प्रभाव की व्यापकता सतहो के तापमान और प्रकृति पर भी निर्भर करती है।

यदि वायु-राशि जल सतहो से गुजरती है, तो w या k विशेषताओ के कारण वाष्पीकरण या सघनन द्वारा वायु राशि की आर्द्रता मे भी परिवर्तन सम्भव है।

k और w संकेत बर्जरान द्वारा निर्धारित किए गए है, जिन्हे उपर्युक्त चार प्रमुख वायु राशियो में प्रत्येक के साथ सलग्न किया जा सकता है। इस प्रकार वायु राशियो के निम्नांकित 8 वर्गीकरण प्राप्त हुए :—
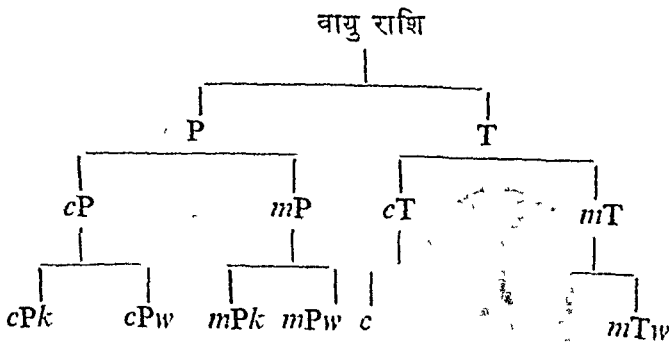
8 22 यान्त्रिकी परिवर्तन

केवल धरातलीय उष्मन या शीतलन, वायुराशि की मौसम उत्पन्न करने की प्रवृत्ति निश्चित नही करता। जैसे, गर्म सतह से गुजरने वाली वायुराशि मे, उष्मन के कारण निम्न तहो मे उत्पन्न अस्थायित्व, नमी के बावजूद, वर्षा जनित नही कर सकता यदि उच्चतर हवा मे अवतलन प्रवाह प्रमुख हो। अतः उच्चतर वायु मण्डलीय परिस्थितियाँ भी वायु राशि की प्रकृति निश्चित करने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके अतिरिक्त उर्ध्व वायु गति तथा विभिन्न तापमान की हवाओ के अभिवहन भी अपना प्रभाव डालते है।

यह विचार निश्चित रूप से वायु राशियो के वर्गीकरण को प्रभावित करता है। फलत पेटरसन ने दो और सकेत निर्धारित किए हैं, जो उपर्युक्त 8 वर्गो मे प्रत्येक के साथ सँलग्न किए जा सकते है। ये सकेत निम्नाकित है :—

(i) *s*–स्थायी स्तरण (stable stratification) और (ii) *u*–अस्थायी स्तरण (unstable stratification)।

s उच्चतर स्तर पर स्थायित्व की ओर संकेत करता है। यह स्थिति, या तो प्रतिचक्रवाती प्रवाह से सम्बन्धित अवतलन प्रवाह मे उत्पन्न होती है, या उच्चतर स्तर मे उष्ण हवाओ के अभिवहन से।

इसी प्रकार, संकेत *u* का तात्पर्य उच्चतर स्तर पर, अस्थायित्व से है। यह स्थिति उन क्षेत्रो मे हो सकती है, जो तीव्र चक्रवाती प्रणालियो के प्रभाव मे हो, या जहाँ उच्चतर वायुमण्डल मे ठडी हवाओ का यथेष्ठ अभिवहन होता हो।

इस प्रकार सामान्यत, विशेपताएं *s* और *u* क्रमश प्रतिचक्रवाती और चक्रवाती दाव प्रणालियो से सम्बन्धित पाई जाती है।

8.23 उपर्युक्त धारणाओ के आधार पर वायु राशियो का कुल वर्गीकरण निम्नाकित व्यवस्था द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है, जो एच० सी० विल्लेट द्वारा तैयार की गई है।

वायु-राशि
P
T
cP
mP
cT
mT
cPk
cPw
mPk
mPw
cTk
cTw
mTk
mTw
cPks
cPku
cPws
cPwu
mPks
mPku
mPws
mPwu
cTks
cTku
cTws
cTwu
mTks
mTwu
mTws
mTwu
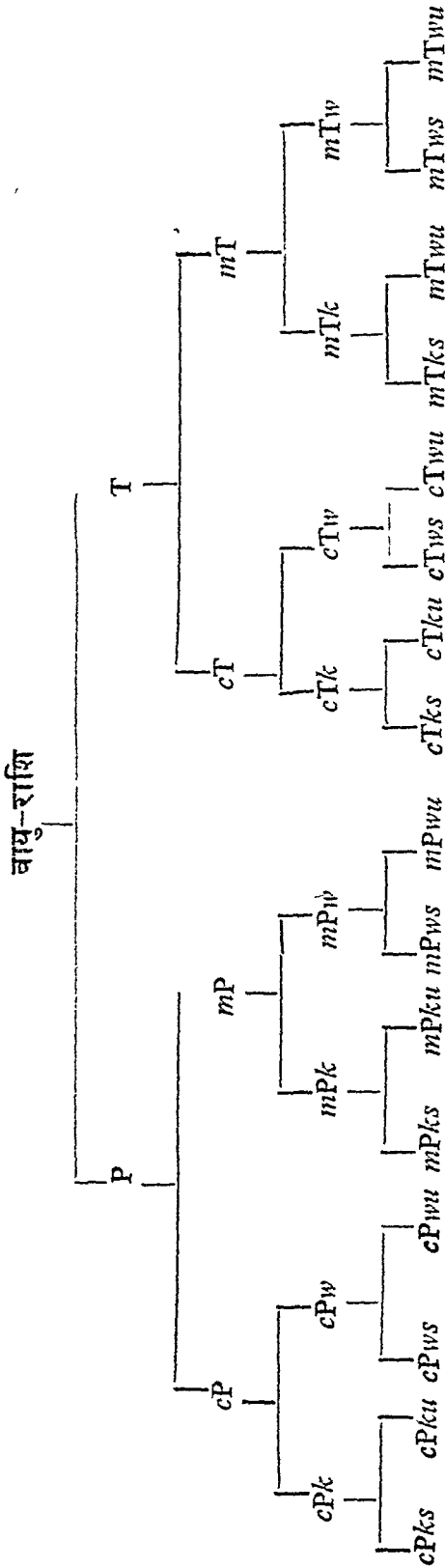
आर्कटिक हवाये संशोधित ध्रुवीय हवाओं के समूह में रखी जाती है तथा विपुवत् रेखीय और मानसून हवाये *mTu* संकेत द्वारा व्यक्त की जाती है, जो निम्न-दाब प्रवाह मे बहती उष्ण कटिबन्धीय महासागरीय अस्थायी हवाओं को प्रदर्शित करता है। '*mTu*' वायु राशियो की सभी परिस्थितियाँ वर्षा के अनुकूल होती है। अत विपुवत् रेखीय क्षेत्र सर्वाधिक वर्षा प्राप्त करते है।

8.24 वायु राशि प्रकारों का संक्षिप्त परिचय

संकेत P, T, *c*, *m*, *k*, *w*, *s* और *u* की व्याख्याएँ ऊपर दी जा चुकी है; इनके विभिन्न संयोगो से वायु राशियो के उपर्युक्त 16 प्रकार प्राप्त हुए, जिनकी व्याख्या संकेतो के अनुरूप, उनके नाम से ही स्पष्ट है। उदाहरण के लिए, कुछ वायु राशियो की व्याख्या नीचे की गई है ·

(1) **cPks**—शीतल और शुष्क महाद्वीपीय वायु राशि, जो धरातलीय ऊष्मन के कारण निचली तहो मे अस्थायी तथा अवतलन के कारण उच्चतर तहो मे स्थायी है।

(2) **cPku**—शीतल, शुष्क और अस्थायी महाद्वीपीय वायु राशि। अस्थायित्व अंशत. धरातलीय ऊष्मन से जनित होता है, और अंशत तीव्र चक्रवाती प्रवाह के कारण। फलस्वरूप, शुष्क आरोही धाराए उत्पन्न हो जाती है।

(3) **cPws**—शीतल, शुष्क और स्थायी महाद्वीपीय वायु राशि जो निचली तहो मे धरातलीय शीतलन तथा उच्च तलो मे अवतलन के कारण स्थायी होती है।

(4) **cPwu**—शीतल और शुष्क महाद्वीपीय वायु राशि-जो धरातलीय शीतलन के कारण निचली तहो मे स्थायी होती है किन्तु अवतलन प्रवाह की उपस्थिति मे उच्चतर तहो मे अतिप्रवण (Steep) ह्रास दर पाई जाती है।

mPws, *mPks*, *mPku* और *mPwu* वायु राशिया, ध्रुवीय महाद्वीपीय वायु राशियो से केवल इतना अन्तर रखती है, कि महासागरीय मूल की होने के कारण, इनमे आर्द्रता तथा तापमान अपेक्षाकृत अधिक होता है।

इसी प्रकार, उष्ण कटिबन्धी वायुराशिया हर तह मे उच्च तापमान की विशेषता रखती हैं। उष्ण कटिबन्धी, महाद्वीपीय हवाए शुष्क तथा महासागरीय हवाए अत्यधिक नम होती है। इन गुणो के साथ *k.w.s* और *u* की विशेषताएँ संलग्न करके, अन्य प्रकारो की व्याख्या भी उपर्युक्त विधि से की जा सकती है।

इन 8 संकेतो मे गुणानुसार जितने संकेतो की आवश्यकता हो, उनके सयोग से सभी प्रकार की वायु राशिया वर्णित की जा सकती है।

8 25 उत्तरी गोलार्द्ध मे वायु राशियों का भौगोलिक आवंटन शीत और ग्रीष्म ऋतुओ के लिए अलग-अलग चित्रो (8·1 और 8 2) मे प्रदर्शित किया गया है।

चित्र (8.2)
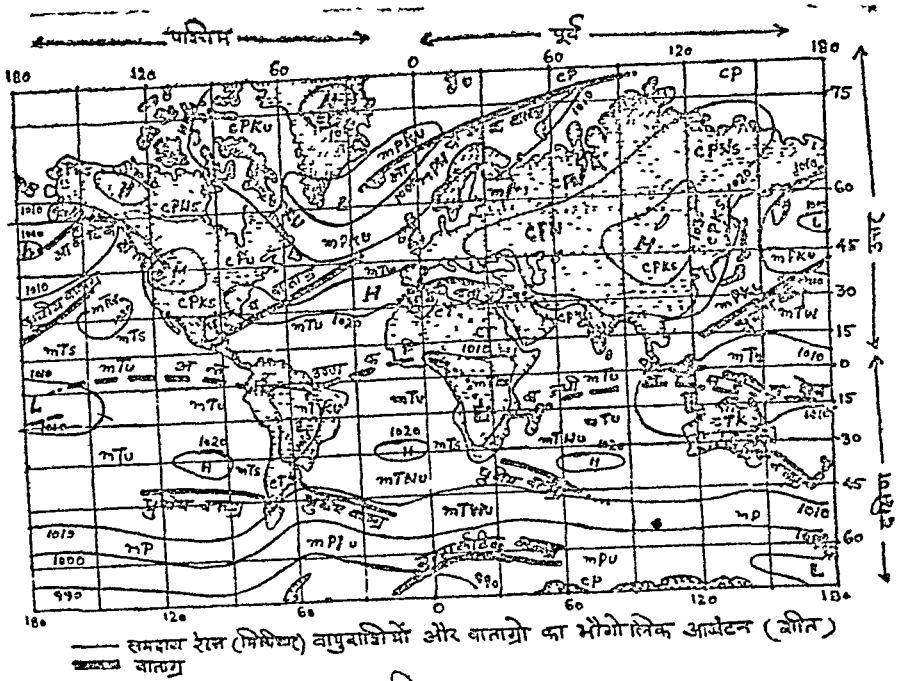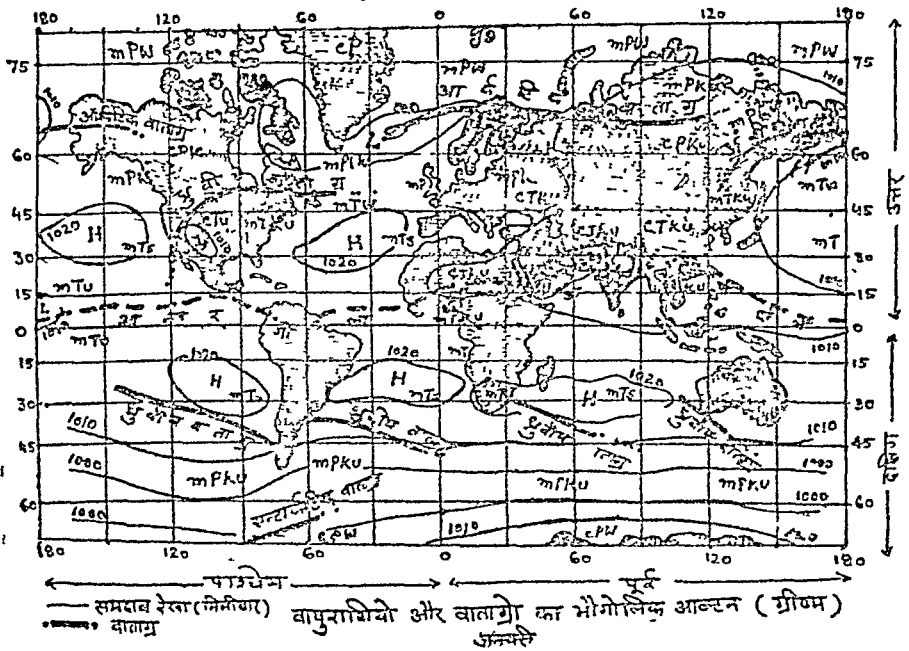
8·30 एशिया को प्रभावित करने वाली वायु राशियाँ

(1) cP–वायु राशि, सर्दियों में

साइबेरिया और मंगोलिया के उत्तरी भाग, जो पहाड़ी-शृंखलाओं के कारण महासागरीय प्रवाह के अनुवर्ती भाग में पड़ते हैं, विस्तृत रूप से शीतल और शुष्क

वायुराशि जनित करने के लिए अनुकूल है। यह वायु राशि सर्दियों मे इन क्षेत्रो पर व्याप्त प्रतिचक्रवात के अधीन पर्याप्त समय तक स्थिर रह कर, अत्यधिक शीतलन प्राप्त कर लेती है। साइवेरिया के स्रोत-क्षेत्रो मे इन दिनो धरातल का तापमान – 15 से – 40°C के वीच पाया जाता है। सबसे शीतल और गहरी वायु-राशि, यूराल पर्वत के पूर्वी भागो मे स्थापित होती है, जो निम्नाकित मौसम सम्बन्धी गुणो से युक्त होती हैं —

(1) प्रतिचक्रवात मे अवतलन प्रवाह से सम्वन्वित स्वच्छ आकाश।

(2) अत्यधिक कम धरातलीय तापमान, जो लगभग 1500 मीटर तक ऊंचाई के साथ स्पष्ट रूप से वढता जाता है, अर्थात् तीव्र धरातलीय व्युत्क्रमण।

(3) अत्यन्त कम निरपेक्ष आर्द्रता। विशिष्ट आर्द्रता 1–2 ग्राम/किग्राम के वीच पाई जाती है तथा उत्तरी साइबेरिया मे इससे भी कम।

(4) स्रोत क्षेत्रो मे वायु-राशि अत्यन्त स्थाई होती है।

(5) स्वच्छ आकाश के बावजूद, विकिरण शीतलन के कारण हिमक्रिस्टल-कुहरो की घटनाएँ सामान्य है।

60 पूर्वी देशान्तर के पश्चिमी भागो मे *c*P वायु-राशि छिछली होती जाती है और उच्चतर तहों मे *m*P हवाओ से दवी होती है। ये *m*P हवाएँ, या तो साइ-वेरियन प्रतिचक्रवात के पश्चिम की ओर स्थानान्तरण से, या पूर्वी यूरोप पर स्थित महासागरीय हवाओ से प्राप्त होती है। फलत इन भागो की हवाएँ साइवेरियन वायु राशि की अपेक्षा अधिक नम तथा उष्ण होती है।

8·31 *c*P वायु राशियों का परिवर्तन (Modification)

जब *c*P हवाएँ अपने स्रोत-क्षेत्रो से चलती है, तो यात्रा के दौरान विभिन्न धरातलो से तापमान और नमी का शोषण करके परिवर्तित होती जाती हैं। इनसे सहसा (abrupt) परिवर्तन तब होता है, जब वायु-राशि हिम से ढकी सतह छोड़ती है। निम्नाकित परिवर्तन स्पष्ट दृष्टिगोचर होते है।

(1) ह्रास दर वढता जाता है, तथा व्युत्क्रमण तह टूटने लगती है। कभी-कभी पर्याप्त उष्ण तल से गुजरते हुए अस्थायित्व उत्पन्न हो जाता है, जिससे तीव्र आरोही धाराएँ आरम्भ हो जाती है।

(2) निरपेक्ष आर्द्रता वढती जाती है। मुख्यत उष्ण महासागरो मे अस्था-यित्व तथा आर्द्रता के कारण, वर्षी कपासी मेघ विकसित हो सकते है, जिनसे झंझा बौछार और स्क्वाल की घटनाएं जनित होती है।

(3) तीव्र अस्थायित्व के अभाव मे विक्षोभ मिश्रण के कारण यथेष्ट आर्द्रता, व्यापक रूप से स्तरी तथा स्तरीकपासी मेघो को जन्म देती है।

8 32 एशिया मे *c*P आयु-राशियो का निम्नाकित परिवर्तन सामान्यतः पाया जाता है :—

(1) उत्तरी एशिया के तटीय क्षेत्रो मे विलोडित (stirred) वायु-राशियां मिलती है, जिनमे विक्षोभ मिश्रण के कारण तापमान मे वृद्धि होती रहती है। व्युत्क्रमणतह शनै शनै समाप्त हो जाती है।

(2) 'एल्यूशियन' निम्नदाव के प्रभाव क्षेत्र; उत्तरी-पूर्वी एशिया मे भी विलोडित cP हवाएँ व्याप्त रहती है, किन्तु मुख्यत. उच्चतर वायुमण्डल मे। इसका कारण यह है कि चक्रवाती प्रवाह के द्वारा cP हवाएँ ऊपर उठा ली जाती है। अति प्रवण ह्रास दर होते हुए भी, धरातलीय हवा बहुत शीतल तथा शुष्क (विशिष्ट आर्द्रता, लगभग 0.5 ग्राम/किग्राम) पाई जाती है।

(3) चीन के ऊपर cP हवाएँ थल और जल, दोनों मार्गो से पहुचती है। यदि उच्चदाव केन्द्र मङ्गोलिया तथा उत्तरी चीन पर है, तो ध्रुवीय हवाएँ थल मार्ग से अभिवहित होती हैं, जो अपने स्रोत-क्षेत्रों की अपेक्षा उष्ण होते हुए भी, इन क्षेत्रो के लिए बहुत कम तापमान रखती है। चीन की भूमि पर cP हवाओ का तापमान 10 से 20⁰C तक बढ़ जाता है। थल cP हवाएँ चीन मे स्वच्छ आकाश और ठंडे मौसम की प्रतीक है। स्वच्छ आकाश के कारण, उच्च दैनिक तापमान परिसर तथा प्रात.कालीन धरातलीय कुहरा भी सर्दियो की सामान्य घटनाएँ हैं।

लेकिन जब उच्चदाव कोशिकाएँ, जापान-सागर या मन्चूरिया पर केन्द्रित होती है, तो cP हवाएँ जापान सागर, पोहे की खाडी, पीत सागर, चीन सागर तथा संलग्न प्रशान्त महासागर के जल मार्ग से चीन मे प्रवेश करती है। स्वाभाविक रूप से इस प्रकार की cP हवाएँ तापमान और आर्द्रता के सन्दर्भ मे थलीय cP वायु राशियो से इतनी अधिक भिन्न हो जाती हैं कि कुछ मौसम विज्ञ इन्हे mP हवाओ की संज्ञा भी देते है। किन्तु इन हवाओ से साधारणत स्वच्छ मौसम ही सम्बन्वित रहता है। वैसे, जब सागरीय cP वायु राशि तथा शुष्क थलीय cP के सम्मिलन द्वारा वाताग्र सतह जनित होती है, तो वर्षा हो जाती है। इसके अतिरिक्त, सागरीय cP निचली तहो मे साधारणत अस्थायी होती है, जो पर्वतीय प्रदेशो मे उत्थापन की अनुकूल परिस्थितिया पाकर, वर्षा उत्पन्न कर सकती है।

(4) दक्षिणी-पूर्वी एशिया, भारत तथा दक्षिणी-पश्चिमी एशिया की सर्दियो मे cP हवाएँ अत्यधिक परिवर्तित रूप में पहुचती है। कुछ मौसम विज्ञो की धारणा यह भी है कि वास्तविक cP हवाएँ हिमालय तथा सम्बन्वित पर्वतीय शृंखलाओ द्वारा इन क्षेत्रो पर आने से रोक ली जाती हैं और जो उत्तरी-पूर्वी मानसून हवाएँ भारतीय उप-महाद्वीप मे इस ऋतु मे व्याप्त रहती हैं, उनका स्रोत स्थानीय व्यापारी हवाओ मे ही है।

जो भी हो, ये cP हवाएँ उत्तर मे स्थित पर्वत शृंखलाओ से नीचे उतरने के कारण, पर्याप्त रुद्धोष्म प्रक्रम द्वारा बहुत गर्म हो जाती हैं। आगरा मे इन दिनो का औसत तापमान 20⁰C तथा विशिष्ट आर्द्रता 4 ग्राम/किग्राम तथा 'पूना' मे क्रमश: 23⁰C और 7 ग्राम/किग्राम पाए जाते है।

(5) cP हवाओं का सर्वाधिक महत्त्व परिवर्तन तब होता है, जब वे और दक्षिणी अक्षांशों में आकर बङ्गाल की खाड़ी और अरब सागर के उष्ण जल के ऊपर से बहती है। ये हवाएँ साधारणतः उत्तर-पूर्व में बहती हैं तथा नमी और तापमान प्राप्त करके अधिक अस्थायी हो उठती हैं। अस्थायित्व को यह सहयोग भी प्राप्त होता है कि वे उच्चतर वायुमण्डल के अवतलन प्रवाह से मुक्त होती हैं। भारत के पूर्वी तट पर इन्ही हवाओं द्वारा सर्दियों में वर्ष की सर्वाधिक वर्षा होती है।

8·33 cP वायु राशि-गर्मियों में

गर्मियों में सम्पूर्ण दक्षिणी एशिया cP हवाओं के प्रभाव से लगभग मुक्त हो जाता है। cP हवाओं का स्रोत-क्षेत्र 50^0 से उत्तर के आर्कटिक क्षेत्रों में ही सिमट जाता है। आर्कटिक सतह इन दिनों प्रायः पिघलते तुषार या हिमजल के रूप में होती है। इसके ऊपर cP वायु स्थायी, किन्तु पर्याप्त आर्द्र होती है। अतः कुहरे या स्तरी मेघ की उपस्थिति सामान्य रूप से पाई जाती है।

दक्षिणी की तरफ गति करती cP वायु-राशियाँ, गर्म धरातल द्वारा ऊष्मा पाकर शीघ्र अस्थायी हो जाती हैं किन्तु मेघों का प्रकार नमी की मात्रा पर निर्भर करता है। उत्तरी-पश्चिमी एशिया पर गुजरती हुई इन वायु राशियों की आर्द्रता, उत्तरी-पूर्वी एशिया की अपेक्षा अधिक होती है, क्योंकि उत्तरी-पश्चिमी भाग में उष्ण जलाशय अधिक है। इसलिए यह भाग cP हवाओं द्वारा अधिक मेघाच्छन्नता तथा वर्षा प्राप्त करता है।

कभी-कभी जापान और पीत सागर के मार्ग से cP हवाएँ चीन में प्रवेश कर जाती हैं। चीन में इन दिनों उष्ण कटिबन्धीय हवाओं की प्रमुखता रहती है, जिसकी तुलना में आगत cP वायु-राशियां ठंडी और शुष्क होती हैं। फलतः cP हवाओं से स्वच्छ मौसम सम्बन्धित रहता है। किन्तु जहां cP वायु-राशि, उपस्थित उष्ण कटिबन्धी वायुराशि के सम्पर्क में आ कर वाताग्र पृष्ठ जनित करती है, वहां तूफानी मौसम उत्पन्न हो जाता है।

8·34 mP-वायु राशि-सर्दियों में

वायु राशियां जो सर्दियों में उत्तरी-पश्चिमी तथा कभी-कभी पूरे पश्चिमी एशिया को प्रभावित करती हैं, सामान्यतः अटलान्टिक महासागर में उत्पन्न होती हैं। स्रोत-क्षेत्र में ये हवाएँ पर्याप्त उष्ण और आर्द्र होती हैं। पश्चिमी यूरोप में ये गुण वर्तमान रहते हैं, किन्तु पूर्वी यूरोप से होकर पश्चिमी एशिया तक आते-आते mP हवाओं के मौलिक गुण बहुत कुछ परिवर्तित हो जाते हैं, क्योंकि यह यात्रा उन्हें विशाल थलीय भाग पर ही तय करनी पड़ती है। धरातल से इनका लगातार शीतलन होता रहता है। फलतः cP हवाओं के समान ही इनमें स्थायित्व का गुण आ जाता है।

किन्तु इस परिवर्तित mP वायु राशि के ऊपरी स्तरों में अधिक आर्द्रता पाई जाती है और इसी गुण के कारण इन्हें वास्तविक cP हवाओं से अलग पहचाना जा सकता है। परिवर्तित mP वायु राशि, पश्चिमी रूस के उच्चत्तर स्तरों में प्राय.

विस्तृत होती है, जहाँ धरातलीय तहो मे cP हवाओ की एक छिछली तह वर्तमान रहती है । फलस्वरूप, इन क्षेत्रों मे वाताग्र मेघ सामान्य रूप से जनित होते रहते है ।

- शीत-ऋतु -
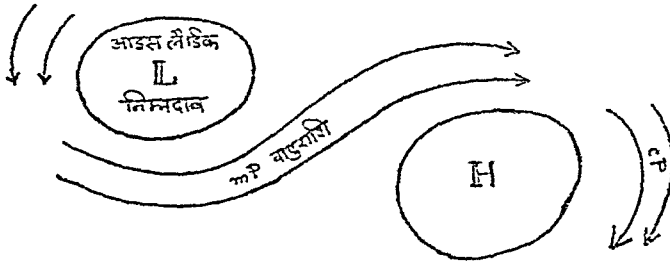
चित्र (८३)

पूर्वी एशिया में सर्दियो मे, उत्तर से दक्षिण की ओर तीव्र वायु प्रवाह वर्तमान होता है, जो इन क्षेत्रो मे परिवर्तित mP हवाओ को जमने नही देती ।

8 35 mP वायु राशि-गर्मियों में

गर्मियों मे आर्कटिक के पिघलते हिम क्षेत्रो से सर्वाधिक ठंडे प्रकार की mP वायु राशियाँ जनित होती हैं । ये वायु राशियाँ आरम्भ मे धरातल पर अत्यन्त स्थायी तथा ठंडी होती है । परन्तु दक्षिणी तथा दक्षिणी-पश्चिमी दिशा में अपनी यात्रा के दौरान, पश्चिम एशिया तथा यूरोप से गुजरती हुई ये तेजी से परिवर्तित होती जाती हैं । परिवर्तित हवाएँ अस्थायी हो उठती हे । उत्तरी-पश्चिमी एशिया पर तो ये प्राय cP हवाओ के ही समान गुण रखती है ।

गर्मियों मे उत्तरी-पूर्वी एशिया मे भी mP हवाएँ उपस्थित होती हे । ठंडे जलीय भागों पर से बहने के कारण, इन हवाओं से कामचटका प्रायद्वीप तथा अन्य तटीय क्षेत्रो मे कुहरे का बाहुल्य पाया जाता है । mP हवाओ के पूर्वी एशिया पर आगमन के लिए, ओखोत्स्क (okhostsk) सागर की भूमिका महत्वपूर्ण है । 40^0 उ अक्षांश से उत्तर के तटीय क्षेत्र में ग्रीष्म मानसून प्राय. इन्ही हवाओ से आता है ।

8.35 cT वायु राशि

एशिया में cT वायु राशियो की उपस्थिति मुख्यत गर्मियो मे ही पाई जाती है जिसके स्रोत क्षेत्र मध्य तथा दक्षिणी-पश्चिमी एशिया के तप्त भूभाग होते है । मध्य एशिया के शुष्क भूभाग जहाँ ऊष्मन सर्वाधिक तीव्र होता है, सबसे गहन हवाएँ जनित करते है । ये cT हवाएँ उच्च तापमान और निम्न आर्द्रता की विशेषताओ से युक्त होती है । शुष्कता और स्वच्छ मौसम के कारण प्रभावित क्षेत्रों मे दैनिक तापमान परिसर बहुत ऊँचा होता है ।

दक्षिणी-पूर्वी यूरोप के जलाशयो के कारण, पूर्वी यूरोप मे cT हवाएँ परिवर्तित होकर पहुँचती हैं, जो अपेक्षाकृत नम और अस्थायी होती है । यही हवाएँ इन क्षेत्रो मे ग्रीष्म-बौछार तथा तडित झंझा की घटनाओ के लिए उत्तरदायी हैं । सर्दियो मे cT हवाएँ केवल उत्तरी अफ्रीका पर जनित होती हैं, जो वहाँ हर्मेटन के स्थानीय नाम से विख्यात है ।

8.36 mT वायु राशि-सर्दियों में

इनके मुख्य-स्रोत उप उष्णकटिबन्धी प्रतिचक्रवात है, जो 30 अंश उत्तरी और दक्षिणी अक्षांश के आसपास, सागरीय क्षेत्रों में वर्ष भर विद्यमान रहते हैं। अपने स्रोत क्षेत्रों में ये हवाएं निम्नांकित गुणों से विशेषित होती हैं :—

(1) उष्ण सागरों पर जनित होने के कारण उच्च तापमान तथा उच्च आर्द्रता। उच्च तापमान पर वायु राशि की आर्द्रता ग्राह्य शक्ति भी बढ़ जाती है।

(2) सामान्यतः स्थायी तहें—

इन हवाओं का प्रमुख स्रोत क्षेत्र, महासागरों के दक्षिणी भाग हैं। किन्तु सर्दियों में साइबेरियन प्रतिचक्रवात के कारण *m*T वायु राशियां एशिया को बहुत कम प्रभावित कर पाती हैं। वाताग्र प्रक्रियाओं के समय *m*T हवाएँ पूर्वी यूरोप के उच्चतर वायु-मण्डल में गहराई तक व्याप्त रहती है।
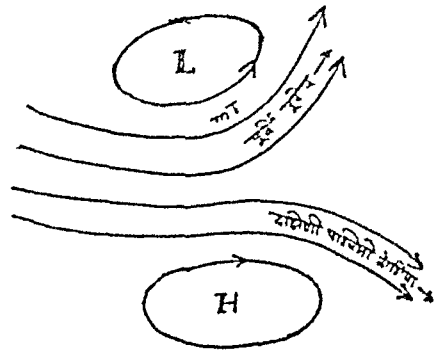
चित्र (8 4)

*m*T वायु राशि यूरोप के निम्न दाब तथा दक्षिणी अक्षांशों के उच्च दाब प्रवाह के आधीन दक्षिणी-पश्चिमी एशिया में प्रवेश करती है। ये आर्द्र तथा उष्ण हवाएँ टर्की और उसमें कुछ पूर्व तक प्रभावशील रहती है। वाताग्र अवदाबों के प्रवाह में परिवर्तित *m*T हवाएं, कभी-कभी फारस की खाड़ी से होकर भारतीय उपमहाद्वीप तथा शेष दक्षिणी एशिया पर आ जाती हैं।

इन्डोनेशिया तथा आस-पास के क्षेत्रों और सागरीय द्वीपों में वे *m*T हवाएँ बहती है, जो *c*P हवाओं के परिवर्तित होने से जनित होती हैं। इन हवाओं में अस्थायित्व का गुण विशेष प्रखर होता है। संवाहनिक रूप से अस्थायी हवाये, दक्षिणी-पश्चिमी प्रशान्त महासागर पर उत्पन्न होती है। यहां तापमान और आर्द्रता अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। ये हवाएँ थलीय भागों पर साधारणतः नहीं पहुँच पाती हैं, क्योंकि शीतोष्ण कटिबन्धीय साइक्लोन सामान्यतः दक्षिणी-पश्चिमी प्रशान्त महासागर से ही होकर उत्तर-पूर्व की ओर गति करते रहते हैं।

8.37 mT वायु राशि-गर्मियों में

*m*T और परिवर्तित *m*T वायु राशियां, ग्रीष्म में भारतीय उपमहाद्वीप तथा पूर्वी एशिया में प्रमुख होती है, जो चक्रवार्ती प्रवाह से नियन्त्रित होने के कारण अस्थायी होती हैं। अस्थायित्व का गुण थलीय भागों पर ऊष्मन के कारण और तीव्र हो उठता है। फलस्वरूप, थल भागों पर प्रवाहित होने वाली वायु राशि, *mTku* प्रकृति की होती है। उच्चतर स्तरों पर भी अवतलन की अनुपस्थिति के कारण, आर्द्रता पर्याप्त ऊँचाई तक उठ जाती है। उदाहरण के लिए, आगरा में 3 किमी

की ऊँचाई पर भी औसत आर्द्रता लगभग 80% पाई जाती है। इन वायु राशियो के लगातार प्रवाह से एशियाई पठार के पवनाभिमुखी भागो में, भारी सवाहनिक वर्षा होती है। ये हवाएँ दक्षिणी एशिया मे ग्रीष्म मानसून के नाम से विख्यात हैं।

पूर्वी इन्डोनेशिया तथा न्यूगिनी और आसपास के क्षेत्रो मे, दक्षिणी-पूर्वी व्यापारी हवाओ मे अवतलन के कारण, स्थायी तहो वाली *m*T वायु राशि मिलती है। किन्तु और उत्तरी अक्षांशो में फिलीपाइन के पास, *m*T वायु राशियाँ डोलड्रम निम्नदाव मे अभिसरण के कारण अतिशय अस्थायी हो उठती है, जिसके कारण इन क्षेत्रो मे स्थायी *m*T वाले क्षेत्रो की अपेक्षा बहुत वर्षा प्राप्त होती है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया के सागरीय द्वीपो मे वर्षा की इतनी तीव्र असमानता का यही कारण है।

8.40 भारत की वायु राशियां

भारत मानसून हवाओ की भूमि है और मुख्य रूप से यहा दो प्रकार की वायु राशियां बहती है —(1) **शुष्क और ठंडी वायु राशि,** जो उत्तरी-पूर्वी मानसून के रूप मे सर्दियो (दिसम्बर-फरवरी) मे बहती है, (2) **नम और उष्ण वायु राशि**— जो दक्षिणी-पश्चिमी मानसून या ग्रीष्म मानसून धाराओ के रूप मे गर्मियो (जून-सितम्बर) मे बहती है।

किन्तु सूक्ष्म रूप से अध्ययन करने पर, निम्नाकित वायु राशिया विभिन्न ऋतुओ मे स्पष्टत पाई जाती हैं —

शीत ऋतु (दिसम्बर-फरवरी)

(i) **परिवर्तित cP या शीतोष्ण महाद्वीपीय वायु**—यह उत्तरी तथा मध्य भारत की सामान्य शीतकालीन वायु राशि है, जो मध्य एशिया के प्रतिचक्रवाती प्रवाह के अधीन, उत्तर-पूर्व से भारत मे प्रवेश करती है। राजस्थान तथा पश्चिम-भारत पर वायु-प्रवाह स्थानीय प्रतिचक्रवात मे स्वत जनित होती है किन्तु ये वायु-राशियां वही विशेषताएँ रखती है, जो उपऊष्ण कटिबन्धी प्रतिचक्रवाती मूल की वायु राशियो मे पाई जाती है।

इन हवाओ से तापमान और निरपेक्ष आर्द्रता, प्रभावित क्षेत्रों मे बहुत गिर जाती है। वैसे, कम तापमान के कारण सापेक्ष आर्द्रता काफी अधिक पाई जाती है। आसमान साधारणत साफ होता है। कभी-कभी पक्षाभ मेघ उत्पन्न हो जाते है। प्रभात वेला मे धरातलीय व्युत्क्रमण और आर्द्रता वाले क्षेत्रो मे कुहरा या कुहासा सामान्य रूप से देखा जाता है। उत्तर-पश्चिम भारत मे दैनिक तापमान परिसर इन दिनो, लगभग 15–16°C होता है। वायुगति धीमी या मृदु होती है।

(ii) **वास्तविक cP**—ये हवाएँ कभी-कभी सक्रिय पश्चिमी विक्षोभों के पीछे बहती हुई, उत्तरी भारत पर आया करती है। इन हवाओ के साथ शीत-तरग बहने लगती है और रात्रि-तापमान सामान्य से, कम से कम 6°C नीचे गिर जाता है। वायुगति तेज हो जाती है तथा विक्षोभ-मिश्रण के कारण धरातलीय व्युत्क्रमण तथा

कुहरे लगभग नही उत्पन्न हो पाते। ठडी हवा परिवर्तित cP से अधिक शुष्क होती है और लगभग 5 किमी ऊँचाई तक व्याप्त हो जाती है। ये हवाएँ एक दौर मे 3 से 6 दिन तक प्रवाहित होती रहती है।

(iii) cT—भारतीय प्राय द्वीप के उत्तरी भाग पर सर्दियो मे वहने वाली हवा, पूर्णत: थलीय मूरा की उष्ण कटिवन्धी वायु राशि है, जो ऊष्ण कटिवन्धीय उच्चदाब क्षेत्र मे लम्बी अवधि तक रुद्ध रहने के फलस्वरूप उत्पन्न होती है।

ये अपेक्षाकृत उष्ण वायु राशियाँ है, जिनमे रात्रि तापमान काफी कम पाया जाता है। फलत दैनिक तापमान परिसर 20°C के आस-पास पाया जाता है। पश्चिमी विक्षोभो के प्रवाह मे cT हवाएं उत्तरी भारत मे भी फैल जाती है। इन हवाओ मे आर्द्रता परिवर्तित cP से कुछ अधिक पाई जाती है। अत. स्थायित्व का गुण कम हो जाता है। व्युत्क्रमण तह धरातल पर न होकर कुछ ऊपर उठ जाती है। वहुधा उच्च या मध्यम मेघ, आशिक रूप से आकाश पर छाये होते है किन्तु रात्रि मे आकाश स्वच्छ हो जाता है। हवा धीमी वहती है किन्तु दोपहर के वाद निर्वात के झोके प्राय: आ जाते हैं।

(iii) cT – mT—जो cT हवाएँ वगाल की खाडी से होकर मद्रास तथा आसपास के दक्षिणी तट पर पहुँचती है, वे cT – mT के रूप मे परिवर्तित हो जाती हैं। इन हवाओ मे तापमान तो मृदु रहता है पर अधिक आर्द्रता के कारण ऊमस पाई जाती है। प्रभातीय व्युत्क्रमण तह प्राय. अनुपस्थित होती है। 2 किमी के नीचे की वायु तह साधारणत. सवाहनिक रूप से अस्थायी होती हैं। अत: कपासी तथा कपासी वर्षी मेघ तथा सम्वन्धित गर्जन वौछार, स्क्वाल आदि की घटनाएं उत्पन्न होती हैं—विशेषत दोपहर के वाद या शाम को।

(v) mT—वगाल की खाडी के दक्षिणी भाग मे mT वायु राशि उत्पन्न होती है। ऐसी ही वायु राशिया चीन सागर मे उत्पन्न होती हैं। जव उत्तरी-पूर्वी मानसून सक्रिय होता है, या जव निम्नदाव तरगे पूर्व से पश्चिम की ओर दक्षिणी खाडी मे चलती है, तो mT हवाएँ दक्षिणी प्राय द्वीप पर वहने लगती है।

इन वायु राशियो के प्रभाव मे आसमान प्राय कपासी या स्तरी कपासी मेघो से घिरा रहता है। फलत रात्रि तापमान विशेष रूप से वढ जाता है। 3 किमी या कभी-कभी अधिक ऊंचाई तक भी सवाहनिक आरोही धाराएँ प्रचलित रहती है, जिससे पर्याप्त वर्षा प्राप्त होती है।

पूर्व मानसून काल (मार्च-मई)

(i) परिवर्तित cP या शीतोष्ण महाद्वीपीय वायु राशि—उत्तरी भारत मे कभी-कभी शीत वाताग्र के पीछे ये हवाएँ कुछ दिनो के लिए वहने लगती है, जिससे तापमान काफी गिर जाता है और दैनिक तापमान परिसर वहुत अधिक हो जाता है। स्वच्छ आकाश और मृदु हवाएँ इस वायु-राशि की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

(ii) cT—इस काल के लिए, ये बंगाल और आसाम को छोड़कर शेष उत्तरी और मध्य भारत पर बहने वाली मुख्य वायु राशियां हैं, जिनके स्रोत क्षेत्र दक्षिणी-पश्चिमी एशिया के तप्त-भूभाग हैं। यह भारत की सर्वाधिक उष्ण वायु राशि है, जिसका औसत उच्चतम तापमान मई में उत्तरी-पश्चिमी भारत पर 45°C तथा बिहार, उड़ीसा और मध्य भारत में 40°C से अधिक होता है। रात्रि का तापमान उत्तरी-पश्चिमी भारत में कम होने से, यहाँ सर्वाधिक दैनिक तापमान परिसर पाया जाता है। हवा बहुत ही शुष्क होती है किन्तु दोपहर को ह्रास दर बहुत प्रखर होने से शुष्क वायु धाराएँ उठा करती हैं। प्रायः दोपहर के बाद स्वच्छ मौसम-कपासी मेघ उत्पन्न हो जाया करते हैं। तीव्र दाब प्रवणता के कारण, कभी-कभी धूल भरी आंधियाँ और लू चलती हैं।

(iii) cT–mT—बंगाल, आसाम, दक्षिणी प्रायद्वीप, उत्तरी बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागर पर, शुष्क cT हवाएँ निम्न दाब प्रवाहों द्वारा सागरतल के ऊपर से होकर पहुँचती हैं, अतः परिवर्तित होकर $cT–mT$ बन जाती हैं। ये हवाएँ निचली तहों में mT तथा ऊपरी तहों में cT वायु राशियों की विशेषताएँ रखती हैं। ग्रहण की गई आर्द्रता की मात्रा और उसका ऊर्ध्व बंटन इस बात पर निर्भर करता है कि मौलिक cT हवाएँ समुद्र तल पर कितनी लम्बी और किस गति से यात्रा करती हैं। उत्तरी-पश्चिमी भारत के अधिक विकसित ताप निम्नदाब (heat low) के प्रभाव में $cT–mT$ हवाएँ, कभी-कभी मध्य और उत्तरी भारत में भी खिंच आती हैं।

इनमें उच्चतम तापमान घट जाता है तथा रात्रि-तापमान cT की अपेक्षा, 1–2°C अधिक होता है। निम्न तहों में विक्षोभ-प्रवाह और अस्थायित्व के कारण, साधारणतः स्वच्छ मौसम कपासी या स्तरी कपासी मेघ उत्पन्न होते हैं। पर्वतीय अनुकूलता में कपासी वर्षी तक बन सकता है, जिससे गर्जन-बौछार प्राप्त हो जाती है।

(iv) mT—ये हवाएँ मध्य और दक्षिणी बंगाल की खाड़ी में प्रतिचक्रवाती प्रवाह द्वारा उदित होती हैं और पश्चिम की ओर गति करते, निम्न दाब तरंगों के प्रभाव में कभी-कभी दक्षिणी प्रायद्वीप पर छा जाती हैं। स्वाभाविक रूप से अस्थायित्व के कारण, गर्जन मेघ और वर्षा की उत्पत्ति होती है। ये हवाएँ सामान्यतः शीतल और अधिक गहराई तक आर्द्र होती हैं।

(v) mE (विषुवत् रेखीय महासागरीय)—विषुवत् रेखीय अथवा दक्षिणी गोलार्द्धीय मूल की हवाएँ, मई के मध्य तक दक्षिणी और पूर्वी बंगाल की खाड़ी तक फैल जाती हैं। इनका उत्तर और पश्चिम की ओर स्थानान्तरण जारी रहता है। अवदाबों तथा चक्रवातों के सम्पर्क से ये एकाएक भारत की भूमि में प्रवेश कर जाती हैं और मानसूनिक प्रकार के मेघ तथा तूफानी मौसम उत्पन्न कर देती हैं। सागर के ऊपर ये केवल स्तरी और स्तरी कपासी मेघ तथा हल्की वर्षा उत्पन्न करती हैं।

(iv) परिवर्तित mE तथा cT—अक्टूबर मे आसाम, बंगाल, बर्मा तथा सलग्न सागरी क्षेत्रो से मानसून धाराएँ पूर्णत नही हट पाती । इन्ही दिनो ऊपरी वायु मण्डल मे cT हवाएँ भरने लगती है । फलत इन क्षेत्रो पर कुछ दिनो के लिए निचली तहो मे परिवर्तित mE तथा उच्चतर तहो मे cT वायु राशि सयुक्त रूप मे रहती है । मुख्यत स्वच्छ आकाश किन्तु दोपहर बाद कपासी मेघ, यदा कदा गर्जन बौछार तथा मृदु वायुगति, इन वायुराशियो द्वारा उत्पन्न मौसम की मुख्य विशेपताएँ है ।

(v) mE—नीचे की ओर हटती mE या मानसून हवाएँ, इस ऋतु मे दक्षिणी बगाल की खाडी तथा दक्षिणी पूर्वी अरब सागर के नीचे ही सीमित रहती है । इन क्षेत्रो मे जब चक्रवाती तूफान उत्पन्न होते है, तो ये mE हवाएँ बहुत सक्रिय हो उठती है और काफी उत्तरी अक्षाशो तक बढ कर, भारी वर्षा और तूफानी मौसम उत्पन्न करती है ।

8 50 वायु राशि का निर्धारण

वायु राशि के मौलिक गुण अपनी यात्रा के दौरान अनेक प्रभावो के अधीन परिवर्तित होते रहते है । अत किसी वायु-राशि की निश्चित पहचान के लिए, ऐसी विशेपताओ अथवा प्राचलो पर विचार करना चाहिए, जो वायु राशियो के परिवर्तन मे भी अपना मान स्थिर रख सके या बहुत-थोडी मात्रा मे ही परिवर्तित हो । ऐसी विशेपताएँ संरक्षी (conservative) विशेपताएँ कहलाती है, क्योकि इनमे स्थिर रहने की प्रवृत्ति होती है । इस दृष्टिकोण से कुछ विशेपताओ अथवा प्राचलो पर विचार करे ।

(1) धरातलीय वायु तापमान

यह बहुत परिवर्तनशील प्राचल है और अनेक कारणो से प्रभावित होता है । रुद्धोष्म प्रक्रियाओ की अनुत्क्रमता के कारण, यह सरक्षी नही है । अत यह वायु राशि का निर्धारण करने के लिए सामान्यत उपयुक्त प्राचल नही है ।

जब वायुगति बहुत धीमी हो और विक्षोभ-मिश्रण अनुपस्थित हो, तो धरातलीय तापमान, विशेपकर तटीय क्षेत्रो मे शाम के समय, किसी सीमा तक प्रतिनिधि प्राचल के रूप मे लिया जा सकता है ।

(2) क्षैतिज तापमान प्रवणता

अपने स्रोत-क्षेत्रो मे ही नही, बल्कि शीतल सतहो पर से गुजरते समय भी, वायु राशियो की यह विशेपता पाई जाती है कि उनमे क्षैतिज तापमान प्रवणता बहुत कम होती है । जब तापमान असातत्य (discontinuity) स्पष्ट न हो, तो क्षैतिज तापमान प्रवणता की असातत्य रेखा, सम और विषम वायु राशियो को अलग करने मे सहायक हो सकती है ।

(3) सापेक्ष आर्द्रता

यह तापमान, वाष्पीकरण तथा अवक्षेपण के अनुसार अत्यधिक परिवर्तनशील होती है, अत. वायु राशि निर्धारण के लिए सर्वथा अनुपयुक्त है ।

(4) विशिष्ट आर्द्रता और आर्द्रता मिश्रण अनुपात

ये अपेक्षाकृत अधिक स्थिर प्राचल है, और रुद्धोष्म या अरुद्धोष्म तापमान परिवर्तनो के प्रति सरक्षी है। ये वाष्पीकरण अथवा सघनन से परिवर्तित हो जाते है, अतः इनके प्रति सरक्षी नही है। किन्तु यह परिवर्तन सापेक्ष आर्द्रता की अपेक्षा बहुत धीमा होता है।

(5) ओसांक

जब तक वायुराशि से जलवाष्प की मात्रा मे परिवर्तन न किया जाय, यह स्थिर दाब पर तापमान परिवर्तन के लिए सरक्षी रहता है। शुष्क रुद्धोष्म परिवर्तनो के लिए भी यह अर्द्ध सरक्षी है। तापमान की अपेक्षा इसका दैनिक चलन भी [illegible] कम होता है। जब धरातलीय तापमान स्थानीय कारणो से अधिक प्रभावित [illegible] है, तो वायुराशि निर्धारण के लिए ओसांक एक उपयुक्त प्राचल है।

(6) विभव तापमान (θ), विभव आर्द्र बल्ब तापमान (θ_w) तथा तुल्यांक [illegible] तापमान (θ_e)

जब तक वायु असंतृप्त है, θ ऊर्ध्व वायु-गति के लिए [illegible] है लेकिन संतृप्त-अवस्था के बाद θ का मान, ह्रास दर मे परिवर्तन के कारण, [illegible] बदलता रहता है। इस दशा मे θ_w संरक्षी होता है। θ_w और θ_e [illegible] द्वारा वाष्पीकरण के लिए भी सरक्षी है। शुष्क तथा संतृप्त रुद्धोष्म [illegible] प्रति भी ये अर्द्ध सरक्षी प्राचल हैं।

(7) विभव छद्म तुल्यांक तापमान (θ_{se}) तथा विभव [illegible] तापमान (θ_{sw})

इन दोनों प्राचलों का मान टीफाई ग्राम द्वारा ज्ञात [illegible] शुष्क और संतृप्त रुद्धोष्म परिवर्तनों के लिए, तुलना से संरक्षी [illegible] गिरती वर्षा द्वारा होने वाले वाष्पीकरण के प्रति भी ये अर्द्ध [illegible] राशियों के निर्धारण के लिए θ_{se} और θ_{sw} सर्वोत्तम प्राचल [illegible]

8·60 वाताग्र (Front)

यत्न करेगी तथा ठंडी हवा पृष्ठ के नीचे से होकर गर्म हवा के नीचे आने की प्रवृत्ति रखती है। चित्र (8 5)

चित्र (8 5)
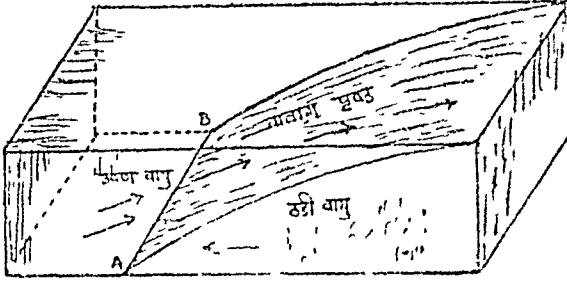
वाताग्र पृष्ठ और धरातल की प्रतिच्छेद रेखा (AB) वाताग्र कहलाती है। वातागो पर ही मौसम का सहसा परिवर्तन पाया जाता है। एक वाताग्र निम्नाकित विशेपताओ से युक्त होता है।

(1) तापमान, विभव तापमान या घनत्व की तीव्र क्षैतिज प्रवणता।

(2) हवा की सङ्गमी (Confluent) गति अर्थात् अभिसरित होती हवाएँ।

(3) दाव द्रोणिका वाताग्र पर समदाव रेखाओ मे असातत्य के कारण चक्रवाती किंक (Kink) आ जाता है।

(4) ओसाक या विभव आर्द्र बल्व तापमान मे तीक्ष्ण असातत्य।

(5) वायु दिशा मे असातत्य।

(6) मेघाच्छन्नता मे सहसा परिवर्तन।

8 61 अच्छी तरह विकसित वाताग्र तब बनते है, जब तापमान और आर्द्रता मे अत्यधिक विभिन्न वायुराशिया एक दूसरे की ओर अभिसरित हो। जब तापमान भिन्नता कम होती है या वायु गति इस प्रकार की हो कि वायु राशियो का अभिसरण अच्छी तरह न हो सके, तो वाताग्र बहुत कमजोर प्रकृति के बन पाते हैं।

वायुमण्डलीय प्रक्रम, जिसमे वाताग्र अथवा असातत्य पृष्ठ का निर्माण होता है **वाताग्र-उत्पत्ति** (frontogenesis) कहलाता है। इसके लिए निम्नांकित दो प्रतिबन्धो का होना अनिवार्य है —

(1) वाताग्र के दोनो तरफ की वायु राशियो मे तापमान का पर्याप्त विपर्यास। घनत्व के असातत्य से विभव तापमान का असातत्य स्वत. उत्पन्न हो जाएगा।

(2) अभिसरण युक्त वायु प्रवाह, जो वायु राशियो को एक दूसरे के सम्पर्क मे लाए।

वाताग्रो का ह्रास होने अथवा समाप्त हो जाने का प्रक्रम **वाताग्र-विनाश** (frontolysis) कहलाता है। वाताग्र-विनाश निम्नाकित दशाओ मे सामान्यतः होता है.—

(1) वायु-राशियो का कमजोर तापमान विपर्यास।

(2) अभिसरण को उत्साहित न करने वाला वायु प्रवाह।

8.62 वाताग्र व्यावहारिक रूप से एक तीक्ष्ण रेखा न होकर, साधारणत: 5 से 100 किमी चौड़ाई का एक तङ्ग क्षेत्र होता है। इस क्षेत्र मे मौसम तत्त्वो का परिवर्तन वायुराशियो की अपेक्षा अधिक तेजी से होता है। इस क्षेत्र के दोनो ओर विभिन्न तापमान और आर्द्रता की वायुराशियां पाई जाती है।
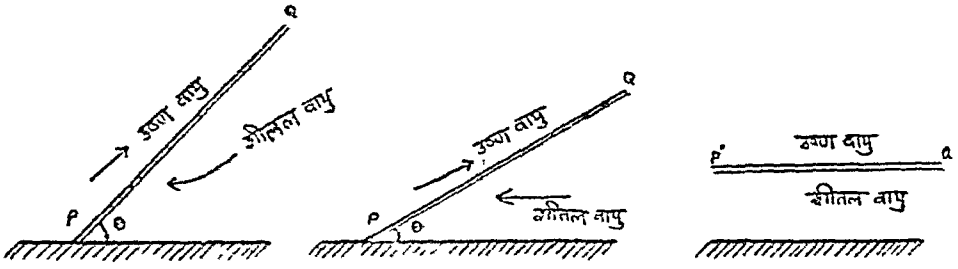
चित्र (8 6)

वाताग्र पृष्ठ पर उष्ण हवा ऊपर उठने की प्रवृत्ति रखती है तथा ठण्डी हवा मे नीचे से पृष्ठ को उठाकर गर्म हवा के नीचे प्रवेश करने की प्रवृत्ति होती है। इस दिशा मे ऐसा सोचना स्वाभाविक है कि इन प्रवाहो के कारण, वाताग्र पृष्ठ PQ सन्तुलित होने से पूर्व स्वतन्त्र वायुमण्डल मे क्षैतिज स्थिति P'Q' ग्रहण कर लेगा। किन्तु ऐसा होता नहीं। मुख्यत. कोरियालिस बल के कारण ढालवी अवस्था मे ही वाताग्र पृष्ठ सन्तुलित हो जाता है। यह पृष्ठ साधारणत: 15–40 किमी/घण्टा की दर से आगे बढ़ता रहता है। गति के दौरान पृष्ठ और अधिक भूमि की ओर झुकता जाता है।

8·63 वाताग्रों का भौगोलिक वंटन

वायुराशियो के स्रोत क्षेत्र और गति पर ही वाताग्र क्षेत्रो का विकास निर्भर करता है। अनुकूल समकालीन परिस्थितियो मे आकस्मिक रूप से किसी क्षेत्र-विशेष मे वाताग्र विकसित होकर तूफानी मौसम उत्पन्न करते हुए, एक निश्चित दिशा मे बढ़ते जाते है और अपना कुछ दिनो का जीवनचक्र पूरा कर स्वत: समाप्त हो जाते है। इनका विवरण आगे दिया जाएगा। इनके अतिरिक्त, धरातल पर कुछ स्थायिवत् वाताग्र क्षेत्र पाए जाते है। उत्तरी गोलार्द्ध के स्थायिवत् वाताग्र निम्नांकित हैं —

(1) अटलांटिक-ध्रुवीय वाताग्र

सर्दियो मे यह उत्तरी अमेरिका की ठण्डी महाद्वीपीय वायुराशि *m*P तथा संलग्न अटलांटिक महासागर की उष्ण वायु राशि *m*T के सम्मिलन से उत्पन्न होता है। यह वाताग्र क्षेत्र साधारणत अटलांटिक तट के समीप ही पाया जाता है, जो उत्तर मे दक्षिणी-पूर्वी कनाडा तक फैला हो सकता है। फ्रान्टोजेनिसिस के फलस्वरूप न्यूफाउन्डलैंड के दक्षिण मे विक्षोभ उत्पन्न होते है, जो पश्चिमी प्रवाह के अधीन पूर्व की ओर चलते हुए यूरोप को प्रभावित करते है।

गर्मियो मे वाताग्र क्षेत्र उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर कनाडा की दक्षिणी सीमा के सामानान्तर स्थापित हो जाता है और इसकी तीव्रता सर्दियो की अपेक्षा घट जाती है।

(2) अटलांटिक-आर्कटिक वाताग्र

सर्दियो मे यह वाताग्र, हिमाच्छदित आर्कटिक सतहो की अतिशीतल वायु राशि तथा उन अपेक्षाकृत उष्ण हवाओ (*m*P) के सम्मिलन से बनता है, जो यूरोप के उत्तरी या उत्तरी-पश्चिमी तट के पास अटलांटिक महासागर पर पाई जाती है। गर्मियो मे भी इसकी स्थिति लगभग वही रहती है किन्तु तीव्रता काफी घट जाती है। प्राय आर्कटिक वाताग्र गर्मियो मे दक्षिणी अक्षाशो—की ओर हट जाता है और साधारणत (62° उ, 30^0 प से 80^0 उ, 19^0 पू) तक की फैला होता है।

(3) भूमध्य सागरीय वाताग्र

यह यूरोप की महाद्वीपीय शीतल वायु राशि तथा अफ्रीकी मूल की भूमध्य सागर पर स्थित उष्ण वायु राशि की सीमा है। तापमान वटन की अनुकूल परिस्थितियो मे, यह वाताग्र अधिक तीव्र हो उठता है। इससे उत्पन्न विक्षोभ प्राय. पूर्व की ओर अग्रसर होते है। कुछ विक्षोभ, जो थोडा दक्षिणी मार्ग अपनाते है, भारत मे भी पहुचते है। उत्तरी भारत का सर्दियो की वर्षा मुख्यत इन्ही विक्षोभो के कारण होती है। भारत मे इन्हे **पश्चिमी-विक्षोभ** कहा जाता है।

भूमध्य सागरीय क्षेत्रो मे, सर्दियो की पर्याप्त वर्षा के लिए यही वाताग्र उत्तरदायी है। गर्मियो मे वाताग्र लगभग समाप्त हो-जाता है, फलत. यहाँ ग्रीष्मकाल सूखा रह जाता है।

(4) प्रशांत-ध्रुवीय वाताग्र

सर्दियो मे प्रशान्त महासागर के ऊपर, उप उष्ण कटिबन्धीय प्रति चक्रवात प्राय दो कोशिकाओ मे टूट जाता है तथा उनके बीच कॉल (Col) क्षेत्र बन जाता है। इस क्षेत्र मे फ्रान्टोजेनिसिस के फलस्वरूप, एशियाई तट के पास वाताग्र विकसित होता है, जिसके एक ओर एशिया की शीतल महाद्वीपीय हवा तथा दूसरी ओर उत्तरी प्रशान्त की उप उष्ण कटिबन्धी वायु राशि *m*T पाई जाती है। यह वाताग्र दक्षिणी-पूर्वी एशिया तट के पास बहुत कम पाया जाता है।

गर्मियो मे दक्षिणी-पूर्वी एशिया के मानसून प्रभाव के कारण प्रशान्त ध्रुवीय वाताग्र उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर साइबेरिया के पूर्वी पट पर स्थापित हो जाता है।

(5) अन्तर्उष्णकटिबन्धी अभिसरण क्षेत्र

यह मुख्यत डोलड्रम पेटिका की मध्य स्थिति है, जो दोनो गोलार्द्धो की व्यापारी हवाओ की सीमा बनाती है। यह सीमा साधारणत विसरित (diffused) होती है और अभिसरण क्षेत्र संकीर्ण बैंड मे केन्द्रित न होकर, पर्याप्त चौडाई मे फैल जाता यही कारण है कि यह वाताग्र क्षेत्र की परिभाषा को पूर्णत सार्थक नही करता।

इसके अलावा, दोनों व्यापारी हवाओं की ऊर्ध्व संरचना में इतना अन्तर नहीं पाया जाता कि उन्हें वास्तविक रूप से विभिन्न वायुराशियों की संज्ञा दी जा सके। यही कारण है कि इस क्षेत्र को अन्तरउष्ण कटिबन्धीय वाताग्र की अपेक्षा अन्तरउष्णकटिबन्धी अभिसरण क्षेत्र (Inter Tropical Convergence Zone या I. T. C. Z.) के नाम से जानना अधिक उपयुक्त है।

सर्दियों में यह क्षेत्र पूर्णतः विषुवत् रेखा के दक्षिण में, दक्षिणी सुमात्रा और कोरल सागर (उत्तरी आस्ट्रेलिया) को स्पर्श करता हुआ स्थित रहता है। किन्तु गर्मियों में अभिसरण क्षेत्र उत्तरी गोलार्द्ध में पर्याप्त दूरी तक स्थानान्तरित हो जाता है, जहाँ इसकी मध्य स्थिति उत्तरी भारत, दक्षिणी चीन, तथा फिलीपाइन द्वीप समूहों से होकर गुजरती है।

जनवरी

चित्र ([illegible])
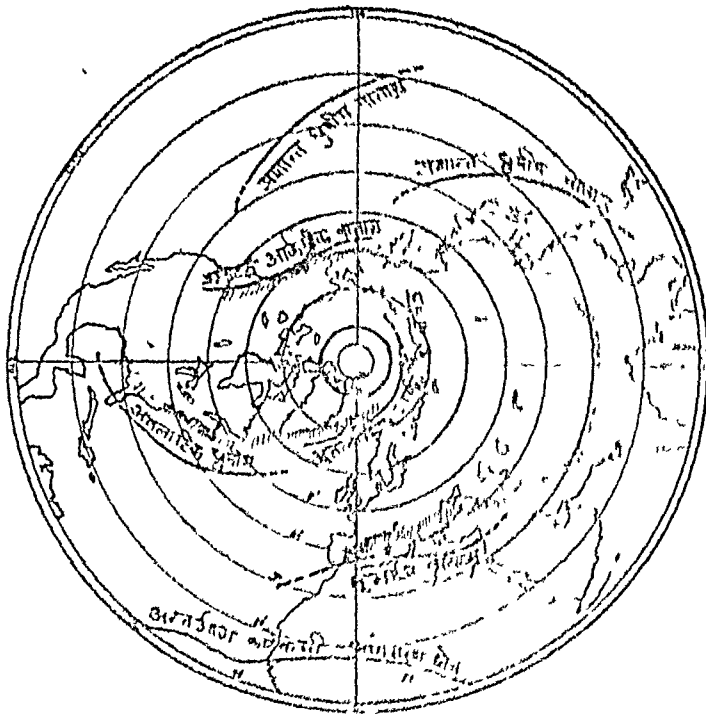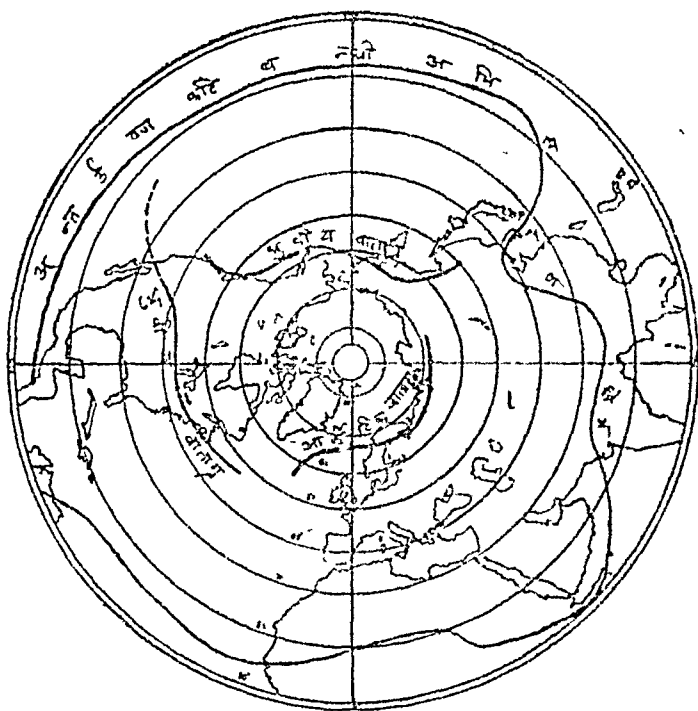
वाताग्रों का भौगोलिक आवरण

जुलाई
चित्र (४४)

वाताग्रो का भौगोलिक आवटन

8 64 वाताग्रों के गुण

(1) वाताग्र ठण्डी और गर्म वायु राशि के बीच तीक्ष्ण सक्रमण की एक पतली तह होती है, जो सामान्यत दोनो हवाग्रो के मिश्रण से बनती है। एक विक्रमित वाताग्र पृष्ठ मे तापमान की उर्ध्वाधर सरचना चित्र (8 9) की तरह होगी। कमजोर वाताग्रो मे तापमान विपर्यास अपेक्षाकृत कम होता है।
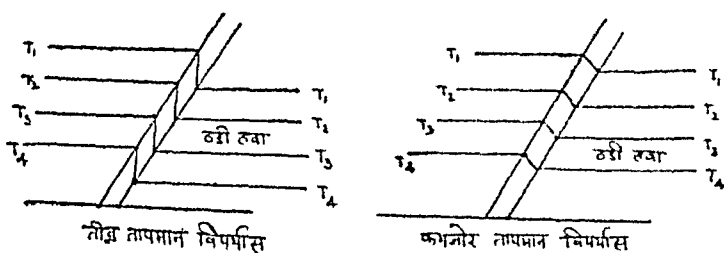
चित्र (४९)

एना-वाताग्र कहलाते है। जब उष्ण हवा, ठंडी वायु राशि की अपेक्षा अवरोह करती पाई जाती है, तो बहुत कमजोर वाताग्र बन पाते हैं। इन्हे केटा-वाताग्र कहते हैं।

8 71 विभिन्न गुणो के अनुसार, वाताग्र निम्नाकित प्रकारो मे बाँटे जा सकते है .

(1) ऊष्ण वाताग्र (Warm front)—यह वह वाताग्र है, जिसमे उष्ण वायु, शीतल वायु को विस्थापित करती है। फलस्वरूप, उष्ण वायु ऊपर उठती है, जो मेघ और वर्षा उत्पन्न कर सकती है। उष्ण वायु के वाताग्र पृष्ठ पर चढने के कारण, स्तरी प्रकार के मेघ ही सामान्यत बनते है, जो कई तहो मे स्थित होते है। उष्ण वाताग्र से सम्बन्धित मेघो मे पक्षाभ, स्तरीपक्षाभ, मध्य स्तरी तथा कपासी बहुत सामान्य है। जब उष्ण वायु अस्थाई होती है तो कपासी और यदा कदा कपासी वर्षी भी उत्पन्न हो सकते है।

उष्ण वाताग्र का झुकाव सामान्यत. 1 100 से 1 400 के बीच पाया जाता है। वाताग्र विक्षोभो की पश्चिम से पूर्व की ओर गति और वाताग्रो के समायोजन के कारणो से, किसी स्थान पर उष्ण वाताग्र पहले पहुचता है। अत: इससे सबन्धित मौसम, जैसे हल्की वर्षा या फुहार तथा कुहरे की घटनाएँ किसी स्थान को पहले प्रभावित करती है। उष्ण वाताग्र की वर्षा के कारण उत्पन्न नमी, वाताग्र पृष्ठ के नीचे शीतल वायु राशि मे सघनित होकर कुहरा बन जाती है।

उष्ण वाताग्र मे उत्पन्न मौसम की घटनाएँ, उष्ण वायु राशि की प्रकृति पर विशेष निर्भर करती है। यदि यह वायु राशि शुष्क और स्थायी है, तो कम मेघ बन पाएँगे और वर्षा की सम्भावना बहुत क्षीण रहेगी। किन्तु वायु राशि यदि आर्द्र तथा प्रतिबन्धी या सवाहनिक रूप से अस्थाई है, तो तडित-झझा और बौछार की घटनाएँ भी सभव है।

उष्ण वाताग्र जब किसी स्थान से गुजरता है, तो वहाँ निम्नाकित प्रेक्षण स्पष्ट रूप से पाए जाते है : (1) हवा का लगभग 45^0 तक दक्षिणावर्तन (Veering) (2) तापमान और ओसाक की वृद्धि (3) वाताग्र से पहले दाब का घटना तथा वाताग्र के गुजरने के बाद दाब की धीमी वृद्धि (4) मौसम का साफ होना।

(2) शीतल वाताग्र (Cold front)

इसमे ठडी वायु राशि, उष्ण वायु को विस्थापित करती जाती है, जिससे उष्ण वायु, नीचे से ठडी हवा के ट्रिगर द्वारा ऊपर उठने को बाध्य होती है। सामान्यत. शीतल-वाताग्र पृष्ठो का झुकाव 1 40 से 1.100 तक पाया जाता है, जो उष्ण वाताग्र के झुकाव-कोण की अपेक्षा बहुत अधिक होता है। इसका कारण यह है कि धरातलीय घर्षण भूमि पर चलती हुई शीतल वायु राशि को पीछे की तरफ खीचता है। अत. वाताग्र पृष्ठ पर नीचे से एक खिचाव बल F पीछे की ओर लगता है, जिससे पृष्ठ का झुकाव-कोण अधिक पाया जाता है।

यदि उष्ण वायु, प्रतिबन्धी या सवहनिक रूप से अस्थायी हो, तो वह तीव्रता से ऊपर की ओर अग्रसर होती है और बहुधा कपासी या गर्जन मेघ जनित करती है।

फलत शीत वाताग्र ने सम्बन्धित मौसम घटनाएँ साधारणत अधिक प्रचण्ड होती हैं—जैसे भारी वर्षा, स्वाल, ओने तथा भारी हिमपात। वर्षा का प्रभाव क्षेत्र लगभग 100 किमी आगे तक फैला होता है।

शीत वाताग्र का ऊर्ध्व झुकाव गति की दिशा से विपरीत होता है। अतः इसके पहुचने पर ही मौसम और मेघो का जनन एकाएक हो पाता है। शीत वाताग्र पहुचने से पूर्व किसी मेघ विशेष का चिन्ह साधारणत नही मिलता। इस वाताग्र की गति, उष्ण वाताग्र की अपेक्षा अधिक पायी जाती है। यही कारण है कि शीत वाताग्र गुजरने के बाद प्राय मौसम शीघ्र साफ हो जाता है जब तक कि वाताग्र किसी कारण विशेष से मंदित न हो जाय। इसका एक कारण यह भी है कि शीत-वाताग्र के पीछे अवतलन प्रवाह मुख्य होता है जो आकाश स्वच्छ करने मे सहायता देता है।

कपासी और कपासी वर्षी शीत वाताग्र से सम्बन्धित मुख्य मेघ हैं, किन्तु स्तरी तथा मध्य स्तरी मेघ भी प्रचुर मात्रा मे बनते है। शीत वाताग्र के गुजरते समय किसी स्थान पर निम्नांकित प्रभाव स्पष्ट प्रेक्षित किया जा सकता है।

(1) 45 से 180° तक धरातलीय हवा का दक्षिणावर्तन (2) वाताग्र पहुचने से पहले हवा का वामावर्तन (Backing) (3) तापमान और औसाक का अचानक ह्रास (4) वाताग्र के आगे दाब ह्रास किन्तु वाताग्र गुजरने के बाद दाब मे तेज वृद्धि (5) वाताग्र गुजरने के बाद मौसम का तेजी से साफ होना।

चित्र (8.12)
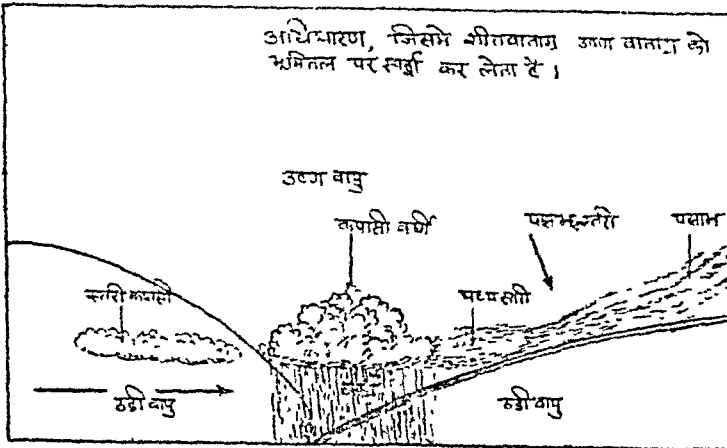
(3) **अधिविष्ट वाताग्र (Occluded front)**

सामान्यत. किसी विक्षोभ मे शीत वाताग, उष्ण वाताग्र की अपेक्षा तेजी मे गति करता है। अत: यह शनै. शनै: आगे बढकर उष्ण वाताग्र को पकड़ लेता है। इस स्थिति मे शीत और उष्ण वाताग्र के बीच की उष्ण वायु राशि ऊपर की ओर विस्थापित हो जायेगी। इस प्रकार उष्ण वायु पूरी तरह ऊपर उठ जायेगी और धरातल पर शीत और उष्ण वाताग्रो के नीचे की ठण्डी हवाएँ एक दूसरे के सम्पर्क मे आजायेंगी। यह स्थिति अधिधारण कहलाती है। चित्र (8.12)

जब आगे बढती हुई ठण्डी हवा, उष्ण वाताग्र, पृष्ठ के नीचे की ठण्डी हवा की अपेक्षा गर्म होती है, तो उष्ण वाताग्र के उठ जाने के बाद, उष्ण वाताग्र प्रकार का अधिधारण बनता है। चित्र (8 13)
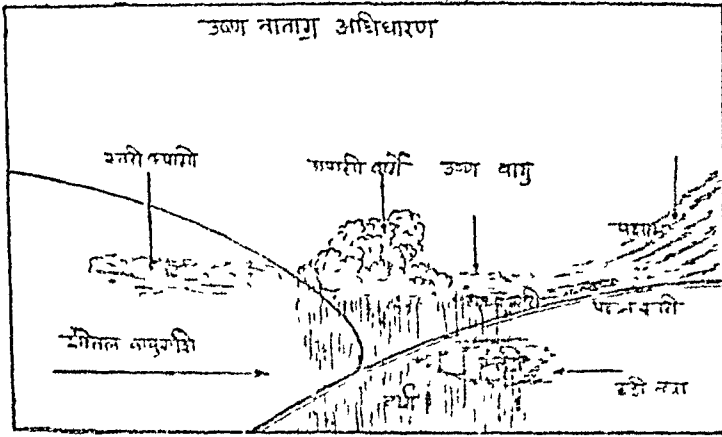
चित्र (8.13)

इस स्थिति मे उष्ण वाताग्र पृष्ठ के नीचे की अधिक ठण्डी हवा, उष्ण वायु को ऊपर उठा देती है और यह उष्ण वायु उष्ण, वाताग्र पृष्ठ पर ऊपर की ओर, शनै शनै बहने लगती है। इस अविधारण मे उष्ण वाताग्र के प्रकार का ही मौसम उत्पन्न होता है। किन्तु ऊपर शीत वाताग्र से बौछार और गर्जन मेघ की घटनाएँ सम्बन्धित होती है।

जब शीत वाताग्र पृष्ठ के नीचे की ठण्डी हवा, उष्ण वाताग पृष्ठ के नीचे की हवा से अधिक शीतल होती है, तो उष्ण वाताग के उठ जाने के बाद, शीत वाताग्र प्रकार का अधिविष्ट वाताग्र बनता है, जिसकी मुख्य रूप से मौसम सम्बन्धी वही विशेषताएँ है, जो एक उष्ण वाताग्र मे पाई जाती है। चित्र (8.14)
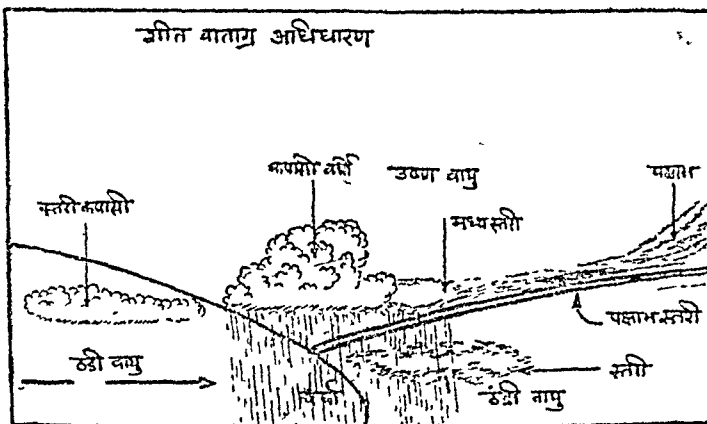
चित्र (8.14)

8·72 एक वाताग्र विक्षोभ में, जिसे इतर उष्ण कटिबन्धी (extratropical) साइक्लोन भी कहते है, उष्ण और शीत वाताग्र आवश्यक रूप से पाये जाते है। ये साइक्लोन मध्य और उच्च अक्षांशों मे वाताग्र सक्रियता के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं। साइक्लोन की अधिक विकसित अवस्था मे अविधारण उत्पन्न हो जाता है।
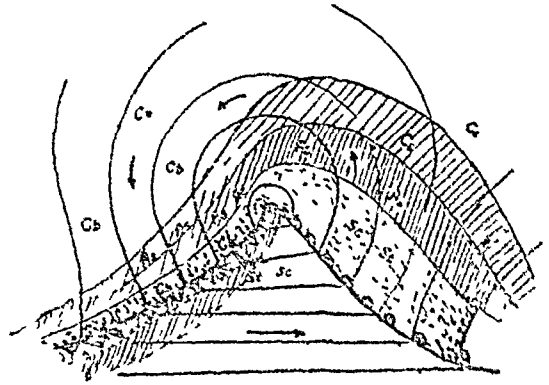
चित्र (8 15)

धरातलीय मौसम चार्ट पर एक पूर्ण विकसित वाताग्र विक्षोभ के संरचना चित्र (8 15) की भांति प्रदर्शित होता है। उष्ण और शीत वाताग्र के बीच, उष्ण वायु का त्रिभुजाकार भाग उष्ण सेक्टर कहलाता है। पश्चिम से पूर्व गति के दौरान किसी स्टेशन पर पहले उष्ण वाताग्र प्रभावित करता है। फिर उष्ण सेक्टर आता है, जो तापमान एकाएक अधिक कर देता है। अन्त मे शीत वाताग्र स्टेशन पर पहुँचता है। गुजरने के बाद मौसम प्राय शीघ्र साफ हो जाता है। वाताग्रों से संबंधित और मेघ की घटनाएँ चित्र (8·15) मे अंकित की गई है।
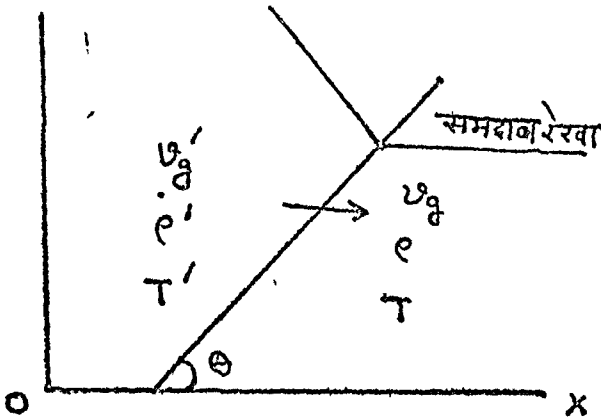
चित्र (8·16)

8·73 वाताग्र पृष्ठों के झुकाव कोण : मारगुली सूत्र

Θ के मान की गणितीय गणना के लिए मारगुली का निम्नांकित सूत्र प्रयुक्त किया जा सकता है। यह सूत्र चित्र (8·16) द्वारा व्युत्पन्न (derive) किया जा सकता है, जिसमे Y–अक्ष वाताग्र के समान्तर और Z–अक्ष तल वाताग्र पृष्ठ के लम्बवत् लिया गया है।

$$\tan \Theta = \frac{f(\rho vg - \rho' v' g)}{g\,(\rho - \rho')}$$

जहाँ ρ और ρ' तथा vg और v'g वाताग्र A के दोनो ओर, किनारे के बहुत पास धरातलीय घनत्व और भूव्यावर्ती हवाओ के मान हैं। g गुरुत्व जनित त्वरण तथा f कोरियालिस प्राचल है।

तापमान के पदो मे,

$$\tan \Theta = \frac{f(vgT' - vg'T)}{T' - T}$$

8 80 वाताग्र विक्षोभ–इतर उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन (Extra tropic cyclone)

वाताग्र विक्षोभ द्रोणिका, निम्नदाव तथा अवदाब (depression) के रूप मे पश्चिम से पूर्व की ओर गति करते हुए मध्य अक्षाशो की जलवायु पर प्रमुख रूप से प्रभावकारी रहते है, जहाँ इन्हे इतर उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन या साइक्लोन के नाम से जाना जाता है। साइक्लोन अच्छी तरह विकसित वाताग्रो के क्षेत्र मे जन्म लेते है। मध्य अक्षाशो मे ध्रुवीय तथा उष्ण कटिबन्धी वायु राशियो के सम्मिलन मे यहाँ वाताग्रो के बनने की सुविधा अधिक पाई जाती है।

यह विकसित साइक्लोन उष्ण वाताग, शीत वाताग्र तथा उष्ण सेक्टर से सुसज्जित होता है, जिसकी सरचना धरातलीय मौसम मानचित्र पर चित्र (8 15) द्वारा स्पष्ट की गई है। अधिक विकास की अवस्था मे अविधारण पाया जाता है। अविधारण की अवस्था मे उष्ण वाताग का चिन्ह धरातलीय मानचित्र पर नही मिलता।

सामान्य दशा मे गम्भीर निम्न दाव अथवा अवदाव के रूप मे विकसित साइक्लोन मे 9–10 किमी ऊँचाई तक, उच्चतर वायु मे चक्रवाती प्रवाह या द्रोणिका पाई जाती है। ऐसे साइक्लोन लगभग 1000 किमी व्यास के क्षेत्र पर अपना प्रभाव रखते है। उच्च क्षोभ मण्डल मे जेट धाराओ के प्रभाव मे, सभी साइक्लोन पूर्व की ओर गति करते हैं। गति की दर 20 से 40 किमी प्रति घण्टा तक पाई जाती है, जो सर्दियो मे गर्मियो से साधारणत. अधिक होती है।

8 81 साइक्लोन के विकास की अवस्थाएं

साइक्लोन का जीवन चक्र एक स्थिर वाताग्र से आरभ होता है, जिसके दोनो ओर क्रमश. गर्म और ठण्डी हवाएँ विद्यमान हो। यह दशा चित्र (8 17) स्थिति

चित्र (४.१७)
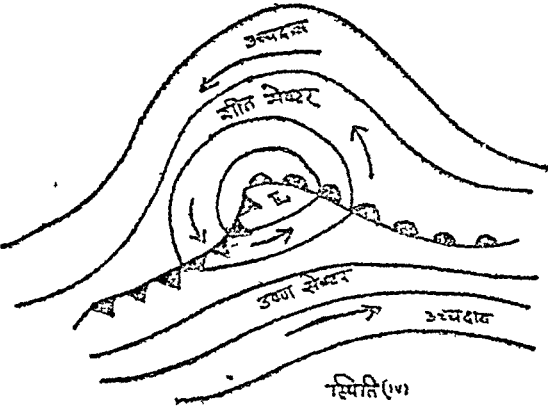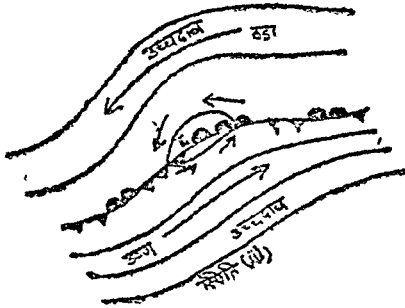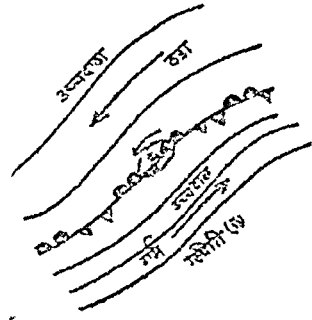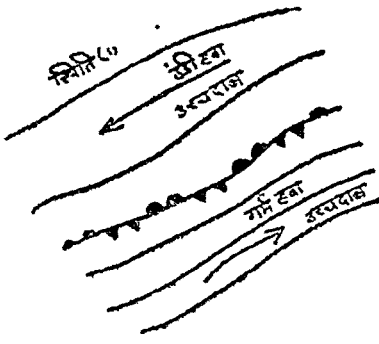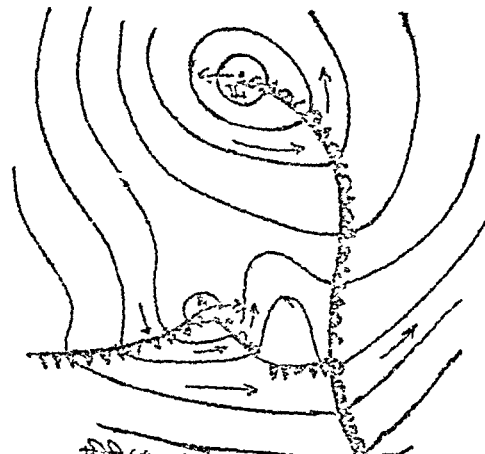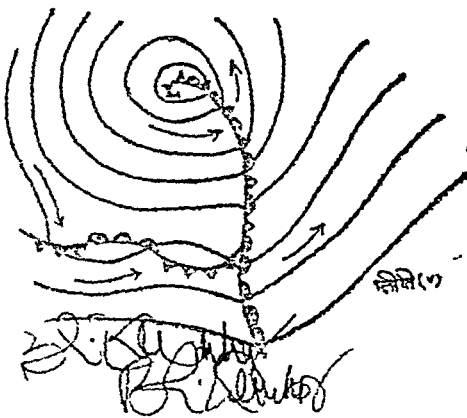
(i) में दिखाई गई है, जिसमें उष्ण हवा का प्रवाह पश्चिमी तथा शीतल हवा का प्रवाह पूर्वी है। वायु प्रवाह के समानान्तर होने के कारण वाताग्र AB स्थिर है। इस वाताग्र में आरोही धाराएँ अनुपस्थित होती हैं, अतः इनसे मेघ जनन की सम्भावनाएँ बहुत क्षीण हो जाती हैं। चूँकि ठण्डी हवा गर्म हवा के नीचे आने की प्रवृत्ति रखती है, अत वाताग्र पृष्ठ में एक झुकाव उत्पन्न हो जाता है। इस पृष्ठ के

दोनों ओर धरातलीय हवाएँ, एक दूसरे की विपरीत दिशा में प्रवाहित होती है, जिससे तीव्र वायु अपरूपण विकसित हो जाता है। पर्याप्त वायु अपरूपण के कारण जब यह सन्तुलन बिगड़ता है, तो वाताग्र पृष्ठ में एक तरंग उत्पन्न हो जाती है और पृथ्वी तल की उष्ण हवा, शीतल हवा में एक उभार बना देती है। इस दशा में वाताग्र AB चित्र की स्थिति (ii) का आकार ग्रहण कर लेता है, जिससे धरातलीय वाताग्र में एक उभार स्पष्ट हो जाता है।

यदि तरंग स्थायी है, तो यह और विकसित नहीं हो सकेगी और इसी अवस्था में गतिमान रहेगी। किन्तु यदि तरंग अस्थायी है, तो इसका आयाम और बढ़ेगा। स्थिति (iii) की अवस्था आते-आते साइक्लोन का माडल स्पष्ट होने लगता है, जिसमें उष्ण हवा शीतल वायु के ऊपर चढ़ने तथा शीतल वायु उष्ण हवा के नीचे प्रविष्ट होने की चेष्टा करने लगती है। इसके फलस्वरूप, उष्ण और शीतल वाताग्र अलग-अलग रूप धारण कर लेते है। शीर्ष पर निम्नदाब भी उत्पन्न हो जाता है। 600 किमी से छोटी तथा 3000 किमी से बड़ी तरंग दैर्घ्य की तरंगे सामान्यतः स्थायी और साइक्लोन मे विकसित नहीं होता। इन सीमाओं के बीच की तरंगे, पर्याप्त वायु अपरूपण अथवा अन्य विक्षोभों या पर्वतीय शृंखलाओं की उपस्थिति मे अस्थायी होती है तथा साइक्लोन मे विकसित होने की क्षमता रखती है। इन्हें साइक्लोन तरंगें कहते है।

साइक्लोन तरंगों का आयाम जब स्थिति (iii) से और अधिक विकसित होता है तो शीत वाताग्र को नीचे से उठाकर अधिविष्ट वाताग्र पैदा कर देता है। स्थिति (iv)। इस स्थिति मे उष्ण सेक्टर के शीर्ष पर समदाब रेखाएँ सिमटती जाती हैं और निम्नदाब गम्भीर होने लगता है और शनैः शनैः अवदाब का रूप ले लेता है।

अधिधारित अवदाब मे उष्ण हवा पूर्णतः ऊपर उठा ली जाती है। अधिधारण बढ़ते रहने से भूमितल की वाताग्र-संरचना विलीन हो जाती है और साइक्लोन उच्चतर वायु मण्डल मे चक्रवाती प्रवाह का रूप धारण कर लेते हैं। स्थिति (v) और (vi)।

8.82 एक अधिधारित इतर उष्ण कटिबन्धी अवदाब की संरचना तथा सम्बन्धित मौसम शृंखलाएँ चित्र (8.18) मे प्रदर्शित की गई है। स्थिति (i) धरातलीय मौसम चार्ट पर अवदाब का प्रदर्शन है। अपने पश्चिम से पूर्व की यात्रा के दौरान, इस प्रारूप का उष्ण वाताग्र सबसे पहले किसी स्टेशन पर पहुँचता है। स्टेशन पर पहुँचने के एक-दो दिन पहले से ही, पक्षाभ मेघ दिखाई देने लगते हैं। फिर Cs, As तथा Sc मेघ शृंखलाबद्ध रूप मे स्टेशन को प्रभावित करते है। फुहार और हल्की वर्षा की घटनाएँ तथा कुहरे उत्पन्न होने लगते है। यदा-कदा नमी और अस्थायित्व की अनुकूल परिस्थितियों मे यह वाताग्र, कपासी और कपासी वर्षी मेघ भी उत्पन्न कर सकता है। उष्ण वाताग्र गुजर जाने के बाद उष्ण सेक्टर आता है, जो तापमान बढ़ा देता है तथा मौसम कुछ समय के लिए साफ हो जाता है। फिर शीत वाताग्र का आगमन स्टेशन पर अचानक सा प्रतीत होता है,

क्योकि गति से विपरीत दिशा मे झुकाव के कारण, शीत वाताग्र पर जनित मेघ पहले नही पहुँच पाते। शीत वाताग्र सामान्य रूप से कपासी और तड़ित मेघ बनाता है, जिसमे सम्बन्धित भारी वर्षा, ग्वाल, ओले, हिमपात आदि घटनाएँ उत्पन्न होती हैं। शीत वाताग्र के गुजरने के बाद उसके पीछे की शीतल हवा, शीत तरगो के रूप मे स्टेशन पर से गुजरती है। तापमान गिरने से कुहरे की घटना भी बहुत सामान्य है।

स्थिति (i) अवदाब धरातलीय मानचित्र पर

चित्र (8 18)
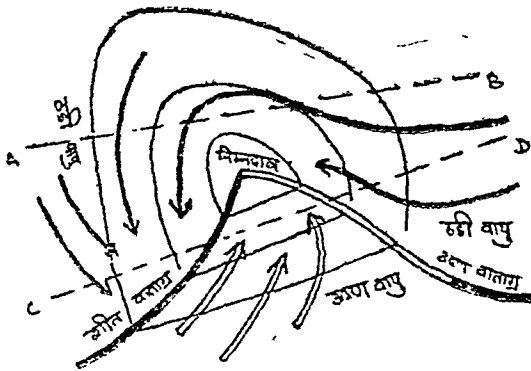
स्थिति (ii) अवदाब का वह ऊर्ध्व अनुच्छेद (Vertical cross section) प्रदर्शित करता है, जो निम्न दाब केन्द्र के उत्तर से लिया गया है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि अविधारण की स्थिति मे उष्ण हवा धरातल पर नही आती, किन्तु उच्चतर वायुमण्डल मे उठी होती है। चूंकि निम्नदाव केन्द्र के उत्तर से, उष्ण हवा उठाई गई है, अत. धरातलीय ठडी हवा की गति पूर्वी तथा ऊपरी उष्ण हवा की गति पश्चिमी होनी चाहिए।
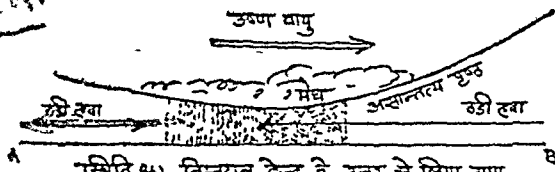
स्थिति (ii) निम्नदाब केन्द्र के उत्तर से लिया गया ऊर्ध्वाधर अनुच्छेद

चित्र (8 18)

स्थिति (iii) अवदाब का वह ऊर्ध्व अनुच्छेद है, जो निम्नदाव केन्द्र के दक्षिण से लिया गया है। शीतल वायु किस प्रकार ऊपर उठती है और उष्ण वायु मे किस प्रकार वेज (wedge) बनाती है, यह इस चित्र से स्पष्ट है।

स्थिति (iii) निम्नदाब के दक्षिण से लिया अर्धाधर अनुच्छेद

चित्र (६.१६)
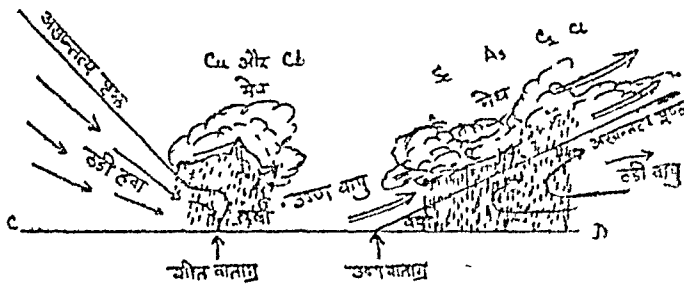
8 83 इतर उष्ण कटिबन्धी साइक्लोनो मे ऊर्जा का मुख्य स्रोत दोनो वायुराशियो मे तापमान का विपर्यास ही है। ऊपर उठती हवा द्वारा सघनित जल से निकली गुप्त उष्मा भी, विशेषकर जब अपनी यात्रा के दौरान उष्ण और आर्द्र महासागरीय हवाओ का आगमन होता हो, पर्याप्त ऊर्जा देती है।

8 84 अधिधारण प्रक्रम के अन्त मे जब प्रारम्भिक अवदाब लगभग विलीन होने लगता है, तो शीत वाताग्र का कुछ भाग पीछे छूट जाता है, जो पुन विक्षोभ उत्पन्न करने का आधार बन सकता है। नव प्रारम्भिक अवदाब के दक्षिण पश्चिम मे कभी-कभी अनुकूल परिस्थितियो मे द्वितीयक अवदाब बन जाते है, जो सरचना और प्रकृति मे प्रारम्भिक अवदाब के ही समान होते है, उसी दिशा मे अग्रसर होते है और वही जीवन चक्र अपनाते है। द्वितीयक अवदाब भी अनुकूल परिस्थितियो मे, दूसरे साइक्लोन को प्रेरित कर सकते है। इस प्रकार, एक विकसित अवदाब से एक पूरा साइक्लोन परिवार सम्बन्धित होता है, जिसमे प्रत्येक सदस्य अपने जनक से साधारणत क्षीणतर होता है।

भूमध्य सागर मे जनित प्रारम्भिक वाताग्र अवदाबो या निम्न दाबो द्वारा जनित किए गए साइक्लोन परिवार के ही कुछ सदस्य, जो अपेक्षाकृत दक्षिणी मार्ग पर अग्रसर होते है, नवम्बर से मई तक उत्तरी भारत तक पहुँचते है और सर्दियो की वर्षा उत्पन्न करते है। भारत मे इन्हे **पश्चिमी विक्षोभ (Western-disturbance)** कहा जाता है। जो विक्षोभ, प्रारम्भिक साइक्लोन के किन्ही सदस्यो द्वारा प्रेरित किए गए धरातलीय निम्नदाब के रूप में पहुचते हैं, उन्हे **प्रेरित निम्नदाब** induced low भी कहते है।

9

उष्ण कटिबन्धी विक्षोभ, चक्रवाती तूफान और प्रतिचक्रवात

(Tropical Disturbances, Revolving Storms and Anticyclones)

---

9 10 उष्ण कटिबन्धी विक्षोभ

सम्पूर्ण पृथ्वी की लगभग आधी सतह उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रो मे घिरी है, जिसका अधिकांश भाग महासागरीय है। यहा धरातलीय वायु प्रवाह बहुत धीमा होता है। अत उष्ण कटिबन्धो का बहुत बडा भाग विपुवत् रेखीय वायु राशि का विशाल स्रोत क्षेत्र बन जाता है। किसी अन्य वायु राशि की अनुपस्थिति मे वाताग्र विक्षोभो की उत्पत्ति इन क्षेत्रो मे नही हो पाती है।

किन्तु व्यापारी अथवा विपुवत रेखीय पूर्वी हवाओ के अभिसरण से आरोही धाराएँ उत्पन्न होती है जो इन क्षेत्रो मे अत्यधिक मेघ तथा वर्षा उत्पन्न किया करती है। समान गुणो वाली हवाओ का अभिसरण वाताग्र नही कहलाता। यही कारण है कि दोनो उष्ण कटिबन्धो की व्यापारी हवाओ का सम्मिलित क्षेत्र अन्तर्ऊष्ण कटिबन्धी अभिसरण क्षेत्र कहलाता है, न कि अन्तर्उष्ण कटिबन्धी वाताग्र। ITCZ

विपुवत रेखीय अभिसरण क्षेत्र की स्थिति और समय मे नियमितता नही पाई जाती। अत इसके द्वारा उत्पन्न विक्षोभो का समकालीन अध्ययन एव सहसंबध ज्ञात करना एक दुरूह समस्या है।

9.11 अधिकाश विपुवत रेखीय वर्षा कपासी तथा कपासी वर्षी मेघो द्वारा प्राप्त होती है, जिसके लिये नमी के अतिरिक्त ऊर्ध्वधाराओ का उपस्थित होना भी अनिवार्य है। ये ऊर्ध्वधाराएँ निम्नाकित कारणो से उत्पन्न हो सकती है—

(1) हवाओ का अभिसरण।

(2) हवाओ का पर्वतीय उत्थापन।

(3) धरातलीय उष्मन से उत्पन्न अस्थायित्व।

9.12 पूर्वी तरंगे (Easterly Waves)

मध्य प्रशान्तमहासागर की व्यापारी हवाओ और विपुवत् रेखीय पूर्वी वायु प्रवाह में एक और प्रकार का विक्षोभ प्राय· गर्मियो मे तरग द्रोणिका के आकार मे जनित होता है। द्रोणिका AB धरातलीय मौसम मानचित्र पर पूर्व की ओर झुकी होती है। यह तरग पूर्वी वायु प्रवाह मे पश्चिम की ओर, लगभग 600 किमी.

प्रतिदिन के वेग से चलती है। इसके पीछे अभिसरण तथा आगे अपसरण प्रमुख होता है। फलत. द्रोणिक रेखा AB के ठीक पीछे गर्जन मेघ और बौछार की घटनाएँ पाई जाती है और तापमान एकाएक घट जाता है। रेखा के आगे अपसरण के कारण अवतलन प्रवाह उपस्थित आर्द्रता को ऊपर उठने से रोक देता है। अत द्रोणिका के आगे साधारणत. स्वच्छ मौसम या प्रकीर्ण कपासी मेघ तथा धरातल पर धुध उत्पन्न हो सकते है।

चित्र (9 1)
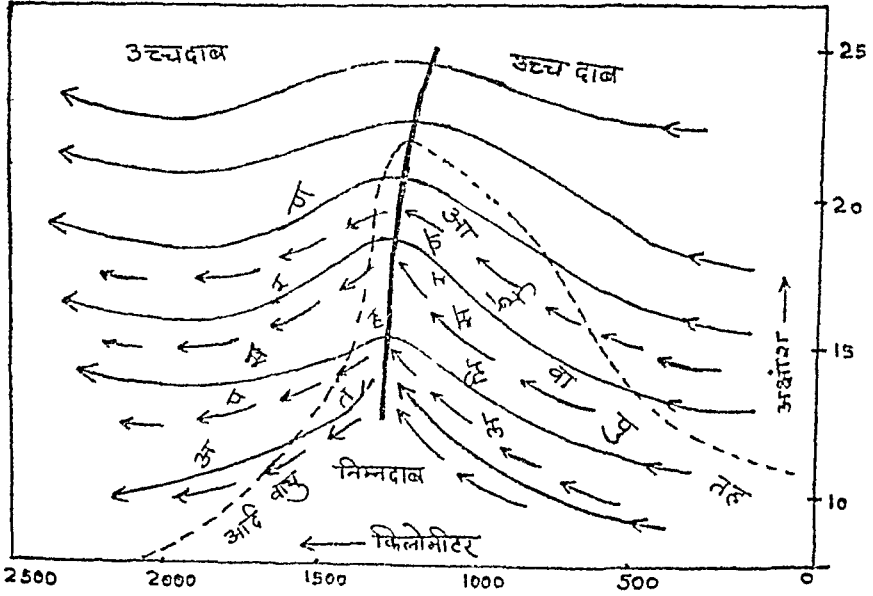
व्यापारी हवाओ मे इस प्रकार की अनुप्रस्थ विक्षोभ तरगे, पूर्वी तरंगे कहलाती है। तरग द्रोणिका के विपुवत् रेखीय सिरे के पास प्राय एक कमजोर निम्नदाब क्षेत्र उपस्थित रहता है, जो अनुकूल परिस्थितियो मे अवदाब या चक्रवाती तूफान मे विकसित हो सकता है।

Depression

विशेपकर सर्दियो मे जव विपुवत् रेखिय भागो मे व्यापारी हवाओ के क्षेत्र मे व्युत्क्रमण-तह अनेक स्थानो पर बहुत तीव्र होती है, पूर्वी तरंगे उत्पन्न नही हो पाती। गर्मियो मे व्युत्क्रमण जिन क्षेत्रो मे कमजोर हो जाते है, वही तरगो की उत्पत्ति के लिए सर्वाधिक सुविधा प्राप्त रहती है।

9.13 उष्ण कटिबन्धी विक्षोभ, जो प्राय विपुवत् रेखीय सागरो के अभिसरण क्षेत्रो मे जनित होते है तथा अपनी यात्रा के दौरान प्रभावित क्षेत्रो मे वर्षा उत्पन्न करते है, अनेक दाव प्रणालियो के रूप मे पाए जाते है। समकालीन मौसम मानचित्रो पर इन प्रणालियो का प्रारूप बढती हुई तीव्रता के क्रम मे निम्नाकित है :—

(1) द्रोणिका (Trough)

(2) निम्नदाव क्षेत्र—यह बन्द समदाब रेखा से घिरा निम्नदाब क्षेत्र है, जिसमे चक्रवाती वायु प्रवाह प्राय हल्का (17 नाट) से कम पाया जाता है।

(3) अवदाब (Depression)—केन्द्र पर वायुदाब अधिक कम हो जाने से निम्नदाब अवदाब मे परिवर्तित हो जाता है। इस अवस्था मे निम्नदाब क्षेत्र दो बन्द समदाब रेखाओ से घिरा होता है। ये समदाब रेखाएँ प्राय. दो मिली बार दाबान्तर पर खीची जाती है। दाब प्रवणता बढ़ जाने से, चक्रवाती प्रवाह तीव्र हो जाता है, जिसकी सीमा 17 से 27 नाट तक निर्धारित की गई है।

(4) गंभीर अवदाब (Deep Depression)—दो या तीन समदाब रेखाओ से घिरा वह निम्नदाब क्षेत्र, जिसमे दाब प्रवणता और बढ जाती है, गभीर अवदाब कहलाता है। इसमें वायु प्रवाह की सीमा 28 से 37 नाट निर्धारित की गई है।

(5) चक्रवाती तूफान (Cyclonic Storm)—गंभीर अवदाब और तीव्र होने पर चक्रवाती तूफान बन जाता है। इस अवस्था मे अत्यधिक दाब प्रवणता इंगित करते हुए मानचित्र पर चार या पाच बद समदाब रेखाएँ पाई जाती हे तथा चक्रवाती प्रवाह 38–47 'नाट' के बीच रहता है।

(6) भीषण चक्रवाती तूफान या हरीकेन (Hurricane)—जब चक्रवाती तूफान और अधिक प्रचण्ड रूप धारण कर लेता है, तो भीषण चक्रवाती तूफान कहलाता है। इस दशा मे मौसम मानचित्र, अत्यधिक प्रवणता युक्त 6 या 6 से अधिक बद समदाब रेखाएँ प्रदर्शित करता है तथा प्रवाह तीव्रता 48 नाट या अधिक पाई जाती है।

9.14 उत्पत्ति के क्षेत्र

अधिकतम उष्ण कटिबन्धी विक्षोभ, पूर्वी तरगो मे उष्ण महासागरो के उन भागों मे उत्पन्न होते हैं, जो अन्तउष्ण कटिबंधी अभिसरण क्षेत्र के प्रभाव क्षेत्र मे पड़ते हैं। अभिसरण क्षेत्र के ऋतुनिष्ठ स्थानान्तरण के साथ अवदावो के जनक क्षेत्र भी स्थानान्तरित होते रहते है। दोनो गोलार्द्धो मे उष्ण कटिबन्धो का सम्पूर्ण महासागरीय भाग, जहाँ तापमान 25°C से अधिक पाया जाता है, अवदाव और चक्रवात जनित करने के उपयुक्त हैं, किन्तु प्रचण्ड रूप के उष्ण कटिबधी चक्रवातो के प्रमुख जनक क्षेत्र निम्नाकित है, जिन्हे चित्र (9 2) मे दिया गया है।
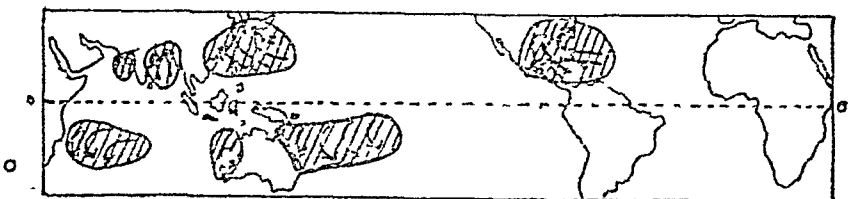
चित्र (9 2)

(1) उत्तरी अतलान्टिक का विषुवत् रेखीय भाग—यहाँ अगस्त और सितम्बर मे चक्रवाती तूफान पैदा होते हैं। पश्चिम या पश्चिम उत्तर पश्चिम की ओर बढते हुए, ये तूफान उत्तरी अमेरिका के दक्षिणी-पूर्वी तट को प्रभावित करते हैं।

(1) उत्तरी केरिबियन सागर—इसमे जून से नवम्बर तक तूफान उत्पन्न होते है। मेक्सिको की खाडी मे भी इन्ही दिनो चक्रवात जनित होते हैं। ये सभी सामान्यत. उत्तर-पश्चिम की ओर अग्रसर होते है।

(2) निम्न अक्षांशीय प्रशान्त महासागर मे, चक्रवातो की उत्पत्ति के कई क्षेत्र है। मेक्सिको तट के पास उत्तरी प्रशान्त महासागर मे, जून से नवम्बर तक चक्रवात बनते है। फिलीप्पाइन्स और चीन सागर तथा सलग्न प्रशान्त महासागर (170 पूर्वी देशान्तर के पास) मे मई से दिसम्बर तक पर्याप्त सख्या मे चक्रवात उत्पन्न होते है। उत्तरी गोलार्द्ध के चक्रवात प्राय पश्चिम से उत्तर पश्चिम की ओर का मार्ग अपनाते है जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध के चक्रवात पश्चिम या दक्षिण की ओर बढते है।

(3) बगाल की खाडी मे मई से दिसम्बर तथा अरब सागर मे मई, जून तथा अक्टूबर से दिसम्बर तक चक्रवात बनते है। दक्षिणी हिन्दमहासागर मे मेडागास्कर से 90 अश पूर्वी देशान्तर तक का क्षेत्र नवम्बर से मई तक चक्रवातो का प्रजनन करता है।

भारतीय सागर मे अवदाब उन क्षेत्रो मे जनित होते है, जहाँ उत्तर-पूर्व या उत्तर-पश्चिम से आती शुष्क थलीय हवाएँ दक्षिण से आती आर्द्र महासागरीय हवाओ से अभिसरित होती है। यह क्षेत्र जनवरी तथा फरवरी मे विषुवत् रेखा के दक्षिण मे स्थित होता है, जो सूर्य के साथ धीरे-धीरे उत्तर की ओर स्थानान्तरित होता जाता है, तथा मई के दूसरे या तीसरे सप्ताह तक मध्य बगाल की खाडी तक आ जाता है। अवदावो का जनन क्षेत्र उत्तर की ओर तब तक बढता रहता है, जब तक कि उत्तर भारत पर मानसून द्रोणिका पूर्णत स्थापित नही हो जाती। यह जून के अन्त या जुलाई के प्रारम्भ तक हो पाता है। इन स्थिति मे अवदाब बगाल की खाडी के शीर्ष स्थल पर उत्पन्न होने लगते है। ये मानसून अवदाब कहलाते है, जो प्रभावित क्षेत्रो मे मानसून की सक्रियता बहुत बढा देते है।

सूर्य के दक्षिण की ओर स्थानान्तरण के साथ, उत्पत्ति क्षेत्र अथवा अभिसरण क्षेत्र पीछे हटने लगते है, साधारणत दक्षिण पूर्व की ओर। अक्टूबर तक ये क्षेत्र पुन. मध्य खाडी तथा दिसम्बर मे विषुवत् रेखा तक पहुच जाते है।

अरब सागर मे थलीय और सागरीय हवाओ के विभाजन क्षेत्र स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर नही हो पाते है। ग्रीष्म मानसून काल (जून-सितम्बर) मे अरब सागर मे साधारणत कोई अवदाब उत्पन्न नही होते। बगाल की खाडी मे उत्पन्न हुए अवदाब यदाकदा भारतीय प्रायद्वीप से गुजर कर उत्तरी अरब सागर मे प्रवेश कर जाते हैं। अरब सागर मे अवदाब तथा चक्रवातो की उत्पत्ति मई तथा प्रारम्भिक

जून या फिर अक्टूम्बर-नवम्बर मे पाई जाती है । अक्टूबर-नवम्बर के चक्रवात दोनो ही सागरो मे अत्यधिक प्रचण्ड होते है ।

9.15 ऊर्जा स्रोत

उष्ण सागर तलों पर व्यापारी या विषुवत् रेखीय अभिसरण तथा सौर उष्मन के कारण आर्द्र हवाओ मे ऊर्ध्व धाराएँ उत्पन्न हो जाती है। ये हवाएँ कुछ ऊँचाई पर रुद्धोष्म शीतलन के कारण सघनित होती जाती है। संघनन द्वारा छोडी गई गुप्त उष्मा ही, अवदावो या चक्रवातों के विकसित होने के लिए ऊर्जा प्रदान करती है। इस उष्मा के कारण निम्न तहों की हवाएँ और गर्म होने लगती हैं, जिससे वाष्प भारी हवाओ की आरोही धाराएँ और तीव्र हो जाती है। फलतः सागर सतह पर तीव्र अपसरण तथा निम्नदाव पैदा होने लगता है, जिसे भरने के लिए चारो ओर की हवाएँ तेजी से दौडने लगती है। पृथ्वी के घूर्णन के कारण ये हवाएँ सर्पिल प्रवाह के रुप मे निम्नदाव केन्द्र तक पहुचने का प्रयास करती है। चक्रवाती सर्पिल प्रवाह के कारण हवाएँ, केन्द्र तक नही पहुच पाती, क्योंकि वे केन्द्रापसारी बल द्वारा, केन्द्र तक पहुचने के पूर्व ही विक्षेपित कर दी जाती हैं इस प्रकार :—

(1) अभिसरण लगातार बढते रहने से, आरोही प्रवाह तथा सघनन द्वारा उत्पन्न गुप्त उष्मा लगातार एव बढती हुई मात्रा मे मिलती रहती है, जिससे सर्पिल प्रवाह और अधिक प्रचण्ड होता जाता है।

(2) केन्द्र बिन्दु तक हवाओ के न पहुच पाने से वहाँ निम्नदाव, गंभीरतर होता जाता है। इसके फलस्वरूप निम्नदाव का क्षेत्र, अवदाव और फिर चक्रवाती तूफानो मे सर्वधित हो जाता है।

9.20 उष्ण कटिबन्धी चक्रवाती तूफान (Tropical Revolving storm) या उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन

उष्ण कटिबन्धी सागरो मे उत्पन्न होने वाले चक्रवाती तूफानो के लिए "साइक्लोन" शब्द का प्रयोग सबसे पहले कैप्टन हैनरी पिडिन्टगन ने कलकत्ता मे सन् 1848 मे किया। यह शब्द लेटिन भाषा के "काइक्लोस" शब्द से बनाया गया है, जिसका अर्थ होता है "सर्प की कुण्डली" कुछ स्थानो पर इन्ही तूफानों को दूसरे नामो से भी जाना जाता है, अटलांटिक और पूर्वी प्रशान्त मे "हरीकेन", पश्चिमी प्रशान्त और चीन सागर मे "टाईफून" तथा आस्ट्रेलिया के निकटवर्ती सागरो मे "विल्ली विल्ली' (willy willy) शब्द उष्ण कटिबन्धी चक्रवाती तूफानो को ही सम्बोधित करते है।

एक अच्छी तरह विकसित उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन, सागर तल पर 200 से 800 किमी व्यास तथा 10 से 15 किमी ऊँचाई का प्रचण्ड वायु वातावर्त (whirlwind) है, जिसमे निम्नदाव केन्द्र पर खडी ऊर्ध्व अक्ष के चारो ओर बेलनाकार त्रिविम (Three dimensional) वायु राशि, तीव्रता से सर्पिल गति करती है। यह

गति साधारणतः केन्द्र से 50 से 100 किमी की दूरी पर अधिकतम पाई जाती है, जो 150 किमी/घण्टा तक हो सकती है। निम्नतलों पर वायु सर्पिल गति करती हुई, ऊपर को उठती जाती है। फलस्वरूप आरोही धाराओं के कारण, निम्नदाब केन्द्र पर पर्याप्त जलराशि पर्वतों की भाति ऊपर उठ जाती है। यह त्रिविम प्रणाली 300 से 500 किमी प्रति दिन के वेग से सागर तल पर सन्तुलन की अवस्था मे गति करती रहती है।

9.21 प्रौढ अवस्था मे, जब साइक्लोन प्रचण्ड कहलाता है, इसकी सरचना निम्नाकित चार भागो से मिलकर बनी होती है। ये चारो भाग सागर तल तथा सलग्न निम्न वायुमण्डलीय तहो मे स्पष्ट दृष्टिगोचर होते है।

(1) 15 से 30 किमी व्यास का निम्नदाब केन्द्र, जहाँ वायु शान्त या बहुत धीमी बहती है और आसमान मुख्यतः साफ रहता है। इसका कारण यही है कि तीव्रता से गति करती अन्तर्मुखी चक्रवाती हवाएँ, केन्द्र के चारो ओर तो घूमती है परन्तु केन्द्र पर अभिसरित नही हो पाती, ठीक ऐसे, जैसे कोई उपग्रह केन्द्र के प्रति आकर्षित होते हुए भी, वृत्ताकार पथ पर घूमने को बाध्य होता है। इस प्रकार सर्पिलाकार मे घूमती हुई बेलनाकार वायुराशि का केन्द्र, एक खोखले पाइप की भाति होता है, जिसमे चक्रवाती हवाएँ प्रवेश नही कर पाती। यह भाग साइक्लोन की आँख (Eye) कहलाता है।

(2) उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन का दूसरा भाग 'आँख' और 50 से 150 किमी व्यास की परिधि के बीच सीमित होता है जिसमे केन्द्र की ओर दबाव बहुत तेजी से घटता जाता है तथा 100 किमी प्रतिघण्टा या अधिक गति की तूफानी हवाएँ बहती है। इस भाग मे मूसलाधार वर्षा तथा स्क्वाल की घटनाएँ बहुत अधिकता मे होती रहती है। Squall

(3) यह साइक्लोन का बाहरी भाग है जिसमे वायुगति केन्द्र की ओर बढती जाती है। जब तक कि वह भाग (2) की परिधि पर अधिकतम नही हो जाती। इस भाग मे वायु प्रवाह सामान्यत केन्द्र के सममित नही पाया जाता।

(4) यह साइक्लोन के बाहरी भाग से आगे, लगभग 1000 किमी व्यास की परिधि तक बहुत धीमी किन्तु चक्रवाती हवाओ का क्षेत्र है, जहाँ से ये चक्रवाती हवाएँ केन्द्र की ओर अभिसरित होती प्रतीत होती है।

एक प्रौढ चक्रवात का धरातलीय व्यवस्थित रेखाचित्र
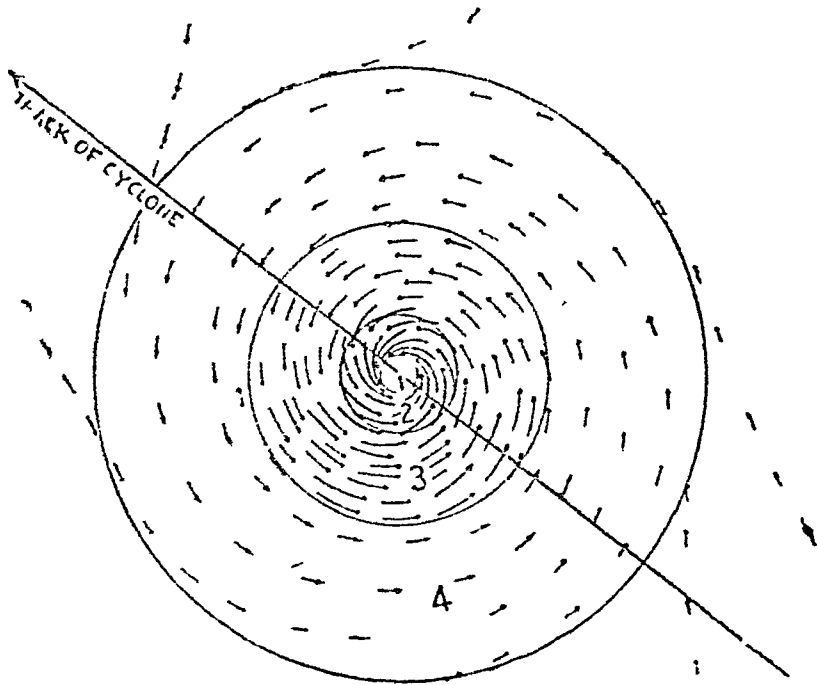
चित्र (9 3)

ये चारो भाग व्यवस्थित रूप से चित्र (9 3) में दिए गए है। एक विकसित उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन का ऊर्ध्व-कोट (Vertical Section) चित्र (9 4) द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

9.22 भारतीय सागरो मे चक्रवातो की आयु कुछ घण्टो से लेकर दो सप्ताह तक पायी जाती है। सान्यिकीय औसतीकरण के आधार पर, औसत आयु 6 दिन के लगभग निर्धारित की जा सकती है। इस अवधि मे चक्रवात निम्नाकित अवस्थाओ से गुजरता हुआ, अपना जीवन चक्र पूरा करता है।

(1) निर्माण अवस्था (Formative stage)—इस अवस्था मे सागर तल के हजारो वर्ग किमी का क्षेत्र चचल हो उठता है। स्क्वाल, वर्षा तथा गर्जन की घटनाएं आरम्भ हो जाती हैं, और दाब शनै. शनै. घटने लगता है। निम्नदाब बन जाने पर चक्रवाती प्रवाह आरम्भ हो जाता है, जिसमे ताजी हवाएं केन्द्र की ओर अभिसरित होती जाती हैं। निर्माण-अवस्था मे मौसम मानचित्र पर 1000 से 2000 वर्ग किमी का क्षेत्र घेरते हुए बन्द समदाब रेखा से निम्नदाब बन जाता है।

चक्रवातो के निर्माण के लिए अनेक अनुकूल परिस्थितियो का उपस्थित होना आवश्यक है। तीन आधारभूत आवश्यकताएं निम्नाकित है —
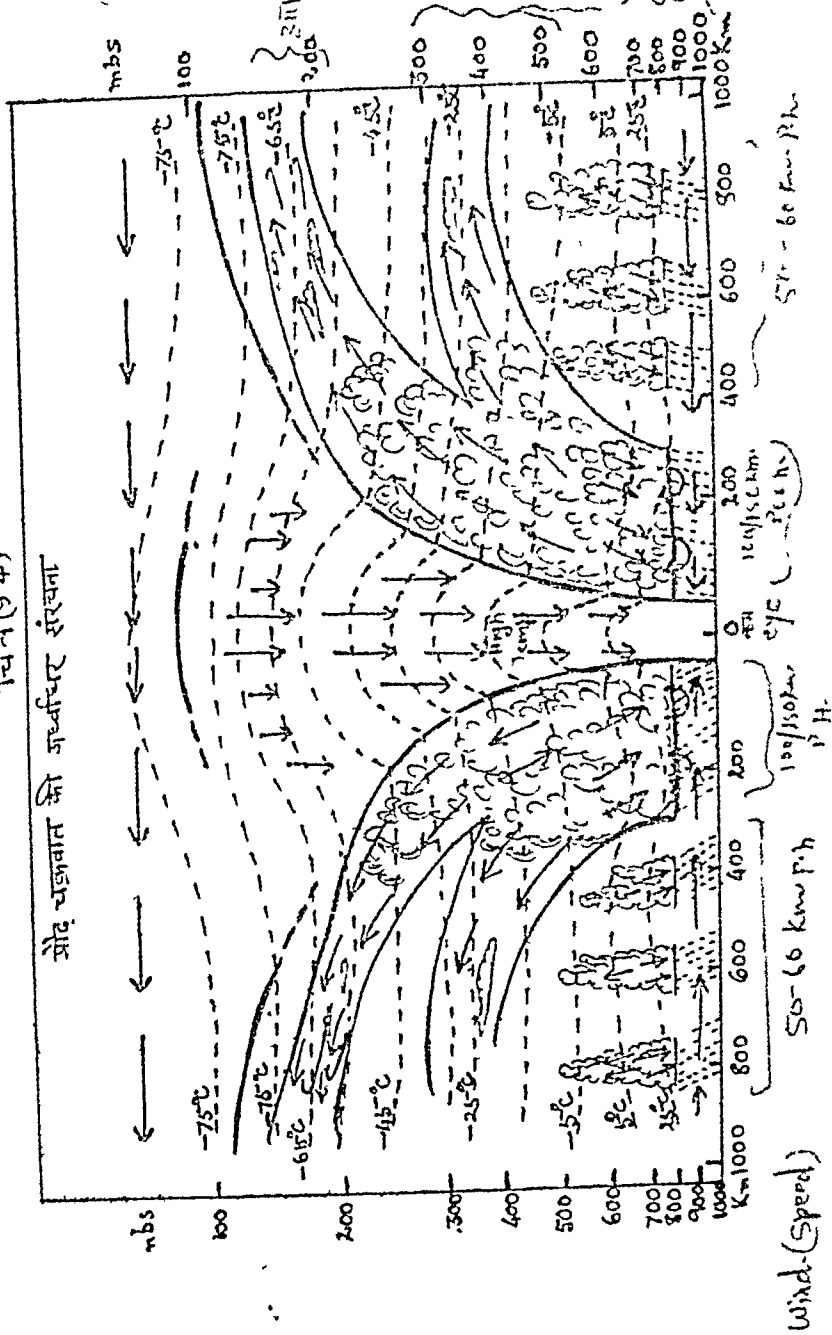
(1) पर्याप्त सागरीय क्षेत्र, जिसका सतही तापमान अपेक्षाकृत अधिक हो। तापमान इतना अधिक होना चाहिए कि निम्न तहों की वायु ऊर्ध्व धाराओं द्वारा ऊपर उठनी आरम्भ हो जाए। पामेन (1956) के अनुसार, आरोही आर्द्र वायु राशि, 10–12 किमी ऊँचाई तक आसपास के वायुमण्डल की अपेक्षा अधिक उष्ण होनी चाहिए। प्रेक्षणों के आधार पर सागर सतह का तापमान 26–27°C से अधिक होना अनुकूल परिस्थिति है।

(2) पृथ्वी का घूर्णन प्रभाव, अर्थात् कोरियालिस प्राचल (f) एक निर्धारित निम्नतम से अधिक होना चाहिए। यही कारण है कि चक्रवात, दोनों उष्ण कटिबन्धों में विषुवत् रेखा से 5–7 अंश अक्षांश से परे ही जनित होते हैं। जो चक्रवात 5° उ० और 5° द० अक्षांश वृत्तों के बीच बनते हैं, वे प्राय. प्रौढ़ अवस्था तक विकसित नहीं हो पाते।

(3) मूल धाराओं में कमजोर ऊर्ध्व वायु अपरूपण :

विक्षोभ द्वारा जनित कपासी वर्षी मेघ गुप्त ऊष्मा छोड़कर वायुमण्डल को कुछ गर्म कर देते हैं, जिससे सागर तल पर दाब घट कर निम्नदाब बन जाता है। निम्नदाब क्षेत्र में अभिसरण होने लगता है, जो पुन. आरोही वायुगति, तथा कपासी वर्षी उत्पन्न करने का कारण बनता है। फलस्वरूप और अधिक गुप्त ऊष्मा छूटती है और निम्नदाब तीव्रतर होता जाता है। किन्तु इस शृंखला-प्रक्रम के लिए यह आवश्यक है कि क्षोभमण्डल में ऊर्ध्व वायु बहुत कम हो, ताकि मेघकणों में निकली गुप्त ऊष्मा बहुत छोटे क्षेत्र में सीमित रहकर यथेष्ट प्रभाव पैदा कर सके। उत्तरी हिन्द महासागर तथा दक्षिणी चीन सागर में अप्रैल-मई तथा अक्टूबर-नवम्बर के संक्रमण काल में चक्रवातों की उत्पत्ति के लिए ऊर्ध्व वायु अपरूपण की भूमिका महत्वपूर्ण है। 850 तथा 200 मिलीबार के बीच, औसत ऊर्ध्व वायु का उष्ण कटिबन्धी बटन अक्टूबर के लिए चित्र (9·5) में दिया गया है।
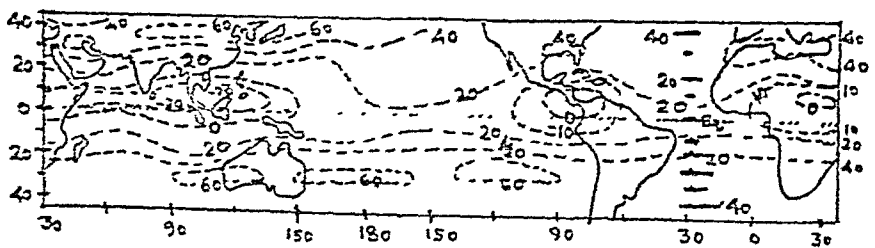
मंडलीय (ZONAL) ऊर्ध्व वायु अपरूपण (850 और 200 मिलीबार)
अक्टूबर (ग्रे, डब्लू एम, 1968)
चित्र (9·5)

इस काल में दक्षिणी-पूर्वी प्रशान्त तथा दक्षिणी अटलांटिक में चक्रवात प्राय नहीं पैदा होते, क्योंकि इन क्षेत्रों में ऊर्ध्व वायु अपरूपण अधिक होता है तथा सागर तल का तापमान भी अपेक्षाकृत कम पाया जाता है।

र्‌हील (1948) के अनुसार, उपर्युक्त तीन आवश्यकताओं के अतिरिक्त दो और दशाओ का लागू होना अनिवार्य है :—

(1) सागर तल पर पहले से ही निम्न वायुमण्डल मे किसी विक्षोभ की उपस्थिति ।

(2) उच्चतर वायुमण्डल मे चक्रवाती प्रवाह से ऊपर अपसरण का होना ।

मौसम उपग्रह के प्रेक्षणो से साइक्लोन वनने से कई दिन पहले ही विक्षोभो की उपस्थिति का प्रमाण अब मिलने लगा है । उष्ण कटिवन्ध के उष्ण सागरतलो पर प्रतिवर्ष सैकडो विक्षोभ उत्पन्न होते हैं किन्तु उनमे से केवल कुछ ही साइक्लोन की अवस्था तक विकसित हो पाते हे ।

(2) विकासशील अवस्था

इस अवस्था मे दाव निरन्तर घटता है तथा केन्द्र के चारों ओर चक्रवाती प्रवाह तीव्रतर होता जाता है । केन्द्र की ओर अभिसरित होती हुई सर्पिलाकार वायुगति, 25 से 40 किमी प्रति घण्टा के वीच पाई जाती है । मेघाच्छादन और सघन तथा विस्तृत होना जाता है तथा वर्षा और झंझावात की तीव्रता मे उत्तरोत्तर वृद्धि होती रहती है । मौसम मानचित्र पर 2 या 3 वन्द समदाव रेखाएँ वन जाती है । यह स्थिति साधारणत अवदाव या डिप्रेशन कहलाती है ।

डिप्रेशन तथा सम्वन्धित मौसम शृ खलाएँ सुसगठित रूप से निश्चित दिशा मे 300 से 500 किमी प्रतिदिन के वेग से सागर तल पर अग्रसर होते रहते है । अनेक डिप्रेशन और अधिक वृद्धि नही करते तथा क्षीण होते-होते अपना जीवन-चक्र समाप्त कर लेते हे । किन्तु कुछ डिप्रेशन आगे वृद्धि करते जाते है और जव सर्पिलाकार वायुगति 60 किमी प्रतिघण्टा से वढ जाती है, तो वे **उष्ण कटिबन्धी चक्रवात** कहलाते लगते हैं । वायुगति 85 किमी प्रतिघण्टा से अधिक होने पर, इन्हे **प्रचंड चक्रवात** कहा जाता है ।

(3) प्रौढ़ अवस्था

चक्रवात पूर्णत· प्रौढ होता है और इस दशा मे चक्रवात के चारो भाग (आँख, आन्तरिक और वाह्य वायु घेरा तथा वाहरी मन्द हवाओ का क्षेत्र) स्पष्ट हो जाते हैं ।

इस स्थिति का व्यवस्थित रेखाचित्र चित्र (9·4) मे दिया गया है । सम्वन्धित वायुगति तीन भागो मे वँट जाती है .

(1) लगभग 80 किमी प्रति घण्टा की क्षेतिज वामावर्त वायुगति-(2) केन्द्र की ओर अन्तर्मुखी प्रवाह-जिसकी तीव्रता अधिकतम चक्रवाती गति की लगभग आधी होती है तथा (3) लगभग 1 मीटर प्रति सैकड के क्रम की आरोही वायुगति ।

सव मिलकर धीरे-धीरे ऊपर को उठते हुए सर्पिल प्रवाह होता रहता है जो कुछ ऊँचाई तक सकुचित होता है, किन्तु वाद मे क्षेतिज रूप से फैलने लगता है । चक्रवात की 'आँख' पर अवरोही धाराएँ पाई जाती है ।

Down Drift

(4) क्षयकारी अवस्था

जब हरीकेन वायुगति का घेरा भूमितल पर आ जाता है, तो चक्रवात प्राय. क्षीण होने लगता है। थलीय घर्षण तथा आर्द्रता-पूर्ति के अभाव मे शक्ति का तेजी से ह्रास होता है, जिसमे वायु गति घट जाती है तथा केन्द्र का दाब तेजी से बढना आरम्भ होने लगता है। लेकिन चक्रवात के क्षीण होने पर भी वर्षा एक दो दिन तक जारी रहती है।

9·30 सामान्य विशेषताएं

(1) वायुगति

एक विकसित चक्रवात मे क्षैतिज वायु गति का क्षेत्र तीव्रता के आधार पर तीन भागों मे बांटा जा सकता है। पहला क्षेत्र बाहरी परिधि से लेकर हरीकेन वायु की सीमा तक विस्तृत होता है, जिसमे अन्तर्मुखी चक्रवाती हवाएँ अपेक्षाकृत कम वेग से बहती है। बाहरी परिधि से केन्द्र की ओर वायु गति निरन्तर बढती जाती है।

दूसरा क्षेत्र अधिकतम वायुगति का क्षेत्र है, जो 'आंख' के चारो ओर 8 से 16 किमी की चौडाई मे स्थित होता है। इस क्षेत्र की सीमा 'आंख' से बादलो की दीवार द्वारा अलग होती है। इस सीमा पर प्रचण्ड संवाहनिक धाराएँ, भारी वर्षा तथा तूफान सतत उत्पन्न होते रहते हैं। हरीकेन वायुगति के इस क्षेत्र मे 100-150 किमी/घण्टे की तीव्र तूफानी हवाएँ चलती रहती हैं। यदाकदा स्क्वाल भी आते रहते है, जिसमे वायुगति सहसा कम से कम 25% बढ जाती है। जब तट पार कर भूमि तल पर चक्रवात का यह भाग पहुँचता है तो जर्जर मकान, पुराने वृक्ष, टेलीफोन और बिजली के खम्भे, आदि टूटने और गिरने लगते हैं तथा छते उखडने लगती है।

तीसरा क्षेत्र चक्रवात का केन्द्रीय भाग 'आंख' है, जिसमे वायु गति तेजी से केन्द्र की ओर घटती जाती है। आंख का व्यास छोटे तूफानो मे 20 किमी से भी कम पाया जाता है. किन्तु बहुत बडे तूफानो मे यह व्यास 50–60 किमी तक भी देखा गया है।

(2) उच्चतर वायुगति

विकसित चक्रवात का उर्ध्व विकास, चक्रवाती प्रवाह के रूप मे प्रायः क्षोभ सीमा तक पाया जाता है। उच्चतर वायुमण्डल मे चक्रवाती प्रवाह तीन भागो मे बांटा जा सकता है।

पहला, तल से लगभग तीन किमी की ऊँचाई तक, जिसे अन्तर्वाह (inflow) तह कहते है, क्योकि इस तह मे क्षैतिज चक्रवाती प्रवाह केन्द्र की ओर अभिसरण करता हुआ होता है। कुल अभिसरण का अधिकाश एक किमी की निचली तहो मे ही पाया जाता है।

दूसरी तह, जो मध्य तह कहलाती है, लगभग 7·6 किमी ऊँचाई तक विस्तृत होती है।

इस तह में चक्रवाती प्रवाह लगभग स्पर्श रेखीय (Tangential) होता है। अन्तर्मुखी या बहिर्मुखी त्रिज्य (radial) प्रवाह लगभग नहीं पाया जाता, अर्थात् इस तह में अभिसरण या अपसरण की क्रिया अनुपस्थित होती है।

तीसरी तह मे बहिर्मुखी प्रवाह, अर्थात् अपसरण प्रक्रिया प्रमुख होती है। यह तह मध्यतह से चक्रवाती प्रवाह के शिखर तक विस्तृत होती है। निम्न तह के अभिसरण और उच्चतर वायुमण्डल के अपसरण प्रवाह के कारण ही आरोही धाराएँ पर्याप्त रूप से उत्पन्न होकर बादलों की दीवार तथा अन्य वर्षा बैंड जनित करती हैं। बहिर्मुखी प्रवाह द्वारा अपसरित हवाएँ, कहीं दूर जाकर अवतलित होती हैं। इस अवतलन का एक छोटा अंश 'आँख' पर भी पाया जाता है।

(3) तापमान

धरातल पर चक्रवात के गुजरते समय तापमान का कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता, सिवा इसके कि भारी वर्षा के कारण वायु तापमान ओसांक की सीमा तक कम हो जाता है। चक्रवात उष्ण क्रोड (Core) का प्रवाह है जिसमे उष्ण वायु ऊपर उठ कर गुप्त उष्मा छोड़ती है। उच्चतर वायुमण्डलीय तापमान प्रोफाइल के अध्ययन से पता चलता है कि सर्वाधिक उष्मा, चक्रवात के केन्द्रीय भाग के ऊपर उच्चतर क्षोभ मण्डल मे होती है। यहाँ तापमान वृद्धि लगभग 10°C के आसपास पाई जाती है। इस उष्मा का मूल स्रोत निम्न अक्षांशों के उष्ण सागर तल ही है। जब चक्रवात इन उष्ण क्षेत्रों से दूर, उच्च अक्षांशों के शीतल क्षेत्र के भूमितल पर पहुँच जाते हैं, तो तल से उष्मा का अभिवहन समाप्त हो जाता है और धरातलीय वायु, प्रसार के कारण ठंडी होने लगती है। यही शीतलन चक्रवातों के ह्रास का प्रारम्भिक कारण बनती है।

(4) मेघ

चक्रवात के आगमन से थोड़ा पहले पक्षाभ मेघ आने लगते हैं, जो कपासी वर्षी के शिखर भागों में उत्पन्न हुए होते हैं। शीघ्र ही ये पक्षाभ-स्तरी पक्षाभ और फिर मध्य स्तरी के रूप में सघन हो उठते हैं तथा वर्षा आरम्भ हो जाती है। तत्पश्चात् स्तरी कपासी, मध्य कपासी, कपासी तथा कपासी वर्षी मेघ और अन्त में घने मेघों की दीवार, स्टेशन पर छा जाती है। इससे स्क्वाल के लगातार झोंके तथा हिमपात उत्पन्न होते रहते हैं। मेघ प्रणाली की संरचना सर्पिल बैंड के आकार की होती है जिसमे तीव्र आरोही धाराएँ प्रमुख होती है। सागर पर मेघ, तल को लगभग छूते रहते हैं, किन्तु धरातल पर निम्नतम मेघों की ऊंचाई सामान्यतः 100 मीटर से ऊपर ही पाई जाती है।

(5) वर्षा

चक्रवात मे वर्षा के आवंटन की प्रकृति बहुत अस्थिर पाई जाती है। यह बहुत कुछ चक्रवात की स्थिति तथा तीव्रता पर निर्भर करती है। निम्न अक्षांशो मे वर्षा बैंड प्रायः हर ओर सममित रूप मे होती है। किन्तु उच्च अक्षाँशो में, विशेषकर जब चक्रवात मुड़ने को होता है, तो भारी वर्षा का प्रमुख क्षेत्र केवल अगले वृत्तपाद (quadrant) मे ही सिमट जाता है। अतः वृष्टि क्षेत्र की दिशा मे अचानक परिवर्तन,

चक्रवात के मुडने का स्पष्ट सकेत है। जिस स्थान से चक्रवात गुजरता है, वहा औसतन 15–25 सेमी वर्षा प्राप्त हो जाती है। अनुकूल पर्वतीय परिस्थितियो मे 50-60 सेमी वर्षा भी असामान्य नही है।

9 40 उष्ण कटिबन्धी चक्रवातों का औसत भौगोलिक बंटन

सागर तलो पर प्रेक्षणो की अत्यन्त कमी तथा ऐतिहासिक मौसम रिकार्डो के अबूरेपन के कारण, उष्णकटिबन्धी चक्रवातो का जलवायु विज्ञान (climatology) स्वाभाविकत अनिश्चित एव अधूरा है। किन्तु अब उपग्रहो के उद्भव से चक्रवातो की स्थिति और तीव्रता के पर्याप्त और लगभग यथार्थ आँकडे प्राप्त होने लगे है।

विभिन्न उष्ण कटिबन्धी सागर क्षेत्रो मे चक्रवाती तूफानो (जिसमे उच्चतम वायु गति 34 नाट से अधिक हो) की औसत मासिक तथा वार्षिक बारम्बरता सारणी (9.1) मे प्रस्तुत की गई है। ये औसत जितने वर्ष के आकडो पर आधारित हैं, वे भी सारिणी मे उद्धृत है।

दोनो गोलार्द्धों और पूरे भूमण्डल के लिए ये औसत आकडे सारणी (9 2) मे दिये गये है। मौसम उपग्रहो के प्रयोग मे आने से पूर्व अधिकाश सागर तलो पर मौसम बहुत विरल तथा असतत रूप मे लिए जाते थे। अत: इस बात की संभावना बहुत अधिक है कि इन क्षेत्रो पर उत्पन्न होने वाले कई चक्रवात अपना पूरा जीवन चक्र समाप्त होने तक अज्ञात ही रह गये हो और उपर्युक्त औसती करण मे सम्मिलित न हो सके हों। अतएवं उपग्रहो के सतत एवं नियमित प्रेक्षणो द्वारा आकलित विभिन्न सागरो मे चक्रवातो की औसत सख्या निश्चय ही प्रस्तुत संख्याओ से अधिक होनी चाहिए।

सारणी 9 1

उष्ण कटिबन्धी चक्रवातों की औसत मासिक तथा वार्षिक संख्या

सागर क्षेत्र	अवधि जिस पर औसत ज्ञात किया गया है	ज	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
1. उत्तरी अतलातिक	1941–68	0	0	0	0	0·1	0·5	0 8	2 1	3 5	1 8	0·3	0·1	9 2
2. उत्तरी-पूर्वी प्रशान्त	1965–69	0	0	0	0	0	1·8	2 2	4 2	4 0	1 8	0	0	14 0
3. उत्तरी-पश्चिमी प्रशान्त (दक्षिणी चीन सागर सहित)	1959–68	0·4	0·6	0 4	0 9	1·5	1·6	5·0	6 8	5 3	4·3	2·4	1 3	30·5
4. दक्षिणी चीन सागर	1961–68	0	0 1	0	0 1	0·5	0·2	0 5	0 6	0·9	0 5	0·5	0·4	4 3
5. दक्षिणी प्रशान्त	1947–61	1 9	1 4	1·6	0 7	0·1	0 1	0	0	0	0	0 1	0 7	6 6
6. बंगाल की खाडी	1948–67	0·1	0	0	0 1	0 7	0 1	0 1	0·1	0 4	0·8	0·7	0 5	3·6
7. अरब सागर	1890–1967	0	0	0	0·1	0·2	0·2	0	0	0·1	0·2	0 2	0·1	1 1
8. दक्षिणी-पश्चिमी हिन्द महासागर	1931–60	2 3	2·0	1·5	0 7	0	0	0	0	0	0·1	0 3	0 9	7 8
9. दक्षिणी-पूर्वी हिन्द महासागर	1962–67	1·8	1 4	2 0	0·2	0	0	0	0	0	0	0·4	1·2	7·0

सारणी 9 2

उष्ण कटिबन्धी चक्रवातों की औसत मासिक और वार्षिक संख्या

क्षेत्र	ज.	फ	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ	सि	अ.	न.	दि.	वार्षिक योग
उत्तरी गोलार्द्ध	0 5	0 6	0 4	1·1	2·5	4 2	8 1	13 2	13·3	8·9	3·6	2·0	58·4
दक्षिणी गोलार्द्ध	6 0	4 8	5 1	1 6	0·1	0 1	0	0	0	0 1	0 8	2·8	21·4
भूमण्डल	6 5	5·4	5 5	2·7	2 6	4 3	8·1	13 2	13 3	9·0	4 4	4 8	79·8

9.41 चित्र 9.6 सारिणी (9.1) के आंकड़ों पर आधारित है जिसमे विभिन्न उष्ण कटिबंधी सागर क्षेत्रों मे चक्रवाती तूफानों, जिनकी अधिकतम वायुगति 33 नाट से अधिक है, की औसत वार्षिक संख्या तथा कुल भूमण्डलीय योग का प्रतिशत भाग प्रदर्शित किया गया है। भूमण्डलीय योग (लगभग 80) के आधे तूफान केवल उत्तरी प्रशान्त महासागर मे उत्पन्न होते। उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्धों मे तूफानो की वार्षिक संख्या का वटन क्रमश: 73 और 27 प्रतिशत है।
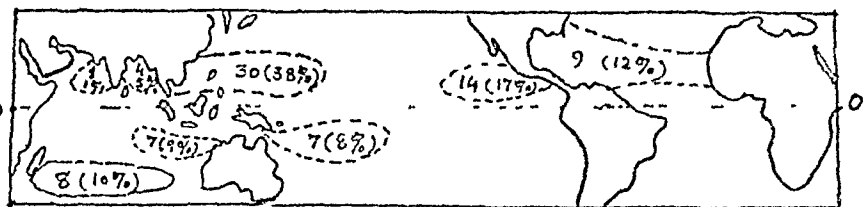
चक्रवातों की औसत वार्षिक संख्या (तथा भूमण्डलीय योग का प्रतिशत)
चित्र (9 6)

9.42 विभिन्न क्षेत्रों मे उत्पन्न होने वाले चक्रवातो का संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है। ये निष्कर्ष उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर प्राप्त किए गए हैं। कुछ स्थानो के लिए सन् 1900 से पूर्व के आँकड़े भी मिलते है किन्तु अधिकाश क्षेत्रों के लिए 1940 के बाद के प्रेक्षणों पर ही विश्वसनीय रूप से विचार किया गया है।

(1) उत्तरी अटलांटिक महासागर

इस क्षेत्र के 80% के लगभग चक्रवात अगस्त, सितंबर और अक्टूबर के तीन महीनो मे पैदा हो जाते है। शेष चक्रवात प्राय जून और जुलाई मे मिल जाते हैं। अन्य महीनो मे चक्रवातो की सम्भावना बहुत ही क्षीण रहती है। लगभग 62% चक्रवात हरीकेन तीव्रता (जिसमे उच्चतम वायुगति 63 'नाट' से अधिक हो) प्राप्त कर लेते हैं। अपने स्रोत क्षेत्रों से ये चक्रवात पश्चिम मे उत्तरी अमेरिका के भूभाग की ओर बढते है तथा प्राय मार्ग मे मुड़ते हुए तट से टकराते है। विभिन्न महीनो मे इन चक्रवातो का मध्यमान मार्ग चित्र (9 7) मे दिया गया है। यह मध्य मान जे० ए० कोलन (1953) द्वारा तैयार किया गया है।
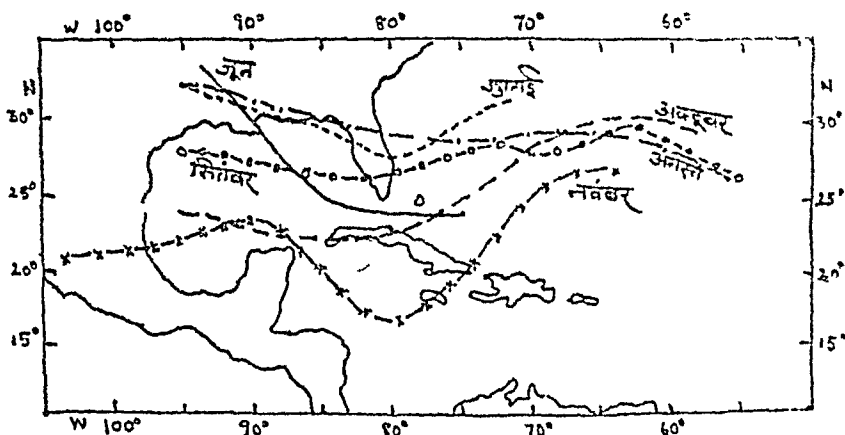
चक्रवातो के दिशा परिवर्तन की माध्यमासिक स्थिति
उत्तरी अतलांटिक क्षेत्र (कोलन, 1953)
चित्र (9·7)

(2) उत्तरी पूर्वी प्रशान्त महासागर

इस क्षेत्र के अधिकाँश चक्रवात जून से अक्टूबर के बीच पैदा होते है, तथा कुल वार्षिक योग के आधे चक्रवात अगस्त और सितम्बर मे होते है। किन्तु इन सभी चक्रवातो के केवल एक तिहाई ही हरीकेन तीव्रता को प्राप्त कर पाते है।

(3) उत्तरी पश्चिमी प्रशान्त महासागर

केवल यही एक क्षेत्र है, जहाँ वर्ष के प्रत्येक महीने मे चक्रवातो की सभावना रहती है। मई से दिसंबर तक कुल सख्या का 70% चक्रवात उत्पन्न हो जाते है, किन्तु जून से अक्टूबर तक चार महीनो मे चक्रवातो की सख्या सर्वाधिक होती है। दो तिहाई के लगभग टाइफून अथवा हरीकेन की तीव्रता तक पहुंच जाते है। पश्चिमी दिशा मे अपनी यात्रा के दौरान चक्रवात प्राय मार्ग मे दिशा परिवर्तन कर लेते है। दिशा परिवर्तन विभिन्न महीनो मे अलग-अलग अक्षाशो पर हुआ करता है। एल० स्टार वक (1951 के अनुसार इन अक्षाशो की मध्यमान स्थिति विभिन्न महीनो मे इस प्रकार है —

सारिणी (9 3)

माल —	मार्च	अप्रेल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितवर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर
औसत अक्षाश, जहा दिशा परिवर्तन होता है—	13	16	18	21	28	30	25	21 5	18 5	17

जनवरी या फरवरी मे उत्पन्न होने वाले चक्रवात या तो दिशा परिवर्तन के पूर्व ही क्षीण हो जाते है या उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रो से बाहर हो जाते है।

(4) दक्षिणी चीन सागर

दक्षिणी चीन मे उत्पन्न होने वाले चक्रवातो को औसतीकरण के लिए, उत्तर पश्चिमी प्रशान्त के आँकडो मे सम्मिलित किया गया है, किन्तु कुछ विशिष्ट गुणो के कारण इस सागर के चक्रवातो का अलग से अध्ययन करना अधिक उपयोगी है। ये चक्रवात प्रायः उत्तरी-पश्चिमी प्रशान्त के चक्रवातो के मार्ग पर ही गति करते हैं।

चीन सागर मे उत्पन्न चक्रवातो की सख्या वर्ष मे दो महीनो मई और सितवर मे अधिकतम रहती है। जून और आरम्भ जुलाई के बीच इनकी संख्या पर्याप्त घट जाती है।

(5) बंगाल की खाड़ी और अरब सागर

इन भारतीय सागरो मे विभिन्न तीव्रता के साइक्लोन अप्रेल से दिसम्बर तक के महीनो मे उत्पन्न होते है। भारतीय मानसून कालो की सक्रमण अवधि अप्रेल-मई तथा अक्टूबर-नवम्बर मे, इनकी सख्या सर्वाधिक होती है। इन महीनो मे उत्पन्न होने वाले चक्रवातो की तीव्रता भी अधिक प्रखर होती है, जो प्राय. हरीकेन तीव्रता को प्राप्त कर लेती है। चक्रवात अधिकतर 10 से 14 उत्तरी अक्षाँशो के बीच जन्म लेते है और प्रारम्भ मे उत्तरी-पश्चिम की ओर अग्रसर होते है। अधिक उत्तरी अक्षाशो तक पहुंच जाने वाले चक्रवात प्राय. उत्तर या उत्तर-पूर्व की ओर घूम जाते है।

अरब सागर मे अपेक्षाकृत कम चक्रवात उदय होते है। यह क्षेत्र वस्तुत: संसार के सभी साइक्लोन वाले क्षेत्रो मे निम्नतम स्थान रखती है।

इन सागरो मे कुछ प्रमुख चक्रवातो की यात्रा का मार्ग चित्र (9 8) मे दिया गया है।

चित्र (9 8)
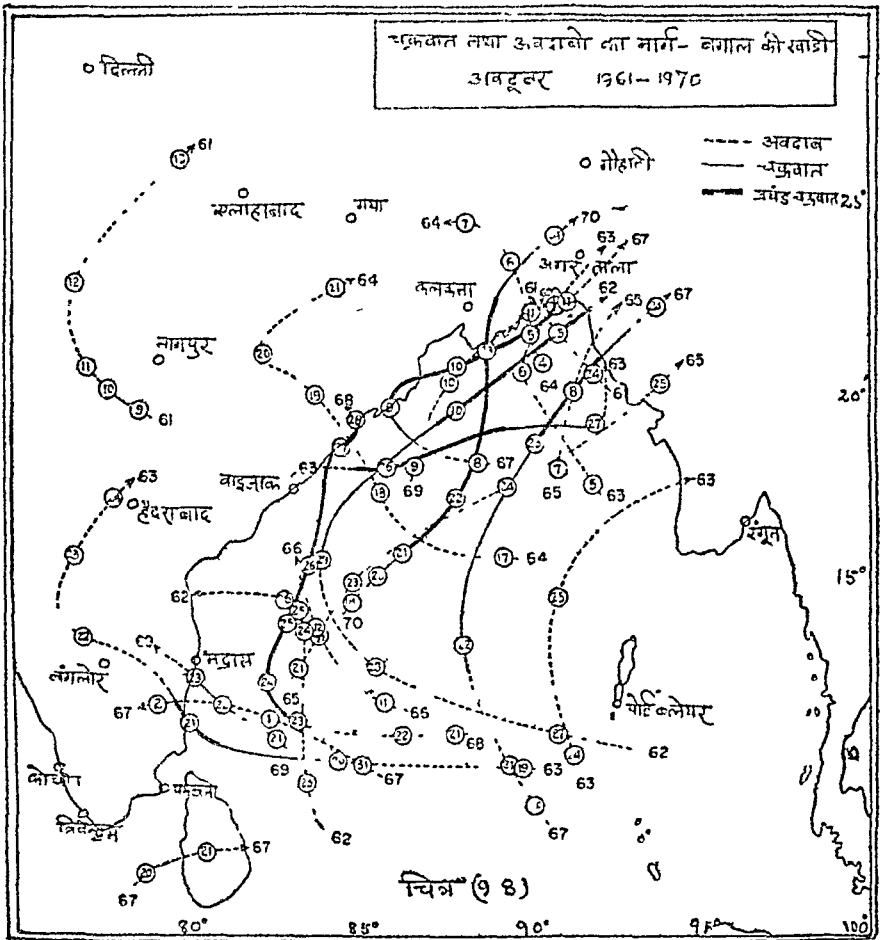
9 43 दक्षिणी-पश्चिमी मानसून काल (जून से सितबर) तक जो विक्षोभ भारतीय सागरो मे उत्पन्न होते है, उनमे बहुत कम चक्रवात-तीव्रता तक पहुच पाते है। वे अधिकतर बगाल की खाडी के उत्तरी भागो मे उदय होते है तथा पश्चिमी-उत्तर-पश्चिमी मार्ग का अनुसरण करते हुए, उत्तरी भारत पर मानसून की सक्रियता बढ़ाते जाते है। ये तूफान मानसून अवदाब कहलाते है।

भारतीय सागरो मे विभिन्न महीनो मे उत्पन्न होने वाले अवदाबो तथा चक्रवातो का सक्षिप्त विवरण सारणी (9 3) तथा (9.4) मे दिया गया है।

सारणी (9 3)

बंगाल की खाड़ी में उत्पन्न होने वाले अवदाब तथा चक्रवात

मास	उत्पत्ति क्षेत्र	विवरण
जनवरी	दक्षिणी-पश्चिमी खाडी 86 अश पूर्वी देशान्तर के पश्चिम मे ।	इनकी सख्या बहुत कम होती है और ये प्राय सागर क्षेत्रो मे ही क्षीण हो जाते है तथा तटीय क्षेत्र को प्रभावित नही कर पाते । इनके गति की दिशा उ.प. तथा द प. के बीच पायी जाती है ।
फरवरी, मार्च	—	अवदाब या चक्रवात जन्म नही लेते ।
अप्रैल	अडमान सागर या खाडी के मध्य व दक्षिणी भाग मे, 8 से 14 अश उत्तरी अक्षाश के बीच	इनकी संख्या बहुत कम होती है किन्तु तीव्रता अधिक । ये पहले उत्तर-पश्चिम की ओर बढते है, किन्तु बाद मे उत्तर या उत्तर पूर्व की ओर मुड कर चिटगाग तथा अराकान तट के बीच टकराते है ।
मई	महीने के प्रथमार्ध में 15° उत्तर के दक्षिण मे अन्दमान सागर के आसपास तथा द्वितीयार्ध मे सम्पूर्ण खाडी मे ।	इसके अधिकाश चक्रवात हरीकेन तीव्रता के होते है, जो पहले उत्तरी-पश्चिमी तथा उ० पू० दिशाओ के बीच चलते है और फिर उत्तर-पूर्व की ओर मुड़ जाते है । सभी तटो पर ये समान रूप से आघात करते है ।
जून-सितम्बर	प्राय 16° उ. के उत्तर मे 1 शीर्ष खाडी मे ।	इन अवदावो या चक्रवातो की बारम्बारता प्राय: अधिक होती है, जिनका औसत प्रतिमास 2 के लगभग आता है किन्तु इनमें से बहुत कम प्रखर चक्रवातो मे विकसित हो पाते है । ये तूफान प्राय. उडीसा या बगाल के तटो को पार कर प. उ. प. या उत्तर पश्चिम की ओर गति करते हैं जो बाद मे कभी-कभी उत्तर पूर्व की ओर मुड जाया करते हैं। कभी-कभी जून मे उत्पन्न हुए अवदाव अराकान तट को भी प्रभावित कर जाते है ।
अक्टूबर	ये 8 से 20° उ. अक्षाँश के बीच उदय होते हैं किन्तु मध्य खाडी मे सर्वाधिक	अक्टूबर और नवम्बर मे उत्पन्न चक्रवात प्राय प उ. प तथा उत्तर पश्चिम की ओर बढते है । इनमे से कुछ आगे चलकर उत्तर पूर्व की ओर मुड जाते हैं । प्रभावित तटो मे कारोमण्डल तट प्रमुख है । कुछ चक्रवात बगाल तट

नवम्बर	इनका उदयस्थल 16° उ अक्षाश से नीचे होता है। जिनमे आवे से अधिक 12° उ. अक्षाश के नीचे बनते हैं।	तथा कुछ मुड जाने के बाद अराकान तट मे भी टकराते है। इन महीनो मे उत्पन्न होने वाले तूफानो की प्रखरता सर्वाधिक होती है।
दिसम्बर	अडमान और लका के बीच के सागर क्षेत्र	इनकी संख्या बहुत कम होती है। ये प. उ. प. या पश्चिम की ओर बढते हुए कभी-कभी उत्तर-पूर्व की ओर मुड जाते है। प्रभावित तटो मे लका के तट तथा मद्रास का कारोमण्डल तट प्रमुख है। जो चक्रवात मुड जाते हैं, वे यदाकदा अराकान तट तक पहुचते हैं।

सारणी 9·4

अरब सागर में उत्पन्न होने वाले अवदाब तथा चक्रवात

मास	उत्पत्ति क्षेत्र	विवरण
जनवरी	—	इस मास मे अरब सागर मे कोई स्वतंत्र चक्रवात जन्म नही लेते, किन्तु यदाकदा दक्षिणी बगाल की खाडी मे उत्पन्न चक्रवात पश्चिम की ओर चलते हुए दक्षिणी प्रायद्वीप या श्रीलका को पार कर अरब सागर मे आ जाते हैं।
फरवरी-मार्च	—	चक्रवात उत्पन्न नही होते।
अप्रैल	मालदिव द्वीपोके समीप	ये चक्रवात प्राय: मास के अन्तिम दिनो मे उत्पन्न होते हैं और पर्याप्त तीव्रता रखते है। उत्तर-पश्चिम या पश्चिम की ओर चलते है तथा अरब सागर के उत्तरी भागो मे पहुँच कर प्राय: उत्तर-पश्चिम या उत्तर-पूर्व की ओर मुड जाते है।
मई	9 से 14 अश उ. अक्षाश के बीच	इनकी सख्या अपेक्षाकृत अधिक होती है और ये प्राय तीव्र भी पाये जाते हैं। इनका मार्ग पश्चिम और उत्तर पश्चिम के बीच होता है।

जून	67 अंश पूर्वी देशान्तर के पूर्व तथा 12 से 20 अश उत्तरी अक्षाँशो के बीच	ये चक्रवात प्रायः मास के पूर्वार्द्ध मे उत्पन्न होते है और इनकी औसत सख्या प्रति चार वर्ष मे एक होती है। ये प्रारम्भ मे उउपू की ओर बढते है तथा उत्तरी अरव सागर मे पहुँच कर प्राय· पश्चिम की ओर मुड जाते हैं। कुछेक चक्रवात उत्तर-पूर्व की ओर भी मुड जाते हैं जो काठियावाड तथा सिध के तटों को प्रभावित करते हैं।
जुलाई-सितम्बर	—	अत्यल्प संख्या
अक्टूबर	प्राय 18 अंश उत्तरी अक्षाश से नीचे	इनमे से अधिकाश चक्रवातो का मूल वंगाल की खाडी मे होता है. जो दक्षिणी प्रायद्वीप को पार कर अरव-सागर में पहुचते है तथा और अधिक तीव्र हो उठते हैं। ये प्रायः उत्तर-पूर्व की ओर वढ़कर काठियावाड तथा कोकंण तटों से टकराते है।
नवम्बर	68 अश पूर्वी देशान्तर से पूर्व तथा 8 से 16 अश उत्तरी अक्षांशो के वीच	इस मास में सर्वाधिक चक्रवात वनते हैं तथा प्राय· हरीकेन तीव्रता को प्राप्त कर लेते है। इनमे से भी कई चक्रवात वगाल की खाड़ी मे उत्पन्न हुए रहते है जो 16 अंश उत्तरी अक्षांश के दक्षिण के प्रायद्वीप को पारकर अरव सागर में पहुँचते हैं। इनमे से कुछ पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम की ओर वढते जाते है तथा कुछ उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ने के वाद 16° उ० अक्षाँश के आसपास उत्तर या उत्तर-पूर्व की ओर मुड जाते हैं। ये चक्रवात काठियावाड़ तथा कोकण तटो को प्रभावित करते हैं।
दिसम्बर	—	चक्रवात प्रायः नही उत्पन्न होते।

(6) दक्षिणी प्रशान्त महासागर

135 अंश पूर्वी से 150 अंश पश्चिमी देशान्तर तक विस्तृत इस क्षेत्र के कुल वार्षिक योग के तीन चौथाई चक्रवात जनवरी से मार्च तक उदय होते हैं।

(7) दक्षिणी--पश्चिमी हिन्द महासागर

अफ्रीका तट से 100° पू० देशान्तर तक विस्तृत इस क्षेत्र से प्रतिवर्ष 8 चक्रवातो का औसत पाया जाता है। लगभग तीन चौथाई चक्रवात जनवरी से मार्च के बीच उत्पन्न होते हैं। अप्रेल मे भी इनकी संख्या पर्याप्त रहती है।

(8) दक्षिणी-पूर्वी हिन्द महासागर

यह क्षेत्र 100° पू० से 135° पू० तक विस्तृत है। उपग्रह प्रेक्षणो की उपलब्धि से इन क्षेत्रो मे चक्रवातो की संख्या मे काफी बढौत्तरी पाई गई है। आधुनिक प्रेक्षणों के आधार पर इन क्षेत्रो मे प्रतिवर्ष 7 चक्रवात उत्पन्न होते हैं जो दिसम्बर से अप्रेल के मध्य प्रभावकारी रहते है।

9 50 मौसम उपग्रहों से साइक्लोन का विश्लेषण

साइक्लोन पहचानने तथा उनकी स्थिति सही-सही निर्धारित करने के लिए मौसम उपग्रहो द्वारा प्राप्त मेघ चित्र, अब सर्वाधिक सशक्त माध्यम हैं। प्रारम्भिक विक्षोभ अवस्था से अति प्रखर साइक्लोन तक की अवस्थाओ मे मेघो के प्रतिरूप मे जो परिवर्तन होता है, वह उपग्रह चित्रो मे स्पष्ट परिलक्षित होता जाता है। इन परिवर्तनो के आधार पर उपग्रह चित्रों की सहायता से साइक्लोन का अध्ययन करने के लिए विक्षोभो को तीन अवस्थाओ A, B, C और चार संवर्ग (Category) X 1, X 2, X 3 और X 4 मे बाँट दिया गया है। इन सभी अवस्थाओ और संवर्गों मे बादलो का प्रतिरूप, जो उपग्रह चित्रो मे दृष्टिगोचर होता है, व्यवस्थित रूप से रेखा चित्र (9.9) मे दिया गया है।

चित्र (9.9)
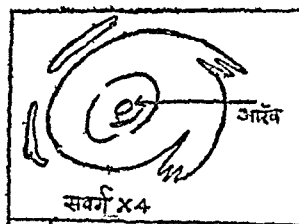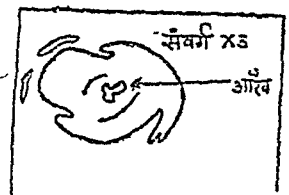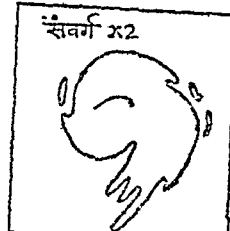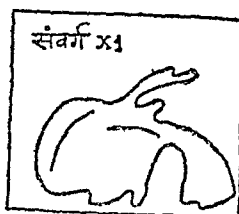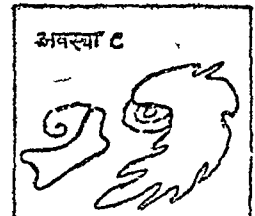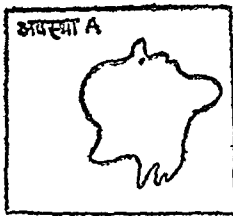
(1) अवस्था A

यह विक्षोभ की प्रारम्भिक अवस्था है, जिसमे कपासी और पक्षाभ प्रकार के घने और अपारदर्शी मेघ चित्रित रहते है। इन मेघ राशियो का औसत व्यास 3 अक्षांश या इससे अधिक होना चाहिये। अरब सागर या बङ्गाल की खाड़ी मे मेघ राशियो का औसत व्यास सामान्यत: 8 अक्षांश से अधिक पाया जाता है। इस अवस्था मे कोई नियमित वक्र रेखा या बैंड नही दिखाई पडती।

(2) अवस्था B

इस अवस्था मे घनी मेघ-राशियो मे, कपासी या मध्य मेघो की वक्र रेखाएँ या बैंड स्पष्ट होने लगते है। ये वक्र रेखाएँ या बैंड, ठीक तरह व्यवस्थित नही होते। अतः चित्रित मेघ राशि का केन्द्र स्पष्ट रूप मे ज्ञात करना कठिन होता है। पक्षाभ मेघो का अपवाह (Outflow) होता रहता है जो स्पष्ट रूप मे चित्रित होता है।

(3) अवस्था C

मेघो मे वक्र रेखाएँ व्यवस्थित हो जाती है और आकृति की रूप रेखा स्पष्टत उभर आती है, जिसमे एक मात्र केन्द्र का निर्धारण सरलता से किया जा सकता है। केन्द्र सामान्यत गहरी मेघ राशि के समीप किन्तु बाहर की ओर पडता है। कभी-कभी यह मेघ राशि के किनारे या ½ अंश अक्षांश भीतर भी अङ्कित किया जा सकता है। साधारणत. कई वक्र रेखाएँ उदित हो जाती है किन्तु सभी प्राय व्यवस्थित होती हैं।

9 51 उपर्युक्त तीन अवस्थाएँ चक्रवात के पहले की विक्षोभ अवस्थाएँ है, जो उष्ण कटिबन्धी सागरो मे प्राय. बहुत सामान्य घटनाएँ है। इन विक्षोभो मे से बहुत कम साइक्लोन के रूप मे विकसित हो पाते है। मेघ चित्रो के आधार पर साइक्लोन का विकास चक्र निम्नांकित चार संवर्गो से होकर गुजरता है।

(1) संवर्ग X 1

इस स्थिति मे चमकीले और प्राय: वृत्ताकार मेघो का धब्बा चित्रित होता है, जिनमे पक्षाभ प्रकार का बोध होता है। पक्षाभ मेघ साधारणत. एक वृत्त पाद मे बाहर की ओर खिचे दिखाई देते हैं। कपासी प्रकार के मेघ बैंड भी, पक्षाभ बैंड की परिधि के निकट दृष्टिगोचर होते है, जिनकी आकृति थोडी सर्पिल वक्र रेखाओ से घिरी होती है। 'आंख' अनुपस्थित होती है और सर्पिल प्रतिरूप का केन्द्र बहिर्वेशन द्वारा ज्ञात किया जा सकता है, जो प्राय केन्द्रीय मेघ राशि के ½ अंश अक्षांश के भीतर पडता है।

(2) संवर्ग X 2

इसमे केन्द्रीय मेघाच्छन्न राशि मे अधिक व्यवस्थित, चमकीले और असममित धब्बे मिलते है, जिनमे सर्पिल बैंड और अधिक स्पष्ट होते है। पक्षाभ अपवाह अधिक वक्र तथा विस्तृत होते है। इस धब्बे के बाहर प्राय छोटे-छोटे अव्यवस्थित बैंड दिखाई देते हैं। 'आंख' दृष्टिगोचर नही होती। किन्तु मुख्य सर्पिल बैंड के बहिर्वेशन से केन्द्र

की स्थिति ज्ञात हो जाती है। यह केन्द्र मुख्य मेघ राशि के एक अंश अक्षांश के अन्दर प्राय. पाया जाता है।

(3) संवर्ग X 3

इस स्थिति मे एक चमकीला केन्द्रीय मेघाच्छन्न धब्बा मिलता है जो सहत (Compact) और प्राय. वृत्ताकार होता है। इसके किनारो से पक्षाम अपवाह पर्याप्त मात्रा मे होता है। साधारणत. अनियमित आकार की आँख काले धब्बे के रूप मे स्पष्ट हो जाती है, जिससे साइक्लोन का केन्द्र निश्चित किया जा सकता है। आँख के समकेन्द्रिक सर्पिल बैंड केन्द्रीय वायु राशि मे छिपे होते है जिनका पता वक्र की धारियो से चल सकता है।

(4) संवर्ग X 4

प्राय· हरीकेन तीव्रता प्राप्त कर लेने के बाद चक्रवात इस स्थिति मे पहुचता है। इसमे केन्द्रीय मेघाच्छन्न धब्बा बहुत चमकीला तथा वृत्ताकार होता है, जिसके किनारे तीक्ष्ण और चिकने होते है। इस धब्बे मे कई समकेन्द्रिक धारियाँ दिखाई देती है। इस धब्बे के बाद भी व्यवस्थित और वृत्ताकार बैंड होते हैं। कुल मेघ प्रणाली बहुत सममित मालूम पडती है। चक्रवात की 'आख' एक काले और निश्चित गोल धब्बे के आकार की चमकीले बादलो से घिरी पूर्णत: स्पष्ट हो जाती है। आख की स्थिति प्राय. गोल मेघराशि के केन्द्र पर ही पडती है।

9·60 टोरनेडो (Tornado)

टोरनेडो, प्रचण्ड सर्पिल गति करता हुआ एक मेघ स्तम्भ है, जो विशालकाय कपासी वर्षी के आधार तल से निलम्बित होकर भूमितल को प्राय. छूता रहता है। यह स्तम्भ कुछ सौ मीटर के व्यास का खडा या कुछ झुका हुआ शक्वाकार अथवा पतला वेलनाकार होता है, जो हाथी की सूंड या लटके हुए रस्से की तरह दिखाई देता है। चित्र (9.10)। इसमे केन्द्रीय रेखा के चारो ओर चक्रवाती वायु गति 200 से

चित्र (9.10)
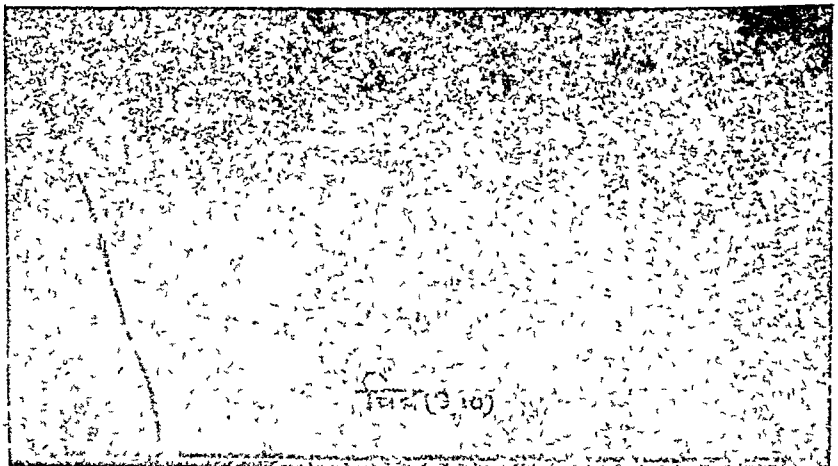
500 किमी/घण्टा के बीच आकलित की गई है। कुछ स्थितियों में मेघ स्तम्भ भूमि-तल तक नहीं पहुंच पाते। ये सामान्यतः फनेल मेघ (Funnel cloud) के नाम से जाने जाते हैं।

टोरनेडो के भीतर वायु गति इतनी प्रचण्ड और वायुदाब इतना कम होता है कि प्रचलित साधनों से उनका वास्तविक माप सम्भव नहीं है। इनके द्वारा हुई क्षति के विश्लेषण से तथा दाब और वायुगति के सैद्धान्तिक सम्बन्धों के आधार पर, टोरनेडों के केन्द्रीय दाब का आकलन किया गया है। इन आकलनों के अनुसार, केन्द्र बिन्दु पर वायुदाब 100–200 मिलीबार तक गिर जाता है, जिससे टोरनेडो-स्तम्भ के भीतर अत्यन्त तीव्र दाब प्रवणता स्थापित हो जाती है। यही प्रवणता प्रचण्ड चक्रवाती प्रवाह उत्पन्न करती है। कुछ आकलनों के अनुसार केन्द्रीय दाब में ह्रास इससे भी अधिक पाया जाता है।

स्थानीय तौर पर, एक सीमित क्षेत्र के लिए टोरनेडों सर्वाधिक विनाशकारी वायुमण्डलीय घटना है। टोरनेडो मुख्यतः मध्य अक्षांशीय महाद्वीपों में ही उत्पन्न होते है। किन्तु संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और आस्ट्रेलिया के अलावा अन्य स्थानों में ये बहुत कम होते है। इन दोनो स्थानो मे टोरनेडो की वार्षिक संख्या का औसत क्रमशः 145 और 140 है। अमेरिका के टोरनेडो अपेक्षाकृत अधिक प्रचण्ड होते है।

उष्ण कटिबन्धों मे टोरनेडो लगभग नहीं उत्पन्न होते है। बंगाल देश, आसाम, मेकाङ्ग डेल्टा तथा दक्षिणी वियतनाम अप्रैल या मई में जब कभी विशाल कपासी वर्षा मेघ उत्पन्न होते हैं, तो इनमे यदा-कदा टोरनेडो के गुणों से मिलते-जुलते फनेल मेघ खिच आते है। पर इनकी प्रचण्डता वास्तविक टोरनेडों से बहुत कम होती है।

9 61 जल सतह के ऊपर उत्पन्न टोरनेडो जलघूर्णमेघस्तम्भ या जलस्पाउट (Water spout) कहलाते है। इनका तीव्रता अपेक्षाकृत कम होती है। जलस्पाउट उष्ण कटिबन्धो मे भी पर्याप्त संख्या में उत्पन्न होते हैं और साधारणतः समुद्रों में पाये जाते है तट के समीप पहुंचते-पहुंचते जल स्पाउट प्रायः क्षीण हो जाते है।

9.62 टोरनेडो से सम्बन्धित सामान्य तथ्य

(1) टोरनेडो प्रायः गर्मी के महीनों मे अधिक उत्पन्न होते है। अमेरिका मे इनकी उच्चतम और न्यूनतम संख्या क्रमशः मई और दिसम्बर में पाई जाती है। 80% टोरनेडो अमेरिकन मानक समय के दोपहर और 2100 बजे के बीच उत्पन्न होते है।

टोरनेडो उत्पन्न होते हो, किन्तु इस परिकल्पना का प्रायोगिक सत्यापन अभी तक नहीं हुआ है।

(3) टोरनेडो उत्पन्न करने वाले कपासी वर्षी बहुत अधिक ऊँचाई तक विकसित होने के कारण बहुत गहरे रग के दिखाई देते है। टोरनेडो उत्पन्न होने से पूर्व कपासी वर्षी के अन्दर बार-बार मॅम्मेटस मेघ (स्तन मेघ) दिखाई देते है तथा प्रचण्ड गर्जन आरम्भ हो जाता है। कभी-कभी हरे रग की तडित या बाल (ball) तडित भी देखी जाती है। लेकिन कुछ परिस्थितियो मे बिना तडित झझा के भी टोरनेडो के उत्पत्ति पे क्षित की गई है। टोरनेडो की उत्पत्ति के एक या दो घण्टे पहले तथा बाद तक भारी वर्षा तथ बडे-बडे ओलो की बौछार सामान्यत. देखी गई है।

(4) टोरनेडो स्तभ के बाहर कुछ किलोमीटर के घेरे मे 3 से 10 मिलीबार तक दाब का घटना प्रेक्षित किया गया हे। अत. टोरनेडो निम्नदाब क्षेत्र से घिरा हुआ होता है।

(5) धरातल तक पहुचने वाला टोरनेडो, तेज गर्जन उत्पन्न करता है, जो लगभग 30–40 किमी दूर से ही स्पष्ट सुनाई दे जाती है।

(6) टोरनेडो स्तम्भ का अक्ष आरम्भ मे ऊर्ध्वाधर हो सकता है। किन्तु शिखर और भूमि तल पर, विभिन्न गतियो के कारण यह अक्ष झुक जाता है। आधार प्राय पीछे रह जाता है, क्योंकि धरातलीय घर्षण के कारण भूमितल पर गति अपेक्षा कृत कम हो जाती है। अन्तत टोरनेडो स्तभ कपासी वर्षी मेघ से पूर्णतः विच्छिन्न हो जाता है।

(7) टोरनेडो की रेखिक गति मे बहुत भिन्नता पाई जाती हैं, जो शून्य से 200 किमी/घण्टा से अधिक के बीच आकलित की गई है। औसत गति 54 किमी/घण्टा आती है। टोरनेडो द्वारा तय की गई दूरी का परास कुछ मीटर से लेकर 450 किमी तक देखा गया है, जिसका औसत लगभग 7 किमी होता है। इस प्रकार टोर-नेडो का जीवन काल औसतन 15 सैकड से 8 मिनट तक का हो सकता है। चरम अवस्था मे कभी-कभी टोरनेडो कुछ घण्टे तक भी सक्रिय रहते है।

सामान्यत वाताग्र जनित टोरनेडो, सवाहनिक कारणो से जनित टोरनेडो की अपेक्षा, अधिक गति और आयु रखने के कारण अधिक दूरी तक प्रभावशील रहते हैं।

(8) टोरनेडो दो प्रकार से विनाश करता है :—(1) स्तभ में प्रचण्डता से घूर्णन करती अन्तर्मुखी हवाएँ बहुत तीव्र चूषण (Suction) प्रभाव उत्पन्न कर देती हे, जिससे उनकी सीमा के अन्तर्गत आने वाली भारी वस्तुएँ भी, काफी ऊपर तक उठा ली जाती है। भूमितल के पास घर्षण के कारण, चक्रवाती हवाएँ अधिक अन्तर्मुखी प्रवाह रखती हे। (2) दाब के अचानक गिर जाने तथा परिणामस्वरूप उत्पन्न प्रचण्ड झझा मे, भूमि के फट जाने तथा इमारतो के टूट जाने की घटनाएँ होती है।

धरातलीय तथा आन्तरिक घर्षण के कारण, टोरनेडो मे भयानक भँवर तथा विक्षोभ उत्पन्न होते रहते है, जिससे विनाशकारी निर्वात के झोके आते रहते है। एक टोरनेडो से अभी तक की अधिकतम जन हानि का रिकार्ड 689 है। यह टोरनेडो 18 मार्च, 1925 को अमेरिका में उत्पन्न हुआ। एक पूरे दिन की जन हानि का रिकार्ड भी अमेरिका मे ही पाया गया है। 19 फरवरी 1884 को 1200 व्यक्ति टोरनेडो द्वारा मृत्यु को प्राप्त हुए। इनमे से अधिकाश मौते उड़ती हुई भारी वस्तुओ के सिर से टकरा जाने के कारण हुई। एक अनुमान के अनुसार अमेरिका मे प्रति वर्ष 11 करोड़ डालर से अधिक सम्पत्ति का विनाश टोरनेडो के कारण होता है।

9 70 प्रतिचक्रवात

प्रतिचक्रवात एक विशाल वायुमण्डलीय भवर है, जो उच्चदाव केन्द्र के चारो ओर उत्तर गोलार्द्ध मे दक्षिणावर्त (Clockwise) तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे वामावर्त (Anticlockwise) घूर्णन करता है। प्रतिचक्रवात एक उच्चदाव क्षेत्र होता है। चूँकि किसी स्थान का दाब वहाँ के वायुमण्डलीय स्तम्भ की मात्रा को व्यक्त करता है, अत. प्रतिचक्रवात के ऊपर वायुमण्डल का भार आस-पास की अपेक्षा अधिक होगा। इसलिए स्पष्ट है कि प्रतिचक्रवात के ऊपर की हवा अधिक घनत्व वाली अर्थात् ठडी और शुष्क होनी चाहिए। किन्तु व्यावहारिक रूप से सवत्र ऐसा नही पाया जाता। अनेक प्रतिचक्रवातों पर 3–4 किमी ऊँचाई तक उष्ण वायुराशि छायी रहती है। यह उष्णता सम्भवत उच्चतर वायुमण्डल मे अवतलन के कारण उत्पन्न होती है।

जब भी किसी वायुराशि के भीतर धरातलीय दवाव वढता है अर्थात् उच्च दाव क्षेत्र जनित होता हे, तो धरातल पर अपसरण की क्रिया शुरू हो जाती है। इसके फलस्वरूप इसमे उच्च स्तरों से निचले स्तरो की ओर वायु का अवतलन आरम्भ हो जाता है। चूकि किसी क्षेत्र मे मौसम की घटना के उत्पन्न होने के लिए आरोही वायु गति की अनिवार्य है, अत उच्चदाव क्षेत्र या प्रतिचक्रवात शुष्क तथा साफ मौसम से सम्बन्धित रहता है। प्रतिचक्रवात के केन्द्र के निकट हवाएँ हल्की तथा वहिर्मुखी होती है।

9.71 प्रतिचक्रवातो को दो श्रेणियों मे वांटा जा सकता है (1) शीतल प्रतिचक्रवात (Cold Anticyclone) (2) उष्ण प्रतिचक्रवात (Warm Anticyclone)। शीतल प्रतिचक्रवात मे उच्चदाव, धरातल तथा निचले स्तरो पर वायु के कम तापमान तथा अधिक घनत्व के कारण उत्पन्न होता है। उष्ण प्रतिचक्रवात मे धरातल तथा निचले स्तरो पर उष्ण व हल्की वायु राशि होती है। इसमें उच्च दाव उच्च स्तरो पर स्थित वायु की अधिकता के कारण होता है। शीतल प्रतिचक्रवातो का उर्ध्वाधर विस्तार अधिक नही होता है। इनका प्रभाव धरातल से ऊपर लगभग 2500 मीटर तक ही विस्तृत होता है। साइबेरिया के ऊपर शीतकाल मे पाया जाने वाला शीतल प्रतिचक्रवात ऊँचाई के साथ कमजोर होता जाता है तथा एक निश्चित ऊँचाई पर इनका स्थान निम्न दाव ग्रहण कर लेती है।

इसके विपरीत उष्ण प्रतिचक्रवात ऊँचाई के साथ सशक्त होता जाता है, जैसे उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब पेटिकाएँ। ये उच्चदाब पेटिकाएँ 20^0 उ० से 40° उ० के मध्य पाई जाती है तथा ऋतुओ के बदलने के साथ इनकी स्थिति मे परिवर्तन होता है। सूर्य की स्थिति बदलने के साथ इसकी स्थिति मे भी उत्तर या दक्षिण दिशा मे स्थानान्तरण होता है। ग्रीष्म काल मे ये उच्चदाब पेटिकाएँ अतलांटिक तथा प्रशान्त महासागर के क्षेत्र पर स्थित होती है। शीतकाल मे ये थलीय क्षेत्रों पर भी विस्तृत हो जाती है। इन उच्चदाब पेटिकाओ मे अवतलन अपेक्षाकृत अधिक तीव्र होता है। अत. शुष्क तथा गर्म अवतलित हवा के कारण, यहाँ मौसम साफ तथा सुन्दर होता है तथा दृश्यता भी प्राय. बहुत अच्छी रहती है। ये प्रतिचक्रवाती क्षेत्र, उष्ण कटिबन्धी महासागरीय वायुराशियों के मुख्य उत्पत्ति स्थान है। यह उल्लेखनीय है कि ये उष्ण कटिबन्धी महासागरीय वायु राशियाँ ही, उच्चतर अक्षाश मे पहुचकर मेघ, कुहरा तथा वर्षा उत्पन्न करती हैं।

कुछ प्रतिचक्रवात, स्थायिवत होते है। इस प्रकार के प्रतिचक्रवात, किसी क्षेत्र मे कई माह अथवा वर्ष भर पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब पेटिकाएँ स्थायी प्रतिचक्रवात की श्रेणी मे आते हैं, क्योंकि ये लगभग पूरे वर्ष अपने स्थान पर स्थित होती हैं। कभी-कभी ये निम्न वायुदाब प्रणालियों द्वारा विस्थापित की जाती है। साइबेरिया का उच्चवायु दाब का क्षेत्र भी स्थायिवत प्रतिचक्रवात का उदाहरण है, क्योंकि यह लगभग पूरे शीतकाल मे स्थायी रूप से पाया जाता है।

कुछ प्रतिचक्रवात अस्थायी होते है तथा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण करते हैं। ये प्रतिचक्रवात अपनी यात्रा के दौरान किसी स्थान को क्षणिक रूप से प्रभावित कर सकते है। अस्थायी प्रतिचक्रवात मध्य अक्षाशों मे विशेषत. पाए जाते हैं। मध्य अक्षाशो को जब एक के बाद दूसरे वाताग्र अवदाब प्रभावित करते है, तो हर दो अवदाबो के मध्य प्रतिचक्रवात होते है। ये प्रतिचक्रवात उस अवधि तक स्वच्छ तथा साफ मौसम देते हैं, जब तक कि पिछले अवदाब का उष्ण वाताग्र प्रभावित न करने लगे। इस प्रकार प्रतिचक्रवात चार प्रकार के हुए—

(1) स्थायी शीतल प्रतिचक्रवात

(2) अस्थायी शीतल प्रतिचक्रवात

(3) स्थायी उष्ण प्रतिचक्रवात

(4) अस्थायी उष्ण प्रतिचक्रवात

9.72 तिब्बत का पठार भारतीय मानसून प्रवाह पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालता है क्योंकि ग्रीष्म के प्रारम्भ मे पठार का उष्मन उष्ण प्रतिचक्रवात कोशिका धरातल से लगभग 600–500 मीलीबार तक उत्पन्न करता है। यह प्रतिचक्रवात पठार के दक्षिण मे पूर्वी प्रवाह उत्पन्न करता है, जो निश्चित रूप से पश्चिमी जेट धाराओ को क्षीण करता है तथा उत्तरी-पूर्वी भारत पर, पूर्वी मानसून धाराओ को सशक्त बनाता है।

9 73 कटक

प्रतिचक्रवात से किसी भी दिशा मे बाहर की ओर निकले हुए भाग को कटक कहते है। यह साधारणत एक निष्क्रिय प्रणाली है। जब यह दो अवदाबों के बीच स्थित होता है, तो इसकी गति अवदाबो की गति द्वारा ही नियन्त्रित होती है। कुछ कटक लगभग स्थिर होते है। किन्तु कुछ की गति तेज होती है। कटको की गति की जानकारी दाब की प्रकृति के अध्ययन से समझी जा सकती है। कटक, बढते दाब वाले क्षेत्र की दिशा मे तथा घटते दाब वाले क्षेत्र से विपरीत दिशा मे गति करते है। वाताग्र अवदाबो के पृष्ठ भाग में स्थित कटक के क्षेत्र मे, मौसम सामान्यत. साफ होता है, जो ध्रुवीय वायु के अवतलन के कारण होता है।

9 80 काल

काल, अत्यन्त धीमी वायु और अनिश्चित मौसम से युक्त वह क्षेत्र है, जो दो उच्च तथा दो निम्न दाबो से घिरा होता है। इस प्रणाली मे वायु प्रवाह चित्र (2 12) के अनुसार होता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, चक्रवात तथा प्रतिचक्रवात प्रणालियों मे वायु की गति परिसचारी (circulatory) होती है, किन्तु काल मे ऐसा नही होता। इसमे वायु दो दिशाओ मे काल-क्षेत्र की ओर तथा शेष दो दिशाओ में इससे दूर गति करती है। इस प्रकार काल, चक्रवात तथा प्रतिचक्रवात प्रणालियों से भिन्न है। काल क्षेत्र मे मौसम कैसा होगा, यह अन्य मौसम परिस्थितियो पर निर्भर है। शीतकाल मे काल क्षेत्र मे निम्न मेघ तथा कुहरे की घटनाएँ प्राय घटित होती है। ग्रीष्म काल मे, उपयुक्त उच्च वायुमण्डलीय परिस्थितियो मे कालक्षेत्र मे तडित झझा की प्रबल सभावना रहती है। काल, वाताग्र उत्पत्ति के लिए अत्यन्त उपयुक्त क्षेत्र है। यदि धरातल तथा निम्न स्तरो पर मौसम मानचित्र मे काल क्षेत्र हो, तो उस क्षेत्र मे उच्चतर क्षोभमण्डल मे विक्षोभ (turbulence) की संभावना होती है। यह स्थिति विमानो के लिए विशेष घातक है। उच्चतर वायुमण्डलीय विक्षोभ प्राय: कपासी या कपासी वर्षी मेघो से सम्बन्धित होते है, किन्तु काल क्षेत्रो के ऊपर विक्षोभ, मेघरहित वायु तहो मे ही उत्पन्न होते हैं, जिन्हे स्वच्छ वायु विक्षोभ (Clear Air Turbulence या CAT) कहा जाता है।

10

मौसम विश्लेषण और पूर्वानुमान के प्राथमिक सिद्धान्त

(Rudiments of Weather Analysis and Forecasting)

10.10 विश्लेषण के लिए मौसम आंकड़े

दूर सचार तथा प्रतिकृति (Facsimile) रिसीवर की सुविधाओ से युक्त एक मौसम केन्द्र सामान्यत अनेक प्रकार के धरातलीय तथा उच्चतर वायुमण्डलीय मौसम आकडे प्राप्त करता है, जिनके अकन और विश्लेपण से मौसम मानचित्र (Weather map) तैयार किया जाता है। प्रतिकृति रिसीवर द्वारा दूसरे केन्द्रो मे तैयार किए गए मौसम चार्ट एवं अन्य सामग्रियाँ भी, ज्यो-की-त्यो प्राप्त हो जाती है। मौसम उपग्रहो द्वारा प्रेपित मेघ चित्र भी अव नियमित रूप से आने लगे है, जिनके लिए भारत मे 6 रिसीविग केन्द्र स्थापित किए जा चुके है।

अत मौसम विश्लेपण के लिए प्राप्त सभी सामग्रियो मे से उन आंकडो का चयन करना आवश्यक होता है, जो उस क्षेत्र के दैनिक मौसम विश्लेपण एव पूर्वानुमान के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो। एक समय पर लिए गए समकालीन प्रेक्षणो को मानचित्र मे यथा स्थान अकित कर दिया जाता है। इन असतत (discrete) प्रेक्षणो की सहायता से पूरे क्षेत्र के मौसम प्राचलों को सतत आलेखीय रेखाओ द्वारा चित्रित करना **समकालीन मौसम विश्लेषण** कहलाता है। ये रेखाएँ मौसम प्राचलो की समरेखाएँ (isopleths) कहलाती है। समकालीन मौसम विश्लेपण, समकालीन पैमाने (कुछ सौ किमी के क्रम का) पर मौसम प्रणालियो का विवरण देता है। इससे सूक्ष्म पैमाने (microscale) पर स्थानीय प्रभाव, जैसे विकिरण उष्मन या शीतलन, पर्वतीय प्रभाव, जल-थल आवंटन, सवाहनिक धाराएँ आदि समकालीन विश्लेपण क्षेत्र मे छन जाती है। अत स्थानीय मौसम पूर्वानुमान के लिए जो प्रायः 50 से 100 वर्ग किमी क्षेत्र के लिए बनाया जाता है, अलग से विचार करना आवश्यक है। समकालीन विश्लेषण अपेक्षाकृत वडे पैमाने पर मौसम प्रणालियो की स्थिति तथा गतिशीलता पर प्रकाश डालता है।

10.11 समकालीन विश्लेषण के लिए कुछ प्रमुख प्रेक्षणो का विवेचन निम्नाकित हैं :—

(क) धरातलीय प्रेक्षण

(1) दाब

धरातलीय असमतलता के कारण स्टेशन स्तर का दाब मौसम मानचित्र पर प्रतिनिधि प्राचल के रूप मे नही लिया जा सकता। इसके लिये धरातलीय दाब को माध्य समुद्र तल पर अवतलित करना पड़ता है। किन्तु इस अवतलन के परिणाम-स्वरूप त्रुटि का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। समुद्र तल के दाब मे मानक त्रुटि (standard error), प्रति 300 मीटर स्टेशन की ऊँचाई के लिए 0 5 मिलीबार के लगभग पाई जाती है।

यन्त्र त्रुटि भी दाब के अप्रतिनिधित्व को बढावा देती है। विशेषकर उष्ण कटिबंधी क्षेत्रो मे, जहां वेधशालाएँ सैकडो किमी० दूरी पर स्थिति है, तुलना की सुविधा उपयुक्त नही है। विषुवत् रेखा के पास, जहाँ दाब-प्रवणता अत्यन्त क्षीण होती है, थोडी यन्त्र त्रुटि भी दाब प्रणाली का केन्द्र निश्चित करने मे पर्याप्त अन्तर ला सकती हैं। इन कठिनाइयो के कारण उष्ण कटिबन्धो मे दाब-विश्लेषण की उपयोगिता बहुत सीमित रह जाती है।

किसी निश्चित अवधि मे, दाब-परिवर्तन नि.सन्देह निरपेक्ष दाब की अपेक्षा अधिक यथार्थ राशि है। 3 घण्टे या 24 घण्टे का दाब-परिवर्तन अथवा दाब प्रवृत्ति को अंकित कर, उनकी समरेखाओ द्वारा चार्ट का विश्लेषण करना अनेक स्थितियों मे उपयोगी पाया जाता है। इन समदावान्तर रेखाओ को आइसोलोवार (Isollobar) या समदाब परिवर्तन रेखाएँ कहते हैं।

(2) तापमान तथा ओसांक

उष्ण कटिबन्धो मे तापमान का दैनिक चलन, प्राय. समकालीन प्रणालियो के प्रभाव से उत्पन्न, तापमान परिवर्तन से अधिक पाया जाता है। इसका कारण यही है कि सूक्ष्म पैमाने पर स्थानीय तापमान; आर्द्रता, संवाहनिक धाराएँ मेघाच्छादन तथा वायुगति पर अपेक्षाकृत अधिक निर्भर करता है। अत. समकालीन पैमाने पर इनका विश्लेषण अनुपयुक्त है। वायु तापमान की ही तरह, ओसाक का स्थानीय चलन भी समकालीन परिवर्तनो पर भारी पड़ता है किन्तु इसका दैनिक परिसर, तापमान की अपेक्षा बहुत कम होता है। सागर तलो पर ओसाक का दैनिक चलन और भी कम होता है, अत. वहां पर ओसाक–विश्लेषण की सहायता से समकालीन प्रभावो का अध्ययन करना अधिक सरल है। ऐसे क्षेत्रो मे ओसाक का समकालीन विश्लेषण करना उपयोगी हो सकता है।

जिन क्षेत्रो मे वाताग्र उत्पन्न होते हैं अथवा जहा दो विभिन्न वायुराशियाँ एक साथ प्रभावशील रहती है, वहाँ उनके यथार्थ निर्धारण के लिए, ओसाक एक महत्वपूर्ण सरक्षी प्राचल है। अत. वहाँ ओसाक तथा ओसॉक-परिवर्तन की प्रवृत्ति का विश्लेषण करना विशेष महत्वपूर्ण हैं।

(3) हवा

घर्षण प्रभावो से मुक्त महासागरीय क्षेत्रो के ऊपर, सागरतलीय हवा सम-कालीन प्रभावो को व्यक्त करने के लिए महत्वपूर्ण प्राचल है। भूमि पर विशेषत· उष्ण

सारणी (10·2)

दाब स्तर (मिलीबार)	औसत ऊँचाई (मीटर)	स्तर (मिलीबार)	औसत ऊँचाई (मीटर)
850	1500	250	10600
700	3100	200	12300
500	5800	150	14100
400	7600	100	16600
300	9500		

रेडियो सोन्दे द्वारा प्राप्त समदाब पृष्ठो की ऊँचाइयों मे, तापमान और दाब के कारण जो त्रुटियाँ उत्पन्न हो जाती है, उनके कारण कन्टूर विश्लेषण की प्रतिनिधित्व क्षमता, विशेषकर निम्न अक्षाँशो मे घट जाती है।

10 13 रेडियो सोदे या पायलट गुब्बारो द्वारा लिए गए हवा के प्रेक्षण वायुमण्डलीय तहो का औसत सदिश वायु-वेग व्यक्त करते हैं। ये तहे साधारणतः विभिन्न मोटाई की हुआ करती है। प्रायोगिक तौर पर दिशा मे ± 10 अंश तथा वायु गति मे ± 10% की त्रुटि सीमा के अन्दर, ये प्रेक्षण सही होते है। उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रो मे, जेट धाराओ से प्रभावित क्षेत्रो को छोडकर, प्रायः वायुगति 45 किमी/घण्टा से कम ही पाई जाती है। अनेक क्षेत्रो मे मण्डलीय (zonal) (पूर्वी या पश्चिमी) वायु-प्रवाह का उत्क्रमण भी प्राय देखा जाता है। ऐसे अवसरो पर वायु के प्रेक्षण मे और अधिक यथार्थता अपेक्षित होती है।

मौसम उपग्रह द्वारा प्रेषित चित्रो से भी वायुवेग का आकलन करने के कुछ तकनीक विकसित किए गए है। पक्षाभ मेघो के आवटन और प्रसार से, क्षोभ सीमा के निकट की वायु का बोध हो सकता है। मेघो की प्रसार-प्रवृत्ति, सातत्य एव जलवायु के ज्ञान से वायुवेग आकलित करने के, कुछ नियम निर्धारित कर दिए गए है। तुलना करने पर ये आकलन सर्दियो मे 300 तथा 200 मिलीबार स्तर पर रेडियो सोन्दे प्रेक्षणो से वहुत निकट पाए गए है।

10·20 मौसम चार्टों के लिए मानचित्र

समकालीन मौसम-चार्ट सुविधापूर्वक तैयार करने के लिए ऐसे मानचित्र वनाना आवश्यक है, जिनमे भूमण्डल का गोलकीय प्रारूप एक समतल कागज पर प्रदर्शित किया जा सके। पृथ्वी के पृष्ठ पर स्थित बिन्दुओ का, किसी समतल मानचित्र पर यथार्थ प्रदर्शन के लिए, पृथ्वी के वक्र पृष्ठ से अक्षाश और देशान्तर रेखाओ के ग्रिड को, मानचित्र के समतल पृष्ठ पर रूपान्तरित कर दिया जाता है।

इस रूपान्तरण को **मानचित्र प्रक्षपण** (map-projection) कहते हैं। प्रक्षेपण कुछ नियमो के अन्तर्गत किया जाता है, जिससे भूमण्डल पर स्थित विन्दुओ की, मानचित्र के विन्दुओ से एकैक संगति (one to one correspondence) स्थापित की जा सके।

मानचित्र तैयार करने के लिए पहले भूपृष्ठ को समतल या ऐसे पृष्ठो पर प्रक्षेपित कर लिया जाता है, जिन्हे खोलकर समतल पृष्ठ का रूप दिया जा सके, जैसे वेलन और शकु। इन्हे **विम्व पृष्ठ** (Image Surface) कहते है। फिर विव पृष्ठ को खोलने के वाद, जो समतल मानचित्र प्राप्त होता है, उसे समुचित पैमाने, उदाहरणार्थ —$1:10^7$ पर, सकुचित कर लेते है।

10·21 समकालीन मौसम मानचित्रो के उद्देश्य से सामान्यत अनुकोण (conformal) प्रक्षेपण के चार्ट तैयार किए जाते है। इसमे किसी विन्दु पर मानचित्र का विम्व पैमाना हर दिशा मे समान होता है। परिभाषा के अनुसार किसी दिशा मे

$$\text{विम्व पैमाना} = \frac{\text{विम्व पृष्ठ पर एक विन्दु और उसके निकटतम विन्दु के मध्य की दूर}}{\text{भू-पृष्ठ पर इन्ही के सङ्गत विन्दुओ के मध्य की वास्तविक दूरी।}}$$

यदि यह अनुपात हर दिशा मे समान होगा, तो भू-पृष्ठ पर खीची गई किन्ही दो रेखाओ के वीच का कोण वही होगा, जो मानचित्र पर इन रेखाओ के प्रक्षेप के वीच होता है। इसको स्पष्ट करने के लिए निम्नाकित तर्क पर विचार कीजिए।

मान लीजिए, P, Q और R तीन विन्दु, पृथ्वी की सतह पर लिए गए है, जिनका मानचित्र पर प्रक्षेप विन्दु P′ Q′ और R′ है। यदि विन्दु क्रमागत (Consecutive) है, तो $\triangle$PQR का क्षेत्रफल शून्य हो जाएगा। दोनो त्रिभुजो PQR और P′Q′R′ की सङ्गति भुजाओ का अनुपात समान होगा, क्योकि परिभाषा के अनुसार विम्व पैमाना हर दिशा मे समान होगा। इस प्रकार, दोनो त्रिभुज समान (Similar) हुए और उनके सङ्गतिकोण एक दूसरे के वरावर। अत प्रक्षेपण मे रेखाओ के वीच के कोण का मान सरक्षित रहता है। यही कारण है कि अनुकोण प्रक्षेपणो मे छोटे क्षेत्रो का आकार यथावत् रहता है। वड़े क्षेत्रो के लिए आकार संरक्षित नही रह पाता, क्योकि समविन्यास (conformality) की यथार्थता केवल सूक्ष्म दूरियो के लिए ही निश्चित है।

इसके अतिरिक्त सदिश राशियो, जैसे-वायुवेग का अङ्कन अनुकोणिक प्रक्षपण के मानचित्रो पर अपेक्षाकृत अधिक सरलता से हो सकता है, क्योकि इन मानचित्रो पर दिशाओ का मान वही रहता है जो पृथ्वी की सतह पर।

10 22 मौसम मानचित्रो के लिए 3 प्रकार के अनुकोणिक प्रक्षेपण प्रयोग मे लाये जाते हैं।

(1) **मरकेटर प्रक्षपण**—इसको सवसे पहले सन् 1559 मे जी० मरकेटर ने जन्म दिया। इसमे प्रक्षेपण पृष्ठ एक वेलन होता है, जिसका अक्ष पृथ्वी के अक्ष से सपाती (coincident) होता है। वेलन की त्रिज्या अचर होती है, जिसे विभिन्न

अक्षांशों पर यथार्थ पैमाने के लिए इस अनुसार नियोजित किया जा सकता है। यदि पृथ्वी और बेलन की त्रिज्या बराबर मान ली जाए, तो बेलन पृथ्वी को विषुवत् रेखा पर स्पर्श करेगा। चित्र (10·1) स्थिति (i)। इस स्थिति में विषुवत् रेखा पर, पैमाना अनुपात या सिरा पैमाना विषुवत् रेखा पर सही होगा। दूसरे शब्दों में, पैमाना विषुवत् रेखा पर यथार्थ है। विषुवत् रेखा इस दशा में मानक समानान्तर कहलाती है। यह प्रक्षेपण स्पर्शी मरकेटर प्रक्षेपण कहलाता है। यदि बेलन की त्रिज्या कम हो, तो वह पृथ्वी के गोले को दो स्थानों पर काटेगा। ये वृत्त विषुवत् रेखा के दोनों ओर समान दूरी पर पाए जाएँगे और दोनों ही मानक समानान्तर होंगे। इस अवस्था में जो प्रक्षेपण बनेगा, वह छेदक मरकेटर प्रक्षेपण कहलाता है। चित्र (10·1 स्थिति ii)
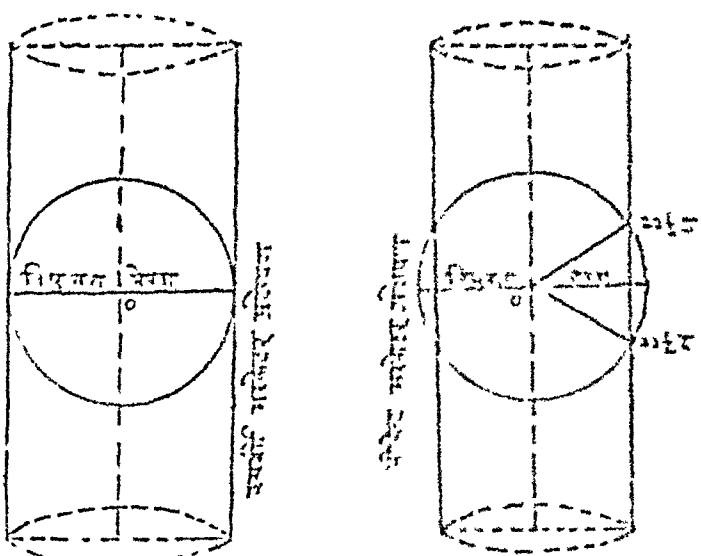
चित्र (10·1)

(स्थिति i) (स्थिति ii)

मरकेटर प्रक्षेपण में प्रत्येक अक्षांश वृत्त, बेलन पर क्षैतिज वृत्त के रूप में प्रक्षेपित होता है और जब बेलन खोला जाता है, तो ये सभी वृत्त, बेलन की परिधि के बराबर लम्बाई की क्षैतिज रेखाओं के रूप में आ जाते हैं। इसी प्रकार देशान्तर रेखाओं का प्रक्षेपण अक्षांश रेखाओं के लम्बवत् समान दूरियों पर होता है।

अक्षांश रेखाओं की विषुवत् रेखा से दूरियाँ तेजी से बढ़ती जाती हैं और ध्रुवों पर अनन्त हो जाती हैं। दूसरे शब्दों में, मरकेटर प्रक्षेपण में ध्रुवों को चित्रित नहीं किया जा सकता। अतः इस प्रक्षेपण द्वारा वे ही मानचित्र अधिक उपयोगी होते हैं, जिनमें ध्रुवीय क्षेत्रों की उपस्थिति महत्वपूर्ण न हो। ये उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों को प्रदर्शित करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं। इसका दूसरा गुण रचना की सरलता है। आप किसी भी आकार के मानचित्र के लिए उपयुक्त पैमाना चुन लीजिए। केन्द्र पर

एक सरल रेखा द्वारा विषुवत् रेखा खीच लीजिए। निम्नांकित सरल समीकरण द्वारा दो देशान्तरो λ और $\lambda+d\lambda$ के बीच की दूरी dx की गणना कर लीजिए।

$$dx = a \cos\phi_0 d\lambda,$$

जहाँ a पृथ्वी की त्रिज्या और ϕ_0 वह अक्षाश वृत्त है, जहाँ पैमाना यथार्थ है। विषुवत् रेखा को dx की इकाइयो मे बाट कर समान्तर लम्बवत रेखाएँ खींच लीजिए। ये देशान्तर प्रदर्शित करती है।

अब निम्नाकित समीकरण से अक्षाश वृत्तो ϕ की विपुवत् रेखा से दूरी y की गणना कर लीजिए।

$$y = a \cos \phi_0 \log \tan \left(\frac{\pi}{4} + \frac{\phi}{2}\right),$$

अक्षाश की इन दूरियो को देशान्तर पर अकित करके विपुवत रेखा के समान्तर अक्षांश रेखाएँ खीच लीजिए। यह ग्रिड तैयार कर लेने के बाद, मानचित्र के बिन्दु अंकित करना आसान कार्य है।

10 23 लैम्बर्ट का अनुकोणिक शांकव (conical) प्रक्षेपण

यह नाम इसके आविष्कर्ता, जे०जी० लैम्बर्ट (1772) पर रखा गया है। इसमे विव पृष्ठ एक शंकु होता है, जिसका अक्ष पृथ्वी के अक्ष से संपाती होती है। मरकेटर प्रक्षेपण की तरह, इसमे भी शकु पृथ्वी के गोले के किसी मानक समानान्तर पर, या तो स्पर्श करता है या दो मानक समानान्तरो पर काटता है। इन स्थितियो मे क्रमश' स्पर्शी तथा सीकेंट शांकव प्रक्षेपण प्राप्त होते है। (चित्र 10·2) यदि यह शकु, प्रक्षेपण के बाद जनक रेखा (generator line) से खोला जाए, तो वृत्त का एक सेक्टर प्राप्त होता है। सारे भू-मण्डल का मानचित्र इस वृत्त पर प्रस्तुत किया जा सकता है।

ध्रुव, शकु के शीर्ष पर प्रक्षेपित होता है, जो खोलने पर सेक्टर के वृत्त का केन्द्र बन जाता है। वृत्त की त्रिज्याएँ देशान्तर प्रदर्शित करती है। अक्षाश वृत्तों का

लैम्बर्ट का स्पर्शी कोनिकल प्रक्षेपण
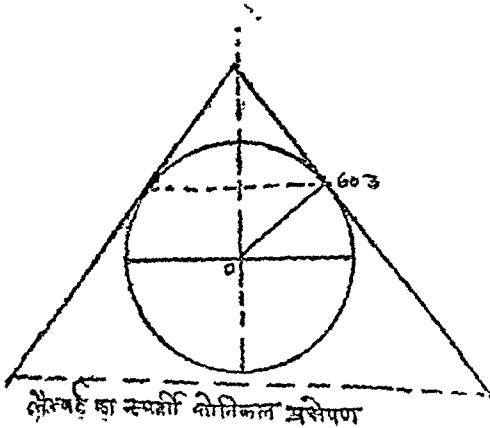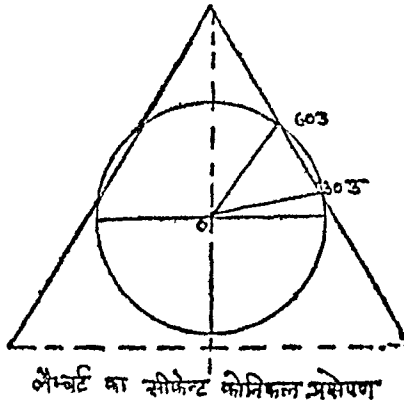
चित्र (10.2)

प्रदर्शन सेक्टर पर खीच गए चापो द्वारा किया जा सकता है, जिनमे बीच की दूरियां इस प्रकार नियोजित की गई हो कि मानचित्र अनुकोणिक बन जाय ।

ध्रुवो पर मरकेटर प्रक्षेपण की तरह लैम्बर्ट शाकव प्रक्षेपण का पैमाना भी अनन्त हो जाता है, किन्तु इसमे ध्रुवो की स्थिति प्रदर्शित की जा सकती है, जबकि मरकेटर प्रक्षेपण मे यह सभव नही । सीकेंट लैम्बर्ट प्रक्षेपण मे स्वेच्छा से दोनो मानक समान्तर चुने जाने की सुविधा रहती है । इमसे इच्छित क्षेत्र मे विरूपण (deformation) कम किया जा सकता है ।

यह प्रक्षेपण मध्य अक्षाशो के लिए सर्वाधिक उपयोगी होता है । यदि मानक समान्तर निम्न अक्षाँशो की ओर चुना जाए तो उष्ण कटिबन्धी क्षेत्र का भी उपर्युक्त मानचित्र प्राप्त हो सकता है ।

10 24 ध्रुवीय त्रिविम (स्टीरियोग्राफिक) प्रक्षेपण

यह एक सदर्श (Perspective) प्रक्षेपण है, जिसमे पृथ्वी के अक्ष के लम्बवत् एक समतल पृष्ठ, विव-पृष्ठ का कार्य करता है । यदि विव पृष्ठ ध्रुव पर स्पर्शी है, तो पैमाना स्पर्श विन्दु के अलावा सर्वत्र एक से अधिक होता है । विव पृष्ठ पृथ्वी को किसी अक्षाश पर यदि काटता है, तो उस अक्षाश पर पैमाना यथार्थ होगा, अर्थात् वह अक्षाश मानक समान्तर होगा । (चित्र 10 3)
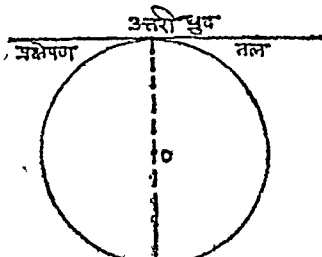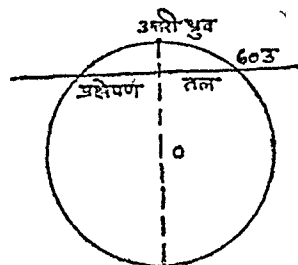
चित्र (10.3)

ध्रुवीय त्रिविम प्रक्षेपण में यदि प्रक्षेपण पृष्ठ से दूर वाले ध्रुव पर, एक प्रकाश-स्रोत रख दिया जाए, तो पृथ्वी के अक्षांश और देशान्तर का जो त्रिव प्रक्षेपण पृष्ठ पर चित्रित होगा, वही मान-चित्र का ग्रिड बन जाएगा।

इसमे ध्रुव मानचित्र के केन्द्र पर प्रदर्शित होंगे। देशान्तर रेखाएँ केन्द्र से निकली सरल रेखाओं के रूप मे चित्रित होंगी, जो एक दूसरे से वही कोण बनाएँगी, जो पृथ्वी के देशान्तर तलों मे होता है। अक्षांश रेखाएँ समकेन्द्रित वृत्तों के रूप मे आएँगी जिनका केन्द्र ध्रुव है।

मानक समान्तर पर पैमाना इकाई होता है, जो निचले अक्षांशो की ओर बढ़ता जाता है। उच्च अक्षांशों की ओर पैमाना घटता जाता है और उत्तरी ध्रुव पर निम्नतम होता है। ध्रुवी क्षेत्र के प्रदर्शन के लिए, यह प्रक्षेपण सर्वाधिक उपयोगी मानचित्र प्रस्तुत करता है। ध्रुवों के साथ एक गोलार्द्ध का सम्पूर्ण चित्रण इसमे सरलता से किया जा सकता है।

10.25 अंकन और विश्लेपण की त्रुटियाँ कम से कम करने के लिए मान-चित्रों मे विरूपण निम्नतम होना चाहिये। इसके लिए यह पाया गया है कि मरकेटर प्रक्षेपण पर, जिसके मानक समान्तर $22\frac{1}{2}^0$ उ. और $22\frac{1}{2}^\circ$ द लिए गए है, 30° उ. और 30° द के बीच का क्षेत्र सर्वोत्कृष्ट ढग से प्रदर्शित करता है, जिसमें विरूपण 8% से भी कम होता है।

विपुवत् रेखा से 50^0 उ अक्षांश के बीच के क्षेत्र के लिए, सर्वोत्तम मानचित्र लैम्बर्ट अनुकोणिक शांकव प्रक्षेपण से मिलता है, जिसके मानक समान्तर 10^0 उ. और 40° उ. अक्षांश लिए गए हो। इसमे विरूपण 7% से कम पाया जाता है। ध्रुवीय त्रिविम प्रक्षेपण मे 60° उ या 45° उ अक्षांशों को मानक समान्तर लिया जा सकता है, जिससे विरूपण 9% से भी कम आता है।

उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों के लिए, मरकेटर-प्रक्षेपण द्वारा निर्मित मानचित्र सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध हुए है। इन मानचित्रों के पैमाने वेधशालाओं की सघनता, विश्लेपण का क्षेत्रफल तथा मानचित्र के आकार पर निर्भर करते हैं। पूर्ण गोलार्द्धीय मानचित्र के लिए $1:2\times10^7$ या 1.4×10^7 का पैमाना उपयुक्त हो सकता है, जबकि क्षेत्रीय विश्लेपण के लिए $1\ 10^7$ का पैमाना सामान्यत लिया जाता है। भारतीय उपमहाद्वीप के लिए भारत मौसम विभाग $1\ 10^7$ पैमाने का धरातलीय चार्ट तैयार करता है।

10 30 मौसम चार्ट का विश्लेषण

(1) धरातलीय चार्ट—सांकेतिक रूप से प्रेक्षणों को मानचित्र पर यथास्थान अंकित कर लेने के बाद, उनके विश्लेपण के लिए समदाब रेखाएँ खींची जाती हैं। शीतोष्ण कटिबन्धों मे जहा वाताग्र प्रतिक्रियाएँ प्रचुर मात्रा मे हुआ करती हैं, वाताग्रों की स्थिति निर्धारित करना भी एक प्रमुख कार्य है।

समदाब रेखाएँ प्राय. 2 या 4 मिलीबार के अन्तराल पर खीची जाती है। भारतीय क्षेत्रो मे जहाँ दाब प्रवणता बहुत कम पाई जाती है, दाब प्रणालियो को स्पष्ट करने के लिए एक मिलीबार के अन्तर पर भी समदाब रेखाएँ खीची जा सकती है। परन्तु इन नियमो का दृढता से पालन करना अनिवार्य नही है। मौसम विज्ञ अपने अनुभव तथा प्रणालियो की प्रकृति के अनुसार, उचित प्रवणता स्थापित करने के लिए समदाब रेखाएँ खीचने मे स्वेच्छ निर्णय ले सकता है, विशेषकर अवदाबो, चक्रवातो तथा गभीर प्रतिचक्रवातो के केन्द्रीय दाब निर्धारित करने की अवस्था मे। इनके अलावा, समदाब रेखाओ की निम्नांकित मौलिक विशेषताओ को ध्यान मे रखना आवश्यक है —

(1) दो विभिन्न मानो की समदाब रेखाएँ कभी एक दूसरे का स्पर्श नही करती।

(2) मानचित्र पर समदाब रेखाएँ या तो किसी क्षेत्र को घेरती हुई बन्द रेखाएँ होती हैं या फिर उनके दोनो सिरे, चार्ट पर खुले रहते है। यह ध्यान मे रखना चाहिए कि यदि सम्पूर्ण भू-मण्डल पर समदाब रेखाओ को विस्तृत किया जाय तो सभी रेखाएँ बन्द वक्र के रूप मे स्थापित हो जाएगी।

(3) समदाब रेखाएँ साधारणत धरातलीय वायु प्रवाह की दिशा का अनुसरण करती हुई खीची जानी चाहिए। किन्तु धरातलीय घर्षण के कारण, दोनो के बीच दिशान्तर होना बहुत सामान्य बात है। अत अनावश्यक छोटे-छोटे उभारो (Kinks) अथवा तीक्ष्ण मोडो से बचने के लिए समदाब रेखाएँ, जहाँ तक सम्भव हो, वास्तविक दाब प्रणालियो को व्यक्त करती हुई सरल और सम (Smooth) रेखाएँ हो। केवल वाताग्रो पर तीक्ष्ण मोड स्वाभाविक रूप से अभ्युदित हो सकता है।

(4) किसी समदाब रेखा के एक ओर उसके मान से अधिक तथा दूसरी ओर कम दाब पाया जाता है। रेखा की पूर्ण यात्रा के दौरान, यह क्रम अपरिवर्तित रहना चाहिए। इसके लिए वायुदिशा के सहारे बायज बैलट नियम का पालन करते हुए, समदाब रेखाएँ खीची जानी चाहिए।
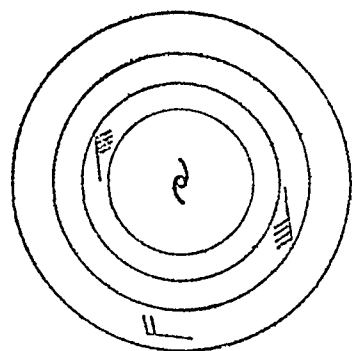
(5) वायुगति की तीव्रता पर भी ध्यान देना आवश्यक है। सामान्यत तीव्र वायु गति मे दाब प्रवणता अधिक शक्तिशाली होती है। अत ऐसे क्षेत्रो मे समदाब रेखाओ का सन्निकट होना स्वाभाविक है। ऐसे क्षेत्रो मे जहाँ प्रेक्षण सघनता बहुत कम हो, वायु गति समदाब रेखाओ के अन्तर्वेशन (interpolation) के लिए अच्छा माध्यम बन सकती है।

वायुगति और दाब प्रवणता का सम्बन्ध
चित्र (10.4)

(6) अस्वाभाविक अनियमितताएँ तथा तीक्ष्ण मोडो से बचने के लिए, बहुधा किसी प्रेक्षण मे दाब और वायु गति मे थोडी अशुद्धि को स्वाभाविक मान लेना लाभप्रद रहता है। इसके लिए स्थानीय कारणो, जैसे-भूमितल की ऊँचाई, विकिरण, जल-थल समीर आदि का तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है।

(7) मौसम प्रणालियो मे सातत्य (Continuity) रखने के लिए यह आवश्यक है कि किसी चार्ट का विश्लेषण करने के लिए, उसके पहले के चार्टो का सक्षिप्त अध्ययन कर लिया जाए। इस अध्ययन से विभिन्न मौसम प्रणालियो की धारणा भी पहले से ज्ञात हो जाती है, जिससे उन्हे और आसानी तथा यथार्थता से निर्धारित किया जा सकता है।
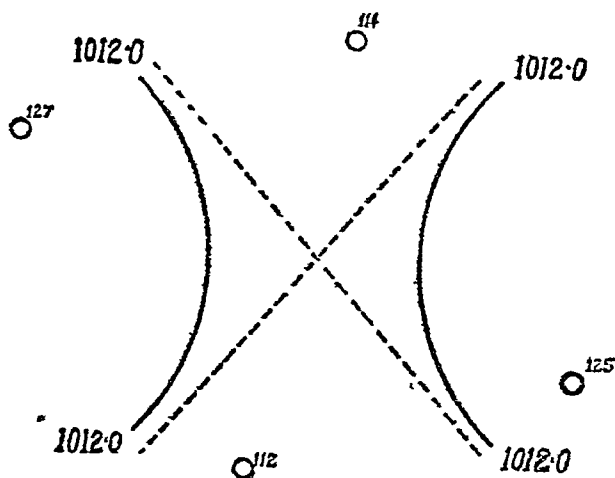
काल सैड का निकट समदाब रेखाओं की संरचना
चित्र (10.6)

(8) मौसम प्रणालियो के निर्धारण के लिए चार्ट मे, अङ्कित वर्तमान और पिछले मौसम का भी यथोचित विचार कर लेना चाहिए। प्रणालियो तथा उत्पन्न मौसम मे तार्किक दृष्टिकोण से तालमेल होना अनिवार्य है।

(9) वाताग्रो के निर्धारण के लिए उपयुक्त विधिया अध्याय 8 मे दी जा चुकी हैं। धरातलीय चार्ट पर उनके शीघ्र निर्धारण के लिए, ओसाङ्क तथा हवा के असांतत्य के अतिरिक्त, पिछले चार्टो मे उनकी स्थिति पर विचार करना भी उपयोगी हो सकता है।

10.31 धरातलीय दाब के अतिरिक्त, दाब प्रवृत्ति (3 घण्टे या 24 घण्टे मे दाब परिवर्तन) तथा तापमान और तापमान प्रवृत्ति का विश्लेषण भी किया जाता है। इसके लिए भारत मौसम विभाग मे सहायक मौसम मानचित्र तैयार किए जाते हैं, जिन पर मेघाच्छन्नता तथा मौसम विवरण, उच्चतम तथा निम्नतम तापमान. तापमान प्रवृत्ति; तापमान का औसत से विचलन, ओसाङ्क, दाब-प्रवृत्ति तथा दाब का औसत से विचलन अलग-अलग अङ्कित किए जाते हैं। दाब-प्रवृत्ति की समदाब

रेखाएँ आइसोलोवार कहलाती है। यह दाव के घटने और बढने की प्रवृत्ति दर का माप बतलाता है।

विभिन्न प्रणालियो को धरातलीय मानचित्र पर कुछ मानक सकेतो द्वारा अङ्कित कर दिया जाता है। ये सकेत चित्र (10 6a, b और c) मे दिए गए है।

मौसम प्रणाली के विभिन्न लक्षणों के संकेत, जो मौसम मानचित्र पर अंकित किये जाते हैं।

1. धरातलीय शीत वाताग्र
2. शीत वाताग्र उत्पत्ति
3. शीत वाताग्र ह्रास
4. धरातलीय उष्ण वाताग्र
5. उष्ण वाताग्र उत्पत्ति
6. उष्ण वाताग्र ह्रास
7. धरातलीय अधिधारित वाताग्र
8. धरातलीय स्थायिवत् वाताग्र
9. अस्थायित्व रेखा
10. अभिसरण रेखा
11. अन्तर्उष्ण कटिबन्धी अभिसरण क्षेत्र
12. अन्तर्उष्ण कटिबन्धी असान्तत्य
13. द्रोणिका अक्ष
14. कटक अक्ष

चित्र 10.6 (a)

मौसम मानचित्रों पर दाब प्रणालियों के प्रस्तुतीकरण के संकेत

क्रम	प्रणाली	संकेत
1	निम्नदाब	L
2	अवदाब	D
3.	गंभीर अवदाब	DD
4.	चक्रवात	CS
5	प्रचण्ड चक्रवात	SCS
6.	अत्यधिक प्रचण्ड चक्रवात, जिसमें वायुगति 64 'नाट' से अधिक हो।	[illegible]
7	उच्चदाब	H

चित्र (10.6b)

चित्र (10.6c)
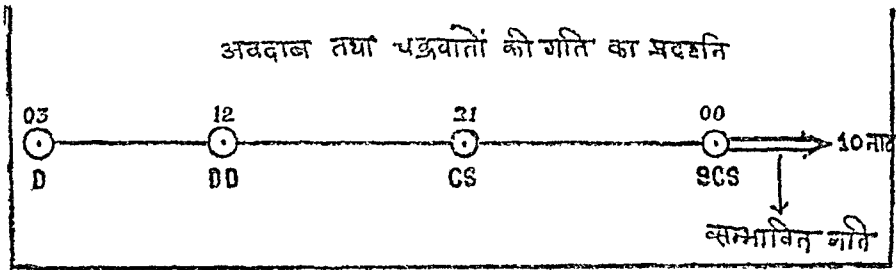
10·32 उच्चतर वायुमण्डलीय मौसम मानचित्र

वायुमण्डल के त्रिवम आचरण की पूर्ण व्याख्या तथा दाब प्रणालियों के उर्ध्वाधर विस्तार का अध्ययन करने के लिए, उच्चतर वायुमण्डलीय चार्ट तैयार करने आवश्यक है। वैसे, मेघाच्छन्नता, वर्षा आदि की घटनाएँ, धरातलीय चार्ट पर भी अङ्कित रहती है; किन्तु उच्चतर हवाओं के दाब, तापमान, आर्द्रता तथा गति की परिवर्तनीय प्रकृति का विस्तृत अध्ययन भी समकालीन स्थितियों के अध्ययन के महत्वपूर्ण भाग हैं।

इसके लिए मौसम केन्द्रों मे जो चार्ट सर्वाधिक प्रचलित है, वे स्थिर दाब चार्ट (Constant Pressure Chart) या कन्टूर चार्ट (Contour Chart) कहलाते हैं। ये चार्ट कुछ चुने हुए दाब स्तर, जैसे 850, 700, 500, 300, 200 तथा 100 मिलीबार के लिए तैयार किए जाते हैं। रेडियो सोन्दे वेधशालाओं द्वारा प्राप्त इन दाब स्तरों की ऊँचाइयों को (जी०पी०एम० इकाइयों में), तथा तापमान, ओसांक व वायुगति और दिशा सांकेतिक माडलों के रूप मे अङ्कित कर दिया जाता है।

भारतीय क्षेत्रों मे, चूँकि रेडियो सोन्दे वेधशालाओं की संख्या बहुत सीमित (लगभग 20) है, अतः इन स्तरों पर पायलट बैलून के वायुप्रेक्षण भी अङ्कित कर दिए जाते हैं, ताकि कन्टूर रेखाओं को आगे बढ़ाने मे इनकी सहायता मिलती रहे। इन मानचित्रों के विश्लेषण से वायु मण्डल की तह-दर-तह समकालीन स्थिति स्पष्ट

हो उठती है। धरातलीय और उच्चतर वायु मानचित्रो के एक साथ अध्यारोपण (Superimposition) से, किसी दाब प्रणाली का उर्ध्व विस्तार तथा मौसम विकसित करने की अनुकूल अथवा प्रतिकूल परिस्थितिया आसानी से प्रत्यक्ष हो जाती है। विभिन्न तहो के विश्लेषण को एक साथ परखने से, उनकी पारस्परिक सङ्गति (Consistency) को ध्यान मे रखना सदैव आवश्यक है।

उच्च अक्षाशो मे 850, 700 और 500 मिलीबार के मानचित्रो मे 40 मीटर के अन्तर पर कन्टूर खीचे जाते हैं, जबकि भारतीय क्षेत्रो मे प्रवणता के ढीलेपन के कारण, 20 मीटर के अन्तराल पर कन्टूर खीचना अधिक उपयोगी पाया जाता है। उच्चतर स्तर 300, 200 और 100 मिलीबार पर ये अन्तराल क्रमश. 80 और 40 मीटर कर दिए जाते हैं। 200 और 100 मिलीबार स्तर पर रेडियो सोन्दे द्वारा प्रेषित कन्टूर ऊँचाई बहुत विश्वसनीय नहीं होती। अत. इन स्तरो पर कन्टूर रेखाएँ प्रायः वायु वेग पर आधारित रखना अधिक लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

शीतोष्ण कटिबन्धो मे 300–200 मिलीबार तथा उष्ण कटिबन्ध मे 200-100 मिलीबार तहो के बीच प्राय क्षोभ सीमा आ जाती है। अत. 200 तथा 100 मिलीबार के दाब पृष्ठ और क्षोभ सीमा पृष्ठ की अनुच्छेद रेखा का निर्धारण करना भी विश्लेषण का एक उपयोगी भाग है।

कन्टूर रेखाएँ समदाब रेखाओ की भाति, चक्रवाती तथा प्रति-चक्रवाती बन्द रेखाओ या द्रोणिका तथा कटक की आकृति प्रदर्शित करती हुई स्थित होती हैं। धरातलीय चक्रवात तथा प्रतिचक्रवात, उच्चतर वायुमण्डल मे प्राय द्रोणिका तथा कटक का रूप ग्रहण कर लेते हैं। ये द्रोणिकाएँ तथा कटक, उच्चतर सामान्य वायु प्रवाह की मुख्य विशेषताएँ है।

300 और 200 मिलीबार स्तरो पर, पश्चिमी जेट धाराएँ 25 से 35 तथा 50 से 60 अंश उत्तरी अक्षाशो के बीच स्थित होती हैं। विशेषकर सर्दियो में इनकी तीव्रता बहुत अधिक पाई जाती है। इन जेट धाराओ का अक्ष निर्धारित करना तथा 60 नाट से अधिक वायु गति के लिए 20 नाट के अन्तर पर समवायुगति रेखाएँ (Isotach) खीचना विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण भाग है। जेट धाराओ की स्थिति प्राय 500 मिलीबार स्तर पर अधिकतम तापमान प्रवणता क्षेत्र के ठीक ऊपर 300 या 200 मिलीबार स्तर पर पाई जाती है। जेट की अक्ष एक (Stream line) होती है जो कन्टूर रेखा के समानान्तर खीची जाती है। अक्ष पर सब जगह वायुगति समान नही पाई जाती। प्राय वायुगति के उत्तरोत्तर उच्चतम और निम्नतम पाए जाते है। दो उच्चतमो के बीच 10 से 25 देशान्तर की दूरी हो सकती है।

भारत मे दो मुख्य जेट धाराएँ प्रभावशील रहती है। (1) मध्य अक्षाणीय पश्चिमी जेट जिसका अक्ष उत्तरी अफ्रीका, दक्षिणी यूरोप, रूस, उत्तरी तिब्बत, चीन और जापान पर से गुजरता है। यह जेट सर्दियो मे उत्तरी भारत पर हिमालय की शृङ्खलाओ के समान्तर बहने लगती है। गर्मियो मे यह हिमालय के उत्तर से प्रवाहित होती है।

(ii) पूर्वी जेट धारा, जो मानसून काल मे दक्षिणी चीन, मलाया, भारतीय प्रायद्वीप तथा अफ्रीका पर 200 से 100 मिलीवार स्तरो के मध्य बहती है ।

चित्र (10·7) और (10 8) मे अक्टूबर-नवम्बर तथा अप्रैल-मई मे भारतीय क्षेत्रो मे जेट धाराओ से सम्बन्धित वायु प्रवाह और तापमान दिए गए है ।
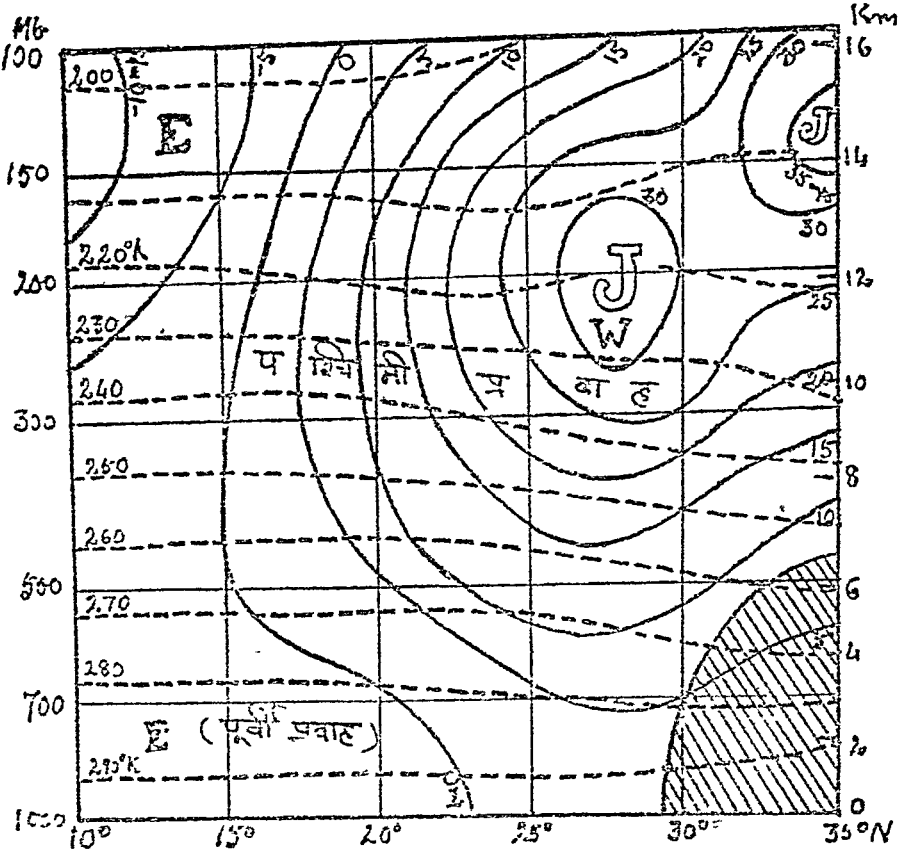
जेट धाराओ में तापमान और वायुगति का आवंटन
अक्टूबर-नवम्बर (कोटेश्वरन एवं पार्थसारथी, 1953)
चित्र (10 7)
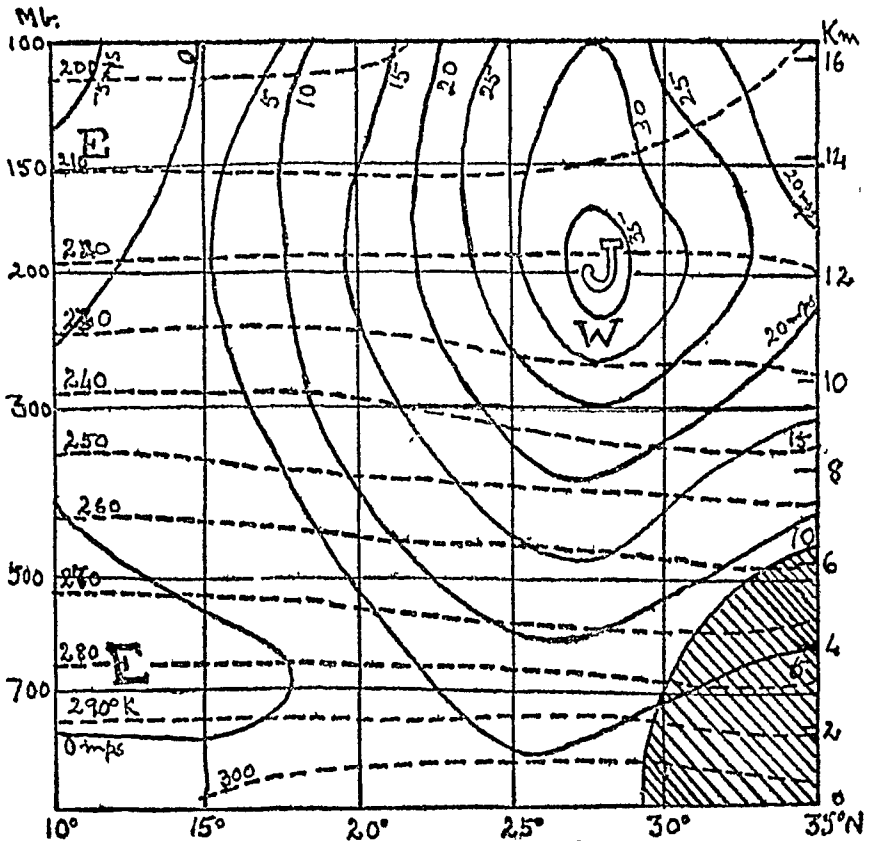
जेट धाराओं में तापमान और वायु गति का आवंटन
अप्रैल-मई (कोटेश्वरम तथा पार्थसारथी, 1953)
चित्र (१०.८)

10·33 स्ट्रीम लाईन विश्लेषण (Stream Line Analysis) या प्रवाह रेखा विश्लेषण

मौसम तत्वो के अभिवहन तथा प्रवाह की वक्रता के यथार्थ ज्ञान के लिए स्ट्रीम लाइन विश्लेषण करना आवश्यक है। इसमे विभिन्न स्तरो पर वायुगति और दिशा अङ्कित करके (free hand) चिकनी रखाए प्रवाह के स्पर्शी के रूप मे खीच दी जाती है। इसके मुख्य लक्षण निम्नाँकित है :—

(i) विचित्र-विन्दु (Singularities)—ये वो विन्दु है जो प्रवाह के अभ्युदय स्रोत अथवा सिंक (Sink) का कार्य करते है, जैसे—चक्रवाती या प्रतिचक्रवाती केन्द्र।

(ii) अनन्त स्पर्शी (Asymplote)—ये वे रेखाएं हैं जिनपर प्रवाह अभिसरित या अपसरित होता है। स्ट्रीम रेखाओ के सगम (Confluence) तथा हटाव (Difluence) से भी क्रमश: अभिसरण तथा अपसरण का बोध होता है।

(iii) उदासीन-विन्दु (Neutral point)—दो एसिम्पटोट रेखाओ का कटाव विन्दु उदासीन बिन्दु कहलाता है। यह प्राय: शान्त वायु के क्षेत्र (जैसे काल) से सम्वन्धित पाया जाता है।

स्ट्रीम लाइन विश्लेषण का एक उदाहरण चित्र (10·9) में प्रदर्शित किया गया है ।
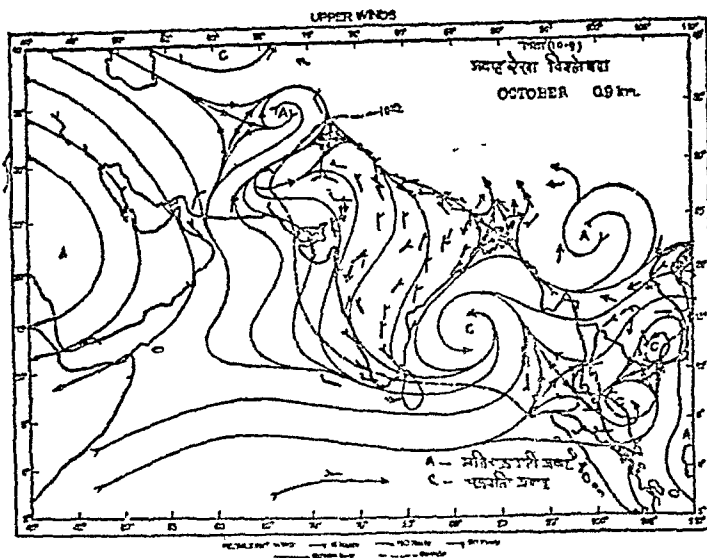
10 34 थिक्नेस चार्ट (Thickness Chart)

दो मानक दाव स्तरो जैसे 1000 और 500 मिलीबार के वीच ऊँचाई का अन्तर (थिकनेस) अङ्कित करके एक नया चार्ट तैयार किया जा सकता है, जिस पर थिकनेस की सम रेखाएँ खीची जा सकती है । ऊँचाई का अन्तर केवल दोनो तहों के बीच औसत तापमान पर निर्भर करता है । अतः ये समरेखाए तहो के औसत तापमान की रेखाएँ प्रदर्शित करेगी, जो ताप हवाओ के वंटन का चित्र प्रस्तुत करती है । इस चार्ट को थिकनेस चार्ट कहा जाता है ।

प्रायोगिक रूप से थिकनेस चार्ट, आलेखीय विधि से ग्रिड तैयार करके वनाया जाता है ।

10·40 मौसम पूर्वानुमान

वायुमण्डल की वर्तमान अवस्था के ज्ञान से, जो हमे धरातलीय तथा उच्चतर वायु प्रेक्षणो द्वारा प्राप्त होता है, उसके भविष्य की अवस्था की प्रागुक्ति (Prediction) ही मौसम पूर्वानुमान का तात्पर्य है । जिस क्षेत्र के लिए पूर्वानुमान तैयार करना हो उसके चारो ओर वहुत वडे क्षेत्र के मानचित्र पर समकालीन प्रेक्षण (वायु दाव, तापमान, हवा, आर्द्रता, मेघाच्छन्नता, दृश्यता, वर्तमान और पिछला मौसम आदि) अङ्कित और विश्लेषित होने के वाद वायुमण्डल की वर्तमान अवस्था का सांराश प्रस्तुत करते हैं, जिनसे उच्च और निम्नदाव क्षेत्र, कटक और द्रोणिका, अभिसरण और अपसरण के क्षेत्र, वायुमण्डलीय आर्द्रता तथा जेट धाराओ आदि की वर्तमान स्थिति स्पष्ट हो जाती है । ये प्रणालिया प्राय. गतिशील होती है और समय तथा स्थान के प्रति परिवर्तित होती रहती है ।

उत्तरोत्तर समकालीन चार्टों को शृंखला बद्ध रूप से अध्ययन करने से पता चलता है कि प्रणालियों के परिवर्तन में कुछ सीमा तक नियमितता है, यद्यपि दो चार्ट कभी भी सर्वत्र सम नहीं होते। किन्हीं क्षेत्र के लिए पूर्वानुमान तैयार करने की साधारण विधि यह है कि उस क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण दाब प्रणालियों की पिछली और वर्तमान स्थिति, तीव्रता तथा पिछले चार्टों के आधार पर स्थान व तीव्रता में परिवर्तन की दर निश्चित कर लेते हैं। इसी परिवर्तन दर से भविष्य में किसी निश्चित अवधि के बाद एक दाब प्रणाली की स्थिति और तीव्रता का आकलन कर लेना एक सरल कार्य है।

इस विधि में त्रुटि यही है कि दाब प्रणालियों में परिवर्तन की प्रवृति अनियत होती है, विशेषकर उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों में। अत. मौसम विशेषज्ञ को अपने अनुभव, स्थान-विशेष के जलवायु का ज्ञान, सामान्य प्रेक्षण तथा अन्य सहायक साधनों पर भी निर्भर करना पड़ता है। मेघ और वर्षा साधारणतः नम वायु की आरोही गति से उत्पन्न होती है। आरोही गति के लिए उपयुक्त परिस्थिति यह है कि निम्न वायु तहों में अभिसरण तथा उच्चतर तहों में अपसरण प्रवाह प्रमुख है। चार्टों के विश्लेषण से, वायुमण्डल की वास्तविक वायु-प्रवाह की प्रकृति स्पष्ट हो जानी चाहिए, क्योंकि इन्हीं के प्रति-रूपों के आधार पर अभिसरण या अपसरण की मात्रा और क्षेत्र ज्ञात होते हैं। सामान्यत. इन्हीं विधियों से ही प्रणालियों का मूल्यांकन तथा मौसम उत्पन्न होने के संभावित क्षेत्रों को प्रागुक्त किया जाता है।

10 41 मौसम पूर्वानुमान की समस्या मुख्यत तीन अवस्थाओं में रखी जा सकती है:—

(1) समकालीन चार्टों का विश्लेषण।

(2) दाब प्रणालियों का पूर्वानुमान (Prognostication)।

(3) मौसम पूर्वानुमान तैयार करना।

विश्लेषण में दाब प्रणालियों, वाताग्रों तथा वायुराशियों की संरचना, स्थिति, भौतिक गुण तथा गति की दिशा और दर का स्पष्ट चित्रण हो जाना चाहिए। इसके लिए उपलब्ध धरातलीय तथा उच्चतर वायुमण्डलीय प्रेक्षणों को अंकित करके निम्नांकित मौसम मानचित्र प्रायः अधिकांश मौसम केन्द्रों में तैयार किए जाते हैं।

(अ) धरातलीय दाब मानचित्र

प्रत्येक समकालीन घड़ी पर यह चार्ट तैयार किया जाता है, जिनमें धरातलीय प्रेक्षण मानक मॉडल के रूप में अंकित किए जाते हैं। समदाब रेखाओं तथा 24 घंटे की दाब प्रवृति की समरेखाओं (आइसोलोबार) द्वारा यह मानचित्र विश्लेषित किया जाता है। धरातलीय वाताग्रों की स्थिति-निर्धारण भी विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण अंग है।

(ब) सहायक धरातलीय मानचित्र

इस पर पिछले 24 घंटों का मौसम तथा मेघाच्छन्नता, तापमान और उसका विचलन तथा ओसांक आदि अलग-अलग मानचित्रों पर अंकित किए जाते हैं।

(स) टीफाई ग्राम

स्थानीय तथा निकटवर्ती रेडियो सोन्दे पक्षणों को टीफाईग्राम पर अंकित करके, वायुमण्डल की तह-दर-तह भौतिक अवस्था के बारे मे अनेक महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त किए जाते है।

(द) स्थिर दाब मानचित्र

मानक दाब स्तरो (850, 700, 500, 300, 200 और 100 मिलीबार) के रेडियो सोन्दे प्रेक्षणो को अंकित कर, उनको कन्टूर तथा समताप रेखाओ द्वारा विश्लेपित किया जाता है। विभिन्न तहो मे दाव प्रणालियो की स्थिति के अतिरिक्त मौसम विकास (Baroclinicity) का अध्ययन भी इस मानचित्र से किया जा सकता है। उच्चतर तहो मे जेट धाराओ की स्थिति तथा तीव्रता का ज्ञान यही मानचित्र प्रस्तुत करता है।

(इ) पायलट मानचित्र

रेडियो सोन्दे प्रेक्षणो के अभाव के कारण, उच्चतर वायुमण्डल की अनेक स्तरो के लिए, मानचित्र पर केवल वायुवेग के पायलट बैलून प्रेक्षण अंकित कर के उन्हे प्रवाह रेखाओ द्वारा विश्लेपित किया जाता है। द्रोणिकाएँ, चक्रवाती या प्रति-चक्रवाती प्रवाह, कॉल, अभिसरण तथा अपसरण क्षेत्रों की गुणात्मक (qualitative) धारणा, इस मानचित्र से बहुत स्पष्ट हो जाती है।

(फ) इसके अलावा उपग्रहो द्वारा मेघाच्छन्नता के आँकडे तथा राडार के प्रेक्षण भी उपलब्ध है, जो आजकल मौसम पूर्वानुमान तथा विशिष्ट प्रणालियो के यथार्थ आकलन के लिए सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध होते जा रहे है।

10.50 दाब प्रणालियों का वेग निर्धारण

समकालीन चार्टो के विश्लेषण से वायुमण्डल की भौतिक अवस्था का लगभग पूर्ण चित्र उपलब्ध हो जाता है, जो हमारी रूढ़ (conventional) पूर्वानुमान विधि का आधार बनता है। इस विधि का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू उच्च दाव, निम्नदाब द्रोणिका, काल, वाताग्र तथा वायुराशियो की गति की गणना या आकलन करना है। गणना के लिए त्रिविम नियामक (Three dimensional) प्रणाली में अनेक सूत्र व्युत्पन्न (derived) किए गए है। यदि X–अक्ष गति की दिशा मे मान लिया जाए, तो एक सामान्य समदाब रेखा (p) की गति (C) निम्न सूत्र द्वारा प्राप्त की जा सकती है :—

$$C = -\frac{\partial p}{\partial t} \Bigg/ \frac{\partial p}{\partial x}.$$

यदि 2 मिलीबार के अन्तर पर खीचे गए, दो समदाब रेखाओ के बीच की लम्बवत् दूरी d हो तो,

$$\frac{\partial p}{\partial x} = \frac{2}{d}$$

$$\therefore\ C = -\frac{bd}{2}$$

जहाँ $b = \frac{\partial p}{\partial t}$ = दाब प्रवृत्ति ।

अन्य प्रणालियों की गति के लिए सूत्र सरलता से प्राप्त किए जा सकते हैं किन्तु उन्हे प्रस्तुत पुस्तक मे स्थान नही दिया जा सका है। प्रायोगिक उपयोगिता के लिए उन सूत्रो के आकार पर कुछ निष्कर्ष निम्नांकित हैं :—

(1) द्रोणिकाएँ आइसोलोबारिक प्रवणता की दिशा मे, अर्थात् बढते दाब से घटते दाब की ओर गति करती है। कटक इसके विपरीत दिशा मे बढते हैं। द्रोणिका (या कटक) की गति अपने आगे और पीछे की दाब प्रवृत्ति के अन्तर के समानुपाती तथा आकृति की वक्रता के व्युत्क्रमानुपाती होती है। अर्थात् यदि दाब प्रोफाइल की वक्रता अधिक हो, तो द्रोणिका या कटक की गति धीमी होगी।

(2) वृत्ताकार निम्नदाब केन्द्र भी आइसोलोबारिक प्रवणता की दिशा मे गति करते हैं। उच्चदाब केन्द्र इससे विपरीत दिशा मे चलते हैं। इनकी गति प्रवणता के समानुपाती तथा दाब प्रोफाइल की वक्रता के व्युत्क्रमानुपाती होती है। यदि निम्नदाब दीर्घायत (oblong) है, तो इसकी गति की दिशा आइसोलोबारिक प्रवणता से दीर्घ अक्ष की ओर झुक जाएगी।
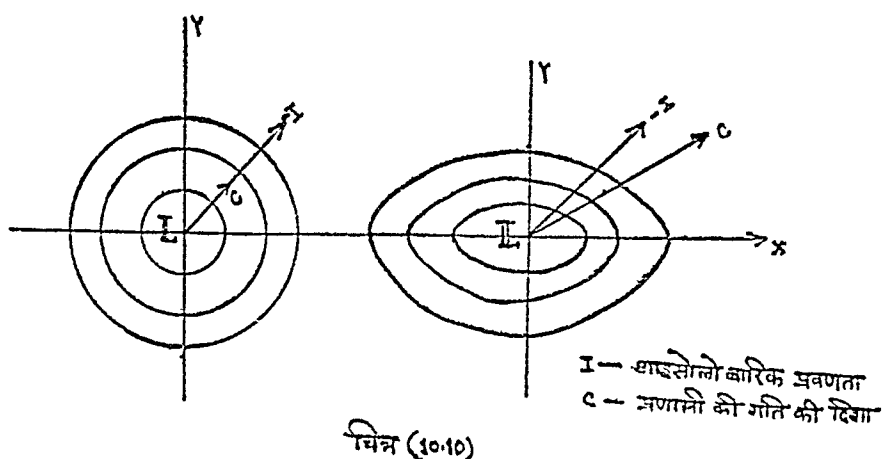
चित्र (10.10)

(3) कॉल का केन्द्र चित्र (10.11) मे प्रदर्शित दिशा मे बढ़ता है। यह दिशा आइसोलोबारिक प्रवणता से परे X–अक्ष की ओर झुकी होती है।
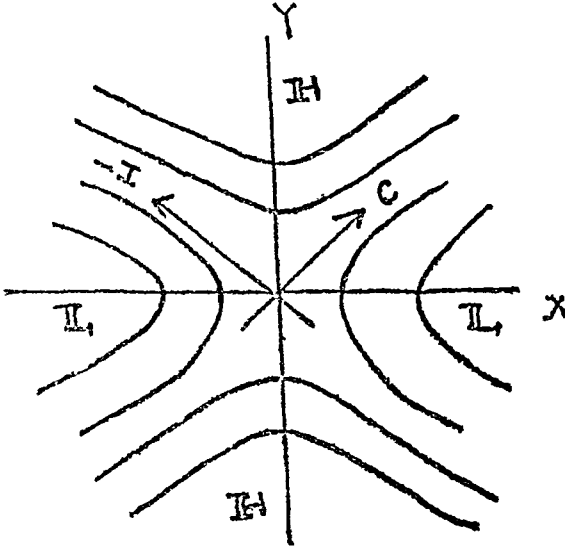
चित्र (10.11)

(4) गणितीय सूत्रो के अनुसार उष्ण वाताग्र भूव्यावर्ती वायु गति के 60 से 80 प्रतिशत की गति से चलते है, जबकि शीत वाताग्र इसके 70% से 100% तक की गति रखते है। किन्तु बहुत से अवसरो पर वाताग्र भूव्यावर्ती हवाओ से तीव्र भी चलते हैं। विकसित वाताग्र विक्षोभो का चक्रवाती केन्द्र लगभग उष्ण वाताग्र की गति से ही बढता है। यह गति प्राय. शीत वाताग्रो की गति से थोडी कम होती है।

10.51 बहिर्वेशन विधि (Extrapolation Method)

यह विधि, दाब प्रवृत्ति तथा भूव्यावर्ती वायु की उपर्युक्त विधियों के सम्पूरक के रूप मे प्रयुक्त की जा सकती है, जिसमे दाब प्रणाली के पिछले मार्ग तथा स्थितियो के आधार पर, उसके वेग तथा त्वरण की गणना कर ली जाती है। इसी वेग और त्वरण द्वारा एक निश्चित समय बाद दाब प्रणाली की स्थिति का बहिर्वेशन किया जाता है।

मान लीजिए बिन्दु A, B, C, और D किसी दाब केन्द्र की चार स्थितियाँ समान समयान्तर t पर है। चित्र (10.12) स्थिति (i), जिसमे बिन्दु A, B, C, D एक दूसरे से बराबर दूरी पर स्थित है, से स्पष्ट है कि केन्द्र स्थिर गति और दिशा मे चल रहा है। अत. वर्तमान स्थिति D से t समय बाद, उसकी स्थिति उसी दिशा मे D' तथा $2t$ समय बाद D'' होगी, जहाँ

$$DD' = CD \text{ और } DD'' = 2CD.$$

स्थिति (ii) मे केन्द्र की दिशा स्थिर है किन्तु गति घटती जा रही है। स्पष्टत:

मन्दन (या त्वरण) गुणक $= \frac{CD}{\text{[illegible]}}$.

यदि *t* समय बाद केन्द्र की स्थिति DD′ है, तो

$$DD' = CD.\frac{CD}{BC}$$

$$= \frac{(CD)^2}{BC}$$

स्थिति (iii) में केन्द्र एक वक्र मार्ग पर घटती गति के साथ चलता है। यहां त्वरण का सूत्र, स्थिति (ii) की तरह नहीं प्रयुक्त किया जा सकता है। यदि स्थिति C की अपेक्षा D में आइसोलोबारिक प्रवणता अधिक है, तो मोड़ के बाद गति और बढ़ेगी। प्रवणता की मात्रा के अनुसार केन्द्र की गति में उपयुक्त त्वरण निर्धारण करके D′ की स्थिति बहिर्वेशित की जा सकती है।
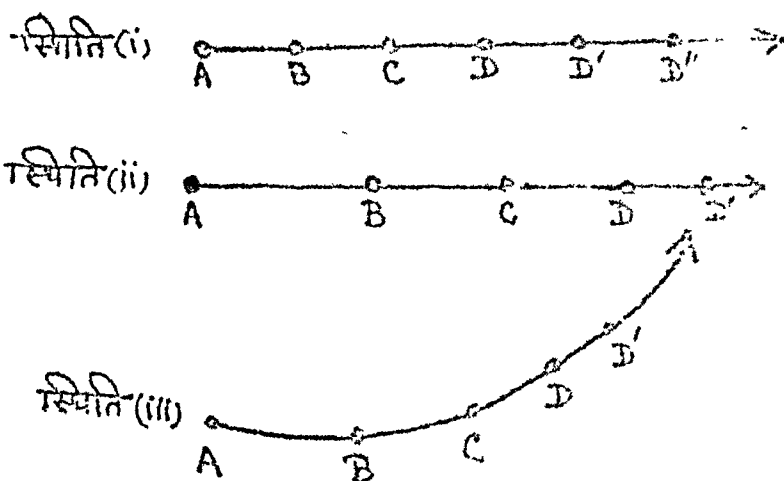
चित्र (10.12)

A—1004 B—1000 C—997 D—995

इस विधि से केन्द्र की तीव्रता का बहिर्वेशन भी सम्भव है। स्थिति (iv) में विभिन्न स्थितियों के साथ केन्द्र पर दाब का मान भी मिलीबार में अंकित है। इन मानों से स्पष्ट है कि केन्द्र निरन्तर गम्भीर (deep) होता जा रहा है, किन्तु गम्भीर होने की दर घटती जा रही है। दाब के पिछले मानों से *t* समय बाद स्थिति D′ पर केन्द्र का दाब सामान्य विधि से बहिर्वेशित किया जा सकता है।

यह विधि उस अवस्था में प्रायः असफल रहती है जब दाब प्रणाली स्थायिवत् प्रतिचक्रवाती क्षेत्रों के मार्ग में गति करती है। ये प्रति चक्रवात एक रुकावट उत्पन्न करते हैं, जो या तो दाब प्रणाली की गति कम कर देते हैं या दिशा परिवर्तित करने को बाध्य कर देते हैं। यह विधि उच्च और निम्नदाब क्षेत्रों के अतिरिक्त फटक, द्रोणिका तथा वाताग्रों पर भी प्रयुक्त की जा सकती है।

10.52 विश्लेषण के पश्चात् पूर्वानुमान तैयार करने के लिए, मार्गदर्शन के रूप मे निम्नांकित बाते क्रमवार ढंग से दी जा रही हैं, जिसकी रूपरेखा मुख्यत. पैटरसन ने बनाई है :—

(1) पिछले चार्टो का निरीक्षण—मुख्यत 850, 700 और 500 मिलीबार स्तरो पर, नमी तथा दाब प्रणालियो की स्थिति का अध्ययन। टीफाई ग्राम का विश्लेषण तथा ताजे पूर्वानुमान की जानकारी प्राप्त करना।

(2) चालू (current) मानचित्रो का स्वय विश्लेषण करना। दाब परिवर्तन (Pressure change) मानचित्रों मे आइसोलोबारिक केन्द्रों का बहिर्वेशन।

(3) मौसम प्रणालियो की संगति (Consistency) का अध्ययन। उपग्रह तथा राडार प्रेक्षणो की सहायता से निम्नदाब केन्द्रो का यथार्थ निर्धारण।

(4) दाब प्रणालियों तथा वाताग्रो का पूर्वानुमान की अवधि के लिए विस्थापन (displacement) करना।

(5) प्रणालियो की प्रभावित तीव्रता का अनुमान करना।

(6) नई प्रणालियो के अभ्युदय के सम्बन्ध में धारणा निर्धारित करना।

(7) मेघाच्छन्नता, आर्द्रता तथा वायुराशियों के भौतिक गुण निश्चित करना तथा पूर्वानुमान-अवधि मे उनकी संभावित गति तथा परिवर्तन का अनुमान निश्चित करना।

(8) स्थानीय प्रभावो जैसे-पहाडियो, जलाशयो, जल थल समीर आदि का विचार करना।

(9) स्पष्ट शब्दो मे पूर्वानुमान तैयार करना तथा उसकी यथार्थता की संभावना निश्चित करना।

10.60 पूर्वानुमानों के प्रकार

मौसम पूर्वानुमान के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्त्व समय है। विभिन्न उपयोगो के लिये अलग-अलग अवधि के पूर्वानुमान तैयार किए जाते हैं। मौसम प्रणालियो की अनियमितताओ के कारण यह स्वाभाविक है कि पूर्वानुमानो की यथार्थता, अवधि बढ़ने के साथ तेजी से घटती जाती है। अवधि के दृष्टिकोण से पूर्वानुमान निम्नांकित प्रकार के होते हैं :—

(1) अल्पावधि (**Short Range**) पूर्वानुमान—यह तीन से अठारह घण्टो की अवधि के लिए तैयार किया जाता है, जो प्राय वैमानिक सेवाओं के लिये उपयुक्त होता है। इसमे उडानो के लिये घातक मौसम घटनाओ, जैसे–तडित झंझा, ओले, पर्वत-तरगे, आधी, चक्रवात, स्कवाल, विक्षोभ आदि के अलावा दृश्यता, उच्चतर वायुगति तथा तापमान और मेघाच्छन्नता का पूर्वानुमान दिया जाता है। अल्पावधि के कारण इनके यथार्थ होने की सम्भावना अधिक होती है।

(2) दैनिक अवधि पूर्वानुमान—12से48 घण्टे की अवधि के लिए पूर्वानुमान प्राय स्थानीय क्षेत्रो के लिये दिया जाता है। इनका उपयोग सर्वसाधारण द्वारा नित्य

प्रति के कार्यों मे किया जाता है। इसमे मौसम घटनाओ, मेघाच्छन्नता तथा तापमान को विशेष महत्त्व दिया जाता है।

यह आवश्यक है कि इन अल्पावधि पूर्वानुमानों के लिये विश्लेषित मौसम चार्ट, समकालीन प्रेक्षण के बाद कम से कम समय मे उपलब्ध हो जाएं। यद्यपि पूर्वानुमान तैयार करने मे लाभकारी, कुछ नियमावलियां नीचे उद्धृत की गई हैं तथापि प्रणालियो की स्थिति, तीव्रता, गति और सम्भावित परिवर्तन के बारे मे शीघ्र निर्णय लेने के लिये मौसम विशेषज्ञ का अनुभव और पूर्वाभ्यास अत्यावश्यक तत्त्व है।

(अ) उच्चदाव, निम्नदाव, कटक और द्रोणिका की स्थिति और तीव्रता समकालीन चार्ट पर निश्चित करना। उच्च अक्षाशो मे वाताग्रो की स्थिति निर्धारण करना भी बहुत महत्वपूर्ण है।

(ब) वायुराशियां निर्धारित करना। उष्ण कटिबन्धो मे सुस्पष्ट वायुराशियां बहुत कम मिलती हैं, फिर भी स्थानीय टीफाईग्राम द्वारा वायुमण्डलीय स्थिरता, नमी की अवस्था, आरोही तथा अवरोही गति शीतलन तथा उष्मन का अध्ययन किया जा जा सकता है।

(स) वर्षा आदि मौसम-घटनाओ का उत्तरोत्तर चार्टों से क्रमबद्ध अध्ययन।

(द) त्वरण की विधि से निश्चित अवधि के बाद दाब प्रणालियो की स्थिति आकलित करना। प्रणालियो की संरचना और पिछली प्रवृत्ति के आधार पर उनकी तीव्रता का अनुमान लगा लेना भी सरल कार्य है। किन्तु उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रो मे दाब प्रणालियो की गति बहुत अनियत पाई जाती है। जिससे बहिर्वेशन विधि प्राय. असफल हो जाती है। इन क्षेत्रो की सम्भावित गति साधारणतः उस दिशा मे होती है, जहाँ दाब का घटाव अधिक होता है, अर्थात् जिधर अधिकतम आइसोलोत्रारिक प्रवणता होती है। इसके अलावा प्रणालियो का जलवायु विज्ञान भी, उनका विस्थापन आकलित करने मे सहायक हो सकता है। कुछ प्रणालियाँ, जैसे--पश्चिमी विक्षोभो या चक्रवातो के आगमन से पूर्व मेघ या तापमान के निश्चित सकेत मिलने लगते है। चक्रवाती तूफानो का मार्ग निर्धारण प्राय· उनके ऐतिहासिक ज्ञान के आधार पर किया जाता है।

(ड) स्थानीय प्रभावो, जैसे--पर्वत, जलाशय, जल और थल समीर पर अलग से विचार करना आवश्यक है। मौसम विज्ञ को इस सम्बन्ध मे पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए।

10.70 मध्यम अवधि पूर्वानुमान (Medium Range Forecast)

इस पूर्वानुमान की मध्य अवधि 3 से 7 दिन की होती है। दाब प्रणालियों का पूरा जीवन चक्र प्राय· 3–4 दिन का पाया जाता है। स्पष्ट है कि इससे लम्बी अवधि के पूर्वानुमान के लिए उपर्युक्त रूढ विधिया प्रयोग मे नही लाई जा सकती, क्योंकि वर्तमान दाब प्रणालिया इतनी लम्बी अवधि तक प्रभावकारी नही रहती हैं, और कितने दिन बाद तथा किस स्थान पर नवीन प्रणालिया उदय होगी, इसका अनुमान करना, मौसम विज्ञान की अब तक की प्रगति के आधार पर प्राय. असभव ही है। पिछले

कुछ वर्षों मे, मध्यम अवधि पूर्वानुमान की अवश्यकता कृषि कार्यों, सैनिक एव आर्थिक योजनाओ तथा हाइड्रोलोजिकल चेतावनियो आदि के लिए निरतर बढती गई है; विशेषकर भारत जैसे देश मे, जहाँ की अर्थ-व्यवस्था मौसम की अनुकूलता पर अत्यधिक निर्भर है।

इसके लिए मुख्य रूप से साख्यकीय विधियाँ ही प्रयोग मे लाई जाती हैं। कुछ विधिया शुद्ध सांख्यिकी है जिनमे प्रेडिक्टेन्ट (Predictant) को कुछ उपयुक्त मौसम तत्वो के फलन (function) के रूप मे व्यक्त किया जाता है, ये तत्व प्रेडिक्टर या प्रागुक्तक कहलाते हैं। भूतकाल के मौसम आकडो की सहायता से, इस समाश्रयण (Regression) समीकरण तथा उसके गुणाको का मान आकलित कर लिया जाता है।

दूसरी विधि मे मौसम प्रणालियो की भौतिक विशेषताओ तथा उनके प्राकृतिक विकास पर विचार करते है। इसके लिये प्राय तीन या पाच दिन के औसत मौसम चार्ट बनाए जाते है। इन औसत मानचित्रो की प्रवृत्ति के बहिर्वेशन से लम्बी अवधि के लिये मौसम परिस्थितियो का आकलन किया जा सकता है।

भारत मे इस समस्या पर उष्ण कटिबन्धी मौसम विज्ञान शोध संस्थान पूना मे कार्य हो रहा है। वहाँ अभी तक जो विधि विकसित की गई है, उसमे समकालीन तथा साख्यिकीय सिद्धान्त प्रयुक्त किए गए है, जिनकी रूप रेखा इस प्रकार है.—

(1) 5 दिवसीय औसत 700 मिलीबार का कन्टूर मानचित्र तैयार करना। राय सरकार एवं लाल (1960) के अनुसार, उत्तरी भारत मे वर्षा उत्पन्न करने वाले विक्षोभो की स्थिति निर्धारण के लिये, 700 मिलीबार स्तर का कन्टूर चार्ट सर्वाधिक उपयोगी है।

(2) मुख्य मौसम तत्वो का 5 दिवसीय सामान्य से विचलन का मानचित्र तैयार करना। ये दोनो मानचित्र लगभग 10 वर्ष की अवधि मे प्रत्येक 5 दिन के लिए तैयार कर लिए गए हैं।

(3) औसत वायु प्रवाह और औसत विचलन मे सम्बन्ध स्थापित करना। पन्त (1964) के अनुसार, उत्तरी भारत पर 5 दिवसीय वर्षा का सामान्य से अधिक होना, पाकिस्तान तथा उत्तरी-पश्चिमी भारत पर 700 मिलीबार की 5 दिवसीय माध्य स्थिति से प्राय: संबधित रहती है। सामान्य से अधिक वर्षा इन क्षेत्रो पर तब विस्तृत होती है, जब दक्षिणी प्रायद्वीप पर स्थित, उच्चदाब क्षेत्र कमजोर हो।

(4) माध्य सामान्य प्रवाह के बहिर्वेशन के लिए उपयुक्त विधि तैयार करना। तथा (3) के सम्बन्ध द्वारा माध्य सामान्य प्रवाह के आधार पर, वर्षा के सामान्य से विचलन का सही आकलन करना। पिछले दशक से कम्प्यूटर तकनीक के विकास के साथ, मध्यम और दीर्घ अवधि के पूर्वानुमानो के लिए संख्यात्मक (Numerical) विधियो पर भी अब पर्याप्त ध्यान दिया जाता रहा है। इन विधियों की सक्षिप्त रूप रेखा अनुच्छेद (10.80) में दी गई है।

शीत तरंग की घटनाएँ घटी हे । ऐसी अवस्थाओ मे पूर्वानुमान तैयार करने के संबध में अन्य तत्वो पर भी ध्यान देना आवश्यक है, जैसे–सागर तल या भूमितल का तापमान, आर्द्रता की अवस्था, वायु प्रवाह तथा आस-पास के क्षेत्रों मे तुषार-पात आदि ।

10.72 पूर्वानुमान मे जलवायु विज्ञान का महत्व

दिन प्रतिदिन के समकालीन चार्टो के निरीक्षण से यह स्पप्ट हो जाता है कि दाव प्रणालियो की स्थिति और प्रारूप मे, मौसमी परिवर्तन सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है, जो जल-थल की गुण विभिन्नता तथा सूर्य के स्थानान्तरण के कारण उत्पन्न होती है । किसी स्थान-विशेष की भौगोलिक परिस्थितिया प्राय अपरिवर्तित रहती है । अत: वहा के जलवायु का प्रमुख चर नियन्त्रक सूर्य है, जो वर्प भर एक निश्चित मार्ग पर स्थानान्तरित होता रहता है । इसकी स्थिति के अनुसार, हर ऋतु मे स्थान विशेप की मौसमी विशेपताएँ वदलती रहती है, जो हर साल उसी क्रम मे वार-वार दुहरायी जाती है । अत. एक ऋतु से दूसरे ऋतु मे परिवर्तित होने वाली सामान्य दाव प्रणालियो तथा वायु प्रवाह का ज्ञान, मौसम पूर्वानुमान के लिये वहुत ही उपयोगी सिद्ध होता है ।

इसके लिये मुख्य मौसम तत्वो, जैसे–दाव, तापमान तथा वायु प्रवाह आदि के औसत मासिक मानो की गणना लगभग तीस या पचास वर्प के आकडो के आधार पर कर ली जाती है । ये मान **जलवायुविक सामान्य** (Climatological Norms) कहलाते हैं । विभिन्न स्टेशनो के जलवायुविक सामान्यो के आधार पर जलवायुविक मानचित्र तैयार किए जाते हैं । भारतीय क्षेत्रो के लिए कुछ जलवायुविक मान चित्र अध्याय 14 मे दिए गए है ।

नित्य प्रति के समकालीन चार्टों की मासिक जलवायुविक चार्टो से तुलना करने पर, मौसम परिस्थितियो का सामान्य से विचलन ज्ञात हो जाता है । विशेष असमानता की स्थितियां मौसम विशेपज्ञ के लिए महत्वपूर्ण है क्योकि इनसे मौसम प्रणालियो की संभावित गति और तीव्रता के वारे मे स्पप्ट सकेत मिलता है ।

10.80 संख्यात्मक मौसम प्रागुक्ति (Numerical Weather Prediction)

जैसाकि नाम से ही स्पप्ट है, इसका तात्पर्य सख्यात्मक विधियो से मौसम की प्रागुक्ति करना है । इसमे वायुमण्डल की भौतिक प्रवृत्ति को नियन्त्रित करने वाले समीकरणों को, वास्तविक रूप से हल किया जाता है । दो प्रकार के हल सम्भव है–

(1) वे हल जो विश्लेपात्मक (analytic) रूप मे प्राप्त हो जैसे–एकधातीय, वहुधातीय, चरघाताकीय फलन (exponential function) या अन्य रूप मे ।

(2) किसी समीकरण का, अल्पावधि ($\triangle t$) के लिए संख्यात्मक विधि से सन्निकट (approximate) हल कर लिया जाय और फिर उस हल को लम्वी अवधि के लिए शृंखलावद्ध रूप से उत्तरोत्तर विस्तारित कराया जाए जैसे—श्रान्ति (relaxation) की विधि । इन विधियो के लिए प्राय. कम्प्यूटर तकनीक का प्रयोग किया जाता है ।

10 81—वायुमण्डलीय अवस्था को व्यक्त करने वाले मौलिक तत्व जिन्हे. आगे वायुमण्डीय चर (variable) कहा जाएगा, ये है :—

(1) u X–दिशा में वायुगति। X–अक्ष प्राय· अक्षाशो को लिया जाता है।

(2) v . Y–दिशा (देशान्तर) मे वायुगति।

(3) w Z–दिशा (स्थानीय ऊर्ध्वाधर)-मे वायुगति।

(4) p वायु मण्डलीय दाव

(5) T या ρ तापमान या वायु घनत्व। गैस नियम, $p = \rho RT$, से सम्बन्धित होने के कारण p, ρ और T मे दो चर ही स्वतन्त्र रूप से लिये जा सकते है।

(6) q · विशिष्ट आर्द्रता या वायुमण्डलीय आर्द्रता का कोई अन्य माप।

चित्र (10·13)
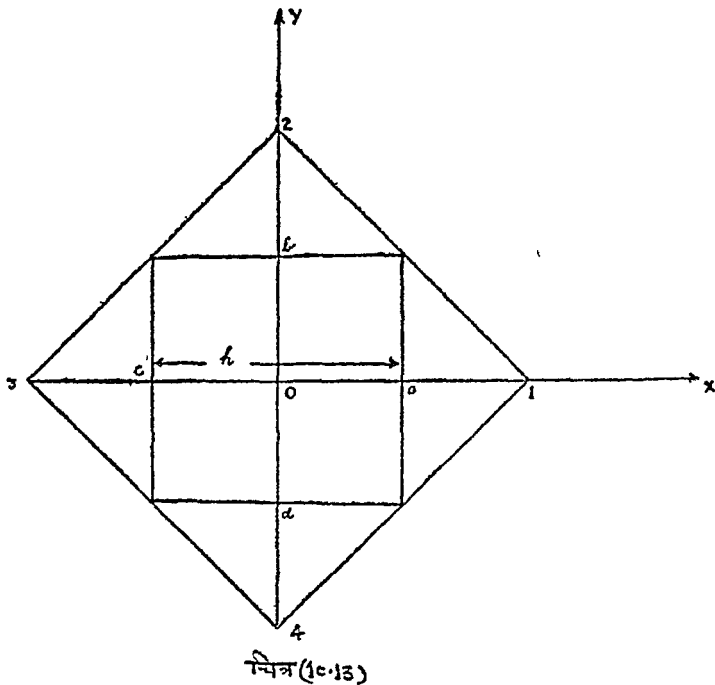
इन चरो के निर्धारण के लिए 6 समीकरण आवश्यक है। प्रारम्भिक अवस्था मे q को अचर मान लिया जाता है। इसका तात्पर्य है कि वायुमण्डलीय प्रक्रम जो मौसम (वर्षा, कुहरा, वज्रपात आदि) उत्पन्न करते है, के दृष्टिकोण से यह प्रस्ताव बिल्कुल अनुपयुक्त है, किन्तु बडे पैमाने पर वायुमण्डलीय प्रवाह को प्रागुक्त करने के लिए जो सख्यात्मक मौसम प्रागुक्ति का प्रारम्भिक कार्य है, आर्द्रता को नगण्य कर देना तर्क सगत है। अब शेष पाच चरो u, v, w, p, T (या ρ) की व्याख्या करने के लिए, पाच समीकरणो की आवश्यकता होगी। त्रिविम नियामक प्रणाली मे गति के तीन समीकरण, सांतत्य का समीकरण (equation of Continuity) तथा

ऊष्मागतिकी का पहला नियम; हमे पांच समीकरण प्रदान करते हैं। इन समीकरणो को इस प्रकार लिखा जा सकता है :—

$$\frac{du}{dt} = fv - \frac{1}{\rho}\frac{\partial p}{\partial x} + F_x \qquad \text{....(i)}$$

$$\frac{dv}{dt} = -fu - \frac{1}{\rho}\frac{\partial p}{\partial y} + F_y \qquad \text{....(ii)}$$

$$\frac{dw}{dt} = -\frac{1}{\rho}\frac{\partial p}{\partial z} - g + F_z \qquad \text{... (iii)}$$

ये तीन गति के समीकरण है, जहाँ f कोरियालिस प्राचल, F_x F_y तथा F_z घर्षण बल तथा g, ऊर्ध्व दिशा में प्रयुक्त होने वाला गुरुत्वाकर्षण बल है। ये समीकरण अरेखिक (non linear) हैं। चौथा निम्नांकित समीकरण है, जो संहति के संरक्षण के नियम पर आधारित है।

$$\frac{d\rho}{dt} = -\rho\left(\frac{\partial u}{\partial x} + \frac{\partial v}{\partial y} + \frac{\partial w}{\partial z}\right) \qquad \text{....(iv)}$$

ऊष्मा गतिकी का पहला नियम यह है,

$$\frac{dQ}{dt} = c_v\frac{dT}{dt} + p\frac{d\alpha}{dt},$$

जहाँ α (विशिष्ट आयतन) $= \frac{1}{\rho}$.

इस समीकरण मे 'Q' (वायुमण्डल मे आगत ऊष्मा की मात्रा) एक अज्ञात राशि है, जिसके मान निर्धारण के लिए एक और समीकरण की आवश्यकता पड़ेगी। किन्तु इस कठिनाई को प्रारम्भ मे यह मानकर समाप्त कर दिया जाता है कि पूर्वानुमान की अवधि मे वायुमण्डलीय प्रक्रमो की प्रवृत्ति रुद्धोष्म है। अत $\frac{dQ}{dt} = 0$

इस प्रकार, $c_v\frac{dT}{dt} + p\frac{d\alpha}{dt} = 0$

रुद्धोष्म दशाओ मे $p\rho^{-\gamma}$ = स्थिरांक।

$$\therefore \quad \frac{1}{p}\frac{dp}{dt} - \frac{\gamma}{\rho}\frac{d\rho}{dt} = 0$$

अतः सातत्य समीकरण की सहायता से

$$\frac{dp}{dt} = -\gamma p\left(\frac{\partial u}{\partial x}+\frac{\partial v}{\partial y}+\frac{\partial w}{\partial z}\right). \qquad \ldots(v)$$

यह पांचवा अभीष्ट समीकरण है।

10·82 इन समीकरणो को वास्तविक रूप से हल करने मे निम्नांकित कठिनाइयाँ है—

(1) ये समीकरण रेखिक नही है। $u\dfrac{\partial u}{\partial x}$, $v\dfrac{\partial v}{\partial y}$ आदि पद द्विघातीय प्रवृत्ति रखते है। अरेखिक आंशिक डिफरेन्शियल समीकरणो का हल प्राय: क्लिष्ट होता है।

(2) जिन राशियो का मान इन समीकरणो से ज्ञात करना है, उनके परिमाण प्राय: बहुत छोटे हैं, जिन्हे दो बडी राशियो के अन्तर से प्राप्त किया जाना है। उदाहरण के लिए, समीकरण

$$\frac{dv}{dt}+fu = -\frac{1}{\rho}\frac{\partial p}{\partial y},$$

मे $\dfrac{dv}{dt}$ का मान (छोटा) $\left|-\dfrac{1}{\rho}\dfrac{\partial p}{\partial y}\right|$ से $|fu|$ को घटाने से प्राप्त होगा।

ये दोनो राशियां अपेक्षाकृत बडे परिमाणो की और एक दूसरे से लगभग बराबर है। इनका अन्तर स्पष्ट रूप से एक क्रम (order) छोटा होगा। अत. इन बडी राशियो के माप या आकलन मे कोई त्रुटि होती है, तो $\dfrac{dv}{dt}$ के मान मे वह त्रुटि कम से कम 10 गुना होकर सम्मिलित होगी। अतः बडी राशियो का परिमाण निर्धारित करने मे, अत्यधिक सावधानी की आवश्यकता है, जो अगणित वायुमण्डलीय उच्चावचो तथा यान्त्रिक त्रुटियो के होते हुए प्राय संभव नही।

(3) उपर्युक्त समीकरणो की प्रकृति अत्यन्त व्यापक है। अत. अन्य बहुत से विक्षोभ, जैसे ध्वनि तरगे आदि भी, जो मौसम प्रणालियो पर कोई सार्थक प्रभाव उत्पन्न नही करते, इन समीकरणो के अन्तर्गत कम्प्यूटर द्वारा समाकलित हो जाते हैं। फलस्वरूप गणना के परिणाम वास्तविकता से बहुत अधिक विचलित हो जाते है। यह स्थिति परिकलनी (Computational) अस्थिरता कहलाती है। इस प्रभाव को दूर करने के लिए, समीकरणो को इस प्रकार सशोधित करते है कि तीव्रगामी तरगे छन (filter out) जाएँ। यह विधि फिल्टर प्रक्रम कहलाती हैं।

10·84 संख्यात्मक मौसम प्रागुक्ति का सरलतम उदाहरण

यह वह स्थिति है, जिसमें चरों की संख्या घटा कर न्यूनतम, एक या दो करदी जाए। इस स्थिति मे भी चूँकि समीकरण की अरेखिकता विद्यमान रहती है, अत· कम्प्यूटर तकनीक का उपयोग आवश्यक है।

इसके लिए भ्रमिलता समीकरण (vorticity equation) के सरलतम रूप पर विचार करते हैं, जो निम्नांकित हैं ·—

$$\frac{dZ_A}{dt}=0\ ,$$

अर्थात्, निरपेक्ष भ्रमिलता (Z_A) = स्थिरांक।

या $$\frac{\partial Z_A}{\partial t}+u\ \frac{\partial Z_A}{\partial x}+v\ \frac{\partial Z_A}{\partial y}=0\ , \qquad ....(i)$$

जिसमे भ्रमिलता का ऊर्ध्वाधर पद छोड दिया गया है।

स्वाभाविकत वायुवेग के अवयव भूव्यावर्ती अवयवो के समान लिए जा सकते हैं ·—

$$\therefore \quad u=-\frac{g}{f}\frac{\partial z}{\partial y} \quad \text{तथा } v=\frac{g}{f}\frac{\partial z}{\partial x} \qquad ....(ii)$$

अब $Z_A=Z+f$, जहाँ Z सापेक्षिक भ्रमिलता तथा f कोरियालिस प्राचल है।

$$\therefore \quad Z_A=\frac{\partial v}{\partial x}-\frac{\partial u}{\partial y}+f=\frac{g}{f}\ \nabla^2 z+f$$

जहाँ, $$\triangle^2=\ \frac{\partial^2}{\partial x^2}+\frac{\partial^2}{\partial y^2}\ .$$

$$\therefore \quad \frac{\partial Z_A}{\partial t}=\frac{g}{f}\nabla^2\left(\ \frac{\partial z}{\partial t}\ \right) \qquad ....(iii)$$

अत. समीकरण (i) का निम्नाकित रूप मे लिखा जा सकता है :

$$\nabla^2\ \frac{\partial z}{\partial t}=-J\,(z,\,g\,f^{-1}\ \nabla^2 z\ +f\,). \qquad ....(iv)$$

जहाँ $$J\ (F_1,F_2)\ =\frac{\partial F_1}{\partial x}\ \frac{\partial F_2}{\partial y}-\frac{\partial F_1}{\partial y}\ \frac{\partial F_2}{\partial x}$$

समीकरण (iv) मे केवल एक अचर z (कन्टूर-तुंगता) है। यदि तुंगता प्रवृत्ति $\frac{\partial z}{\partial t}$ को I, तथा समीकरण के दायें पक्ष को F (x,y) से प्रदर्शित करें, तो

$$\nabla^2\ I=F\,(x,\ y) \qquad ....(v)$$

जहाँ F (x, y) एक ज्ञात फलन है, क्योंकि प्रेक्षणों की सहायता से इसकी गणना की जा सकती है। समीकरण (v) प्वायसन का मानक समीकरण है। $\nabla^2 I$ के मानों के लिए किसी क्षेत्र पर I का मान श्रान्ति विधि से निर्धारित किया जा सकता है, किन्तु इसके लिए आवश्यक है कि क्षेत्र की सीमाओं पर I का प्रारम्भिक मान पहले से ज्ञात हो।

10.85 सख्यात्मक हल के लिए $\nabla^2 I$ को पहले अन्तर (difference) समीकरण के रूप मे रखते हैं। इसके लिए विन्दु 0 के चारों ओर चित्र (10.13) के ग्रिड पर विचार कीजिए।

$$\text{विन्दु 0 पर} \frac{\partial^2 I}{\partial x^2} = \frac{\left(\frac{\partial I}{\partial x}\right)_a - \left(\frac{\partial I}{\partial x}\right)_c}{h}$$

$$= \frac{1}{h}\left[\frac{I_1 - I_o}{h} - \frac{I_o - I_3}{h}\right]$$

$$= \frac{I_1 + I_3 - 2I_o}{h^2}$$

$$\text{इसी प्रकार विन्दु 0 पर } \frac{\partial^2 I}{\partial y^2} = \frac{I_2 + I_4 - 2I_o}{h^2}$$

$$\therefore \nabla^2 I = \frac{\partial^2 I}{\partial x^2} + \frac{\partial^2 I}{\partial y^2} = \frac{I_1 + I_2 + I_3 + I_4 - 4I_o}{h^2}$$

$$= \frac{(\overline{I} - I_o)}{h^2},$$

$$\text{जहाँ, } \overline{I} = \frac{I_1 + I_2 + I_3 + I_4}{4}.$$

10·86 समीकरण (v) को व्यवस्थित रूप से हल करने के लिए निम्नांकित विधि अपनाना उपयुक्त है·

(1) एक विश्लेपित कन्टूर मान चित्र मे समान दूरी पर स्थित विन्दुओं का ग्रिड वना लीजिए। प्राय. 500 मिलीबार का दाव पृष्ठ इसके लिए अधिक उपयुक्त होता है। किन्तु अन्य दाव स्तर पर भी यदि वहाँ अपसरण क्षेत्र नगण्य हो, यह विधि लागू के की जा सकती है। कन्टूर तुंगता के मानो (z) द्वारा परिमित अन्तर (finite difference) सूत्र $\nabla^2 z = \frac{4(\overline{z} - z)}{h^2}$, द्वारा $\nabla^2 z$ के मान की गणना कर लीजिए।

(2) निरपेक्ष भ्रमिलता Z_A की गणना सूत्र, $Z_A = \frac{g}{f} \nabla^2 z + f$, की सहायता से कर लीजिए। विभिन्न ग्रिड बिन्दुओ पर Z_A का मान अंकित करके समरेखाओं द्वारा उसका विश्लेषण कर लीजिए।

(3) भ्रमिलता प्रवृत्ति $\frac{\partial Z}{\partial t}$ का मान ज्ञात करने के लिए Z_A की समरेखाओं की भूव्यावर्ती गति से कन्टूर रेखाओ की दिशा मे उतनी दूर तक अभिवहित कीजिए, जितनी दूरी, $(\triangle t)$ (मान लीजिए 3 घण्टे) समय मे वायु कण तय करेंगे। इस प्रकार हमे प्रागुक्त Z_A का क्षेत्र प्राप्त हो जाएगा। उपर्युक्त विधि को गणितीय सूत्र

$$\frac{\partial Z}{\partial t} = -\left(u\frac{\partial Z_A}{\partial x} + v\frac{\partial Z_A}{\partial y} \right) = -\vec{V} \cdot \nabla Z_A,$$

द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

प्रागुक्त और प्रारम्भिक Z_A क्षेत्र के अन्तर से सापेक्ष भ्रमिलता का परिवर्तन $\triangle Z$ की गणना प्रत्येक ग्रिड विन्दु के लिए की जा सकती है।

Z_A के मानो को $\frac{f}{g}$ से गुणा करने पर $\nabla^2 \frac{\partial z}{\partial t}$ या $\nabla^2 I$ का मान ज्ञात हो जाएगा।

(5) $\nabla^2 I$ के क्षेत्र से I का मान ज्ञात करने के लिए, सख्यात्मक समाकलन की अनेक विधियाँ प्रयुक्त की जा सकती हे। एक विधि श्रान्ति की है, जो प्राय. प्रयोग मे लाई जाती है।

(6) I के मान द्वारा किसी समयान्तर ∂t के लिए ऊँचाई का परिवर्तन ∂z ज्ञात किया जा सकता है। प्रारम्भिक कन्टूर ऊँचाइयो मे प्रत्येक ग्रिड विन्दु पर ∂z का मान जोडने से, नया कन्टूर प्रतिरूप, अर्थात्-प्रागुक्त प्रतिरूप मिल जाता है। इससे भी आगे $2\delta t$ समय के लिए प्रागुक्त प्रतिरूप ज्ञात करने के लिए δt समय के उपरान्त प्राप्त प्रतिरूप को प्रारम्भिक क्षेत्र मान लिया जाता है और उपर्युक्त प्रक्रम पुन दोहराया जाना है। उत्तरोत्तर समाकलन की यह विधि तब तक दुहराते रहते हैं जब तक कि पूर्वानुमान की अवधि के अन्त का कन्टूर-प्रति-रूप न प्राप्त हो जाए।

10.90 व्यवहारिक उदाहरण के लिए भारतीय क्षेत्रो को प्रभावित करने वाली कुछ विशिष्ट मौसम घटनाओ का विवरण समकालीन चार्टों की सहायता से नीचे दिया गया हैं:—

10.91 पश्चिमी विक्षोभ-एक स्थिति अध्ययन

नववर से मई तक के महीनों मे कुछ निम्नदाव क्षेत्र एक शृंखलाबद्ध रूप मे अपने पश्चिम से पूर्व की ओर यात्रा के [illegible] उत्तर और मध्य भारत को प्रभावित

करते है। यही निम्नदाब इन क्षेत्रो मे सर्दियां की वर्षा के प्रमुख कारण हैं। ये निम्नदाब भूमध्य तथा केस्पियन सागरो में उत्पन्न वाताग्र अवदावो या उनके द्वितीयको द्वारा प्रेरित होते है, जो अपेक्षाकृत दक्षिणी पथ का अनुसरण करते हुए उत्तरी-पश्चिमी सीमा से भारत मे प्रवेश करते है। माध्यकी माध्य के अनुसार इनकी मासिक संख्या नवंबर से मई तक के महीनो मे क्रमश: 2,4,5,5,5,5 तथा 2 है। ये प्रणालिया भारत मे पश्चिमी विक्षोभ कहलाती है।

पश्चिमी विक्षोभ वाताग्र प्रकृति की प्रणाली होती है, जिसमे उष्ण वाताग्र प्राय: अधिधारित होता है और धरातलीय मौसम चार्ट पर अकित नही हो पाता। भारतीय क्षेत्र पर ये विक्षोभ निम्नाकित दाब प्रणालियो के रूप मे प्राय. देखे जाते है —

(1) धरातलीय अवदाब या निम्नदाब–जिससे पर्याप्त ऊँचाई तक उच्चतर चक्रवाती प्रवाह या द्रोणिका संबंधित होती है।

(2) धरातलीय निम्नदाब–जिससे उच्चत्तर वायु द्रोणिका सबधित नही होती।

(3) उच्चतर वायु चक्रवाती प्रवाह या द्रोणिका

इन विक्षोभो से वर्षा या तुषार, प्राय: पहले जम्मू और कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश को प्राप्त होती है। तत्पश्चात् शृंखलावद्ध रूप में पंजाब, हरियाणा, पूर्वी राजस्थान तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश प्रभावित होते हैं। इसके बाद यदि विक्षोभ की स्थिति अपेक्षाकृत अधिक दक्षिण मे है, तो मध्य प्रदेश मे वर्षा आरम्भ हो जाती है अन्यथा वर्षा की पेटिका क्रमश. पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा पश्चिमी बगाल तथा आसाम पर से गुजरती जाती है। इन क्षेत्रो का कितना भाग किसी विक्षोभ से प्रभावित होता है, यह प्राय. विक्षोभ को तीव्रता तथा गति की दिशा पर निर्भर करती है। जो विक्षोभ केवल उच्चतर वायु द्रोणिका के रूप मे प्रवेश करते हैं तथा उत्तर-पूर्व की ओर बढते है, प्राय. जम्मू-कश्मीर मे हल्की वर्षा या तुषार उत्पन्न करने के बाद हिमालय की शृंखलाओ मे खो जाते हैं।

उदाहरण—उपर्युक्त व्याख्या के स्पष्टीकरण के लिए, पश्चिमी विक्षोभ की एक वास्तविक स्थिति का अध्ययन निम्नांकित है। यह विक्षोभ भारतीय क्षेत्र से बाहर एक अवदाब के रूप मे विकसित हुआ और दिसंबर 1967 के अन्तिम सप्ताह में भारतीय उपमहाद्वीप के ऊपर सक्रिय रहा।

23 दिसम्बर को 40° पूर्वी देशान्तर के आसपास रूस से दक्षिणी टर्की तक, उच्चतर पश्चिमी प्रवाह मे अत्यन्त गभीर द्रोणिका विस्तृत थी। 45° से 55° पूर्वी देशान्तर के बीच धरातलीय चार्ट पर वाताग्र विक्षोभ द्रोणिका के अग्र भाग मे उपस्थित था। फलत: इस प्रणाली की पूर्वी दिशा में गति के बीच, पूर्वी ईरान पर एक अवदाब विकसित हुआ। यह अवदाब 24 घंटों तक स्थिर रहा। इससे 25 दिसम्बर के सुबह मेक्रान–सिंध तट के पास एक प्रेरित निम्नदाब अभ्युदित हुआ।
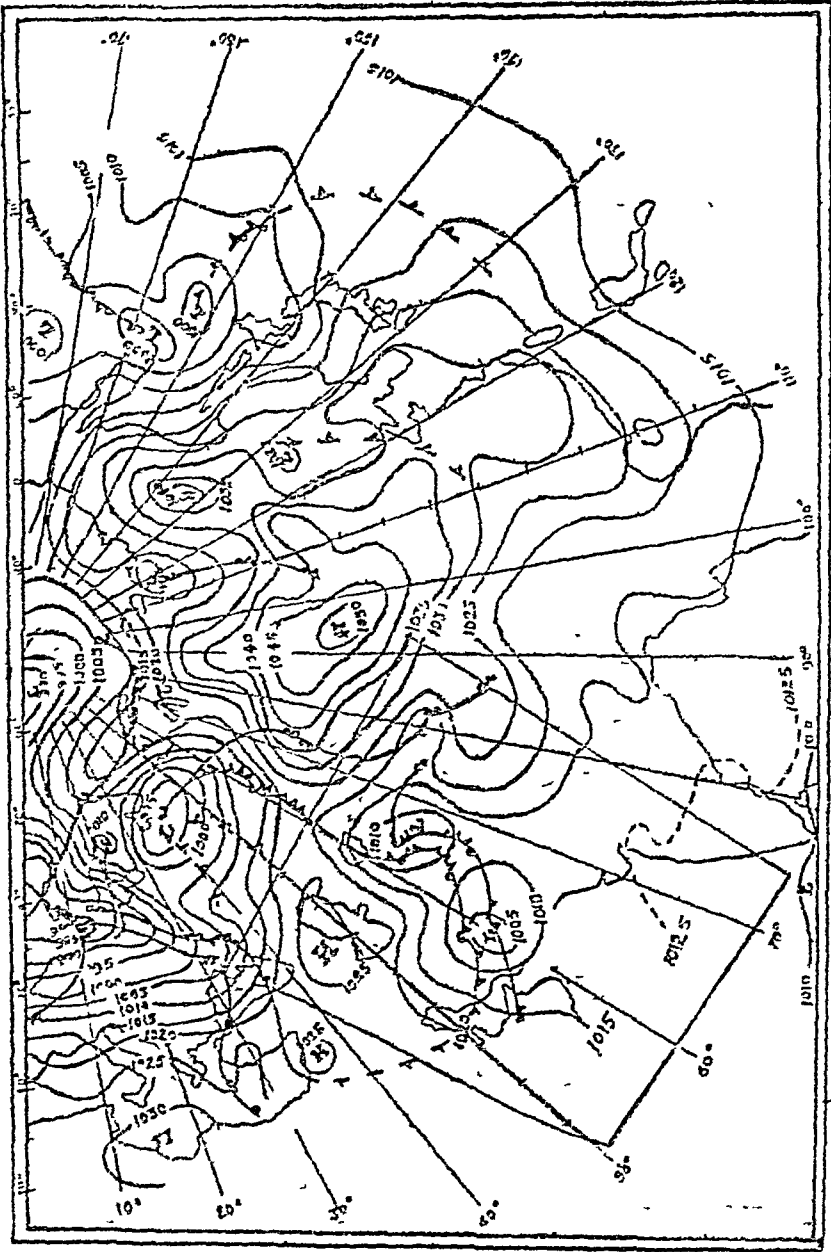
चित्र (10 14)
25 दिसम्बर, 1967
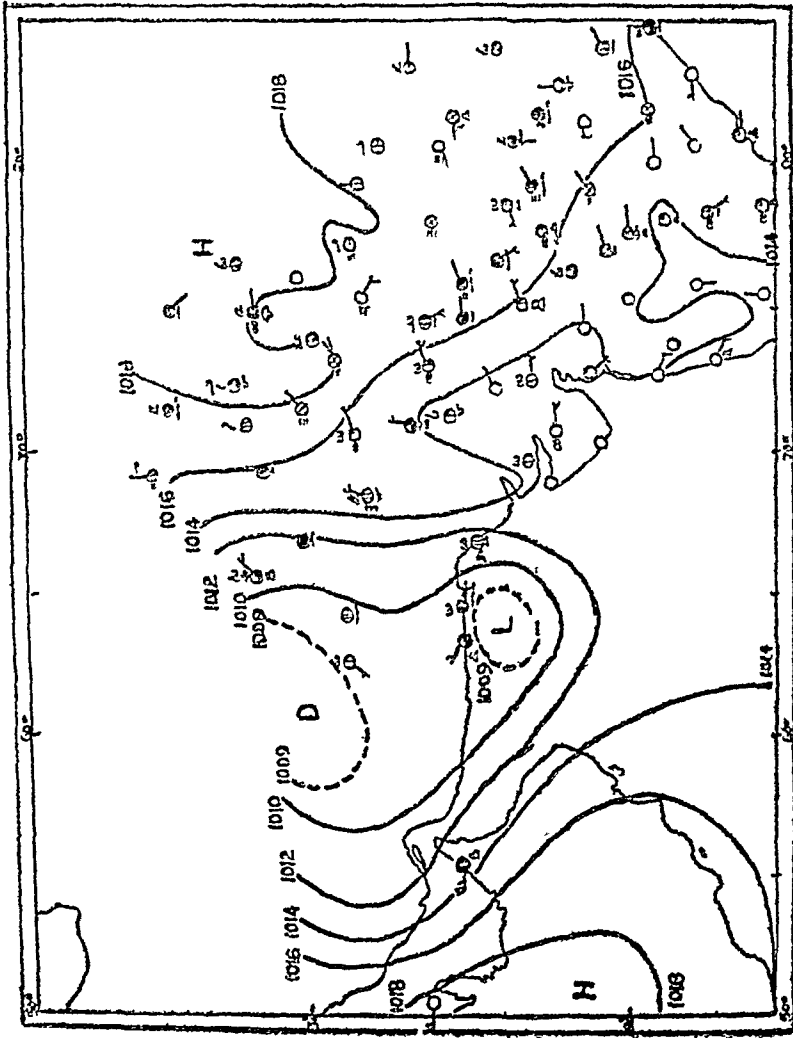
चित्र (10·15)
23 दिसम्बर, 1967
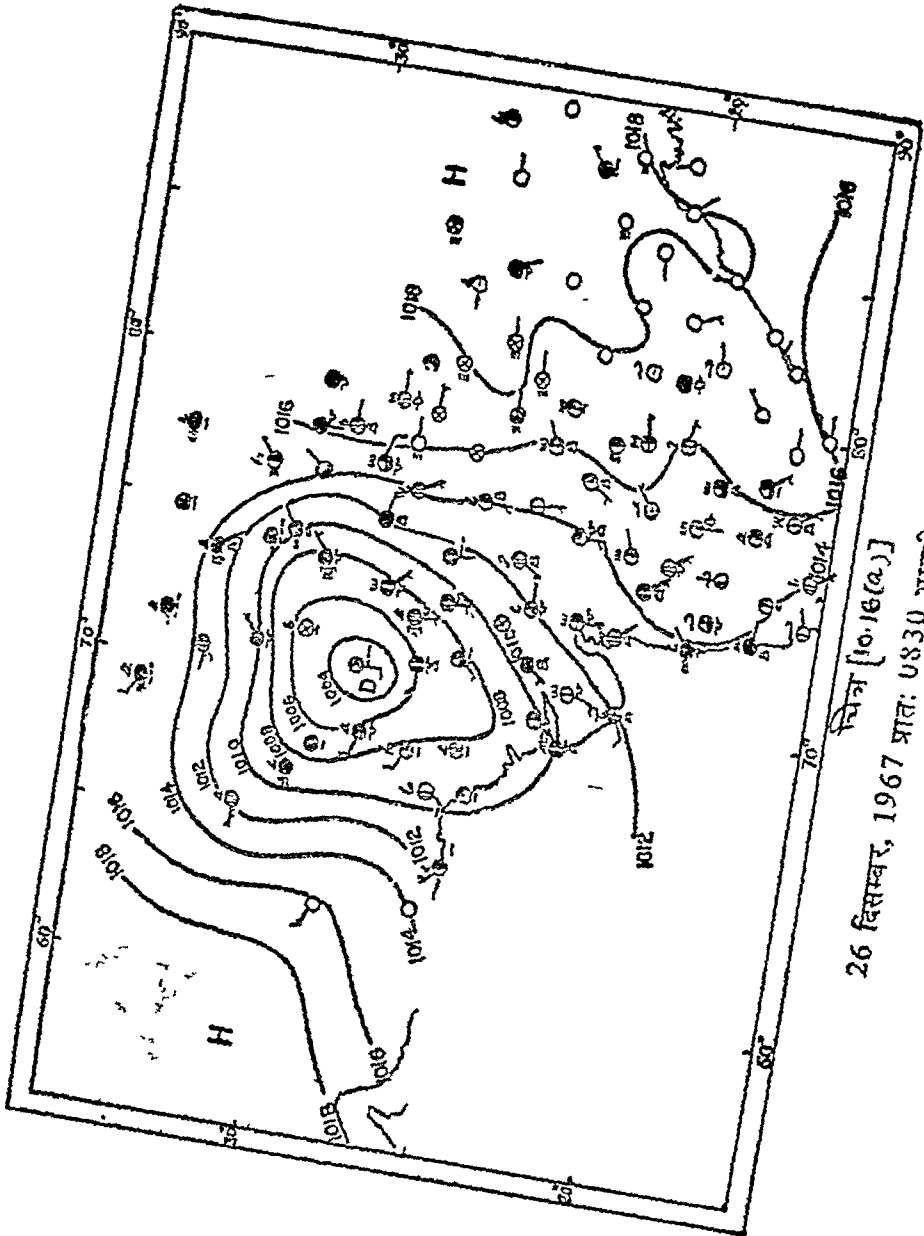
चित्र [10.16(a)]
26 दिसम्बर, 1967 प्रातः 0830 भारतीय मानक समय

यह स्थिति चित्र (10.15) में दिखाई गई है। 26 की सुबह ईरान का अवदाब पाकिस्तान तथा सम्बद्ध राजस्थान तक पहुंच गया। 03 जी० एम० टी० के धरातलीय चार्ट मे इसका केन्द्र खानपुर के पास निर्धारित किया गया; चित्र (10.16a)। प्रेरित निम्नदाब अवदाब मे विलीन हो गया, जिसके फलस्वरूप अवदाब की द्रोणिका गुजरात तक विस्तृत हो गई। केन्द्रीय दाब 1002 मिलीबार आकलित किया गया, जो सामान्य से 17 मिलीबार कम था। संबद्ध उच्चतर वायु चक्रवाती प्रवाह तथा वायु-द्रोणिका 200 मिलीबार स्तर तक विस्तृत पाए गए।

इस स्थिति मे पाकिस्तान, उत्तर-पश्चिमी भारत, गुजरात तथा कच्छ मे दूर-दूर तक वर्षा उत्पन्न हुई। जिसका विवरण चित्र (10.16b) में दिया गया है। अगले 24 घंटो मे वर्षा पेटिका 83° पूर्वी देशान्तर तक फैल गई। पश्चिमी हिमालय की पहाड़ियों मे भारी वर्षा हुई तथा दक्षिण मे बम्बई तक भी हलकी वर्षा रिकार्ड की गई। अधिकतम वर्षा बनिहाल मे 18 सेमी हुई। अवदाब प्राय स्थिर रहा और 27 दिसंबर से तेजी से क्षीण होना आरम्भ हो गया। यह विक्षोभ धरातलीय और उच्चतर वायुमण्डल मे अत्यन्त प्रभावशाली रूप से विकसित था, जिससे व्यापक रूप से प्रभावित क्षेत्रो मे वर्षा हुई। किन्तु इसका एक स्थान पर स्थिर होना और एकाएक क्षीण होने लगना एक असामान्य घटना थी। ऐसी विकसित प्रणालिया, पूर्व की ओर बढ़ती हुई प्रायः असम तक अच्छी वर्षा उत्पन्न करती हैं।
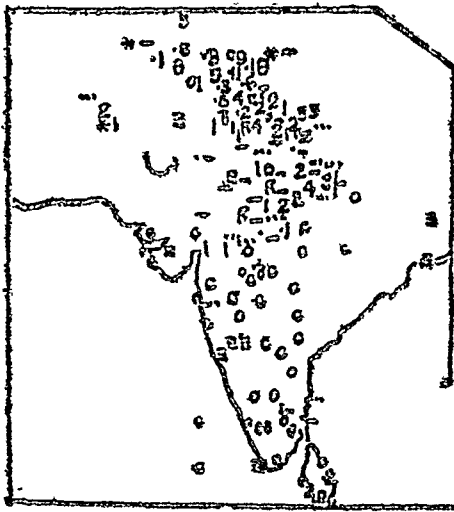
चित्र (10.16b)
अवदाब से सम्बद्ध वर्षा का आवंटन

पश्चिमी विक्षोभ के आगमन से पूर्व दाब का गिरना, पक्षाभ मेघो का अभ्युदय तथा रात्रि तापमान और ओसांक में वृद्धि का संकेत स्पष्ट मिलता है। कभी-कभी एक से अधिक निम्नदाब क्षेत्र धरातलीय चार्ट पर बन जाते हैं किन्तु ऐसे निम्नदाब प्रायः क्षीण होते हैं और अपने प्रभाव क्षेत्र मे बहुत थोड़ा मौसम उत्पन्न कर पाते हैं।

10.92 काल वैशाखी या नारवेस्टर (Norwester)

भारत मे पूर्व मानसून काल (मार्च, अप्रैल और मई) मे उत्तरी-पूर्वी भारत, मुख्यत असम, बंगाल और मेघालय तथा बंगला देश मे प्रचण्ड तडित झंझा की घटनाएँ होती है, जो सामान्यत. वर्षा, स्क्वाल तथा ओलो से संबधित रहती है। झंझाएँ प्राय दोपहर के बाद और शाम के समय आती है किन्तु असम मे इनका आक्रमण रात्रि मे भी पर्याप्त होता है। ये घटनाएँ काल वैशाखी या नारवेस्टर कहलाती हैं। नारवेस्टर कहलाने का कारण यह है कि अधिकाश झंझाएँ प्रभावित स्थान पर उत्तर-पश्चिम से पहुचती हुई पाई जाती है। प्रति वर्ष काल वैशाखी से उत्तर पूर्व भारत तथा बंगला देश को पर्याप्त जन-धन की हानि उठानी पडती है।

बंगाल मे मार्च अप्रैल तथा मई के लिये औसत काल-वैशाखी की संख्या क्रमश· 4, 8 और 12 है। दक्षिण-पूर्व की ओर इनकी सख्या और तीव्रता दोनो बढती है।

तडित झंझा की संरचना विशाल कपासी वर्षी से बनती है, जिसकी ऊँचाई प्राय. 14 से 20 कि मी तथा आधार 4 से 10 वर्ग कि० मी० पाया जाता है। यह प्रणाली पश्चिम से पूर्व की ओर गति करती है। यह गति 3 से 6 कि० मी० ऊचाई के बीच की उच्चतर हवाओ द्वारा नियन्त्रित की जाती है। औसत गति 50 से 60 कि० मी० प्रति घण्टे की आकलित की गई हे। किसी स्टेशन पर तडित मेघ पहुँचने से पूर्व उसके द्वारा जनित स्क्वाल स्टेशन को प्रभावित करते है। स्क्वाल पहुचने की गति प्राय. 120 मे 150 कि० मी० प्रति घटा तथा कभी-कभी 200 कि० मी० प्रति घण्टा पाई गई है। एक नारवेस्टर की स्थानीय प्रभावकारी अवधि 2 से 3 घटे के बीच होती है। आसाम और बगला देश मे यह अवधि चार-पाच घण्टे की पाई जाती है।

कपासी वर्षा मेघ के बीच विशालकाय मेघ राशिया रोल करती हुई उर्ध्वाधर दिशा मे विकसित होती है। विकासशील अवस्था मे ही तडित झंझा तथा मूसलाधार वर्षा और कभी-कभी ओले भी उत्पन्न होते है। मानसून के अभ्युदय (जून) के बाद हिमाकस्तर बहुत ऊँचा उठ जाता है जिससे ओलो का बनना बहुत कम हो जाता है। मानसून अच्छी तरह स्थापित हो जाने के बाद काल वैशाखी की घटनाएँ शनै. शनै. समाप्त हो जाती है।

अधिकाँश काल वैशाखिया छोटा नागपुर पठार मे विकसित होती है। मध्य भारत पर स्थित निम्नदाब की द्रोणिका यहा सक्रिय रहती हैं, जिसके दक्षिणी प्रवाह मे बंगाल की खाडी से आर्द्रता अभिवहित होकर बगाल के वायुमण्डल मे भरती जाती है। जब कभी एक उच्चदाब कोशिका उत्तरी बंगाल की खाडी तथा तटवर्ती प्रदेशो पर विस्तृत होती है, तो आर्द्रता अभिवहित करने वाला प्रवाह और अधिक सक्रिय हो उठता है। यह आर्द्रता 2 कि० मी० से निचले वायुमण्डल मे भरती जाती हैं क्योकि इस स्तर से ऊपर स्थित निम्न क्षोभमडलीय व्युत्क्रमण तह, इसे और ऊपर उठने से रोकती हैं। कभी-कभी गगा के मैदान से गुजरने वाले

पश्चिमी विक्षोभ भी आर्द्रता का अन्तर्वाह (Inflow) त्वरित करने में सहायक होते हैं। छोटा नागपुर पठार में पर्वतीय परिस्थितियां ट्रिगर क्रिया द्वारा आर्द्र हवाओं को अतिरिक्त आरोही गति प्रदान करती हैं, जो व्युत्क्रमण तह को तोड़कर तेजी से विकसित होती है और कपासी वर्षी मेघ उत्पन्न कर देती है।

झंझाओं के विकास के लिये, निम्न क्षोभ मण्डलीय व्युत्क्रमण का टूटना आवश्यक है। पर्वतीय करणों के अलावा इसके लिये अन्य अनुकूल क्रियाविधियां निम्नांकित हैं :—

(1) किसी पश्चिमी विक्षोभ का आगमन —इस स्थिति में कपासी वर्षी मेघ किसी भी समय जनित हो सकते हैं।

(2) सौर-उष्मन—चूंकि सौर-उष्मन दोपहर बाद अधिकतम होता है, अत. इस क्रिया विधि द्वारा दोपहर या शाम को ही झंझा उत्पन्न होती है।

(3) अवरोही वायु प्रवाह —आसाम तथा संलग्न पूर्वी भागों में ट्रिगर क्रिया विधि उन अवरोही हवाओं द्वारा प्रदान की जाती है जो उत्तर तथा उत्तर-पूर्व में स्थित पहाड़ियों पर रात्रि तथा प्रभात वेला में बहती हैं। ये हवाएँ आर्द्रता को व्युत्क्रमण तोड़ने के लिए यथेष्ट उत्थापन प्रदान करने की क्षमता रखती हैं।

(4) कभी-कभी, बिना किसी बाहरी यांत्रिकत्व के आर्द्रता अभिवहन की अधिकता के कारण उत्पन्न यथेष्ट दबाव, व्युत्क्रमण तह को तोड़ने में सफल हो जाता है।

उदाहरण—25 मई 1972 के दिन विकसित हुए एक प्रारूपिक (Typical) काल वैशाखी से सम्बन्धित समकालीन स्थितियाँ चित्र (10 17 a) में दिखाई गई हैं।
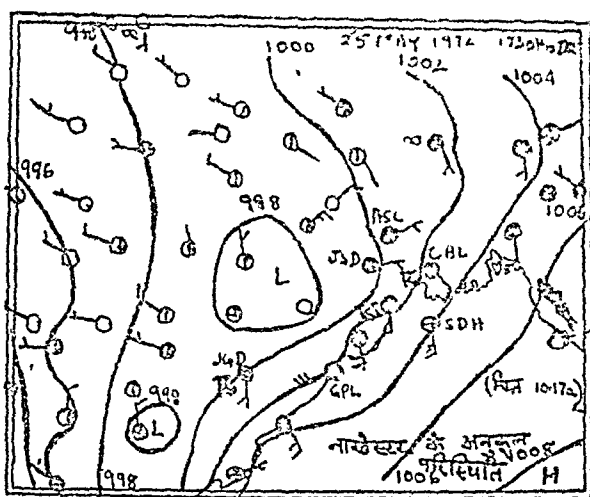
धरातलीय चार्ट
चित्र (10 17a)

उत्तरी-पूर्वी मध्य प्रदेश पर स्थित निम्नदाब तथा उसके पूर्वी भागों मे द्रोणिका से सबंधित प्रवाह मे आर्द्रता का तीव्र अभिवहन स्पष्ट है। इस दिन पश्चिमी बगाल के
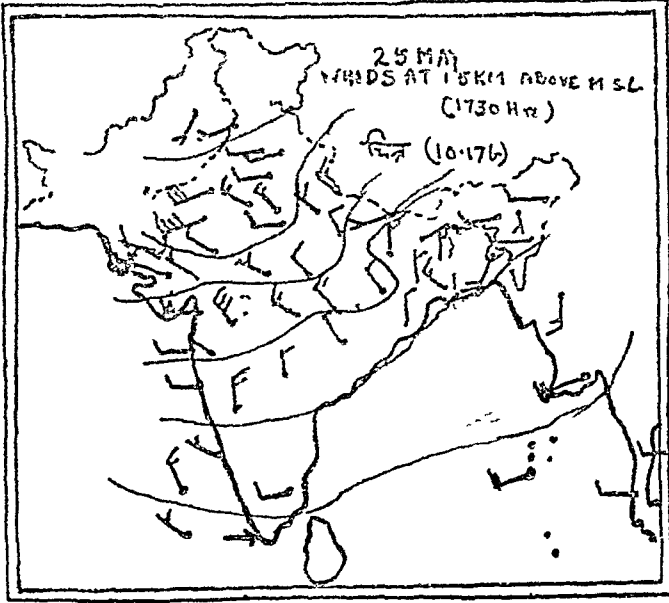
मैदानी भागो मे व्यापक रूप से तडित झंझा की घटनाएँ हुई जो बाद मे बगला देश तथा अन्य पूर्वी प्रदेशो मे अग्रसर होती गई।

10 93 शीत तरंग (Cold Wave)

सर्दी के महीनो मे पश्चिमी विक्षोभो के ठीक पीछे अर्थात्-शीत वाताग्र के पृष्ठ भाग मे बहती अत्यन्त शीतल हवाएँ उत्तरी भारत पर शीत तरंग के रूप मे प्रवाहित होती है। मौसम वैज्ञानिक धारणा के अनुसार "शीत तरग" शब्द तब प्रयुक्त होता है, जब सर्दियो मे निम्नतम तापमान, सामान्य से कम से कम 6°C नीचे आ जाए। विचलन 8°C या अधिक होने पर शीत तरग प्रखर (severe) कहलाती है। शीत तरंग उत्पन्न होने का एक अनिवार्य प्रतिबन्ध यह है कि पश्चिमी विक्षोभ के पृष्ठ भाग मे कोई अन्य विक्षोभ उपस्थित न हो, क्योकि इस स्थिति मे पृष्ठ भाग के विक्षोभ के उष्ण सेक्टर में बहती गर्म हवाएँ तापमान ह्रास को बहुत कम कर देती है। जम्मू-कश्मीर तथा पश्चिमी हिमालय की पहाडियो मे होने वाले व्यापक तुषारपात भी उत्तरी रेखांशिक (मिरीडिग्रानल) प्रवाह के अन्तर्गत शीत तरगे जनित कर देती है।

22 जनवरी से 29 जनवरी 1964 के मध्य समूचा उत्तरी भारत, विशेषत. उत्तरी-पश्चिमी भाग शीत तरगो तथा प्रखर शीत तरगो से प्रभावित रहा। क्षेत्रो के अनुसार इनका दैनिक विवरण निम्नांकित सारणी मे दिया गया है :—

दिनांक (जनवरी) 64 / क्षेत्र	22	23	24	25	26	27	28	29
पश्चिमी राजस्थान	सा	प्र	सा	सा	सा/प्र	—	—	—
पूर्वी राजस्थान	—	सा	सा	—	सा/प्र	सा	सा	सा
गुजरात और सौराष्ट्र	—	सा/प्र	प्र	सा/प्र	सा/प्र	—	—	—
पंजाब और हरियाणा	—	सा	सा	सा	सा	सा/प्र	सा	सा
पश्चिमी मध्य प्रदेश	—	—	—	—	सा	सा/प्र	सा	सा
उत्तर प्रदेश	—	—	—	—	सा	सा	—	—
बिहार और बंगाल	—	—	—	—	—	सा	—	—

सा = साधारण शीत तरंग तथा प्र = प्रखर शीत तरंग

21 जनवरी को पंजाब पर एक पश्चिमी विक्षोभ स्थिर था, जिसके प्रभाव में राजस्थान पर एक प्रेरित निम्नदाब क्षेत्र भी उत्पन्न हो गया था। 22 तारीख तक विक्षोभ पश्चिमी हिमालय तथा प्रेरित निम्न दाब दक्षिणी-पश्चिमी उत्तर प्रदेश की ओर बढ़ गया। फलस्वरूप पश्चिमी हिमालय की पहाड़ियों में व्यापक तुषारपात और वर्षा हुई। दाब प्रणालियों के हट जाने से राजस्थान और गुजरात पर उत्तरी-पश्चिमी प्रवाह स्थापित हो गया। चित्र (10 18) इस प्रवाह के अधीन सम्पूर्ण राजस्थान पर शीत तरंगें छा गईं, जिनका फैलाव शीघ्र ही गुजरात और महाराष्ट्र तक बढ़ता गया।
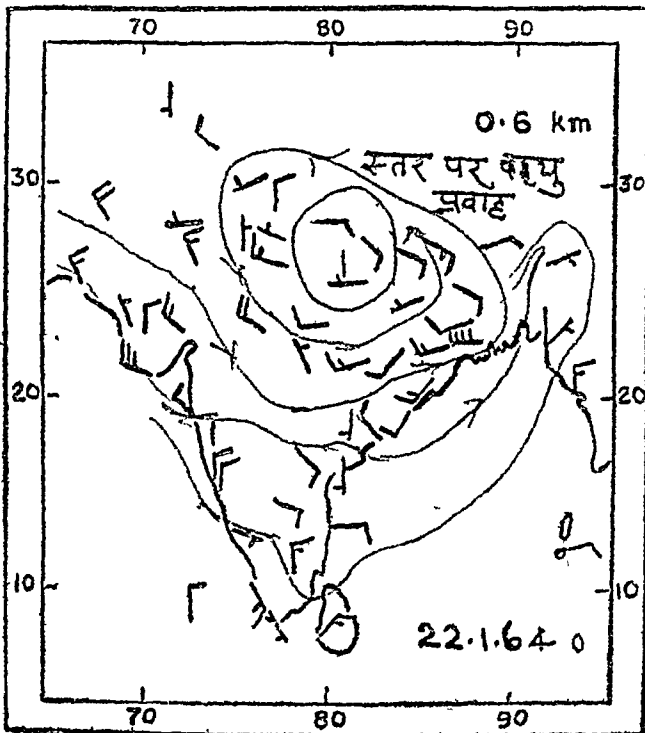
चित्र (10·19)
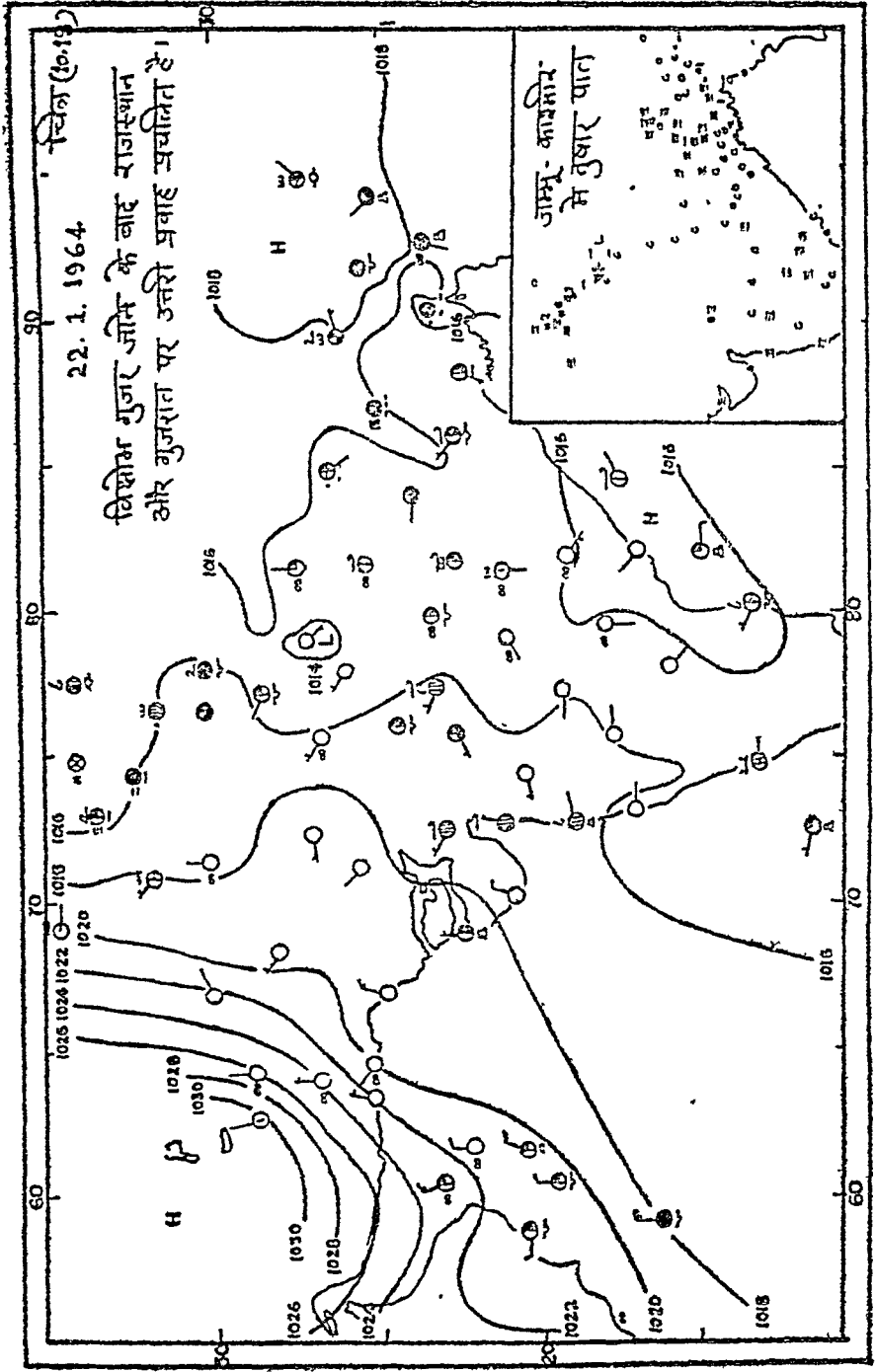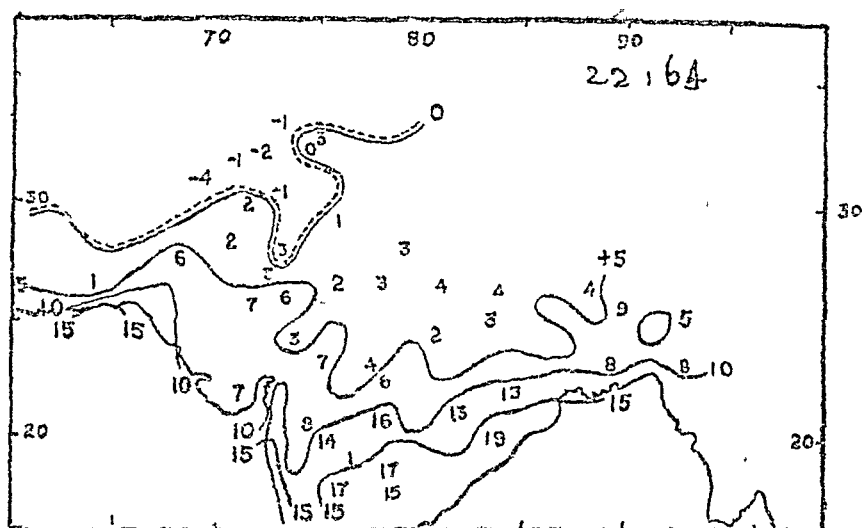
निम्नतम तापमान का आलेख चित्र (10.20)
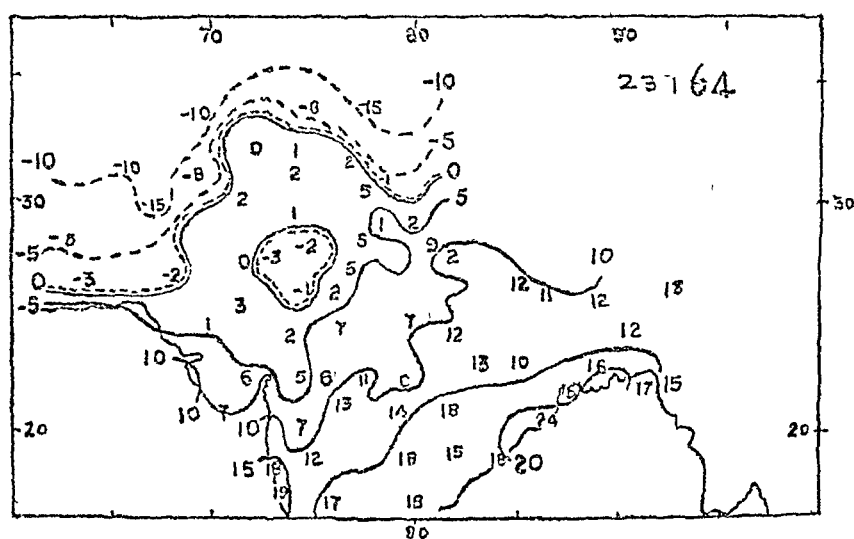
पश्चिमी उत्तर प्रदेश पर स्थित, कटक जिसके प्रभाव मे शीत तरगे वह रही थी, 25 जनवरी तक बिहार और पश्चिमी बगाल तक स्थापित हो गया। चित्र (10 21)। इसमे ठडी हवाओ का अभिवहन उत्तर प्रदेश तथा और पूर्वी भागो तक चला गया। इन क्षेत्रो पर अगले तीन दिनो तक तापमान का गिरना जारी रहा।

चू कि कोई अन्य प्रभावशील दाब प्रणाली अनुपस्थित थी, अत रेखांशिक प्रवाह कई दिनो तक यथावत् रहा। फलस्वरूप तापमान की पुन वृद्धि बहुत धीमी गति से हो पाई। 27 जनवरी के बाद ही शीत तरगो का प्रभाव उत्तरी पश्चिमी भारत और गुजरात से क्षीण होना आरभ हो सका।

चित्र (10.21)
25 1 64
कटक अक्ष का बिहार और बंगाल पर प्रसार
90
80
70
60
35
25
15
1016
1018
1020
1022
1024
1014
H
L
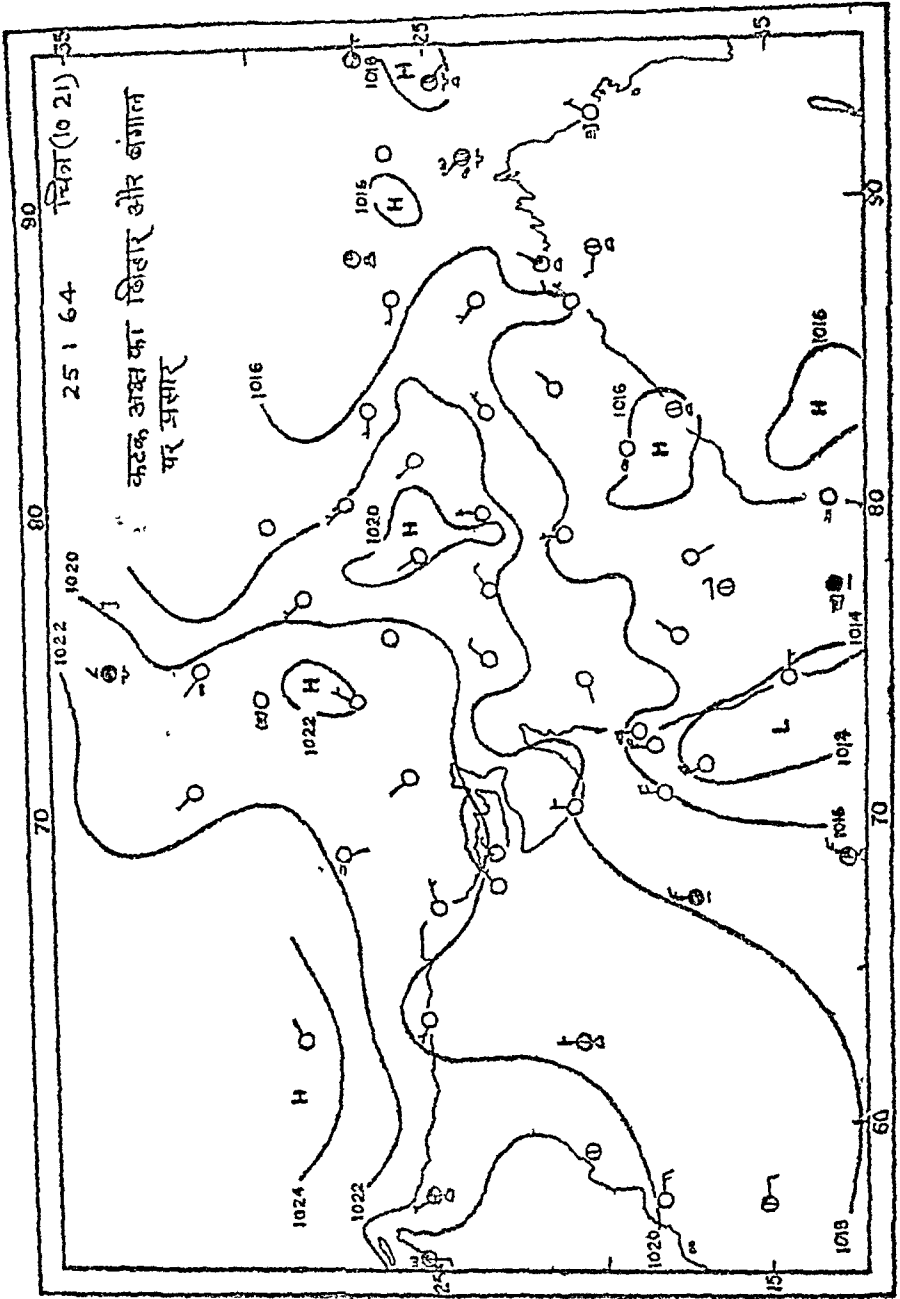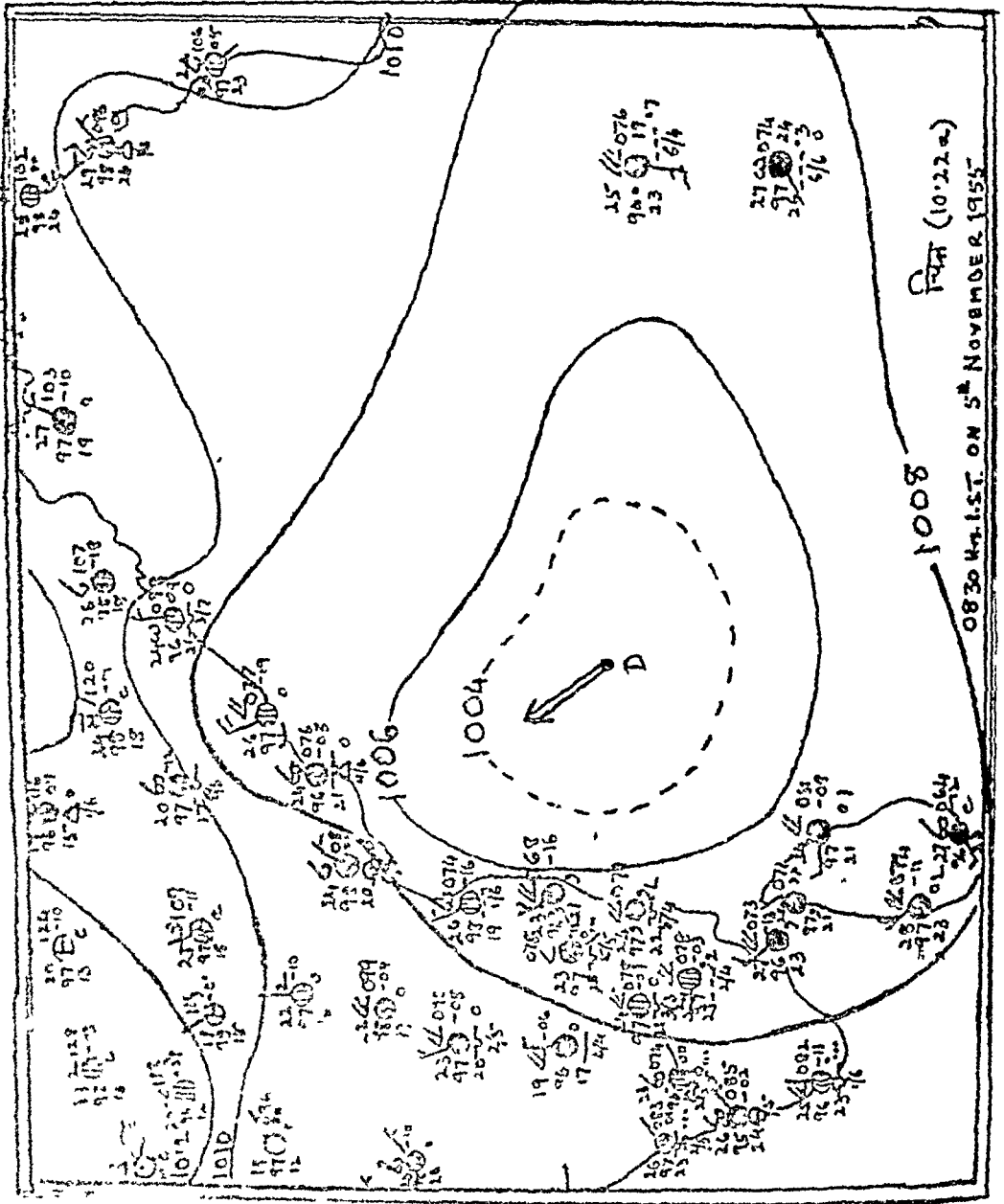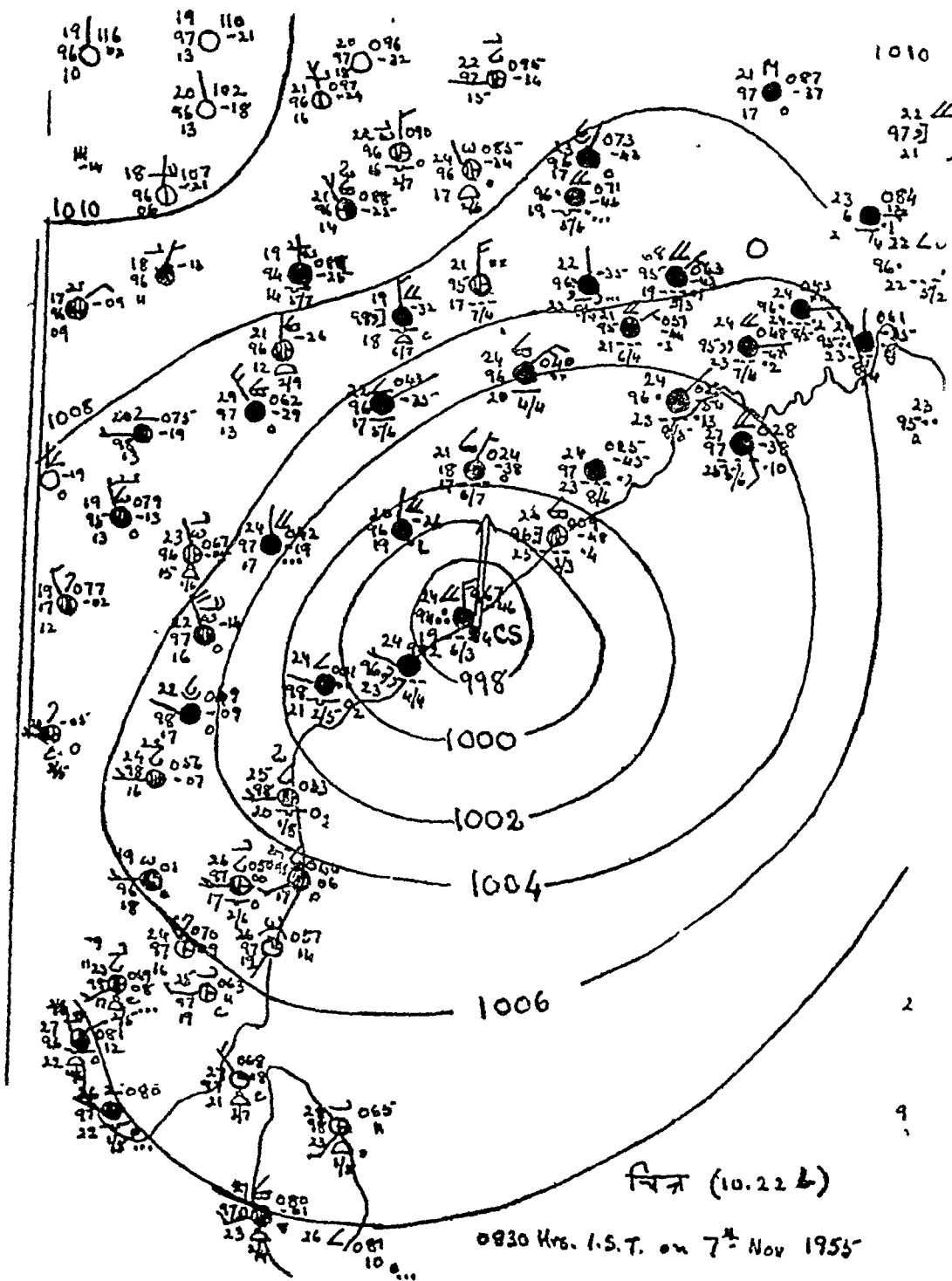
चित्र (10·22 ख)

चित्र (10.22 b)

0830 Hrs. I.S.T. on 7th Nov 1955

1004
1006
1008
1010
1012

10·94 उत्तर मानसून काल का चक्रवाती तूफान

3 नवम्बर 1955 को दक्षिणी-पश्चिमी खाड़ी में एक निम्नदाब क्षेत्र विकसित हुआ, जो पश्चिम की ओर अपनी गति के दौरान 5 नवम्बर की सुबह अवदाब और उसके तुरन्त बाद-तीव्रता से चक्रवात में संवर्धित हो गया। तत्पश्चात् उत्तरी दिशा की ओर गति करता हुआ 7 नवम्बर की सुबह चक्रवात विशाखापट्टनम के तट से टकरा गया और फिर उत्तर पूर्व की ओर मुड़ कर तटीय रेखा के समान्तर चलता हुआ, 1 नवम्बर को बंगलादेश के दक्षिणी भागों पर केन्द्रित हुआ। इस मार्ग परिवर्तन का कारण, उच्चतर वायुमण्डल में बहती पश्चिमी प्रवाह का अपसरण प्रभाव निर्धारित किया गया। चक्रवात की कुछ मुख्य स्थितियाँ चित्र (10·22 a, b, c) में दिए गए समकालीन धरातलीय चार्टों में प्रदर्शित की गई हैं।

चित्र (10 23) में उस प्रचण्ड चक्रवात का मार्ग प्रदर्शित किया गया है जो
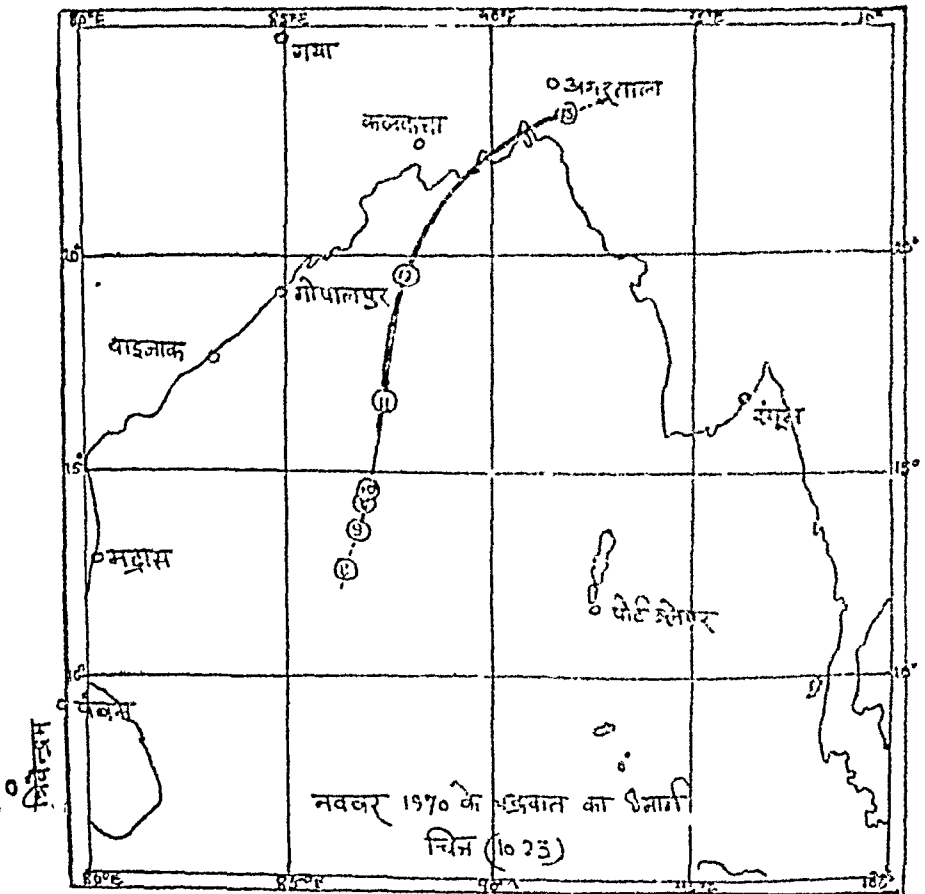
नवम्बर 1970 में बंगलादेश (तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान) में अभूतपूर्व विनाश का कारण बना था। सरकारी अनुमानों के अनुसार, 2 लाख नागरिकों के प्राण गए। इस चक्रवात का आरम्भ 5 नवम्बर 1970 को दक्षिणी खाड़ी में एक निम्न दाब के रूप में हुआ, जो 7 नवम्बर को मद्रास से 800 किमी दक्षिण-पूर्व में एक अवदाब के

रूप मे केन्द्रित था। 10 नवम्बर को यह प्रचण्ड चक्रवात वन कर उत्तर-पूर्व की ओर मुड गया। 12 नवम्बर को चक्रवात कलकत्ता से ठीक 300 कि.मी दक्षिण मे स्थित था। तत्पश्चात् चक्रवात उत्तर-पूर्व के मार्ग पर वढता हुआ, उसी रात्रि मे चिटगांग तट से टकराया। तट पार करने के वाद चक्रवात वहुत तेजी से क्षीण होता गया तथा अगले 24 घटो मे ही गौण हो गया। वगला देश के 15 छोटे-छोटे द्वीपो की आबादी टाइडल प्रवाह मे पूर्णतया वह गई।

10 95 मानसून अवदाब

31 जुलाई 1972 की शाम को समकालीन धरातलीय चार्ट पर उत्तरी-पश्चिमी खाडी मे एक निम्न दाव की द्राणिका उत्पन्न हुई। इसी समय, पूर्वी वर्मा पर एक निम्न दाव क्षेत्र पश्चिम की ओर अग्रसर हो रहा था। इसके प्रभाव मे 4 अगस्त की सुवह द्रोणिका एक सुस्पष्ट निम्नदाव मे सर्वधित हो गई। यह निम्नदाव प्राय: उत्तर की ओर अग्रसर हुआ तथा भूमि पर आ जाने के वाद 5 अगस्त की शाम को अवदाव वन गया। यह उत्तर-पश्चिम की ओर वढ़ता और सर्वधित होता रहा। 8 अगस्त के सायकालीन धरातलीय चार्ट पर यह गभीर अवदाब के रूप मे दक्षिणी उत्तर प्रदेश तथा 9 अगस्त के प्रात काल पूर्वी राजस्थान की पूर्वी सीमा पर केन्द्रित था। यहाँ से यह उत्तर की ओर मुडा और वहुत धीमी गति से वढ़ता हुआ क्षीण होता गया तथा 13 अगस्त की शाम को मौसमी निम्न दाव मे विलीन होकर समाप्त हो गया।

इस अवदाव से उत्तरी भारत तथा राजस्थान मे व्यापक रूप से भारी वर्षा हुई और दक्षिणी-पश्चिमी मानसून, जो पर्याप्त समय से अवरुद्ध था, पुन: त्वरित हो उठा।

इस अवदाव प्रणाली से प्राय 7 कि मी. ऊंचाई तक उच्चतर चक्रवाती प्रवाह सम्वन्ध था। विभिन्न स्थितियो के मौसम मानचित्र चित्र (10·24 a,b,c,d,e) मे दिए गए है।

31 July 1972 (1730 Hrs I S T)
(चित्र 10.24a)
996
998
1000
1002

4 AUGUST 1972 (0830 Hrs IST)
चित्र (10.24b)
996
998
1000
1002
1004
1006

5 AUGUST 1972
1730 Hrs I S T
चित्र (10 24a)
1000
998
996
994
992
1002
1000

8 AUGUST 1972
1730 Hrs I S T
चित्र (10 24b)
1000
1002
1004
1006
998
996
DD
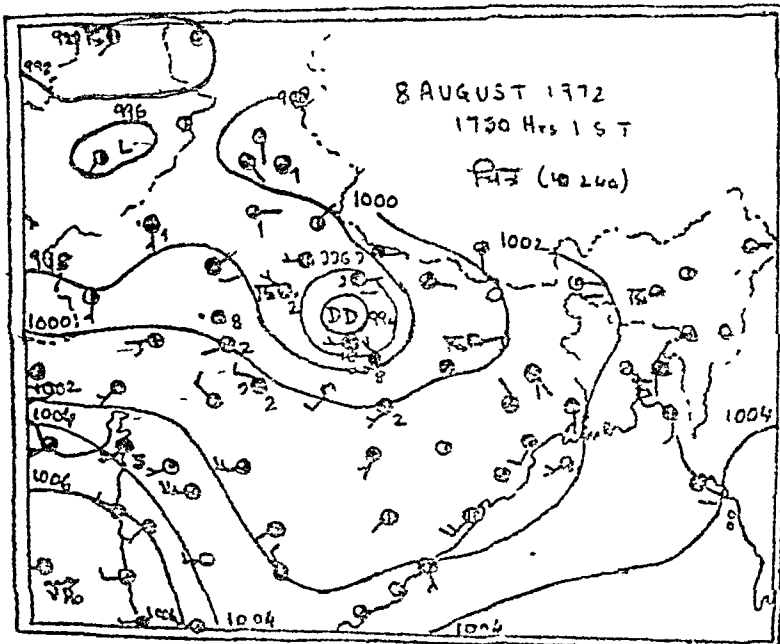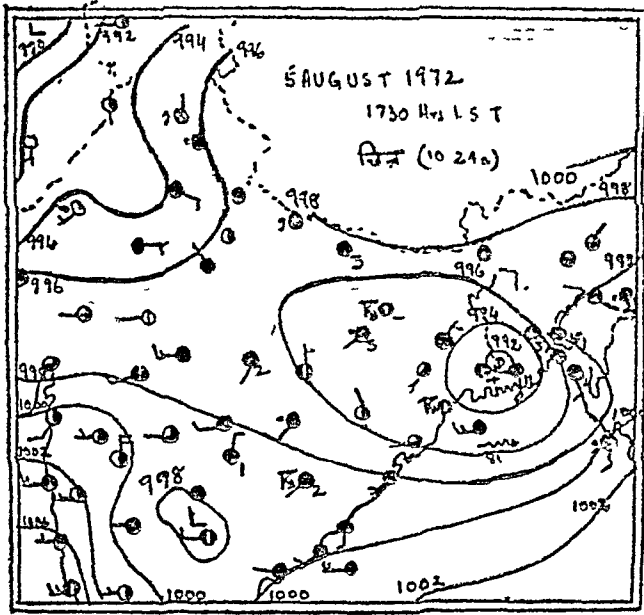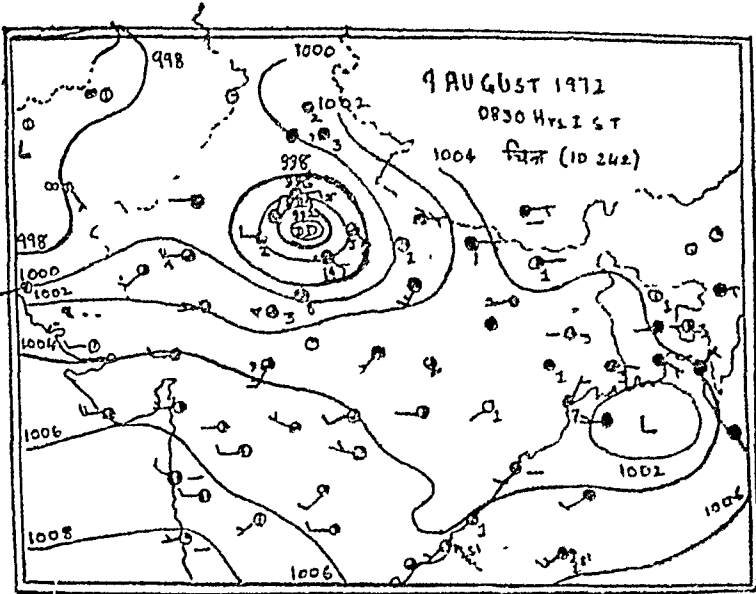
10 96 रुद्ध मानसून परिस्थितियो का एक उदाहरण—(चित्र 10 25) मे दिए गए सम कालीन मानचित्रो मे ये परिस्थितिया स्पष्ट की गई है । 1972 सूखे का वर्ष था, जिसमे मानसूनपूरे उत्तर भारत से सितम्बर के प्रारम्भ मे ही हट गया ।
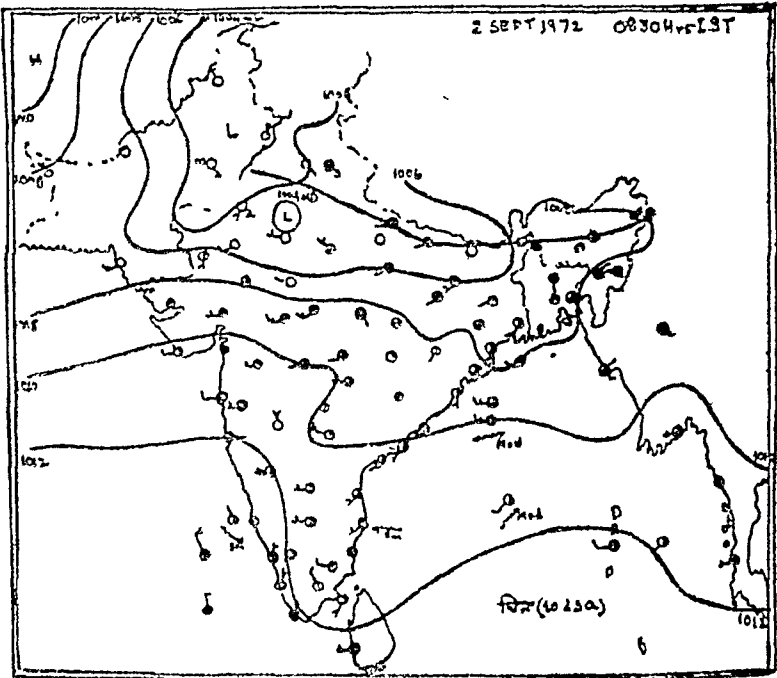
2 सितम्बर के धरातलीय मानचित्र मे मौसमी द्रोणिका का अक्ष श्रीगगानगर, रुड़ की ओर डिगबोई से गुजर रहा है । स्पष्टत. यह अक्ष हिमालय की शृंखलाओं के
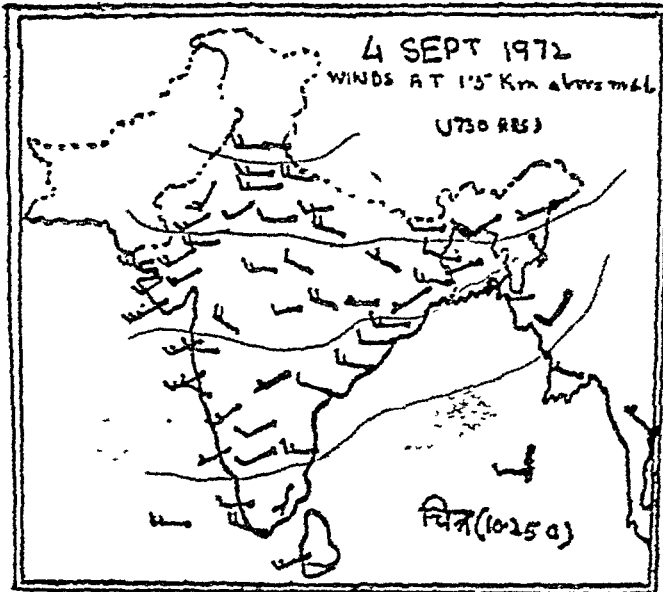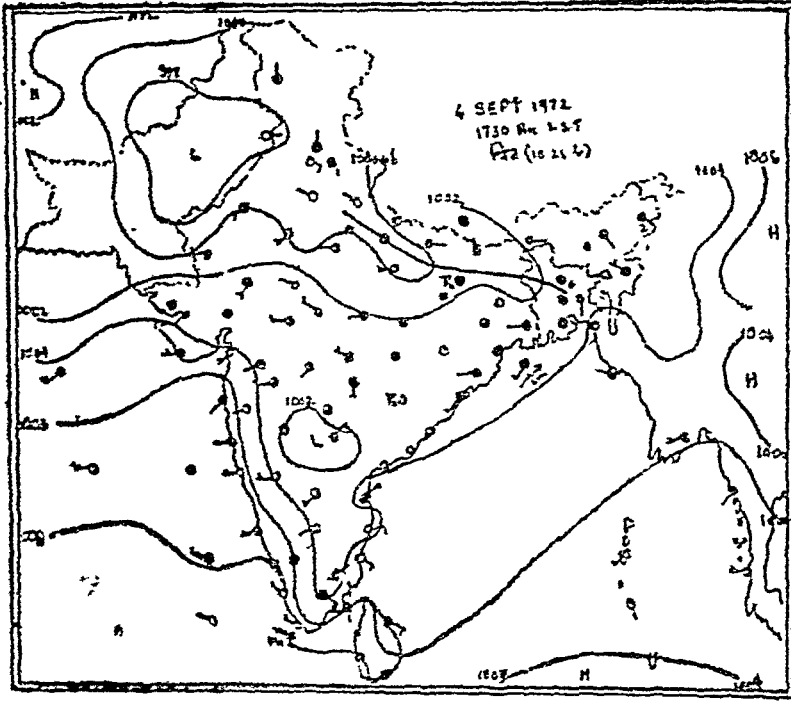
समान्तर स्थित है। 4 सितम्बर के मानचित्र में यह अक्ष नीचे की ओर झुक गया है। यह झुकाव मानसून की अनुकूलता का परिचायक है किन्तु इसी दिन के 850 मिलीबार का वायुप्रवाह, जिसमें द्रोणिका अत्यधिक क्षीण है, मानसून विकास के लिए बहुत प्रतिकूल परिस्थिति है। इन दिनों उत्तरी भारत पर कुछ पक्षाभ मेघों के अलावा कोई मौसम नहीं रिकार्ड किया गया।

11
जलवायु के तत्व
(Elements of Climate)

11 10 मौसम और जलवायु के तत्व

एक स्थान पर किसी समय की वायुमण्डलीय अवस्था अर्थात् मौसम की व्याख्या अनेक तत्वों के सयुक्त प्रभावो द्वारा की जाती है। कुछ प्रारम्भिक तत्व ये है.—(1) वायुदाव (2) तापमान (3) आर्द्रता तथा वर्षा और (4) सौर-प्रकाश की अवधि। ये मौसम और जलवायु के तत्व कहलाते हैं। इनका तत्कालिक संयुक्त प्रभाव मौसम कहलाता है, जबकि किसी स्थान की जलवायु वहां के दिन प्रतिदिन की मौसम दशाओ का सयुक्त (Composite) रूप है, जो एक लम्बी अवधि के जलवायु तत्वो के औसतीकरण से निश्चित किया जाता है।

मोसम और जलवायु के तत्वों का स्थान के साथ परिवर्तन, मुख्य रूप से भौगोलिक और वायुमण्डल के भौतिक कारणो पर निर्भर करता है। ये कारण ही इन तत्वो को नियन्त्रित करते है, अत जलवायु के नियन्त्रक कहलाते हैं। जलवायु के प्रमुख नियन्त्रक निम्नाकित है —

(1) सूर्य या अक्षांश
(2) तुङ्गता (Altitude)
(3) स्थायिवत् निम्न और उच्चदाव पेटियाँ (Semi permanent low and high pressure belts)
(4) हवाएँ
(5) वायुराशिया
(6) जल और थल का आवटन
(7) पर्वत शृङ्खलाएँ
(8) महासागरीय धाराएँ
(9) अवदाव और तूफान (Depressions and storms)

11 11 किसी स्थान का अक्षांश, उसकी ऊँचाई तथा स्थानीय प्रभाव मिल कर, उस स्थान को प्राप्त होने वाली सौर उष्मा व प्रकाश की तीव्रता तथा अवधि निर्धारित करते है। प्राप्त उष्मा की मात्रा पर मेघाछन्नता तथा वायुराशियो द्वारा अभिवहन का भी प्रभाव पडता है। किन्तु मेघाच्छन्नता तथा वायु प्रवाह की अनिश्चितता के कारण इनके प्रभावो को नियमबद्ध नही किया जा सकता।

एक क्षण के लिए यदि वायुमण्डल को अनुपस्थित मान लिया जाय, तो पृथ्वी-तल के किसी भाग द्वारा प्राप्त की गई सौर ऊर्जा निम्नांकित दो बातों पर निर्भर करती है :—

(1) सौर विकिरण की तीव्रता या वह कोण जिस पर सौर विकिरण पृथ्वी की सतह पर पहुचता है और (2) सौर विकिरण की अवधि अथवा दिन की लम्बाई। ये दोनो बाते स्थान विशेष के अक्षाश पर निर्भर करती है। सौर विकिरण की तीव्रता अधिकतम उस अक्षांश पर होती है, जिस पर सूर्य की किरणे लम्बवत् पडती हैं। इसके दो कारण है। एक तो, किरणों का पुञ्ज कम बिखरने के कारण न्यूनतम क्षेत्र पर पड़ता है, तथा दूसरे, लम्बवत् किरणें सबसे छोटे मार्ग पर चलने के कारण, वायु-मण्डल की सबसे कम मोटी तह पार कर सतह तक पहुँच जाती है, जिससे उनका अवशोषण, प्रकीर्णन तथा परावर्तन निम्नतम होता है। सर्दियो मे जब सूर्य दूसरे गोलार्द्ध मे होता है, तो उसकी किरणे बहुत तिर्यक पडती है। यही कारण है कि सर्दियो मे सौर उष्मा की तीव्रता बहुत कम पाई जाती है।

दिन की अवधि, गर्मियो मे अक्षांश के साथ बढ़ती और सर्दियो मे घटती जाती है। अतः गर्मियो मे उच्च अक्षाशो मे निम्न उन्नताश के कारण, विकिरण-प्राप्ति की कमी की पूर्ति, दिन की अपेक्षाकृत लम्बी अवधि, आंशिक रूप से करती है। कुछ उच्च अक्षाँश के क्षेत्रो, जैसे कनाडा मे, कमजोर सौर प्रकाश के लम्बे दिनों के कारण, उन स्थानो की अपेक्षा बढिया फसल होती है, जहा तीव्र सौर किरणो से युक्त छोटे दिन होते हैं।

11 12 विषुवत् रेखा पर आपाती सौर विकिरण का मान, वर्ष भर मे बहुत थोडा परिवर्तित होता है, क्योकि यहा दिन की अवधि प्राय 12 घण्टे की होती है तथा सूर्य उर्ध्वाधर से कभी भी बहुत अधिक विचलित नही होता है। अधिकतम विचलन $23\frac{1}{2}^0$ का, अयनान्त दिवस (22 जून और 22 दिसम्बर) को पाया जाता है। विषुवो (equinoxes) पर जब सूर्य विषुवत् रेखा पर लम्बवत् पड़ता है, सौर विकिरण का हल्का सा उच्चतम पाया जाता है। अयनान्तो के दिन विषुवत् रेखा पर विकिरण निम्नतम होता है।

उष्ण कटिबन्धो मे भी सौर विकिरण की उच्च मात्रा पाई जाती है, जिसका मौसमी चलन बहुत कम होता है। इस क्षेत्र के प्रत्येक स्थान पर सूर्य दो बार लम्बवत् गुजरता है। जिसके कारण विकिरण का वक्र वर्ष मे दो उच्चतम और दो निम्नतम प्रदर्शित करता है। उष्ण कटिबन्धो के उच्च तापमान का कारण सौर विकिरण की अधिक मात्रा ही है।

शीतोष्ण कटिबन्धो मे विकिरण वक्र एक उच्चतम-ग्रीष्म अयनान्त के दिन और एक निम्नतम-शीत अयनान्त के दिन, प्रस्तुत करता है। वास्तव मे एक उच्चतम और एक निम्नतम विकिरण की मात्रा मे अत्यधिक मौसमी चलन पाया जाता है, जो इन भागो के तापमान की प्रमुख विशेषता है।

शीतोष्ण कटिबन्ध की भाति ध्रुवीय अक्षांशो मे विकिरण वक्र वर्ष मे एक उच्चतम (ग्रीष्म अयनान्त के दिन) और एक निम्नतम (शीत अयनान्त के दिन) प्रदर्शित

करता है। किन्तु इन अक्षांशों में वर्ष के कुछ समय मे सूर्य-प्रकाश बिल्कुल अनुपस्थित हो जाता है। इस काल मे आपतित सौर विकिरण की मात्रा शून्य रहती है। शून्य विकिरण की अवधि अक्षाशो के साथ बढ़ती जाती है, जो ध्रुवो पर अधिकतम (6 महीने की) होती है। ध्रुवों की ओर दिन की अवधि बढती जाती है, जो ग्रीष्म ऋतु मे कम उन्नताश के प्रभाव को पराजित कर देती है। परिणामस्वरूप ग्रीष्म अयनान्त के दिन (21 जून) सौर विकिरण की मात्रा अक्षांशों के साथ बढती जाती है और लगभग 44 अंश उत्तरी अक्षांश पर उच्चतम होती है। इसमे परे 62° उत्तरी अक्षाश तक विकिरण की मात्रा कुछ घटती जाती है, क्योंकि दोनों प्रभावो का सापेक्ष मान विपरीत हो जाता है। फिर आर्कटिक वृत्त तक जहां दिन 24 घन्टे का होता है, और फिर उससे उच्च अक्षाशो पर दिन की अवधि का प्रभाव, निम्न उन्नताश के प्रभाव पर पुन: भारी पडने लगता है, जिससे विकिरण का वक्र अक्षांशों के साथ पुन. बढता है और ध्रुवों पर उच्चतम मान प्रदर्शित करता है, जो प्राय. पिछले उच्चतमों से अधिक होता है। शीत अयनान्त के दिन ध्रुवों पर आपाती सौर विकिरण का मान शून्य होता है।

11.13 वायुमण्डल का प्रभाव

वायुमण्डल कुल आपतित विकिरण के एक बड़े भाग को शोषित, परावर्तित तथा प्रकीर्ण कर देता है, जिसके कारण विकिरण की काफी कम मात्रा पृथ्वी की सतह तक आ पाती है। यह मात्रा दो बातो पर निर्भर करती है:—

(1) वायु तह की मोटाई, जिससे होकर विकिरण सतह तक पहुंचता है। यह मोटाई उच्च अक्षाशो के लिए अधिक होती है, क्योंकि उच्च अक्षांशीय वायुमण्डल से सौर किरणें बहुत तिर्यक अवस्था मे गुजरती हैं। किसी स्थान के लिए वायुमण्डल के अन्दर किरणों द्वारा तय की गई यथार्थ दूरी की गणना की जा सकती है।

(2) वायु की पारदर्शकता, (transparency) जो मेघाच्छन्नता, धूल, आर्द्रता आदि के अनुसार बदलती रहती है। स्वच्छ मौसम वाले ग्रीष्म अयनान्त के दिन जब संचरण गुणांक (Coefficient of Transmission) 0.5 के बराबर लिया जाता है, कुल आपतित सौर विकिरण का केवल 18% ही ध्रुवीय सतह पर पहुँच पाता है। इस स्थिति मे अन्य अक्षाशो पर, सतहो द्वारा प्राप्त सौर ऊष्मा की मात्रा चित्र (11.1) के निचले वक्र से प्रदर्शित की गई है मेघाच्छन्न दिनो मे शोषण की मात्रा बहुत अधिक बढ जाती है। यही कारण है कि विषुवत् रेखीय तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के चक्रवाती क्षेत्रो मे यह वक्र निम्नतम प्रदर्शित करता है।

11.14 कुल मिलाकर, सौर विकिरणों का जलवायु पर नियन्त्रण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, जो वायुमण्डलीय प्रभाव के बावजूद मुख्यत. अक्षांशो के आधार पर ही आवटित होते हैं। विभिन्न जलवायु-प्रकारो का अक्षांशो के आधार पर विभाजन, इस प्रभाव की प्रमुखता का प्रमाण है। ये प्रकार कुछ सीमा तक ऊँचाई, जलीय आवंटन तथा अन्य भौतिक परिस्थितियो के कारण भी सशोधित होते रहते हैं।

चित्र (11·1)
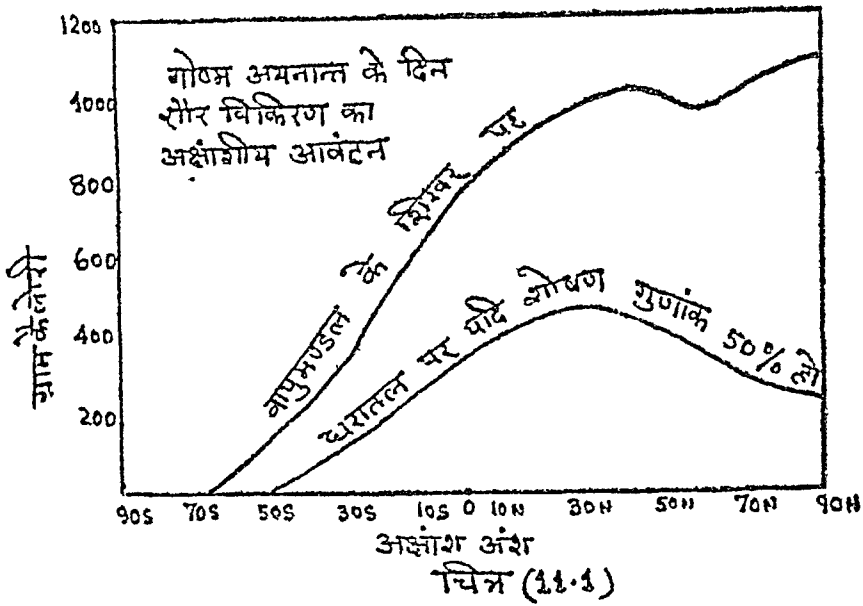
11 15 वायु मण्डल का उष्मन तथा शीतलन

जैसाकि अध्याय 3 में स्पष्ट किया जा चुका है वायुमण्डल, लघु तरंगीय सौर विकिरणो के लिए अपेक्षाकृत पारदर्शी है। इस विकिरण का केवल 14% ही वायु-मण्डलीय वाष्प कणों द्वारा शोषित हो पाता है। वाष्प कणो की सान्द्रता के कारण इस शोषण का आधा भाग 2 किमी से निम्न वायु तहो मे ही होता है। किन्तु यह उष्मा स्वत धरातलीय वायु तापमान स्थिर रखने के लिए बिल्कुल अपर्याप्त है। पृथ्वी की सतह, वायुमण्डल की अपेक्षा सौर विकिरण का अधिक शोषण करती है। सीधा विकिरण और प्रकीर्ण विकिरण दोनों मिलकर वायुमण्डल के शीर्ष पर कुल आपतित सौर विकिरण का लगभग 51 % पृथ्वी द्वारा आत्मसात कर लिया जाता है। फलस्वरूप दिन मे पृथ्वी की सतह संलग्न वायु तहो की अपेक्षा उष्ण होती है। संलग्न वायु तहे सचालन द्वारा पृथ्वी से उष्मा प्राप्त कर गर्म हो जाती है। किन्तु हवा की कुचालकता के कारण यह उष्मा, ऊँचे तहो को अत्यन्त धीमी गति से ही स्थानान्तरित हो पाती है। जब वायु राशियो की क्षैतिज तथा आरोही गति तीव्र हो, तो नई वायु राशियाँ तप्त सतह के सम्पर्क मे आकर उष्मा प्राप्त कर सकती है। इस प्रकार संचालन द्वारा वायुमण्डल का उष्मन, ग्रीष्म ऋतु के दिन के समय का प्रक्रम है, जो वायुमण्डलीय उष्मा सचार प्रक्रमो मे बहुत छोटी भूमिका निभाता है।

इसी प्रकार सर्दी की रातो मे विशेषत· जब वायु धीमी और आकाश स्वच्छ हो, संचालन द्वारा धरातल के सम्पर्क में वायु तहे शीतल होती जाती है; यह प्रभाव नमी की अनुकूल परिस्थितियो मे कुहरा, ओस तथा पाला उत्पन्न कर सकता है।

वायुमण्डल की उष्मा का मुख्य स्रोत, पृथ्वी द्वारा दीर्घ तरंगो मे किया गया विकिरण है। यह विकिरण मुख्यत. वाष्प कणो द्वारा शोषित कर लिया जाता है।

यही कारण है कि मेघाच्छन्न रातें गर्म, तथा रेगिस्तानो की मेघ रहित रातें प्राय: शीतल होती है। वायुमण्डल द्वारा शोषण के बावजूद भूविकिरण का लगभग 20% भाग,वायु मण्डल से बाहर चला जाता है। विकिरण के शोषण के पश्चात् वायुमण्डलीय कण, स्वत: दीर्घ तरगो के रूप मे विकिरण जनित करते हैं, जिसका एक भाग अतरिक्ष मे खो जाता है और दूसरा भाग वायुमण्डल की विभिन्न तहो तथा धरातल द्वारा शोषित कर लिया जाता है। शोषण और विकिरण का यह प्रक्रम, शृंखला बद्ध रूप मे जारी रहता है, जिससे विकिरण धाराओ के अनन्त प्रवाह उत्पन्न हो जाते हैं। इनके सम्मिलित परिणामस्वरूप पृथ्वी की उष्मा शनै. शनै. घटती जाती है।

रात्रि में जब सौर उष्मा अनुपस्थित होती है, पृथ्वी की सतह विकिरण द्वारा निरन्तर उष्मा खोती जाती है। इसे धरातल और फलस्वरूप संलग्न वायु तहो का तापमान गिरने लगता है। अपेक्षाकृत अधिक विकिरण होने के कारण धरातल सलग्न वायु तहो से अधिक ठंडा होता है। अत वायु उन्हे ठडे धरातल तथा ऊपर-दोनों ओर उष्मा का विकिरण करती है। यह प्रक्रम सर्दियो की लम्बी और स्वच्छ आकाश की रात्रि मे विशेष प्रभावकारी होता है।

मेघाच्छन्न दिनो मे सम्पूर्ण भूविकिरण मेघो के आधार तल द्वारा शोषित कर लिया जाता है। इन मेघो द्वारा पुन: पृथ्वी की ओर विभिन्न तरग दैर्घ्यो में विकिरण आरभ हो जाता है, जिनमे वे तरग दैर्घ्य भी शामिल होते हैं जो स्वच्छ आकाश मे सामान्य वायुकणो से छन कर वायुमण्डल से बाहर चले गए होते है। फलत: निम्नतहो मे रात्रि-शीतलन का प्रभाव बहुत कम हो जाता है।

इसके अतिरिक्त वायुमण्डलीय उष्मन अथवा शीतलन मे निम्नाकित प्रक्रम भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है :—

(1) वायुराशि के प्रसार से शीतलन तथा संकुचन से उष्मन होती है। यह प्रसार या सकुचन उर्ध्वाधर गति के कारण हो सकता है। यह प्रक्रम रुद्धोष्म होता है।

(2) जल कणो के सघनन से उत्पन्न गुप्त उष्मा द्वारा, वायुमण्डल का उष्मन होता है। बडे पैमाने पर संघनन, वायुमण्डलीय उष्मा के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत बन सकता है क्योकि यह उष्मा वास्तव मे पृथ्वीतल के तीन चौथाई भाग मे स्थित सागर तलो पर पड़ने वाली सौर उष्मा है जो वाष्पीकरण द्वारा जलकणो मे निहित होकर वायुमण्डल को प्राप्त होती है।

(3) वायुराशियो के ऊर्ध्वाधर या क्षेतिज गति द्वारा, उष्मा का एक स्थान से दूसरे स्थान को स्थानान्तरण तथा अभिवहन। धरातलीय उष्मन के कारण गर्म वायु राशि, सवाहनिक धाराओ द्वारा ऊपर उठ जाती है तथा अपेक्षाकृत शीतल वायु राशि इसके स्थान पर आकर उष्मा प्राप्त करती है, जो स्वयं गर्म होने के बाद उठ जाती है। इस प्रक्रम द्वारा वायुमण्डल को उष्मा प्राप्त होती रहती है।

वायुराशिया अपनी क्षेतिज गति मे तापमान का अभिवहन करती है । उष्ण कटिबन्धी वायुराशियां दक्षिणी प्रवाह के साथ उच्च अक्षाशो मे उच्चतापमान तथा ध्रुवीय हवाएँ उत्तरी प्रवाह द्वारा निम्न अक्षाशो मे निम्न तापमान का अभिवहन करती हैं ।

11·20 वायु तापमान

वायु तापमान, जलवायु का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है, जो उपर्युक्त कारणो द्वारा नियन्त्रित होता है । किसी समय के तापमान का तात्पर्य उस वायु तापमान से है, जिसका माप मानक दशाओ मे सूर्य या अन्य उष्ण पदार्थ के विकिरण द्वारा जनित त्रुटियो के लिए सावधानी रख कर लिया जाए । माध्य दैनिक तापमान वास्तव मे हर घण्टे पर लिए गए 24 तापमानों का औसत है । किन्तु सरलता के लिए 3 और 12 घड़ी जी. एम. टी. (क्रमश. 8·30 और 17·30 घडी आई. एस टी) पर लिए गये तापमानो या दैनिक उच्चतम तथा निम्नतम का औसत, **माध्य दैनिक तापमान** के रूप मे लिया जा सकता है । **माध्य मासिक तापमान** महीने भर के माध्य दैनिक तापमानो का साधारण औसत है तथा माध्य वार्षिक तापमान 365 दिनों के माध्य दैनिक तापमानों का साधारण औसत है । किन्तु सरलता के दृष्टिकोण से 12 महीनो के माध्य तापमान के औसत को ही माध्य वार्षिक तापमान मान लिया जाता है, जो लगभग वही परिणाम देता है । उष्णतम तथा शीतलतम महीनो के माध्य तापमानो का अन्तर, माध्य वार्षिक तापमान परिसर कहलाता है । किसी महीने के लिए माध्य उच्चतम तथा माध्य निम्नतम का अन्तर **माध्य दैनिक परिसर** कहलाता है ।

तापमान का भौगोलिक आवटन समताप रेखाओं (isotherms) द्वारा प्रदर्शित किया जाता है । इसके लिए यह आवश्यक है कि उच्च स्थलो पर स्थित स्टेशनो के तापमानो को तुलनात्मक बनाने के लिए, उन्हे माध्य समुद्र तल पर वायु दाब की भाति अवतरित कर लिया जाए । समताप रेखाएँ अक्षांशीय तथा जल-थल आवटन के प्रभाव का संयुक्त रूप से निरूपण करती है ।

किसी स्थान का औसत वायु तापमान जिन कारको पर निर्भर करता है, उनमे ऊंचाई, अक्षांश, समुद्र तट की दूरी, समुद्र का तापमान तथा स्थान का उद्भासन (exposure) मुख्य हैं । प्रति किमी ऊंचाई बढ़ने पर तापमान मे लगभग 5·5°C का ह्रास होता है, जबकि प्रति अश अक्षाश बढ़ने पर तापमान ह्रास लगभग 0 75°C पाया जाता है। यद्यपि ये आंकडे विभिन्न ऋतुओ तथा संसार के विभिन्न भागो के लिए बहुत परिवर्तन शील हैं किन्तु इनसे तापमान पर ऊंचाई के प्रभाव की प्रमुखता स्पष्ट है ।

11·30 अन्य जलवायु तत्वो का सक्षिप्त विवरण निम्नाकित है .—

11.31 वायु मण्डलीय आर्द्रता

यह वायुमण्डल मे उपस्थित जल वाष्प की मात्रा व्यक्त करती है । शुष्क और आर्द्र बल्व तापमानो का अन्तर इसका एक मुख्य माप है । आर्द्रता की मात्रा वायु

गति और तापमान के उच्चावच से अत्यधिक प्रभावित होती है। अत: जलवायु विज्ञान के अध्ययन मे सापेक्ष आर्द्रता का मानचित्र बहुत ही कम प्रयुक्त होता है, इसके स्थान पर इसके परिणामी तत्वो, जैसे मेघाच्छन्नता तथा वर्षा का अध्ययन करना अधिक लाभ प्रद पाया गया है।

जलवायु के लिए जलवाष्प का महत्व निम्नांकित कारणों से स्पष्ट है —

(1) यह वर्षा तथा अन्य वायुमण्डलीय घटनाओ का आधारभूत तत्व है। (2) भूविकिरण के अवशोषण के कारण तापमान नियन्त्रण मे मुख्य भूमिका निभाता है। (3) वाष्प कणो मे गुप्त उष्मा सग्रहीत रहती है, जो संघनन प्रक्रमो मे प्रकट हो जाती हे। यही उष्मा तूफानो, चक्रवातो तथा वायुमण्डल के अस्थायित्व का कारण बनती है। (4) यह सदेव तापमान पर प्रभाव डालती है तथा वायु मण्डल की आराम-दायकता नियन्त्रित करने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

जलवाष्प का प्रमुख स्रोत सागरो से होने वाला वाष्पीकरण है। कुछ वाष्प नम भूमि तथा जलाशयो के वाष्पीकरण तथा वनस्पतियो के वाष्पोत्सर्जन से भी प्राप्त होती है। सामान्यत. महासागरो से होने वाला वाष्पीकरण महाद्वीपो के वाष्पीकरण वाष्पोत्सर्जन से अधिक होता है, किन्तु 10°उ. से 10°द अक्षांशो के बीच अधिक वर्षा तथा वनस्पतियो की सघनता के कारण महाद्वीपो से अधिक जल वाष्प वायुमण्डल को प्राप्त होता है।

प्राकृतिक हवा को ओसांक तक शीतल करने से सघनन (द्रव-रूप) तथा उससे और निम्न तापमान तक शीतल करने से उर्ध्वपातन (ठोस-रूप) होता है। सघनन शीतलन की मात्रा तथा सापेक्ष आर्द्रता पर निर्भर करता है। भूमितल के पास सघनन ओस, पाला तथा कुहरा जनित करते है, जबकि उच्चतर वायु तहों मे रुद्धोष्म शीतलन के कारण सघनित जलकण, मेघ उत्पन्न करते है। कपासी समूह के मेघ प्राय: धरातलीय उष्मन के कारण जनित होते हैं। फलत. वे दोपहर बाद ही अधिकतम हो पाते है जबकि स्तरीय समूह के मेघों के लिए वायुमण्डल का स्थायित्व एक अनुकूल परिस्थिति है, जिससे उनका अधिकतम प्रभात मे तथा निम्नतम दोपहर को पाया जाना स्वाभाविक है।

मेघाच्छन्नता की मात्रा साधारणत वर्षा पेटिका के समान्तर ही पृथ्वी पर आवटित रहती है।

11·32 वर्षा

तापमान के बाद दूसरा महत्वपूर्ण जलवायुविक तत्व वर्षा है, क्योंकि कृषि और वनस्पतियाँ, जो जीवन–यापन के मूलभूत साधन है, वर्षा पर ही प्रमुख रूप से आश्रित पाई जाती है। जलवायुविक उद्देश्यो के लिए वर्षा के मासिक तथा वार्षिक आंकडो के अतिरिक्त (1) वर्षा युक्त दिनो की सख्या (वह दिन जब कुल वर्षा 2.5 मिमी से अधिक हुई हो), (2) प्रतिदिन, प्रति घण्टे तथा और अल्प समयो के लिए

उच्चतम वर्षा की दर तथा (3) प्रतिदिन की औसत वर्षा (माध्य वार्षिक वर्षा/वर्षा युक्त दिनों की सख्या) के आकडे भी महत्त्वपूर्ण हैं। इनसे वर्षा-तीव्रता (Precipitation intensity) का माप प्राप्त होता है।

निम्न अक्षाशो मे अपेक्षाकृत अल्पावधि की, किन्तु अधिक मूसलाधार वर्षा पाई जाती हैं, जबकि मध्य अक्षाशो मे वर्षा की तीव्रता कम होती है। वर्षा की तीव्रता अपवाह और वाष्पीकरण को प्रभावित करती है, अत. प्रभावकारी वर्षा (effective rainfall) जो हमारे कार्यो मे वास्तविक रूप ने प्रयुक्त होती है, की धारणा महत्वपूर्ण है। अधिक तीव्रता युक्त अल्पावधि की वर्षा कृषि के लिए उतनी उपयुक्त नही, जितनी मन्द तीव्रता की सम तथा दीर्घावधि वर्षा होती है। प्रभावकारी वर्षा वाष्पीकरण और अपवाह के कारण वास्तविक वर्षा से वहुत भिन्न होती है। यह वर्षा के समय और उपयोगिता पर भी निर्भर करती है। उदाहरण के लिए, वम्बई मानसून महीनो मे 200 सेमी के लगभग वर्षा प्राप्त करता है, जिसका अधिकाश भाग अनुउपयोगिता के कारण व्यर्थ चला जाता है। वर्ष के अन्य महीनो में यह क्षेत्र प्राय: सूखा ही रहता है। पश्चिमी आस्ट्रेलिया मे उचित समय पर 25 सेमी की वर्षा मे ही गेहूं की अच्छी फसल तैयार हो जाती है, जवकि इससे वहुत अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों मे, वर्षाकाल की अनुपयुक्तता के कारण, फसल ठीक नही हो पाती।

11.33 इकाई क्षेत्र पर खडे वायु स्तम्भ मे स्थित कुल वाप्प की मात्रा, **अवक्षेपीय जल (Precipitable-water-w)** कहलाती है। कम तापमान पर वायुमण्डल के वाप्प-सग्रह करने की क्षमता घट जाने से w का मान साधारणत: उच्च अक्षाँशो की ओर घटता जाता है। प्राय निम्न अवक्षेपीय जल कम वर्षा का परिचायक होता है, किन्तु कुछ शुष्क क्षेत्रो मे उच्च w के वावजूद वहुत कम वर्षा उत्पन्न होती है। यह सभवत: उन क्षेत्रो पर प्रचलित अवतलेन प्रवाह के कारण होता है जो वर्षा उत्पन्न करने की क्रियाविधि को क्षीण वना देता है। इसके विपरीत, वाताग्र प्रक्रियाओ के कारण मध्य अक्षांशो के वायुमण्डल मे कम अवक्षेपीय-जल रहते हुए भी अच्छी वर्षा हो जाती है, क्योकि ये प्रतिक्रियाएँ वाष्प संघनित करने की क्रिया विधि वहुत सशक्त वना देती हैं।

माध्य दैनिक अवक्षेपण तथा औसत अवक्षेपीय जल का अनुपात **अवक्षेपण-क्षमता** कहलाती है, जो साधारणत' प्रतिशत मे व्यक्त की जाती है। यह क्षमता 0 से 10° उ अक्षाश में अभिसरण क्षेत्र तथा मध्य अक्षाशो मे वाताग्र प्रक्रियाओ के कारण अधिकतम पाई जाती है।

11.40 महासागरीय ड्रिफ्ट और धाराएं (Ocean Drifts and Currents)

वायु राशियो की भांति महासागरों मे जलराशिया ड्रिफ्ट तथा धाराओ के साथ प्रवाहित होते हुए, अपने साथ तापमान, आर्द्रता आदि जलवायुविक तत्वो को एक स्थान से दूसरे स्थान को अभिवहित करती हैं, जो तटीय क्षेत्रो की जलवायु को पर्याप्त मात्रा मे प्रभावित करते हैं। जल-राशियो का सतही प्रवाह, जो प्राय. वायु

तापमान आर्द्रता आदि जलवायु तत्वों के विपर्यास से ही जनित होता है, ड्रिफ्ट कहलाता है। अपेक्षाकृत तीव्र गति से काफी गहराई के अन्दर बहने वाली उष्ण या शीतल जल-राशियां धाराएं कहलाती हैं। महासागरीय जल राशियों की गति के मुख्य दो कारण हैं, (1) वायु गति का जल सतह पर घर्षण प्रभाव, जिसके कारण प्रचलित वायु दिशा में सतही जल राशि मन्द गति से बहने लगती है (2) तापमान और लवणता (Salinity) की विभिन्नता के कारण जलराशियों के अन्दर उत्पन्न घनत्व विपर्यास, जो साधारणत. गहराई की तहों मे क्षैतिज तथा ऊर्ध्वाधर गति जनित कर देता है। तापमान का प्रभाव लवणता की अपेक्षा बहुत अधिक पाया जाता है।

उच्च अक्षांशों का महासागरीय जल, ठण्डा होने के कारण अधिक घनत्व का होता है। अत. ध्रुवीय क्षेत्रों तथा निम्न अक्षांशों के बीच जल-राशियों का निरन्तर विनिमय हुआ करता है। इस ताप जनित प्रवाह मे लवणता विपर्यास के कारण और जटिलता आ जाती है। उपोष्ण कटिबन्धी प्रतिचक्रवात से प्रवाहित सागरों मे, जहां वर्षा कम तथा वाष्पीकरण अधिक होता है, प्रायः लवणता अधिक पाई जाती है, जिससे वहां जलराशि का घनत्व कुछ बढ जाता है। फलत: सतही जल का निम्नतर जलतहों मे अवतलन पाया जाता है।

निम्न अक्षाशो से ध्रुवों की ओर बहने वाली जलराशियां अपेक्षाकृत गर्म तथा ध्रुवो से निम्न अक्षाशो की ओर बहने वाली धाराएं आसपास की जल-राशियों से ठण्डी होती है। 40 अंश अक्षाश से विपुवत् रेखा तक के क्षेत्र मे उष्ण जलधाराएं प्रायः महाद्वीपो के पूर्वी तटो तथा ठण्डी धाराएं पश्चिमी तटों के समान्तर बहती है। इससे परे के अक्षाशो मे धाराओ का विपरीत प्रवाह तटो के समान्तर पाया जाता है।

दोनो उष्ण कटिबन्धो की व्यापारी हवाएं सागरों मे ड्रिफ्ट उत्पन्न करती हैं, जो विपुवत् रेखा के पास अभिसरित होकर उत्तरी और दक्षिणी विपुवत् रेखीय धाराओ के रूप मे पश्चिम की ओर गति करती हैं। दोनो धाराएं पूरे क्षेत्र मे एक दूसरे से लघु विपरीत धाराओ (Minor Counter Currents) द्वारा अलग रहती है, जो महासागरो के पूर्वी भागों के विपुवत् रेखीय क्षेत्रो मे उत्पन्न होती है। स्रोत क्षेत्रो की विशेषताओ के कारण, महासागरों के पूर्वी भागो में धाराएं अपेक्षाकृत ठंडी होती है तथा पश्चिमी दिशा मे गति के दौरान वे प्राय. अधिक तापमान लाभ करती चलती हैं। महासागरो के पश्चिम मे तट के समीप, उत्तरी विपुवत् रेखीय धारा उत्तर की ओर तथा दक्षिणी धारा दक्षिण की ओर मुड जाती है। चूंकि अब इनकी गति उष्ण से शीतल क्षेत्रो की ओर होती है, अत: ये आसपास की जलराशियो की अपेक्षा गर्म रहती हैं। लगभग 40 अंश उत्तरी और दक्षिणी अक्षांशो के पास प्रचलित पश्चिमी वायु प्रवाह के सम्पर्क में, ये धाराएं पूर्व की ओर मुड़ जाती हैं। यही धाराएं पुन. व्यापारी हवाओ के प्रवाह मे आगे चलकर दक्षिण की ओर गति करने लगती हैं।

उत्तरी अटलांटिक मे फ्लोरिडा तट से पूर्वोत्तर की ओर मुडने वाली विपुवत् रेखीय धारा, तट रेखा की संरचना के कारण तीव्र रूप से विकसित होती है क्योंकि

इसमे दक्षिणी विषुवत् रेखीय धारा भी ब्राजील तट से मुड कर अंशतः सम्मिलित हो जाती है। यही फ्लोरिडा धारा आगे चलकर विख्यात गल्फस्ट्रीम नामक उष्ण धारा के रूप में नार्वे तथा उत्तरी रूस के तटों तक पहुँचती है। उत्तरी पश्चिमी यूरोप की सर्दियां इसी धारा के प्रभाव मे, अपेक्षाकृत गर्म रहती हैं। पश्चिमी प्रवाह के अन्तर्गत इस धारा द्वारा पर्याप्त उष्ण जल राशि, यूरोप के आन्तरिक प्रदेशों मे पहुंचती है।

दोनों गोलार्द्धों मे विषुवत् रेखीय धाराएँ, उनका रेखांशिक प्रवाह, पश्चिमी वायु प्रवाह के क्षेत्र मे उनका पूर्व की ओर प्रसार तथा पुनः दक्षिणी की ओर गति मिलकर धाराओं का प्रतिचक्रवाती वृहद् कोशिका बनाते हैं। पश्चिमी वायु प्रवाह क्षेत्रों से परे दोनो गोलार्द्धों मे सागरीय धाराएँ छोटी और चक्रवाती भवरो के रूप मे जनित होती है ये लेब्रोडोर-धाराएँ कहलाती हैं।

निम्न अक्षांशो के उन पश्चिमी तटों (पेरू, दक्षिणी कैलिफोर्निया, दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका, उत्तरी चिली आदि) से, जो उपोष्ण कटिबन्धी प्रतिचक्रवातों के पूर्वी सिरे पर स्थित है, धाराएँ विषुवत् रेखा की ओर बहती है। कोरियालिस बल के कारण इन धाराओ की, तट से दूर विचलित होने की प्रवृत्ति पाई जाती है। सतही जल के इस अपसरण के फलस्वरूप नीचे से ठण्डी तथा ताजी जल राशियां तट के पास उठती रहती है। इसे अपवेलिंग (upwelling) कहते हैं। यह प्रक्रिया तटीय क्षेत्रों का तापमान घटाने तथा आर्द्रता बढाने मे सहयोग देती है।

11.41 एशिया को प्रभावित करने वाली धाराएं

सम्पूर्ण एशिया का एक बहुत छोटा भाग ही सीधे तौर पर महासागरीय प्रवाह से प्रभावित हो पाता है। फिलीपाइन द्वीप समूहों के पास उत्तरी विषुवत् रेखीय धारा उत्तर पूर्व की ओर मुड़ जाती है और तटीय क्षेत्रो के पास अत्यन्त उष्ण जल राशि अभिवहित करती है। फलस्वरूप सागर सतह का तापमान बढ़ जाता है। यही वह क्षेत्र है, जहां अधिकतम संख्या मे चक्रवात जनित होते है। दक्षिणी विषुवत् रेखीय धाराएँ न्यूगिनी तट के पास दक्षिण की ओर मुडती है। इस स्थान पर जल सतह का तापमान वर्ष भर प्रायः 28^0C के आसपास पाया जाता है। उत्तरी-पूर्वी प्रशान्त महासागर मे, क्यूरोशियो नामक उष्ण-धारा प्रवाहित होती है, जो फारमोसा के पास उत्तरी विषुवत् रेखीय धाराओ के सम्बद्ध होकर मुडने से जनित होती है तथा वहां से उत्तर की ओर बढते हुए जापान के समीप से पूर्व की ओर मुड़ जाती है। यह धारा 40^0 उत्तरी अक्षांश के लगभग समान्तर उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी तट तक पहुंचती है। इस धारा की एक शाखा जापान सागर मे प्रवेश करती है, जो पश्चिमी तटो पर अत्यधिक उष्ण जल राशि का आघात करती है, जिसके कारण वहां की सर्दियां मृदु बन जाती हैं। यह धारा शीत कालीन स्थायी वायु राशि को भी संशोधित करने की चेष्टा करती है।

ओयाशियो, जो एल्यूशियन नामक मन्द धाराओ की एक शाखा है, पूर्वी एशिया के तटों के पास उत्तर से दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है, जो सर्दियो मे

वियतनाम तक ठंडी जल राशिया अभिवहित करती रहती हैं। 40 अंश उत्तरी अक्षांश के पास ओयाशियो दो भागो मे विभक्त हो जाती है। पहला भाग उत्तरी जापान के पास क्यूरोशियो मे जाकर मिल जाता है, जिससे वहा तीव्र तापमान प्रवणता जनित होती हे। दूसरा भाग तट रेखा के समान्तर दक्षिण की ओर वहता रहता है। एशिया के पूर्वी तटो पर विशेषत निम्न अक्षांशो मे, सर्दियो मे व्यापक रूप से कुहरा उत्पन्न करने मे इन धाराओ का महत्वपूर्ण योगदान रहता है।

भारतीय सागरो पर वायु प्रवाह, चूंकि सर्दियो और गर्मियो मे एक दूसरे से ठीक विपरीत होता है (सर्दियो मे उत्तरी पूर्वी तथा गर्मियो मे दक्षिणी पश्चिमी), अतः सागरीय ड्रिफ्ट मे भी सगत ऋतुनिष्ठ (seasonal) परिवर्तन पाया जाता है। सर्दियो मे सागर सतह का तापमान दक्षिण की ओर वढता जाता है। गर्मियो मे वगाल की खाडी तथा अरब सागर के अधिकाश क्षेत्रो मे यह तापमान 27°C से अधिक रहता है। तापमान निम्नतम अदन की खाडी के आसपास अपवेलिग के कारण पाया जाता है।

11.42 महासागरीय धाराओं का जलवायु पर प्रभाव

(1) उष्ण तथा उपोष्ण कटिवन्धी महाद्वीपों के पश्चिमी तट, ठडी जलराशियो के प्रभाव क्षेत्र मे आने के कारण अपेक्षाकृत ठडे होते हैं तथा उनका दैनिक एव वार्षिक तापमान परिसर भी कम पाया जाता है। शीतलता के कारण कुहरे उत्पन्न हो सकते है, यद्यपि ये क्षेत्र प्राय शुष्क होते हैं।

(2) शीतोष्ण कटिवन्धो तथा उच्च अक्षाशो के पश्चिमी तट, उष्ण जलधाराओ के प्रभाव क्षेत्र मे है। अत. वहा नम महासागरीय जलवायु प्रमुख रहता है। मृदु सर्दियाँ, ठडी गर्मियाँ, तथा अधिक वर्षा इस जलवायु की विशेषताएँ हैं।

(3) उष्ण तथा उपोष्ण कटिवन्धो के पूर्वी तटो के समान्तर उष्ण धाराएँ बहती हैं, जो वहा की जलवायु उष्ण तथा भारी वर्षा युक्त वनाने मे सहायक होती है इन्ही धाराओ के कारण प्राय उपोष्ण कटिवन्धी प्रति चक्रवातो के पश्चिमी सिरे अस्थायी होते हैं।

(4) मध्य अक्षांशो का दक्षिणी पूर्वी तट जो पर्वत श्रृंखलाओ के अनुवर्ती भागो मे पड़ता है, उष्ण धाराओ के निकट से वहने पर भी महाद्वीपीय जलवायु से प्रभावित रहता है। अत वहाँ ठडी सर्दिया तथा तप्त गर्मिया पाई जाती हैं।

(5) उच्च अक्षाशो के पूर्वी तटो पर ठडी जलधाराओ के कारण ग्रीष्म ऋतु प्राय ठडी पाई जाती है।

(6) कुछ धाराएँ वाताग्र विक्षोभ उत्पन्न करने मे सहायक होकर, परोक्ष रूप मे जलवायु पर प्रभाव डालती है। उत्तरी अमेरिका और एशिया के पूर्वी तटो के समान्तर उत्तर की ओर वहने वाली उष्ण धाराएँ मध्य अक्षाशो मे गर्म जलराशिया अभिवहित करती है। इनसे उत्पन्न ऊर्जा वाताग्र विकास मे योग देती हैं। चूंकि पश्चिमी किनारे सामान्यतः निम्न अक्षांशो की ओर वहती शीतल जल धाराओ

के सम्पर्क मे रहती हैं, अतः महाद्वीपो पर तीव्रताप-विपर्यास क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। इसी विपर्यास क्षेत्र में वाताग्र विक्षोभ जनित होने के लिए अनुकूल परिस्थितियां पाई जाती है।

11.50 वायुराशियां एवं हवायें–भूमिका

लगभग 75 वर्ष पूर्व मौसम पूर्वानुमान के लिए वायुमण्डलीय अध्ययन का वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया गया। तब से इस दिशा मे निरन्तर प्रगति होती गई। किन्तु मौसम विज्ञान के अन्य शाखाओ मे वैज्ञानिक दृष्टिकोण अभी भी बिल्कुल प्रारम्भिक अवस्था मे है। जलवायु विज्ञान, वर्तमान स्थिति मे मुख्यत. मौसम आकड़ो का सांख्यिकीय अध्ययन है जिसमे भौतिक कारणो के अध्ययन का समावेश नही किया गया है। वायुमण्डल के भौतिक तथा गतिशील अवस्था का जलवायु पर महत्व-पूर्ण प्रभाव को आशिक रूप से मिलर, हाविज एव आस्टिन तथा केन्ड्रयू ने पहचाना तथा जलवायु विज्ञान की अपनी पाठ्य पुस्तको मे वायुराशियो के सन्दर्भ मे अनेक जलवायु तत्वो की व्याख्या की। वायुराशि की धारणा बर्जरान (1930) द्वारा विकसित की गई जिसके अनुसार भूमि या सागर के विस्तृत सम सतहों पर जहाँ वायु गति मन्द हो वायु क्षैतिज रूप से सम होने की प्रवृत्ति रखती है। स्रोत क्षेत्रो पर पर्याप्त समय तक स्थिर रहने के उपरान्त जब ये वायुराशिया दूसरे धरातलो पर गति करती हैं तो वहा के मौसम को प्रभावित करने के साथ साथ स्वय सशोधित होती रहती है। सन् 1940 मे पेटरसन ने वायुराशियो की तापीय सरचना का अध्ययन किया तथा ग्रीष्म और शीतकाल मे उत्तरी गोलार्द्ध की विभिन्न वायु-राशियो का भौतिक मानचित्र तैयार किया।

वायुराशियो की व्यापक परिभाषा का अभाव, वाताग्र मौसमो के अध्ययन तथा ऊर्ध्वाधर गति के आँकलन मे यथार्थ विधियो की क्लिष्टता के कारण वायुराशि की धारणा का जलवायु विज्ञान मे उपयोग प्राय कठिन होता है। समकालीन मौसम विज्ञान (synoptic Meteorology) की विधियों द्वारा विश्लेषित मानचित्रो से वायु राशि धारणा का कुछ लाभप्रद उपयोग हो सकता है। जलवायुविक दीर्घकालिक परिवर्तनो के भौतिक कारणो की व्याख्या करना तथा दीर्घावधि मौसम पूर्वानुमान विधियो मे सक्रिय योगदान देना जलवायु विज्ञान का एक महत्वपूर्ण कार्य है। किन्तु वर्तमान जलवायु विज्ञान की क्रियाविधि तथा अनुसंधानो मे यह क्षमता अभी नगण्य है।

11 51 स्थायिवत दाब प्रणालियां और वायु प्रवाह

दाब, यद्यपि सीधे रूप मे जलवायु का तत्व नही है तथापि मौसम तथा वायु-प्रवाह उत्पन्न करने मे यह अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिसका विवरण पिछले अध्यायो में दिया जा चुका है। वायु प्रवाह सवेद तापमान को कम करता है तथा वाष्पीकरण को बढ़ाने की प्रवृत्ति रखता है। सागर तलो पर वायु प्रवाह अधिक अपरिवर्ती (steady) और तीव्र होता है, जबकि भूमितल पर घर्षण प्रभाव के कारण हवा की विश्वसनीयता (Reliability) बहुत घट जाती है।

थल और जल भाग के उष्मन विपर्यास के कारण, दाब प्रणालियां जनित होती है, जिनके प्रभाव मे ग्रीष्म और शीत मानसून धाराएँ वहा करती है। लेकिन मानसून धाराएँ उन्ही क्षेत्रों पर उभर पाती है, जहाँ जल और थल का विपर्यास इतना तीव्र हो कि उसके द्वारा उत्पन्न हवाएँ व्यापक भूमण्डलीय प्रवाह को विच्छिन्न कर सके। भारतीय मानसून इसका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है, जिसका विवरण अध्याय 14 मे किया गया है।

वायु राशियाँ अपनी गति के दौरान विविध मौसम तत्वो का अभिवहन करते हुए, उस स्थान के जलवायु को प्रभावित करती हैं, जहाँ से वे गुजरती है। इस बीच प्रतिक्रिया के फलस्वरूप वे स्वय सशोधित होती रहती है। भूमण्डल पर धरातलीय वायुप्रवाह, अनेक कारणों से प्रभावित होने के कारण, अत्यन्त क्लिष्ट प्रणाली प्रस्तुत करता है किन्तु जनवरी और जुलाई की मध्य दाब स्थितियो तथा परिणामी माध्य प्रवाह मे जो नियमितता पायी जाती है उसके फलस्वरूप निम्नांकित वायु पेटिकायें प्रमुख है :—

(1) **व्यापारी हवाएँ**—दोनो गोलार्द्धों के उपोष्ण कटिबन्धी चक्रवातो से पूर्व की ओर वहने वाली ये हवाएँ विषुवत् रेखा पर अभिसरित होनी, प्रतीत होती है। सागरीय क्षेत्रो पर गति और दिशा मे व्यापारी हवाएँ, संसार का सबसे अपरिवर्ती प्रवाह है। दक्षिणी गोलार्द्ध के महासागरो मे 75% अवसरो पर यह द. द. पू, द. पू या पू. द. पू. दिशा और 15 से 30 किमी प्रति घटा की गति से वहती हुई पाई जाती है।

(2) **मध्य अक्षांशीय पश्चिमी प्रवाह**—उपोष्ण कटिबन्धीय प्रतिचक्रवातो से उपध्रुवीय स्थायीवत् निम्नदाब की ओर ये हवाएँ अपेक्षाकृत तेजी से प्रवाहित होती हैं, जिनका प्रमुख अवयव प्राय: पश्चिमी पाया जाता है। उपध्रुवीय निम्न दाबो की क्षीणता तथा स्थान परिवर्तन के कारण यह प्रवाह वहुत परिवर्तनशील रहता है। उत्तरी गोलार्द्ध मे पश्चिमी प्रवाह गर्मियों मे अपेक्षाकृत अधिक अपरिवर्ती पाया जाता है क्योंकि इस ऋतु मे उपध्रुवीय निम्नदाब निश्चित पेटिका के रूप मे दृढता से स्थापित हो जाता है। सर्दियों मे जव महाद्वीपो पर उच्चदाब क्षेत्र तथा सागर मे आइस लैंडिक और एल्यूनिशयन निम्नदाब प्रमुख होते है, तो पश्चिमी प्रवाह कई कोशिकाओ मे टूट कर विच्छिन्न हो जाता हैं। इसी ऋतु मे जनित होने वाले वाताग्र विक्षोभ भी पश्चिमी प्रवाह को विक्षोभित करने मे सहायक होते है।

दक्षिणी गोलार्द्ध मे थल भागो का अवरोध न होने के कारण, पश्चिमी प्रवाह अधिक नियमित और तीव्र होता है। तीव्र प्रवाह के कारण ही 40° द० अक्षांश **गर्जता चालीसा** कहलाता है।

(3) **ध्रुवीय पूर्वी हवाएँ**—ध्रुवीय प्रतिचक्रवातो से उपध्रुवीय निम्नदाबो तक पूर्वी अवयव से वहता हुआ, यह एक तुच्छ (shallow) प्रवाह है। आर्कटिक सागर के चारो ओर थल भागो के अवरोध के कारण ध्रुवीय हवाओ का वहिर्वाह वहुत उलझाव पूर्ण हो जाता है।

11·52 जल और थल का आवंटन

दाव और वायु प्रवाह के प्रमुख नियन्त्रक के रूप मे, जल और थल आवंटन का विवरण पहले दिया जा चुका है। अत जलवायु पर इनका महत्वपूर्ण प्रभाव स्पष्ट है। भौतिक गुणो के कारण जल थल की अपेक्षा उष्मा के लिए अधिक सरक्षी है, जिसके फलस्वरूप जल राशिया थल की अपेक्षा दूनी गति से गर्म और ठडी होती है तापमान का यह मृदुकारक (माडरेटिंग) प्रभाव, प्रचलित वायु प्रवाह द्वारा आन्तरिक । भागो तक ले जाया जा सकता है। महासागरीय क्षेत्रो के तटीय भूभागो में वर्षा,तापमान, दाव और वायु-प्रवाह जलीय वायुराशियो से प्रभावित होकर, आंतरिक भागो के जलवायु से पर्याप्त विपर्यास पैदा कर देती है। महाद्वीपीय क्षेत्र, तटीय क्षेत्रो की अपेक्षा अधिक वार्षिक तापमान परिसर रखते है। वे तटीय क्षेत्र अधिकतम वर्षा और आर्द्रता प्राप्त करते है, जहा वायुप्रवाह महासागरों से सीधा तट की ओर होता है। महासागरीय जलवायु की वर्षा पर्वतीय अनुकूलता पर भी निर्भर करती है। अनुकूल परिस्थितियो में वर्षा प्राय वर्षभर होती रहती है। आतरिक भागो की ओर तटीय वर्षा मे एका-एक कमी आ जाती है। महाद्वीपो की वर्षा अधिकतर ग्रीष्म कालीन होती है।

तापमान का दैनिक चलन, सागर सतहो पर नगण्य होता है। वार्षिक परिसर भी कम होता है, जो उष्ण कटिबन्धो मे 7°C तथा मध्य अक्षाशो मे 15°C से कम पाया जाता है। इससे अधिक परिसर उन्ही क्षेत्रो मे देखा जाता है, जहां महासागरीय धाराओकी सीमा का उतार-चढ़ाव पाया जाता है। अत जल सतह के ऊपर वायु तहो मे तापमान का चलन बहुत कम होता है। महाद्वीपीय क्षेत्रो मे भी यह चलन कम होता है। तटो पर दैनिक और वार्षिक तापमान-उच्चतम तथा न्यूनतम अपेक्षाकृत देर से स्थापित हो पाता है। दिल्ली (आतरिक महाद्वीप) तथा बम्बई (तटीय) स्टेशनो के मासिक तापमान चित्र (11.2) मे अकित किए गए है, जिनसे तापमान पर महासागरीय और महाद्वीपीय प्रभावो का विपर्यास स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

चित्र (11·2)
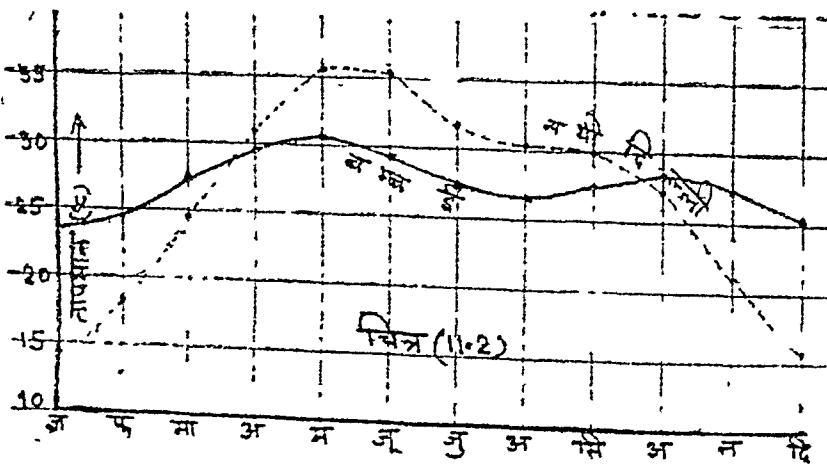
11·60 स्थानीय प्रभाव

झील तथा अन्य छोटे जलाशय भी समीप के जलवायु को मृदु बनाने का सानुपातिक प्रयास करते है। उत्तरी अमेरिका की बडी-झीले जनवरी मे पर्याप्त उष्मा प्रदान करती है, जिनसे शीत तरगो की प्रखरता बहुत कम हो जाती है तथा पाले रहित ऋतु की अवधि अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती हैं। कैम्पीयन और विक्टोरिया झील क्षेत्रो मे दैनिक जल तथा थल समीर का प्रवाह, पर्याप्त रूप से प्रभावकारी होता है। इन क्षेत्रो मे इस प्रभाव के कारण आर्द्रता और वर्षा मे भी यथार्थ वृद्धि पाई गई है।

उच्च अक्षाशो मे, जहा जलाशय और झीले प्राय· जमे हुए अवस्था मे होते हैं, जलीय प्रभाव कम हो जाता है। इन प्रदेशों मे सर्दिया लम्बी हो जाती हैं तथा वसँत ऋतु देर से आती है। तुषार से ढके क्षेत्रो मे वार्षिक तापमान परिसर बहुत अधिक पाया जाता है।

11 61 स्थानीय जलवायु पर स्थलाकृति तथा अन्य छोटे लक्षण (feature) भी महत्वपूर्ण प्रभाव डालते है। इन लक्षणों के कारण स्थानीय प्रवाह, जगह-जगह विभिन्न विशेषताएँ उत्पन्न कर देता है। पर्वतो से सम्बन्धित वायु धाराओ का विवरण पहले दिया जा चुका है। घाटियो तथा बेसिन मे, जहा वायुराशि पर्याप्त समय तक रुद्ध हो जाती है, आधार तल के गुण, ग्रहण कर लेती है। आमूर बेसिन और साइबेरिया मे पर्वतो के बीच अत्यन्त शीतल हवा पर्याप्त समय तक रहती है, जो 44° उत्तरी अक्षाँश पर हिमाक से कई अंश नीचे तक का जनवरी तापमान प्रदर्शित करती है।

11 62 अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण जलवायु नियन्त्रको मे भूमि की संरचना और प्रकृति का नाम लिया जा सकता है। गहरे रग की मिट्टी हल्के रग की मिट्टी से अधिक उष्मा शोषित करती है, अत दिन मे अपेक्षा कृत गर्म रहती है। यह विभिन्नता वायु-प्रवाह पर भी प्रभाव डालती है। शुष्क मिट्टी और रेत, विशिष्ट उष्मा कम होने के कारण अधिक तापमान परिवर्तन प्रदर्शित करती है, जबकि नम मिट्टी उष्मन और शीतलन के लिये अधिक सरक्षी होती है। मिट्टी की उर्वरकता भी परोक्ष रूप मे जलवायु को प्रभावित करनी है। घास के मैदान तथा वनस्पतियां सूक्ष्म जलवायु क्षेत्र के तापमान, वायु, वर्षा तथा आर्द्रता पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है, जिसका विवरण इसी अध्याय मे अन्यत्र दिया गया है।

11·63 यो तो जलवायु पर ही वनस्पतियो का प्रकार और सघनता निर्भर करती है, किन्तु विकसित वन क्षेत्र भी स्थानीय जलवायु पर महत्वपूर्ण नियन्त्रण रखते है। ये वाष्पोत्सर्जन द्वारा आर्द्रता बढा कर वर्षा की क्षमता मे वृद्धि उत्पन्न कर सकते है। तापमान पर मृदुलता (moderating) तथा वायु गति पर अवरोध प्रभाव भी स्थानीय पैमाने पर यथार्थ रूप मे पाया जाता है।

11.70 ऊंचाई

किसी स्थान की समुद्र तल से ऊचाई तथा उसका उद्भासन (exposure) वहा का जलवायु नियन्त्रित करने मे महत्वपूर्ण योगदान करते है। पर्वतीय क्षेत्रो में भी ऊंचाई तथा उद्भासन के कारण भिन्न-भिन्न मौसम परिस्थितिया पाई जाती है। घाटी या पठार की जलवायु शिखर की जलवायु से भिन्न होगी। एक ही पर्वत का पवनाभिमुखी ढाल तथा अनुवर्ती भागों में, वर्षा तथा तापमान की दशाओ मे बहुत असमानता होती है। ये परिस्थितिया अलग-अलग अक्षांशो पर भी भिन्न-भिन्न होती हैं।

(1) ऊंचाई के साथ दाब का तेजी से गिरना, उच्च स्थानो पर जीवन-यापन की कठिनाइयाँ बढा देता है। यो तिव्वत तथा वोलिवियन एन्डीज पर लोग लगभग 5 किमी की ऊचाई पर रहते हैं, किन्तु 3 किमी से अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रो मे अनेक वीमारिया, कमजोरी, थकान, तथा कार्य करने की असमर्थता बहुत सामान्य है।

(2) जल वाष्प, धूल तथा मेघ आदि शोषक व परावर्तक तत्वो की अनुपस्थिति के कारण सौर उष्मा की तीव्रता, पर्वतीय ढाल पर ऊंचाई के साथ बढ़ती जाती है। एक अनुमान के अनुसार, ग्रीष्म अयनान्त के दिन तिव्वत के पठार को, संलग्न भारतीय क्षेत्रो की अपेक्षा डेढ़ गुना उष्मा प्राप्त होती है। अधिक ऊचाईयों पर अल्ट्रा वायलेट किरणे भी समानुपातिक मात्रा मे अधिक गिरती है। पर्वतीय ढालो पर भूमि का तापमान दिन और रात दोनो मे सलग्न वायुतहो के तापमान से अधिक होता है।

(3) सौर विकिरण की वढती तीव्रता के वावजूद, पहाडी ढालों पर तापमान का ऊंचाई के साथ घटना (लगभग –6°C/100 मीटर) तथा तीव्र ताप प्रवणता, ऊंचाइयो की एक महत्वपूर्ण जलवायुविक विशेपता है। पहाड़ो की विरल और शुष्क हवाएँ, दिन मे तीव्र सौर उष्मा के आगमन तथा रात्रि मे भूविकिरण के तीव्र ह्रास की सुविधा दे देती है। फलत दैनिक परिसर का उच्च होना स्वाभाविक है। किन्तु तापमान के औसत मानो मे अधिक अन्तर न आने के कारण, मौसमी परिसर साधारणत. कम ही पाया जाता है।

(4) घाटियो मे तापमान व्युत्क्रमण, उच्च तापमान परिसर तथा ... पूर्वी ढाल घटनाएँ वहुत सामान्य होती है, विशेपकर शीतोष्ण कटिवन्धो मे।

(5) चूँकि पर्वतो के दोनो भागो मे स्थित वायु राशियाँ के वीच रूकावट के कारण सम्मिलन सामान्यतः नही हो पाता है, अतः सक्रमण क्षेत्र मे उच्च क्षैतिज प्रवणता स्वाभाविक रूप से पाई जाती है। वायु राशियो की गति मे रूकावट के कारण प्राय पवनाभिमुखी और अनुवर्ती भागो के जलवायु मे पर्याप्त अन्तर हो जाता है।

(6) दिन को आरोही तथा रात्रि को अवरोही प्रवाह, पर्वतीय ढालो की सामान्य विशेपता है, जिसका विवरण अध्याय 6 मे दिया जा चुका है। फोहन हवा जो गर्म तथा शुष्क होने के कारण शीतोष्ण कटिवन्धो मे (मुख्यतः आल्पस के उत्तरी

ढाल के नीचे स्थित यूरोपीय भागों में) प्राय; आराम देह मौसम उत्पन्न करती है, प्रभावित क्षेत्रों की जलवायु परिवर्तन करने का कारण बनती है।

(7) दिन मे आरोही हवाएँ कुछ नमी ऊपर ले जाती हैं, जिनसे स्तरी कपासी या कपासी प्रकृति के मेघ बन जाते हैं। किन्तु रात्रि मे शिखर पर्याप्त शुष्क तथा आसमान साफ रहता है। रात्रि मे नमी के नीचे की ओर स्थानान्तरण के कारण, घाटियो मे कुहरे जनित हो सकते है। मेघाच्छन्नता की मात्रा प्राय: गर्मियों मे अधिकतम पाई जाती है।

11.71 अवक्षेपण और ऊँचाई

अवक्षेपण की ऊँचाई के साथ निर्भरता का अध्ययन करना इसलिए और महत्वपूर्ण हो जाता है कि पर्वतो पर प्राप्त अवक्षेपण आसपास के क्षेत्रो के लिए विभव जल शक्ति (Potential water power) का कार्य करता है, क्योंकि यह अवक्षेपण, जल या पिघलते तुषार के रूप मे ऊँचाइयो से निम्न तलो की ओर बहता है। जल-शक्ति, अवक्षेपण की मात्रा तथा ऊँचाई-दोनो पर निर्भर करती है। यद्यपि वाष्पीकरण और भू-शोषण के कारण सम्पूर्ण प्राप्त अवक्षेपण शक्ति मे नही बदला जा सकता, तथापि अवक्षेपण की मात्रा क्षेत्रीय जल शक्ति क्षमता के आकलन मे महत्वपूर्ण है।

नम हवाओ के यान्त्रिक आरोहण के कारण पवनाभिमुखी भाग स्पष्टतया अधिक वर्षा प्राप्त करता है। अनुवर्ती ढाल वर्षा वेदिका की छाया मे पड जाने से शुष्क रह जाते है। यह शुष्कता कही-कही इतनी अधिक होती है कि मरुस्थल तक विकसित हो सकते है।

अवक्षेपण की मात्रा ऊँचाई के साथ साधारणत घटती जाती है। लेकिन उष्ण कटिबन्धो मे कुछ ऊँचाई तक यह मात्रा पहले बढती है, क्योंकि इन तहो मे सघनित जल वाष्प की मात्रा ऊँचाई के साथ अधिक होती है। एक कारण यह भी है कि अधिक ऊँचाइयो तक शिखरो के बीच खाली स्थान आ जाने के कारण, नम हवाओं की आरोही गति विच्छिन्न हो जाती है। वी. कोनराद (1942) के अनुसार, शीतलन कटिबन्धो मे वर्षा और ऊँचाई का सम्बन्ध निम्नांकित सारणी मे स्पष्ट किया गया है—

ऊँचाई (फीट)	—	6925	8235	10105
वर्षा (इंच)	—	105.1	118.1	83.9

ढाल पर अवक्षेपण की वृद्धि एक निश्चित ऊँचाई तक ही हो पाती है। उसके बाद वृद्धि दर प्राय शून्य या ऋणात्मक पाई जाती है। उच्चतम वर्षा का क्षेत्र स्थान के प्रति भी परिवर्तित होती है। उष्ण कटिबन्धो मे उच्चतम वर्षा, शीतोष्ण कटिबन्धो से कम ऊँचाई पर पाई जाती है। नम जलवायु के स्थानो मे भी उच्चतम वर्षा,

निम्नतर तहो मे हो जाती है। जावा में यह ऊँचाई एक किलोमीटर, पश्चिमी घाट 1·5 किमी तथा आल्पस पर 2.1 किमी आकलित की गई है।

11 80 सूक्ष्म जलवायु विज्ञान (Microclimatology)

धरातल से एक-दो मीटर ऊँचाई तक की वायु तहो के जलवायु तत्वों का अध्ययन सूक्ष्म जलवायु विज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है। इन्ही तहो मे वनस्पतियाँ विकसित होती है। वनस्पति विज्ञान, कृषि, भवन निर्माण, तथा अनेक उद्योगो मे धरातल से संलग्न वायु तहो की मौसम परिस्थितियो की जानकारी उपयोगी होती है। इस अध्ययन के लिए निम्नतम तलो के तापमान, आर्द्रता तथा वायु वेग सर्वाधिक मुख्य तत्व हैं। भूमि आर्द्रता और तापमान तथा कार्बनडाई आक्साइड के आबंटन का ज्ञान भी महत्वपूर्ण है।

चूँकि वायु मण्डलीय उष्मा का स्रोत भूविकिरण ही है, अत. धरातल की प्रकृति और स्थलाकृति, सूक्ष्म जलवायु के नियन्त्रण मे मुख्य भूमिका निभाते हैं। इनका प्रभाव निम्नांकित रूप मे पडता है—

(1) अलविदो (धवलता), धरातल की प्रकृति पर निर्भर करता है। शुष्क भूमि, वनस्पति से ढकी भूमि की अपेक्षा अधिक धवलता रखती है। मिट्टी के रंग पर भी धवलता की मात्रा निर्भर करती है और इसी मात्रा पर धरातल की सौर उष्मा की शोषण क्षमता निर्धारित होती है।

(2) पृथ्वी का घनत्व—विभिन्न घनत्वो वाली सतह का उष्मन विभिन्न मात्रा मे होता है। अधिक घनत्व वाली मिट्टी मे उष्मा की अधिक मात्रा संचारित होती है।

(3) धरातल की स्थिति (अक्षाश) और ऊँचाई तथा प्रकृति तापमान, वर्षा तथा वायु को किस प्रकार प्रभावित करते हैं, इसका वर्णन पिछले अध्यायो मे किया जा चुका है। सूक्ष्म जलवायु क्षेत्र मे भी स्थलाकृति तापमान, वायु और वर्षा पर प्रभाव डालती है।

11.81 उत्तर-दक्षिण ढाल आपतित सौर उष्मा पर वही प्रभाव डालता है, जो अक्षांशो का परिवर्तन। इससे औसत तथा चरम तापमानों का मान बदलता जाता है। पूर्वी-पश्चिमी ढाल दैनिक सौर प्रकाश की अवधि परिवर्तित कर देती है, किन्तु तापमानो की मात्रा मे कोई विशेष अन्तर नही आ पाता। स्वाभाविकत: पूर्वी ढाल दोपहर से पहले अपेक्षाकृत अधिक सौर उष्मा प्राप्त कर सकेगा और पश्चिमी ढाल दोपहर के बाद। किन्तु, चूंकि सौर उष्मा की तीव्रता दोपहर तक अपेक्षाकृत कम होती है, अत: पूर्वी ढाल पश्चिमी ढाल से कुछ ठंडे पाए जाते है। इसका दूसरा कारण यह है कि प्रात. काल आर्द्रता अधिक पाई जाती है। इस प्रकार, पूर्वी ढाल पर विकिरण का एक भाग वाष्पीकरण की गुप्त उष्मा के रूप मे प्रयुक्त हो जाता है, जबकि दोपहर बाद हवा सूखी होने के कारण बहुत कम सौर उष्मा वाष्पीकरण मे लगती है। रात्रि मे धरातल और फलस्वरूप संलग्न वायु तह भूविकिरण के कारण शीतल होती रहती है। यह शीतल हवा ढाल के नीचे बहती है। सूक्ष्म जलवायु क्षेत्र मे यह रुद्धोष्म प्रक्रम से गर्म नही हो पाती और ढाल के तल मे एकत्र होती है। इस

प्रकार ढाल का तल समतल क्षेत्र की अपेक्षा अधिक ठंडा और शीर्ष अधिक गर्म होते हैं।

स्थलाकृति का वायु और अवक्षेपण पर प्रभाव—वृहद् जलवायु क्षेत्र मे किसी पर्वतीय क्षेत्र का पवनाभिमुखी भाग अधिक वर्षा तथा अनुवर्ती भाग साधारणतः कम वर्षा प्राप्त करता है। पर्वत शृखलाएँ वायु प्रवाह मे पर्वत तरगे जनित करती हैं।

सूक्ष्म जलवायु क्षेत्र मे यदि ढाल वायुगति के समान्तर है, तो जनन प्रभाव तथा यदि लम्बवत् है तो अवरोध प्रभाव उत्पन्न होता है। अवरोध प्रभाव मे ढाल के दोनो तरफ वायु गति कम हो जाती है। यह कमी अनुवर्ती भाग मे अपेक्षाकृत अधिक होती है, जिसके फलस्वरूप अनुवर्ती ढाल पर छोटी भवरें या द्रोणिकाएँ जनित हो जाया करती हैं। ये द्रोणिकाएँ सामान्यतः अनुवर्ती भाग में अवक्षेपण की मात्रा बढा देती हैं। यही कारण है कि किसी चट्टान, वृक्ष या भवन के अनुवर्ती भाग मे तुषारपात का जमाव अपेक्षाकृत अधिक देखा जाता है।

(4) **भूमि रुक्षता, (roughness)**—रुक्ष भूमि, घर्षण अधिक होने के कारण वायु तहो मे विक्षोभ और मिश्रण का प्रभाव जनित करती है। इससे तापमान के चरम मानो मे कमी आती हैं।

(5) **भूमि की आर्द्रता**—यह सूक्ष्म जलवायु मे वाष्पीकरण प्रक्रम को प्रभावित करती है। इसी प्रभाव से निम्नतम वायु तहो मे जलवाष्प का आवटन निश्चित किया जा सकता है। दिन मे सौर ऊर्जा का एक भाग, वाष्पीकरण की गुप्त उष्मा के रूप मे प्रयुक्त हो जाता है। नम और अनाच्छादित भूमि पर अधिकाश सौर ऊर्जा वाष्पीकरण मे लग जाती है, जिससे सतह सूखी होने लगती है। वह वाष्पीकरण, निम्नतम तहो के आर्द्रता और तापमान वटन दोनो पर प्रभाव डालता है।

11.82 सूक्ष्म जलवायु पर वनस्पतियों का प्रभाव

वनस्पतियाँ सूक्ष्म जलवायु को प्रभावित करती हैं, जिसके कारण निम्नलिखित हैं।

(1) वनस्पतियो से आच्छादित सतह का ज्यामितीय आकार तथा भौतिक गुण अनाच्छादित सतह से भिन्न होते हैं। आच्छादित सतह अपेक्षाकृत अधिक लघु तरगीय सौर उष्मा का शोषण करती है, जबकि दीर्घ तरगीय भूविकिरण के लिये इसकी शोषण और उत्सर्जन (emission) क्षमता, नगी जमीन से कम पाई जाती है।

(2) वनस्पति युक्त क्षेत्र मे टहनी तथा पत्ते आदि असख्य छोटे-छोटे सतह बनाते हैं, जो उष्मा के शोषण और उत्सर्जन मे भाग लेते है। यह स्थिति अनाच्छादित भूमि से भिन्न है। ऊँचे वृक्ष निचले तहो का तापमान अधिक बढने मे आशिक रूप से रुकावट डालते है।

(3) वनस्पतियो से वाष्पोत्सर्जन के कारण आच्छादित क्षेत्रो के सूक्ष्म जलवायु मे आर्द्रता अधिक पाई जाती है। इसमे गुप्त उष्मा के रूप मे कुछ सौर विकिरण का ह्रास तो होता है किन्तु यह उस उष्मा-लाभ को निष्क्रिय नही कर पाता जो अधिक अवशोषण करने के कारण वनस्पतियो को प्राप्त होती है।

11.83 (अ) वायु वेग पर प्रभाव

वनस्पतियाँ अपने शिखर की ऊँचाई तक की वायु तहो मे हवा की गति कम कर देती हैं। शिखर से ऊपर एकाएक वायुगति मे पर्याप्त तेजी पाई जाती है। शिखर से भूमितल तक मदन की मात्रा निरतर बढती जाती है।

(ब) तापमान पर प्रभाव

विक्षोभ तथा मिश्रण प्रभाव की कमी के कारण पौधो की विकास सीमा तक, तापमान-परिवर्तन अपेक्षाकृत तीव्र होता है। आच्छादन सतह के ऊपर परिवर्तन धीमा हो जाता है और तापमान सामान्य दर से घटने लगता है। सघन वनस्पतियो मे अधिकाश सौर उष्मा, वनस्पति सतहो द्वारा शोषित करली जाती है और बहुत कम विकिरण भूमि तक पहुँच पाता है। अत तापमान उच्चतम (temperature maximun) ऊपर की ओर स्थानान्तरित हो जाता है तथा भूमि एव वनस्पति के बीच स्थित होता है। जब पौधे छोटे ओर विरल होते है तो तापमान आवटन मे अनाच्छादित भूमि से बहुत कम भिन्नता पाई जाती है। छोटी वनस्पतियो मे रात्रि का निम्नतम तापमान अनाच्छादित भूमि की तरह सतह के पास ही पाया जाता है। किन्तु जब पौधे ऊँचे और सघन होत है, तो निम्नतम तापमान की स्थिति ऊपर को उठ जाती हे और प्रायः शिखर से थोड़ा नीचे पाई जाती है। इसके कारण निम्नाकित है—

(1) वनस्पति सतह के विषम होने के कारण, कुछ बहिर्गामी विकिरण ऊपर से तथा कुछ निम्नतर तहो से होता है। इस तरह विकिरण ह्रास रात्रि से शिखर से कुछ नीचे तक की तहो से होता रहता है।

(2) शिखर के पास की हवा ठंडी होकर नीचे अवतलित होती हैं। किन्तु धरातल पर वनस्पतियो की सघनता प्राय अधिक होने के कारण भूमितल तक नही पहुँच पाती।

सघन वनों मे दिन का उच्चतम तापमान शिखर पर पाया जाता है जहां से तापमान भूमितल की ओर घटता जाता है। रात्रि मे वन भूमि प्राय. आसपास के खुले क्षेत्र से अधिक उष्ण होती हे। तापमान का यह अन्तर कभी-कभी एक कमजोर सा वायुप्रवाह जनित कर देता है जो थल और वन समीर के नाम से जाने जा सकते हैं। इस प्रवाह के अन्तर्गत दिन मे वन से, जिसका तापमान कम होता है, हवा अनाच्छादित भूमि की ओर बहती है। रात्रि मे प्रवाह इसके विपरीत होता है।

(स) आर्द्रता तथा वाष्पीकरण पर प्रभाव

स्वाभाविकत वनस्पतियुक्त भूमि से वाष्पीकरण अनाच्छादित भूमि की अपेक्षा अधिक होता है। यही वाष्पीकरण वनो मे दिन का तापमान मृदु बनाता है। इसका कारण यह हे कि वनस्पतियाँ वाष्पोत्सर्जन प्रक्रम द्वारा सदा वायुमण्डल मे वाष्प जनित करती रहती है, जबकि अनाच्छादित भूमि के शुष्क हो जाने के बाद वाष्पीकरण बन्द हो जाता है। प्रत्येक पत्ती वाष्पोत्सर्जन की एक सतह होती है, अत. आच्छादित क्षेत्रो मे वाष्पीकरण के सतह का क्षेत्रफल भी अधिक होता है। वनो की अधिक आर्द्रता का एक कारण यह भी है कि वायु गति मे अवरोध उत्पन्न हो जाने से हवा स्थित नमी भी रुक जाती है।

12

जलवायु का वर्गीकरण

(Classification of Climate)

12.10 मौसम और जलवायु (Weather and Climate)

एक निश्चत समय पर किसी स्थान या क्षेत्र में वायु दाब, तापमान, आर्द्रता, हवा, वर्षा और मेघाच्छन्नता (cloudiness) आदि तत्वों का सयुक्त प्रभाव उस स्थान का मौसम कहलाता है। ज्ञात या अज्ञात कारणों से मौसम मे परिवर्तन होते रहते है, जो बहुधा अनियमित होते है। इन परिवर्तनो का अध्ययन समकालीन मौसम विज्ञान (Synoptic Meteorology) मे किया जाता है।

अनियमित मौसम परिवर्तनो के बावजूद, किसी स्थान के लिए एक सामान्य मौसम दशा (Average weather condition) निर्धारित की जा सकती है। यह सामान्य दशा एक लम्बी अवधि, (साधारणतः 20 से 50 वर्ष) के मौसम तत्वों के औसतीकरण द्वारा निश्चित की जाती है, इसे उस स्थान का जलवायु कहते है।

जलवायु निर्धारण मे अत्यधिक लम्बी अवधि के मौसम आकड़ो का औसती-करण भी अनुपयुक्त है, क्योंकि किसी स्थान का जलवायु सदा स्थिर रहने वाली अवस्था नही है। इसमे समय के साथ उच्चावच (fluctuation) होते रहते है।

किसी एक तत्व के माध्य (average) द्वारा ही जलवायु निर्धारण पूरा नही हो जाता, बल्कि सभी मौसम तत्वों के मध्यमानो का सयुक्तीकरण ही जलवायु निर्धारण पूरी तरह निश्चित करता है। उदाहरण के लिए, यदि केवल तापमान पर ही विचार किया जाय, तो बोस्टन और एडिनबर्ग जो क्रमशः 9.3°C और 8.8°C का औसत वार्षिक तापमान रखते है, समान जलवायु वाले क्षेत्र प्रतीत होते है। किन्तु वास्तव मे बोस्टन अधिक गर्मी (सबसे गर्म महीने का तापमान = 28°C) और अधिक सर्दी (सबसे ठडे महीने का तापमान = − 2.7°C) का क्षेत्र है, जबकि एडिनबर्ग इसकी अपेक्षा समशीतोष्ण है, जहां सबसे गर्म महीने का तापमान 15°C तथा सबसे ठड़े महीने का तापमान 4°C पाया जाता है। अत. तापमान समान होते हुए भी तापमान परिसर (range) में भिन्नता के कारण दोनो स्थानो के जलवायु मे बहुत अन्तर हो गया।

एक उदाहरण और देखिए। सारणी (12.1) काहिरा (मिश्र) और गैलवेस्टन (टैक्सास) के तापमान तथा तापमान परिसर में इतनी समता होते हुए भी

वार्षिक वर्षा के आंकड़ो मे इतना अन्तर है कि दोनों नगरो के जलवायु मे बहुत भिन्नता आ जाती है। काहिरा शुष्क (arid) तथा गैलवेस्टन नम (humid) जलवायु की श्रेणी आता है।

सारणी 12.1

स्थान	तापमान ^0C						वार्षिक वर्षा (सेमी)
	जनवरी	अप्रेल	जुलाई	अक्टूबर	वार्षिक	परिसर	
काहिरा	11 5	19.8	27.2	22.1	20.1	15.7	3.3
गैलवेस्टन	12.0	20 3	28.3	22.3	20.8	16.3	117 1

12.11 किसी स्थान के जलवायु के निर्धारण मे अनेक तत्व सम्मिलित किए जाते हैं, जिनकी प्रकृति अत्यधिक चर (variable) होती हे। अत. किन्ही दो स्थानो के जलवायु का पूर्ण रूप से सर्वसम (identical) होना असम्भव है।

विभिन्न जलवायु प्रकारो की इस भारी संख्या को देखते हुए अध्ययन की सुविधा के लिए, इनका लगभग समान समूहो से वर्गीकरण करना आवश्यक हो जाता है।

12 20 जलवायु का ज्योतिषीय (Astronomical) वर्गीकरण

क्योकि पृथ्वी पर पडने वाली सौर विकिरणो की मात्रा अक्षाशो के साथ बदलती है और तापमान बहुत कुछ इन विकिरणो पर निर्भर करता है, अत ज्योतिषीय आधार पर जलवायु विभाजन के तर्कोचित कारण हैं। इस आधार पर पूरी पृथ्वी 5 जलवायु क्षेत्रो मे बाँटी गई है।

(1) उष्ण कटिबन्ध या टारिड (Torrid) क्षेत्र

यह क्षेत्र $23\frac{1}{2}^0$ उ. से $23\frac{1}{2}^0$ द. के मध्य का भू-भाग है। इन्ही अक्षाशों के मध्य सूर्य वर्ष भर भ्रमण करता है। 21 मार्च को विषुवत् रेखा पार कर गर्मियो मे सूर्य उत्तर की ओर बढ़ता जाता है तथा 23 जून को $23\frac{1}{2}^0$ उ. पर सीधा चमकता है, जो उत्तरी गोलार्द्ध मे विपुवत् रेखा से सूर्य की अधिकतम दूरी की स्थिति है। तत्पश्चात सूर्य लौटता है और 21 सितम्बर को विपुवत् रेखा पार कर दक्षिणी गोलार्द्ध मे स्थानान्तरित हो जाता है। इस गोलार्द्ध मे यह $23\frac{1}{2}^0$ द तक की यात्रा 21 दिसबर को पूरी करने के बाद पुन. वापिस आता है। इस प्रकार विपुवत् रेखा से सूर्य की अधिकतम दूरियो के बीच का क्षेत्र उष्ण कटिबन्ध हे।

इस क्षेत्र के प्रत्येक स्थान पर सूर्य वर्ष मे दो बार दोपहर को लम्बवत अर्थात् शून्य दिकपात (declination) पर चमकता है। कही भी दोपहर के समय सूर्य की ऊँचाई 43^0 से कम नही होती तथा प्रकाश की अवधि $10\frac{1}{2}$ घण्टे से कम

नही होती । फलस्वरूप तापमान की ऋतु विभिन्नता बहुत कम हो जाती है और तापमान वर्ष भर मे दो उच्चतम और दो निम्नतम स्थापित करने की प्रवृत्ति रखता है।

(0 – $23\frac{1}{2}^0$ उ.) भाग उत्तरी उष्ण कटिबन्ध तथा (0 – $23\frac{1}{2}^0$ द.) भाग दक्षिणी उष्ण कटिबन्ध कहलाता है ।

(2) मध्य क्षेत्र या शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone)

कर्क रेखा ($23\frac{1}{2}$ उ.) से आर्कटिक अक्षाश ($66\frac{1}{2}^0$ उ) तथा मकर रेखा ($23\frac{1}{2}^0$ द.) से एन्टार्कटिक अक्षांश ($66\frac{1}{2}$ द.) के बीच के भू-भाग क्रमश उत्तरी और दक्षिणी शीतोष्ण क्षेत्र कहलाते है ।

शीतोष्ण क्षेत्रो की सीमाओ को अर्थात् आर्कटिक और एन्टार्कटिक अक्षांशो पर सबसे छोटे दिन को सूर्य क्षितिज पर केवल कुछ क्षणो के लिए दिखाई देता है ।

(3) ध्रुवीय क्षेत्र (Polar Zone)

शीतोष्ण क्षेत्र की सीमाओ के आगे वे क्षेत्र आते है जहा सूर्य प्रतिदिन नही चमकता । 24 घण्टे से ज्यादा अवधि के दिन और रात आरभ हो जाते है । यह अवधि अक्षांशो के साथ बढती जाती है । ये क्षेत्र क्रमशः उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव क्षेत्र कहलाते है ।

इस क्षेत्र को इतनी कम उष्मा मिलती है कि जो वनस्पतियो के लिए बहुधा अपर्याप्त होती है ।

12.21 ज्योतिषीय वर्गीकरण का आधार केवल एक तत्व, अक्षाश (या सूर्य की ऊँचाई) है । अन्य आवश्यक तत्वो के समावेश से जलवायु सम्बन्धी जो तथ्य प्रकट होते हैं, उनसे यह आवश्यक हो जाता है कि ज्योतिषीय ऋतुओं और जलवायु वर्गीकरण की विचारधारा को सशोधित किया जाए तथा विभिन्न जलवायु क्षेत्रो की सीमाओ मे भी तथ्यो के अनुरूप परिवर्तन किया जाय । जलवायु उत्पन्न करने वाले भौतिक कारणो को आधार मानकर, जलवायु का वर्गीकरण किया जा सकता है किन्तु इसमे मौसम तत्वो की समानता पर भी ध्यान देना आवश्यक होगा । बिना मौसम तत्वो के समावेश के, वर्गीकरण पूर्णत जननिक (जेनेटिकल) होगा, जिसमे यह सभावना रहेगी कि एक ही समूह मे विभिन्न जलवायु क्षेत्र शामिल हो जाएँ । जैसे–यदि मानसून उत्पत्ति के भौतिक कारणो के आधार पर एक वर्ग बनाया जाए, तो उसमे भारत के बहुत से भाग के साथ, एशियाई द्वीपो के अन्य पूर्वीतट भी आ जाएँगे जबकि कारणो से समानता होते हुए भी इन क्षेत्रो की वास्तविक जलवायु परस्पर भिन्न है ।

जलवायु वर्गीकरण मे तापमान और वर्षा सबसे अधिक महत्वपूर्ण तत्व है । वनस्पतियो की उत्पत्ति और वृद्धि, जो ससार भर की अर्थव्यवस्था का आधार है, इन्ही पर निर्भर करती है । इसके अलावा सम्पूर्ण कार्बानिक और अकार्बानिक जगत पर तापमान और जल प्रमुख (डोमिनेटिंग) प्रभाव रखते है ।

एक विशेष बात यह भी है कि सारे ग्लोब के लिए तापमान और अवक्षेपण के आंकड़े जिस बहुलता से उपलब्ध है, उतने आंकड़े और तथ्य अन्य किसी मौसम तत्वो के बारे मे उपलब्ध नही है । अन्य तत्व, जैसे वाष्पीकरण, आर्द्रता, विकिरण, वायु-प्रवाह, दाब आदि भी जलवायु के लिए महत्व रखते है, परन्तु केवल तापमान और वर्षा के सम्मिलित आधार पर ऐसी सीमाएँ निर्धारित की जा सकती है कि एक वर्ग मे एक समान जलवायुविक प्रभाव दिखाई दे जो दूसरे वर्गों के जलवायु से भिन्न हो । वास्तव मे तापमान और वर्षा के उचित संयोजन मे अन्य तत्वो का आवटन गुप्त रूप से स्वत सम्मिलित हो जाता है ।

इसके लिए वनस्पति जगत के निम्नांकित विशेष तथ्यों को विचार में रखना आवश्यक है ।

(1) पौधो के जीवन के लिए यह आवश्यक है कि वर्ष का कोई भाग काफी उष्ण हो । साइबेरिया के याकुस्टक स्थान पर जहाँ वार्षिक तापमान –10 4°C है, जंगल उगते है तथा कुछ फसले भी होती है, जबकि ग्रीनलैंड के पूर्वी तट पर स्थित एन्गमैगसालिक नामक स्थान पर, जिसका वार्षिक तापमान—2·2°C (याकुटस्क से अधिक) है, कोई वनस्पति नही उगती । इसका कारण यह है कि याकुटस्क के सर्वाधिक गर्मी के महीने का तापमान 19°C है, जबकि एन्गमैगसालिक के किसी भी महीने का तापमान औसतन 6°C से नही बढ़ पाता है । अत वार्षिक तापमान की अपेक्षा सर्वाधिक ग्रीष्म और शीत महीनो के तापमान पर विचार करना वनस्पति विकास के लिए अधिक आवश्यक है ।

विशेष तौर पर उच्च अक्षांशो मे वनस्पति युक्त और वनस्पति विहीन क्षेत्रो के बीच सीमा-निर्धारण सबसे गर्म महीने के निम्नतम तापमान, द्वारा की जा सकती है । कोपेन ने यह तापमान 10°C निश्चित किया है । अर्थात् वे क्षेत्र जहा सबसे गर्म महीने मे भी तापमान 10°C से ऊपर नही आ पाता, वनस्पति विहीन ध्रुवीय क्षेत्र होगे । ध्रुवीय भागो के वनस्पति युक्त क्षेत्रो को कोपेन ने तुषार वन जलवायु (Snow Forest Climate) कहा है । इसी प्रकार, उष्ण कटिबन्धीय और मध्य अक्षांशो के बीच सीमा-निर्धारण के लिए सबसे सर्द महीने का अधिकतम तापमान उपयोगी हो सकता है । कोपेन के अनुसार, यह तापमान 18°C है । अतः उच्च अक्षांशो मे पौधों की प्रगति के लिए ग्रीष्म उष्मा अधिक महत्वपूर्ण है । सर्दियो के दिन ये पौधे सुप्तावस्था (हाइबरनेशन) मे गुजार देते हैं ।

(2) किसी स्थान पर वनस्पतियों के लिए वर्षा की कितनी मात्रा पर्याप्त है, यह वहा के तापमान पर निर्भर करती है । अधिक गर्म स्थानो पर अधिक वर्षा की आवश्यकता होगी क्योकि अधिक वाष्पीकरण के कारण वर्षा का बहुत कम भाग ही वनस्पतियो के लिए उपलब्ध हो पाता है । सहारा रेगिस्तान के कुछ भागो मे 20 से 30 सेमी तक वार्षिक वर्षा हो जाती है । इतनी ही वर्षा पूर्वी साइबेरिया को वनस्पतियो से भरपूर रखती है ।

यदि सर्दियों का तापमान हिमांक से कम है, तो थोडा तुषारपात भी वनस्पतियो को जीवित रख सकता है, क्योकि तुषार जमता जाता है और फिर बसन्त के बाद पिघल कर पौधो के काम आता है ।

12 22 सी. डब्ल्यू थार्न्थवेट के शब्दो मे "जलवायु वर्गीकरण का उद्देश्य विभिन्न जलवायु प्रकारो का वास्तविक क्रियाशील तत्वो के सन्दर्भ मे सुस्पष्ट विवरण प्रदान करता है । वर्गीकरण की स्कीम न सिर्फ इन प्रकारो की भिन्नता दर्शित कर वल्कि जहां तक सभव हो इन प्रकारो के आपसी संबंध भी स्पष्ट करदे । स्कीम स्वय इतनी पर्याप्त हो कि वह सारे ससार के जलवायु को अंकित (paint out) करने मे समर्थ हो" ।

वास्तविक क्रियाशील तत्वो का चुनाव इस बात पर निर्भर करता है कि वर्गीकरण किस प्रयोजन से किया जा रहा है । एक कृषि विशेषज्ञ की प्रणाली तापमान और वर्षा के आंकडों पर आधारित हो सकती है, जबकि वैमानिक (aviation) आवश्यकताओ के लिए किए गए वर्गीकरण मे वायुप्रवाह, बादल और दृश्यता (visibility) सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है ।

12.30 कोपेन का वर्गीकरण

जर्मन जीव वैज्ञानिक ब्लादीमीर कोपेन (1846–1940), जिसने अपना अधिकाश जीवन, जलवायु के अध्ययन में बिताया, ने जलवायु और वनस्पति के संबंधो के आधार पर, जलवायु वर्गीकरण की योजना तैयार की । इसके लिए उसने फ्रांसीसी वनस्पति वैज्ञानिक डी कडोल द्वारा तैयार लिए गए भू-वनस्पति मानचित्र के जरिये सन् 1900 मे अपनी स्कीम प्रस्तुत की, जिसे तापमान और वर्षा के महत्व पर और अधिक बल देकर सन् 1918 मे स्वय संशोधित किया । तब से अनेक जलवायु वैज्ञानिको और भूगोल शास्त्रियो ने आवश्यकतानुसार इसमे अनेक संशोधन किए है । विशेषकर जर्मन जलवायु विशेषज्ञ आर जीजर ने कोपेन के साथ मिलकर इसमे मूलभूत परिवर्तन तथा परिवर्धन किया ।

12.31 कोपेन ने सारे ससार को 5 जलवायु समूहो, A, B, C, D, और E मे बाटा है, जिनका तात्पर्य निम्नांकित है—

A—उष्ण कटिबन्धीय नम (या वन) जलवायु

B—शुष्क जलवायु

C—शीतोष्ण नम जलवायु

D—तुषार वन जलवायु

E—ध्रुवीय या तुषार जलवायु

12.32 नम जलवायु (Humid Climate)

इनमे से प्रत्येक समूह मे जलवायु के कई प्रकार सम्मिलित है, जैसे—नम जलवायु समूह A, C और D के कुछ क्षेत्रो मे वर्षा, वर्ष भर होती है, कुछ मे सर्दियां सूखी रहती हैं और कुछ मे गर्मियां । इस प्रकार A, C और D मे प्रत्येक समूह निम्नाकित तीन प्रकारो मे बाटा गया है—

f—वे भाग जहाँ शुष्क काल अनुपस्थित हो, (वर्ष भर वर्षा वाले क्षेत्र)

s—वे भाग जहाँ गर्मियाँ शुष्क हो (जहाँ वर्षा केवल सर्दियों में हो)

w—वे भाग जहाँ सर्दियाँ शुष्क हों (जहाँ वर्षा केवल गर्मियों मे हो)

इस तरह 9 जलवायु प्रकार प्राप्त हुए—A*f*, A*s*, A*w*; C*f*, C*s*, C*w*; D*f*, D*s*, D*w*; जहाँ A*f*, C*f* और D*f* क्रमशः उष्ण कटिबन्ध (A), मध्य अक्षांशों (C) और तुषार वन जलवायु (D) के उन भागो को व्यक्त करते है, जहाँ वर्ष का कोई भी काल शुष्क नही हैं, अर्थात् जो वर्ष भर वर्षा प्राप्त करते हैं।

इसी प्रकार A*s*, C*s* और D*s* क्रमश. A, C और D जलवायु क्षेत्रो के वे भाग है, जहाँ गर्मियाँ शुष्क हो और सारी वर्षा सर्दियों में ही होती हो। सैद्धान्तिक रूप से कोपेन ने इन तीनो प्रकारो को वर्गीकरण के श्रेणी मे रखा है किन्तु वास्तविकता यह है कि A*s* और D*s* प्रकार की जलवायु के क्षेत्र पृथ्वी पर नगण्य है। उष्ण कटिबन्धो और उच्च अक्षाशो मे अधिक तापमान के कारण, गर्मियो मे ही नमी अधिक होती है। अतः इन क्षेत्रों मे वर्षा अगर होती है तो गर्मियों मे ही।

A*w*, C*w* और D*w* क्रमश. A, C और D जलवायु क्षेत्रो के वे स्थान है, जहाँ सर्दियाँ सूखी और गर्मियाँ काफी नम रहती है।

उपर्युक्त सभी जलवायु प्रकार, वर्ष भर मे यथेष्ट अवक्षेपण प्राप्त करते हैं और वनस्पति तथा वनो से भरपूर है, A, C और D को **वृक्ष जलवायु** (tree climate) से भी सम्बोधित किया जा सकता है, क्योकि इन्ही जलवायुओ में ऊँचे वृक्षो को उगने और बढने के लिए पर्याप्त सुविधा प्राप्त होती है।

12.33—शुष्क जलवायु समूह (B) को, शुष्कता की मात्रा के आधार पर दो प्रकारो मे बाटा गया है—S और W :

S—उस जलवायु को व्यक्त करता है, जहा कम से कम इतनी वर्षा हो जाती है कि घास या स्टेपी (steppe) वनस्पतियाँ उग सके।

W—बिल्कुल रेगिस्तानी जलवायु को व्यक्त करता हुए, जहाँ वर्षा का नितान्त अभाव रहता है।

इस तरह जलवायु प्रकार BS और BW क्रमश अर्द्ध शुष्क या स्टेपी और रेगिस्तानी जलवायु के सकेत है।

12·34 ध्रुवीय जलवायु (Polar Climate)

ध्रुवीय शीत जलवायु (E); T और F प्रकारो में बाटा गया है, जो क्रमश टुन्ड्रा वनस्पति तथा स्थायी तुषार (frost) युक्त जलवायु व्यक्त करते हैं। ET जलवायु वाले क्षेत्रो मे टुन्ड्रा वनस्पतियाँ उगने योग्य सुविधा प्राप्त करती हैं, जबकि EF जलवायु वाले क्षेत्र वर्ष भर घने तुषार के नीचे दबे रहते है।

12·35 A से E तक 5 वर्गों मे जलवायु को बाटने की धारणा ज्योतिषीय वर्गीकरण से ही ली गई प्रतीत होती है। इन वर्गो मे पड़ने वाले क्षेत्र भी ज्योतिषीय वर्गीकरण के क्षेत्रो से बहुत कुछ समता रखते है। अन्तर केवल यह है कि कोपेन का

वर्गीकरण तापमान और वर्षा-दोनों तत्वों पर आधारित है, जबकि ज्योतिषीय वर्गीकरण मे केवल तापमान को आधार माना गया है। इसके अलावा कोपेन का वर्गीकरण विशेष महत्वपूर्ण इसलिए है कि इसमे तापमान और वर्षा के आंकिक मानो द्वारा विभिन्न जलवायु समूहो की निश्चित सीमा निर्धारित कर दी गई है। ये मान मुख्य रूप से इस बात पर निर्भर करते है कि ये दोनो मौसम तत्व वनस्पतियो के विकास को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

12.40 जलवायु समूहों का सीमांकन

(1) उष्ण कटिबन्धी वन जलवायु (A)

जलवायु प्रकार A तीन समूहों मे विभक्त है, Af, As और Aw।

इन तीनो के लिए तापमान की सीमा यह है कि सबसे सर्द महीने का औसत तापमान 18°C या इससे अधिक हो।

इसके साथ यदि शुष्क तम महीने की वर्षा कम से कम 6 सेमी हो, तो जलवायु A*f* (वर्ष भर वर्षा वाले उष्ण कटिबन्धीय वन जलवायु) होगी। यदि ऐसा नही है, तो जलवायु A*s* या A*w* होगा। A*s* वह जलवायु है, जिसमे शुष्क महीने (6 सेमी से कम वर्षा वाले) गर्मियो मे हो तथा A*w* वह जलवायु है, जिसमे शुष्क महीने सर्दियो मे पडते हो। A*s* (शुष्क गर्मियो वाली उष्ण कटिबन्धीय वन जलवायु) संसार के बहुत ही कम क्षेत्रो मे मिलती है, क्योंकि दोनो ही गोलार्द्धों मे उष्ण कटिबन्ध के प्राय सभी क्षेत्र गर्मी मे अपनी अधिकतम वर्षा प्राप्त करते है।

अत स्पष्ट है कि यदि शुष्कतम महीने की वर्षा 6 सेमी से कम है, तो जलवायु प्राय: A*w* होगी।

12.41 उष्ण कटिबन्धो मे कुछ क्षेत्र ऐसे है, जहा वर्ष का एक बड़ा भाग शुष्क रहता है या बहुत कम वर्षा प्राप्त करता है। लेकिन कुछ महीने, जिन्हे मानसून ऋतु कहते हैं, इतनी अधिक वर्षा देते है कि वनो के विकास के लिए पृथ्वी की सतह को शुष्क महीनो मे भी पर्याप्त नमी मिलती रहती है। 6 सेमी की सीमा सन्तुष्ट न करने के कारण, ये क्षेत्र A*f* जलवायु मे नही आते। इसके अलावा नमी के दृष्टिकोण से इनकी स्थिति A*w* जलवायु से अच्छी रहती है। वास्तव मे इन क्षेत्रों की जलवायु A*f* और A*w* के मध्य की स्थिति रखती है। अत: इसे एक नया नाम उष्ण कटिबन्धीय मानसून जलवायु (A*m*) दिया गया है।

A*m* और A*w* के बीच आंकिक सीमा निम्नांकित प्रकार से दी गई है —

यदि शुष्कतम महीने की वर्षा 6 सेमी से कम किंतु $\left(10 - \frac{r}{25}\right)$ सेमी के बराबर या अधिक हो, तो जलवायु A*m* होगा। यदि शुष्कतम महीने की वर्षा $\left(10 - \frac{r}{25}\right)$

सेमी से कम हो तो जलवायु A*w* होगा। यहां *r* सेमी में औसत वार्षिक वर्षा का मान है।

उदाहरण के लिए, यदि किसी स्थान की वार्षिक वर्षा 175 सेमी हो तो, $10 - \frac{r}{25} = 3$. यदि उस स्थान के शुष्कतम महीने की वर्षा 3 सेमी या अधिक (किन्तु 6 सेमी से कम) है, तो जलवायु A*m* होगा। यदि शुष्कतम महीने की वर्षा 3 सेमी से कम है, तो जलवायु A*w* होगा।

12.42 संक्षिप्त-विवरण

संकेत	—	सीमा
(i)	(ii)	
A		सबसे सर्द महीने का औसत तापमान $\geqslant 18°C$
	f	शुष्कतम महीने की वर्षा (*a* सेमी) $\geqslant 6$
	m	$10 - r/25 \leq a < 6$
	w	$a < 10 - \frac{r}{25}$

(2) शुष्क जलवायु (B)

वनस्पतियों के लिए प्रभावकारी नमी की मात्रा केवल वर्षा की मात्रा पर ही नहीं, बल्कि उस स्थान के वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन पर भी निर्भर करती है। वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन के आँकड़े अभी बहुत कम उपलब्ध हैं। लेकिन तापमान और अवक्षेपण के समुचित सन्तुलन से इस बात का अनुमान लगाया जा सकता है कि कितने तापमान पर वर्षा की कितनी मात्रा वनस्पतियों के लिए आवश्यक होगी। इसी सन्तुलन के आधार पर कोपेन ने शुष्क और वन जलवायु के बीच सीमांकन करने के लिए समीकरण स्थापित किया है। यह समीकरण इस प्रकार है:—

$$r = 2(t + 7) \qquad ....(i)$$

जहाँ *r* औसत वार्षिक वर्षा (सेमी) और *t* औसत वार्षिक तापमान ($t°C$) है।

यदि किसी स्थान की वास्तविक वार्षिक वर्षा (r_a), समीकरण द्वारा प्राप्त की गई मात्रा *r* अर्थात् $2(t + 7)$ से कम है तो, उस स्थान का जलवायु शुष्क (B) कहलाएगा।

यदि $r_a \geqslant r$, तो जलवायु नम जलवायु (A,C या D) होगा। कोपेन के अनुसार, वास्तविक वर्षा r_a यदि *r* से कम हो जाए, तो वह वनों को बनाए रखने के लिए पर्याप्त नहीं होगी और वनस्पतियां स्टेपी प्रकार की होने लगेंगी।

समीकरण (i) से स्पष्ट है कि गर्म स्थानों पर नम जलवायु होने के लिए अधिक वर्षा की आवश्यकता होगी।

उन्ही स्थानो के लिए लागू हो सकेगा, जहाँ 6 गर्म (अप्रेल-सितंबर, उत्तरी गोलार्द्ध मे) तथा 6 सर्द (अक्टूबर से मार्च, उत्तरी गोलार्द्ध मे) महीनो की वर्षा, कुल वार्षिक वर्षा के 70% से अधिक न हो।

यदि गर्मियो की वर्षा अधिक होगी, तो वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन भी अधिक होगा। अत. नम और शुष्क जलवायु के बीच वर्षा की सीमा बढ जाएगी। सर्दियों में अधिक वर्षा प्राप्त करने वाले क्षेत्रो मे अपेक्षाकृत वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्न द्वारा कम जल ह्रास होता है। अत इन स्थानों के लिए सीमा घट जाएगी।

इन दोनो स्थितियो के लिए कोपेन ने अलग-अलग समीकरण दिए हैं।

(1) यदि 70% से अधिक वर्षा 6 गर्मियो के महीनो मे होती है तो

$$r = 2\ (t + 14) \qquad \text{...(ii)}$$

अर्थात् यदि वास्तविक वर्षा, $2\ (t+14)$ सेमी से कम है, तो जलवायु शुष्क होगा।

(2) यदि 70% से अधिक वर्षा 6 सर्दियो के महीनो मे होती है तो,

$$r = 2\ (t + 1) \qquad \text{..(iii)}$$

अर्थात् यदि वास्तविक वार्षिक वर्षा, $2\ (t+1)$ सेमी से कम है, तो उस स्थान का जलवायु शुष्क कहलाएगा।

समीकरण (1) और (2) से स्पष्ट है कि गर्मियो मे अधिकतम वर्षा वाले क्षेत्रो मे जलवायु शुष्क न होने के लिए, सम वर्षा वितरण वाले क्षेत्रो की अपेक्षा 14 सेमी वर्षा की आवश्यकता अधिक होगी। इसी प्रकार, समीकरण (i) और (iii) से सर्दियो मे अधिक वर्षा वाले क्षेत्रो मे, जलवायु शुष्क न होने के लिए सम वर्षा वितरण वाले क्षेत्रो की अपेक्षा 12 सेमी वर्षा कम चाहिए।

12.43 शुष्क जलवायु दो समूहो मे बाटा गया है, BS (स्टेपी जलवायु) और BW (रेगिस्तानी जलवायु)। BS वह जलवायु है, जिसमे वार्षिक वर्षा r से कम हो, किन्तु $\frac{r}{2}$ से अधिक हो। BW, वह जलवायु है, जिसमे वार्षिक वर्षा $\frac{r}{2}$ या उससे कम हो। यहाँ r परिस्थितियो के अनुसार (i) (ii) या (iii) द्वारा ज्ञात किया गया मान है।

12.44 उदाहरण · **किसी स्थान की औसत वार्षिक वर्षा यदि 25 सेमी और औसत वार्षिक तापमान 20°C हो तो उसका जलवायु निर्धारित कीजिए—**

(1) यदि वर्षा वर्ष पर समान रूप से वितरित हो, तो

$$\begin{aligned} r &= 2\ (t + 7) \\ &= 2\ (20 + 7) \\ &= 54 \end{aligned}$$

$\therefore \frac{r}{2} = 27$

स्पष्ट है कि $r_s < \frac{r}{2}$

अत उस स्थान का जलवायु 'BW' है ।

(2) यदि स्थान की अधिकतम वर्षा गर्मियो मे हो, तो

$$r = 2\,(t + 14)$$
$$= 2\,(20 + 14) = 68$$

$\therefore \frac{r}{2} = 34$

पुन $r_a < \frac{r}{2}$

अतः जलवायु 'BW' है ।

(3) यदि अधिकतम वर्षा सर्दियो मे होती हो, तो

$$r = 2\,(t + 1)$$
$$= 2\,(20 + 1) = 42$$

$\therefore \frac{r}{2} = 21$

स्पष्टतः $r_a > \frac{r}{2}$ तथा $r_a < r$

अतः इस स्थिति मे जलवायु 'BS' हुआ ।

12.45 सशोधित कोपेन-वर्गीकरण मे तापमान के दृष्टिकोण से भी शुष्क जलवायु को दो भागो मे बाटा गया है ।

(1) शीत शुष्क जलवायु—जिसमे औसत वार्षिक तापमान 18°C से कम हो । इसे सकेत *k* द्वारा प्रदर्शित किया जाता है । यदि शुष्क जलवायु ऐसा हो कि सबसे गर्म महीने का तापमान भी 18°C से कम हो, तो उसके लिए सकेत *k'* लिखा जाता है ।

(2) उष्ण शुष्क जलवायु—जिसमे औसत वार्षिक तापमान 18°C से अधिक हो । इसे साधारणत संकेत *h* द्वारा प्रदर्शित करते है ।

इस प्रकार शुष्क जलवायु को इन समूहो मे बाटा गया है :—
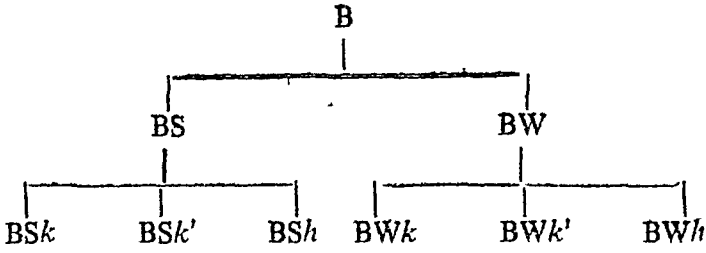
12.46 संक्षिप्त विवरण

संकेत			सीमांकन
(i)	(ii)	(iii)	
B			(i) $r_a < 2(t+7)$; यदि गर्म 6 और सर्द 6 महीनो की वर्षा कुल वार्षिक वर्षा के 70% से कम हो । (ii) $r_a < 2(t+14)$, यदि गर्म 6 महीनो की वर्षा 70% से अधिक हो । (iii) $r_a < 2(t+1)$; यदि शीतकालीन 6 महीनो की वर्षा 70% से अधिक हो ।
	W		यदि वार्षिक वर्षा शुष्क जलवायु की ऊपरी सीमा के आधे के बराबर या कम हो ।
	S		वार्षिक वर्षा ऊपरी सीमा से कम हो लेकिन उसके आधे से अधिक हो ।
		h	$t > 18°C$
		k	$t < 18°C$
		k'	सबसे गर्म महीने का तापमान $< 18°C$

(3) मध्य अक्षांशीय उष्ण नम जलवायु (C)

नम जलवायु 'C' अन्य नम जलवायु A और D से सबसे सर्द महीने के औसत तापमान द्वारा पहचाना जाता है । जलवायु 'C' मे यह तापमान 18^0C से कम लेकिन -3^0C के बराबर या अधिक होता है । कोपेन के अध्ययन के अनुसार -3^0C के औसत तापमान पर धरती पर्याप्त समय तक हिम तहों से ढकी रह सकती है । यह सीमा उन्होने C और D जलवायु के लिए निर्धारित की है । इसके अलावा यह आवश्यक है कि 'C' जलवायु मे उष्णतम महीने का तापमान 10^0C से अधिक हो । यह सीमा C और D जलवायु को E से अलग करने के लिए निश्चित की गई है ।

जैसाकि उद्धृत किया जा चुका है वर्ष के शुष्क अवधि के आधार पर जलवायु 'C' को तीन भागो मे बाटा गया है ।

(i) C*s*–जहां गर्मिया शुष्क हो, और अधिकाश वर्षा सर्दियो में होती हो ।

(ii) C*w*–जहां सर्दिया शुष्क हो और अधिकांश वर्षा गर्मियों में होती हो ।

(iii) *Cf*–वह जलवायु जिसमे वर्ष का कोई भी भाग शुष्क न हो ।

इन तीनो को अलग करने के लिए A जलवायु मे निर्धारित 6 सेमी वर्षा की सीमा उपयुक्त नही है । A जलवायु वाले क्षेत्रो (निम्न अक्षांशो) मे सभी ऋतुओ मे तापमान परिसर (रेंज) बहुत कम होने के कारण नगण्य समझा जा सकता है, किन्तु मध्य अक्षाशो मे जहा 'C' जलवायु प्रभावकारी है, यह परिसर इतना अधिक है कि 'C' जलवायु को शुष्क जलवायु से अलग रखने के लिए विभिन्न ऋतुओ के लिए अलग-अलग सीमा निर्धारित करने की आवश्यकता है । ये सीमायें इस प्रकार दी गई हैं ।

(1) C*s*–वह जलवायु है, जिसमे शुष्कतम महीने (गर्मियो मे) की वर्षा सर्वाधिक नम महीने (सर्दियो मे) की वर्षा के एक तिहाई से कम हो । इस शुष्कतम महीने की वर्षा की मात्रा भी 3 सेमी या कम होनी चाहिए । C*s* जलवायु के लिए 3 सेमी की सीमा की आवश्यकता इसलिए पडी की उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका के मध्य अक्षांशो मे पडने वाले पश्चिमी तट के कुछ स्थान, सर्दियो मे अधिकतम वर्षा तो प्राप्त करते है लेकिन वहा गर्मियां भी इतनी शुष्क नहीं होती कि उन्हे C*s* जलवायु के अन्तर्गत रखा जा सके । अतः गर्मियो के शुष्कतम महीने के लिए 3 सेमी वर्षा की एक अतिरिक्त सीमा निर्धारित की गई है ।

(2) C*w*–इसमे शुष्कतम महीने (सर्दियों मे) की वर्षा, सर्वाधिक नम महीने (गर्मियो मे) की वर्षा के 1/10 से कम होनी चाहिये ।

(3) C*f*–यदि चरम महीनो की वर्षा का अन्तर उपर्युक्त सीमाओं से कम है, तो जलवायु C*f* होगा ।

(4) मध्य अक्षाशीय अमेरिका के पश्चिमी तट के ऐसे स्थान, जहा शुष्क गर्मियो मे सबसे सूखे महीने की वर्षा 3 सेमी से अधिक हो, किन्तु सबसे नम महीने की वर्षा के एक तिहाई से कम होती हो, जिस जलवायु के अन्तर्गत आते हैं उसे C*fs* का नाम दिया गया है । इसका तात्पर्य यह है कि इन स्थानो पर गर्मियां शुष्क तो है पर अपेक्षाकृत अधिक शुष्क नही ।

12·47 'C' जलवायु के उपर्युक्त उपवर्ग वर्षा के आधार पर किए गए हैं । तापमान के आधार पर भी इस जलवायु को कई समूहो में विभक्त किया जा सकता है । सबसे गर्म और सबसे सर्द महीनो के औसत तापमान की सीमाएँ निर्धारित करके कोपेन ने जलवायु 'C' को पुन. तीन समूहो *a*, *b*, और *c* मे विभक्त किया है जो इस प्रकार हैं—

(i) *a*—उष्ण गर्मियो का जलवायु, जिसमे सबसे गर्म महीने का तापमान 22°C या इससे अधिक हो ।

(ii) *b*—सबसे गर्म महीने का तापमान 22°C से कम हो किन्तु कम से कम 4 गर्म महीनो का तापमान 10°C या इससे अधिक हो ।

(iii) c—सबसे गर्म महीने का तापमान 22°C से कम हो और 4 से कम ऐसे महीने हो, जिनका तापमान 10°C या इससे अधिक हो।

इस प्रकार जलवायु 'C' निम्नांकित समूहो मे बाटा गया है :—
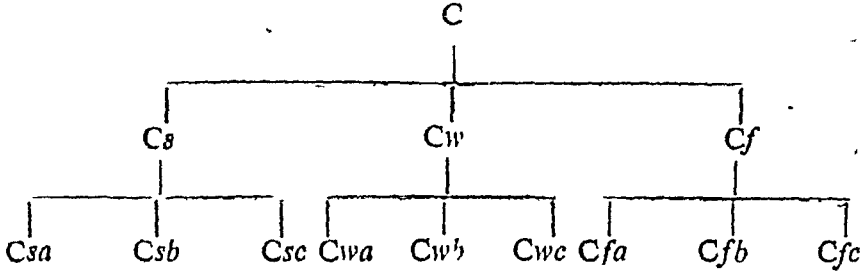
इनमे से जलवायु *Csc* (वे मध्य अक्षाशीय नम जलवायु जहां गर्मिया शुष्क हो, सबसे गर्म महीने का तापमान 22°C से कम तथा चार से कम महीनो का तापमान 10°C या अधिक हों) और *Cwc* (वे मध्य अक्षाशीय नम जलवायु जहा सर्दियाँ शुष्क हो, सबसे गर्म महीने का तापमान 22°C तथा चार से कम महीनो का तापमान 10°C या अधिक हो) पृथ्वी पर वास्तविक रूप से लगभग नही पाये जाते।

12·48 संक्षिप्त विवरण

संकेत (i)	संकेत (ii)	संकेत (iii)	सीमांकन
C			सबसे गर्म महीने का औसत तापमान >10°C तथा सबसे सर्द महीने का औसत तापमान 18°C तथा –3°C के मध्य हो।
	s		शुष्कतम महीने (गर्मियो मे) की वर्षा सबसे नम महीने (सर्दियो मे) की वर्षा के एक तिहाई से कम हो तथा 3 सेमी से कम हो।
	w		शुष्कतम महीने (सर्दियो मे) की वर्षा सबसे नम महीने (गर्मियो मे) की वर्षा के 1/10 से कम हो।
	f		वर्षा s और w की सीमाओ मे न पडे।
		a	उष्णतम महीने का तापमान 22°C या अधिक।
		b	उष्णतम महीने का औसत तापमान 22°C से कम तथा चार या अधिक महीने का तापमान 10°C या अधिक हो।
		c	उष्णतम महीने का तापमान 22°C से कम तथा चार से कम महीनो का तापमान 10°C या अधिक हो।

(4) तुषार-वन जलवायु (D)

यह नम जलवायु अन्य नम जलवायु वर्गो A और C से इस बात मे भिन्न है कि इसमे, सर्दियो का महीना हिम से ढका होता है। इस समय वनस्पतियां सुप्तावस्था मे होती है। लेकिन गर्मियो मे इतना जल, वर्षा और तुषारपात द्वारा प्राप्त हो जाता है, जो वर्ष भर वृक्षो और अन्य वनस्पतियो के लिए पर्याप्त रहता है। अन्य नम जलवायु वर्गो से इसका सीमाकन तापमान के आधार पर किया गया है।

'D' जलवायु मे उष्णतम महीने का तापमान 10°C से अधिक तथा सबसे सर्द महीने का तापमान–3°C या इससे कम होना चाहिये।

A और C की तरह D भी तीन जलवायु समूहो D*f*, D*s* तथा D*w* मे बांटा जा सकता है। जलवायु 'D*s*' अर्थात् शुष्क गर्मियो वाला तुषार वन जलवायु पृथ्वी पर वास्तविक रूप से लगभग नही पाया जाता। इन क्षेत्रो का अधिकाँश अवक्षेपण उच्च तापमान के कारण गर्मियो मे होता है। सर्दियो का तापमान इतना कम होता है कि पृथ्वी अधिकतर वर्फ से ढकी होती है। अत इन दिनो अवक्षेपण की सम्भावना बहुत कम हो जाती है।

D*f*, D*s* और D*w* के लिए अवक्षेपण की वही सीमाएं निर्धारित की गई है, जो C*f*, C*s* और C*w* के लिए है।

तापमान के आधार पर जलवायु 'D' चार उप समूहो *a*, *b*, *c*, और *d* मे बाँटा गया है। *a*, *b* और *c* के लिए वही सीमाएं लागू होती हैं, जो जलवायु 'C' मे इनके लिए निर्धारित है। सकेत '*d*' अत्यधिक ठडे सर्दियो वाले जलवायु को व्यक्त करने के लिए उपयोग मे लाया गया है। इसके लिए सबसे ठडे महीने का औसत तापमान–38°C से भी कम होना चाहिये।

'D' जलवायु–समूहो को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।
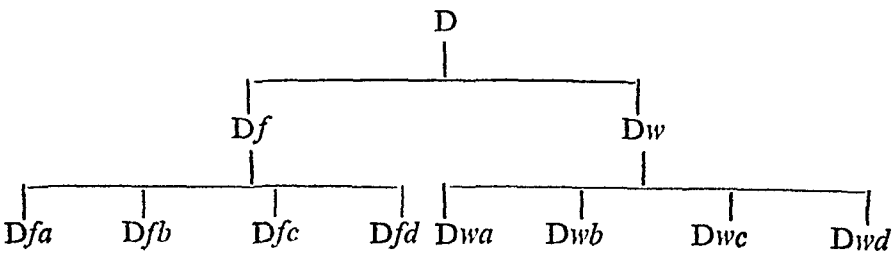
12.49 संक्षिप्त परिचय

संकेत (i)	संकेत (ii)	संकेत (iii)	सीमांकन
D			उच्चतम महीने का औसत तापमान $>10°C$ तथा सबसे सर्द महीने का औसत तापमान $\leq -3°C$.
	s		शुष्कतम महीने (गर्मियो मे) की वर्षा सबसे नम महीने (सर्दियो मे) की वर्षा के एक तिहाई से कम हो तथा 3 सेमी से कम हो ।
	w		शुष्कतम महीने (सर्दियो मे) की वर्षा सबसे नम महीने (गर्मियो मे) की वर्षा के 1/10 से कम हो ।
	f		वर्षा *s* और *w* की सीमा न पडे ।
		a	उष्णतम महीने का औसत तापमान 22°C या अधिक हो ।
		b	उष्णतम महीने का औसत तापमान 22°C से कम हो तथा चार या अधिक महीनो का तापमान 10°C या अधिक हो ।
		c	उष्णतम महीने का औसत तापमान 22°C से कम हो तथा चार से कम महीनो का तापमान 10°C या अधिक हो ।
		d	जब सबसे सर्द महीने का औसत तापमान $-38°C$ से कम हो, तो *a*, *b* और *c* के स्थान पर *d* संकेत लागू हो जाता है ।

(5) ध्रुवीय जलवायु (E)

ध्रुवीय प्रदेशो के वे भाग, जहा उष्णतम महीने का तापमान 10°C से कम पाया जाय 'E' जलवायु मे आते हैं ।

ध्रुवीय क्षेत्रो के बाहर ऊँचाइयो पर स्थित कुछ स्थान भी तापमान की इस सीमा पर खरे उतरते है । ऐसे क्षेत्रो को H जलवायु से सम्बोधित किया गया है ।

E जलवायु को दो समूहो मे बाटा गया है :—

(1) ET—जिसमे उष्णतम महीने का औसत तापमान 0°C से ऊपर आ जाता है। इन क्षेत्रो मे टुन्ड्रा-वनस्पतियाँ पाई जाती हैं ।

(2) EF—जिसमे उष्णतम महीने का तापमान 0°C से भी नीचे रहता है । ये क्षेत्र स्थायी तौर पर बर्फ की मोटी तहो से ढके रहते है ।

12.50 पृथ्वी का सर्वाधिक क्षेत्र 'A' जलवायु घेरता है, जो पृथ्वी के कुल क्षेत्रफल के एक तिहाई से अधिक है । सबसे कम क्षेत्र (कुल क्षेत्रफल के 1/10 से कम)

'D' जलवायु का है। जलवायु 'B' इससे कुछ ही अधिक क्षेत्र घेर पाता है। पृथ्वी पर विभिन्न जलवायु समूहो द्वारा प्रभावित भागो का प्रतिशत क्षेत्रफल सारणी (12.2) में दिया गया है :—

सारणी 12.2

जलवायुविक भागो का प्रतिशत क्षेत्रफल

जलवायु समूह	महाद्वीप	महासागर	सम्पूर्ण पृथ्वी
A*f*	9.4	28.6	23.0
A*w*	10.5	14.1	13.0
A	19.9	42 7	36.1
BS	14·3	3 6	6.7
BW	12.0	0.6	3.9
B	26.3	4 2	10.6
Cw	7.6	0.4	2 5
C*s*	1.7	2.9	2.6
C*f*	6.2	28.6	22.1
C	15.5	31.9	27.2
D*w*	4.8	0.2	1.5
D*f*	16 5	1.5	5.8
D	21.3	1.7	7.3
ET	6.9	16.0	13.4
EF	10.1	3.5	5.4
E	17.0	19.5	18.8

'B' और D मुख्यत: महाद्वीपीय जलवायु है। अतः महासागरो के ऊपर इनका क्षेत्रफल बहुत कम है, जबकि महाद्वीपो मे शुष्क जलवायु का भाग 25% से अधिक है। 'D' जलवायु का भाग भी महाद्वीपो मे कुल क्षेत्रफल के 1/5 से अधिक है। अन्य जलवायु वर्गो के लिए महासागरीय और महाद्वीपीय भागो का आपेक्षिक महत्व लगभग समान है।

12.51 कोपेन के जलवायु वर्गो का वास्तविक भौगोलिक वटन महाद्वीपो पर इस प्रकार है :—

A—विषुवत् रेखीय क्षेत्रो तथा निम्न अक्षांशो मे।

B—उप उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपो के पश्चिमी भाग।

C—उप उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपो के पूर्वी भाग तथा मध्य अक्षांशीय महाद्वीपो के पश्चिमी भाग।

D—मध्य अक्षांशीय महाद्वीपो के पूर्वी भाग।

E—ध्रुवीय क्षेत्र।

12.60 कोपेन वर्गीकरण के गुण और दोष

सम्पूर्ण पृथ्वी के विभिन्न जलवायु क्षेत्रों को मूल-भूत तत्वो के आधार पर एक सम प्रणाली द्वारा अलग-अलग सफलता पूर्वक वर्गीकृत करने का सबसे पहला प्रयास कोपेन ने किया, जिसका जलवायु विज्ञान के क्षेत्र मे स्वागत हुआ।

जल और उष्मा, सारे आर्गेनिक और अकार्बनिक जगत के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व हैं। इन्ही दो तत्वो के मौसमी प्रतिरूपो-वर्षा और तापमान के आधार पर कोपेन ने विभिन्न जलवायु प्रकारो के लिए यथार्थ और सरल सीमाएँ निर्धारित की स्वाभाविक रूप से इन जलवायु तत्वो की प्रधानता के कारण स्थानो की भौगोलिक स्थिति को कोई महत्व नही दिया जा सका है।

वर्षा और तापमान के औसत—वार्षिक मानो के अतिरिक्त, इनकी मौसमी प्रवृत्ति का समावेश भी अनेक स्थलो पर बड़ी सजगता से किया गया है।

जलवायु समूहो के सांकेतिक नामकरण से वर्गीकरण और अधिक ग्राह्य हो गया है। इस विधि से विभिन्न जलवायु समूहों की एक दृष्टि मे तुलना सरल हो जाती है।

इन विशेषताओं के साथ ही इस वर्गीकरण के कुछ दोष भी हैं, जो निम्नांकित है —

(1) कोपेन का वर्गीकरण स्वभावत आनुभाविक (इम्पीरिकल) है, जननिक नही।

(2) वर्षा और तापमान की सीमाएँ, कोपेन ने अपने निजी अनुभव के आधार पर जो उचित समझा, निर्धारित कर दी है। इसके लिए कोई दृढ़ गणितीय आधार या तर्क नही दिया गया है।

(3) दो जलवायु समूहो के बीच सीमा रेखा बिल्कुल यथार्थ होने से कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। जलवायु परिवर्तन साधारणत शनैः शनै होता है। ऐसा नही होता कि एक जलवायु, सीमा रेखा पर आकर एकाएक अपनी विशेषताएँ समाप्त करले और रेखा के दूसरी ओर, दूसरा जलवायु प्रकार एकाएक ही आरम्भ हो जाए। एक जलवायु क्षेत्र का कुछ भाग सीमा रेखा के दूसरी ओर पड जाना बहुत स्वाभाविक है।

(4) वर्गीकरण मे अन्य जलवायु तत्वो पर विचार नही किया गया है। यो यह तर्क पहले दिया जा चुका है कि वनस्पतियो पर प्रभाव के दृष्टिकोण से वर्षा और तापमान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और अन्य तत्वो का प्रभाव भी किसी हद तक इन तत्वो मे निहित है फिर भी अन्य तत्वो को सर्वथा नगण्य कर देना इस वर्गीकरण की कमी ही मानी जायगी। विशेष कर वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन वनस्पति जगत के लिए तापमान और वर्षा से कम महत्व नही रखते। इस का विचार थार्न्थवेट तथा अन्य विद्वानो ने अपने वर्गीकरण मे किया है।

(5) निम्न भूमितलो के लिए जो सीमाएँ निर्धारित की गई है, ऊँचाई पर स्थित क्षेत्रो के लिए भी उन्ही को लागू करना अनुपयुक्त है।

12.61 कोपेन वर्गीकरण के पूरक उपविभाजन की संकेतावली

11 प्रमुख जलवायु समूहो *Af*, A*w*, BS, BW, C*f*, C*w*, C*s*, D*f*, D*w*, ET तथा EF के तीसरे स्थान पर *h*, *k*, *k'*, *a*, *b*, *c* और *d* सकेत लिख कर अनेक उप समूह बनाए गए है, जिनका विवरण ऊपर के अनुच्छेदो मे दिया गया है। इसके अतिरिक्त कुछ और सकेत विशेष जलवायु क्षेत्रो के लिए प्रयुक्त किए जाते है, जिनका सक्षिप्त विवरण निम्नाकित है :—

सकेत	विवरण
i	—वार्षिक तापमान परिसर 5°C से कम हो।
l	—समशीतोष्ण जलवायु जिसमे हर महीने का औसत तापमान 10°C और 22°C के मध्य हो।
n	—अधिक कुहरे वाला जलवायु।
n'	—अधिक आर्द्रता किन्तु कम कुहरा, कम वर्षा, उष्णतम महीने का तापमान 22°C से कम हो।
p	—*n'* की दशाएँ किन्तु उष्णतम महीने का तापमान 22°C तथा 28°C के बीच।
u	—उष्ण अयनान्त के बाद सर्दी।
v	—पतझड़ के बाद गर्मी।
w'	—पतझड़ के बाद वर्षा ऋतु।

12.62 कोपेन के जलवायु वर्गीकरण का संशोधन

(1) रसैल (कैलोफोर्नियां, विश्वविद्यालय) ने कोपन के जलवायु सीमांकन मे कुछ मामूली संशोधन प्रस्तावित किया है । वे C और D के बीच सबसे सर्द महीने के तापमान की सीमा 0°C उपयुक्त बतलाते है, जबकि कोपेन ने यह सीमा – 3°C निर्धारित की है ।

(2) रसैल के अनुसार सबसे सर्द महीने के 0°C तापमान की यही सीमा उष्ण (*h*) और शीतल (*k*) जलवायु के बीच रखनी चाहिए । कोपेन ने यह सीमा औसत वार्षिक तापमान – 18°C, निर्धारित की है । रसैल का तर्क यह है कि जलवायु के दृष्टिकोण से उष्ण और शीत क्षेत्रो को अलग करने के लिए सबसे सर्द महीने का तापमान, वार्षिक तापमान की अपेक्षा अधिक महत्व रखता है ।

(3) कोपेन वर्गीकरण मे तापमान तथा वर्षा की सीमाओ मे विषमता के कारण कुछ स्थानो के जलवायु निर्धारण मे संशय आ जाता है । उदाहरण के लिए, फाकलैण्ड द्वीप मे स्थित केप पेम्ब्रोक नामक स्थान के आंकड़े देखिए ।

	ज	फ.	मा.	अप्रै.	मई.	जून.	जु.	अ.	सि.	अ	न.	दि.	वार्षिक
तापमान (°C)	9 6	9.3	8 6	6.5	4.6	3.1	2.6	3.0	4 1	5.4	6.6	7.9	6 0
वर्षा (सेमी)	7 1	6.6	5 9	6.1	6 3	5.3	5·1	5.1	2.8	4.1	5 9	7.1	67.5

तापमान के आधार पर यह स्थान E T जलवायु के अन्तर्गत आता है क्योकि उष्णतम महीने (जनवरी) का तापमान 10°C से कम है तथा सबसे सर्द महीने (जुलाई) का तापमान 0°C से अधिक है । अवक्षेपण के आंकडो के अनुसार, यह स्थान C या D जलवायु मे आ सकता है । अत. केवल तापमान के कारण इसे E T मे रखना उचित नही है ।

ऐसी स्थितियो के लिए शीतल ग्रीष्म तथा मृदु (mild) शीत वाले नम जलवायु के अलग समूहो की रचना करनी चाहिए, जिसे 'E T' जलवायु से अलग किया जा सके ।

(4) निम्न ऊँचाइयो के 'C' जलवायु क्षेत्रो के विषुवत् रेखा के पास अधिक ऊँचाइयो पर स्थित स्टेशनो से, जो 'C' जलवायु की सीमा मे आते हैं, अलग करने के लिए कसौटी (Criterion) बनाने चाहिए ।

(5) त्रिवार्था, *Cs*, *Cf*, और *Cw* का वर्गीकरण उपयुक्त नही मानते क्योकि ये समूह मिट्टी, वनस्पति तथा संस्कृति की सही तस्वीर परावर्तित नही करते । वे *Cs*, *Ca* और *Cb* जलवायु समूहो का प्रस्ताव करते हैं; इस प्रकार : *Cs*—उप उष्ण कटिबन्धीय जलवायु, जिसमे उच्च दाब (प्रतिचक्रवात) पेटिका के कारण गर्मियां शुष्क रहती है तथा सीमाग्र चक्रवातो व पछुआ वायु प्रवाह के कारण सर्दियो मे अच्छी वर्षा होती है ।

Ca—उग उष्ण कटिवन्धीय नम जलवायु, जहाँ वायुमण्डल के अस्थायित्व के कारण गर्मियो मे प्रतिचक्रवात खण्डित हो जाता है और वर्षा होती है। *Cs* मे दिए गए कारणो से ही ये स्थान सर्दियों मे भी वर्षा प्राप्त करते है।

Cb—मध्य अक्षाँशो के शीतल ग्रीष्म वाले वे क्षेत्र जो महाद्वीपो के पवनाभिमुखी भागो मे पडते है, और वर्ष भर चक्रवाती प्रक्रमो से प्रभावित रहते हैं।

Ca और *Cb* जलवायु वर्गों के त्रिवार्था ने पुन *f* और *w* उपविभागो मे वाटने का प्रस्ताव किया।

M.9. 1981

12.70 थार्न्थवेट का वर्गीकरण (1931)

कोपेन की ही तरह वनस्पति-विकास के आधार पर अमेरिकन जलवायु विशेषज्ञ थार्न्थवेट (1899–1963) ने 1931 मे एक नया वर्गीकरण प्रस्तुत किया, जिसे पहले उत्तरी अमेरिका तथा इसके वाद सन् 1933 मे पूरे ससार के जलवायु वर्गीकरण के लिए प्रयुक्त किया गया। इस वर्गीकरण मे भी जलवायु समूहो को सकेतावलियो द्वारा प्रदर्शित किया गया है तथा उनकी सीमाये परिमाणात्मक रूप से निर्धारित की गई है।

थार्न्थवेट वर्गीकरण की विशेपता और कोपेन के वर्गीकरण से उसका मुख्य अन्तर यह है कि इसको वाष्पीकरण के प्रभाव पर विचार करके वनस्पतियो के लिए प्रभावकारी वर्षा तथा प्रभावकारी तापमान के आधार पर जलवायु को विभक्त किया गया है; न कि वर्षा और तापमान के वास्तविक आकड़ो के आधार पर। इस विचारधारा से कोपेन वर्गीकरण की एक महत्वपूर्ण कमी दूर हो जाती है।

12.71 प्रभावकारी वर्षा के परिमाणात्मक मूल्याकन के लिए थार्न्थवेट ने अवक्षेपण प्रभावकारिता के अनुपात या P. E. (Precipitation Efficiency) अनुपात की धारणा प्रस्तुत की और उसकी गणना के लिए निम्नाँकित सूत्र दिया —

$$\text{मासिक P.E. अनुपात} = \frac{\text{कुल मासिक अवक्षेपण (P)}}{\text{कुल मासिक वाष्पीकरण (E)}} \quad \text{....(i)}$$

वर्ष के 12 मास के P-E अनुपातो का योग P-E सूचक (Index) कहलाता है। इसलिए—

$$\text{P–E सूचक (I)} = \sum_{i=1}^{12} \frac{P_i}{E_i} \quad \text{....(ii)}$$

जहां P_i और E_i क्रमशः *ith* महीने का अवक्षेपण और वाष्पीकरण है।

12.72 लेकिन ससार के किसी भी भाग मे वाष्पीकरण के आंकडे पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध नही है, अतः अधिक स्टेशनो पर P–E सूचको की, सूत्र (2) से सीधी गणना करना संभव नही है। केवल कुछेक स्थानो पर, जहां वाष्पीकरण के

प्रेक्षण अनेक वर्षो से लिए जा रहे है, P–E सूचक इस सूत्र द्वारा ज्ञात किये जा सकते है। किन्तु इन कुछ सूचको के आधार पर वर्गीकरण ग्राह्य नही हो सकता।

पश्चिमी यू० एस० ए० के 21 स्टेशनो पर 4 से 12 वर्ष तक के अप्रेल से सितम्बर तक के लिए, वाष्पीकरण के आँकडे उपलब्ध थे। इनके आधार पर थार्न्थवेट ने अवक्षेपण, (P) वाष्पीकरण (E) तथा तापमान (T) के आपसी सम्बन्धों का अध्ययन करके निम्नाकित आनुभविक सूत्र स्थापित किया:—

$$\text{P–E अनुपात} = \frac{P}{E} = 115\left(\frac{P}{T-10}\right)^{\frac{10}{9}} \qquad ....(iii)$$

जहाँ P इन्चो मे औसत मासिक वर्षा तथा T, अंश फैरनहाइट मे औसत मासिक तापमान है।

12 73 समीकरण (iii) से हर स्टेशन के लिए वर्षा और तापमान के आँकडो से P–E अनुपात की गणना करने की सुविधा मिल गई। लेकिन यह सबध पश्चिम यू० एस० ए० के केवल 21 स्टेशनो के ग्रीष्म ऋतु के प्रेक्षणो पर ही आधारित है, अतः इसे सभी क्षेत्रो और ऋतुओं के लिए लागू करने मे स्वाभाविक तौर पर गभीर आलोचना की गुंजाइश है।

वर्षा, हिमाक के नीचे, तापमान पर वनस्पतियो के लिए कोई सीधा उपयोग नही रखती। आनुभाविक अध्ययन से यह सात्रित हुआ है कि निम्नतम औसत मासिक तापमान के -2^0C $(28{\cdot}4^0F)$ या इससे कम हो जाने पर, वनस्पतियो के लिए वर्षा प्रभावकारी नही रह जाती। अत· इससे कम तापमान हो जाने पर भी सूत्र (iii) मे P/E की गणना के लिए T = 284 ही रखना चाहिए।

12.74 I = वर्ष के 12 मासिक व्यन्जको $115\left(\frac{P}{T-10}\right)^{\frac{10}{9}}$ का योग,

I की गणना और ससार के विभिन्न वनस्पति प्रदेशो से उनकी तुलना के आधार पर, थार्न्थवेट ने पृथ्वी के जलवायु को मुख्य वनस्पतियो के अनुसार, 5 आर्द्रता वर्गो, जिन्हे **आर्द्रता प्रदेश** (**Humidity Province**) कहते है, मे बांटा है। इस प्रकार :

आर्द्रता प्रदेश	वनस्पतियो के प्रकार	सूचकांक (I)
A, वन प्रदेश (wet)	घने वन	128 या अधिक
B; आर्द्र (humid)	वन	64–127
C; अल्पार्द्र (sub-humid)	घास के मैदान	32–63
D, अर्द्ध शुष्क (semi arid)	स्टेपी वनस्पतिया	16–31
E; शुष्क (arid)	मरुस्थल	15 या कम

12 75 वर्षा के मौसमी वितरण को महत्व देने के लिए प्रत्येक आर्द्रता प्रदेशो मे 4 उपविभाजन करते है। यह विभाजन सर्वाधिक वर्षा वाली ऋतु के P–E सूचक के मान पर आधारित किया गया है। उपविभाजन ये है :—

r . सभी ऋतुओ मे अधिक वर्षा हो,
s गर्मियो मे वर्षा कम हो,
w : सर्दियो मे वर्षा कम हो
और *d* सभी ऋतुओ में कम वर्षा हो।

यह स्पष्ट है कि प्रत्येक आर्द्रता प्रदेश में वास्तविक रूप मे चारो उपविभाजन नही पाए जा सकते।

12.76 पौधो के विकास के लिए प्रभावकारी तापमान की गणना के लिए थार्न्थवेट ने तापमान क्षमता (Temperature Efficiency) या T–E अनुपात तथा T–E सूचक (I') की धारणा दी। मासिक अनुपात T–E अनुपात $= \frac{T-32}{4}$,

जहाँ T, महीने का औसत तापमान ^{0}F मे है।
T–E सूचक (I') = 12 मासिक T-E अनुपातो का योग

$$\therefore \quad (I') = \sum_{i=1}^{12} \frac{T_i - 32}{4}.$$

सूचक का उच्चतम मान उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो के लिए ही आता है जहां तापमान पौधो के विकास के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है। आर्द्रता की अवस्था भी इन्ही क्षेत्रो मे वनस्पति के लिए सबसे उपयुक्त है। अत. I' की परिभाषा इस प्रकार तैयार की गई है कि उष्ण कटिबन्धो के लिए इसकी सीमा आर्द्रता सीमा के बराबर हो जाय तथा टुन्ड्रा जलवायु के ध्रुवीय सीमाओ पर शून्य हो जाय।

12·77 तापमान सूचकांको के आधार पर पृथ्वी को 6 तापमान प्रदेशों (Temperature Provinces) में बाटा गया है । इस प्रकार :—

तापमान प्रदेश	सूचकाक
उष्ण कटिबन्धीय	128 या अधिक
मध्यतापीय (Meso-thermal)	64–127
सूक्ष्म तापीय (Micro thermal)	32–63
टैगा (Taiga)	16–31
टुन्ड्रा (Tundra)	1–15
हिम (Frost)	0

इन तापमान प्रदेशो के 5 अन्य उपविभाजन किए गए है, जो ग्रीष्म वनस्पतियो के लिए उपयोगी तापमान के सान्द्रता (concentration) माप पर आधारित हैं । इनकी विस्तृत व्याख्या यहाँ नही दी जा रही है ।

12.78 P–E तथा T–E सूचकांको तथा अवक्षेपण के मौसमी वितरण के संयोग से पृथ्वी को 32 विभिन्न जलवायु प्रकारो मे बाटा गया है । ये सभी जलवायु प्रकार वास्तविक रूप से किसी न किसी क्षेत्र मे पाए जाते हैं । जलवायु के प्रकार ये हैं :—

AA'r, BA'r, CA'r, DA'w, EA'd, D', E', F'

AB'r, BA'w, CA'w, D'Ad, EB'd.

AC'r, BB'r, CA'd, DB'w, EC'd,

BB'w, CB'r, DB's,

BB's, CB'w, DB'd,

BC'r; CB's, DC'd,

BC's, CB'd

CC'r

CC's

CC'd

उन क्षेत्रो मे, जहाँ तापमान-क्षमता की सीमा पौधो के विकास के लिए पर्याप्त है, जलवायु निर्धारण के लिए, P–E सूचकांकों का उपयोग किया जाता है । इस प्रकार के प्रदेश A,B,C,D और E है । अन्य प्रदेशो के लिए तापमान क्षमता ही

जलवायु निर्धारण के लिए अनुकूल तत्व मानी जाती है। प्रदेश D', E' और F के जलवायु समूहों की सीमाएँ क्रमशः T-E सूचकांकों द्वारा निर्धारित की जाती हैं।

12.79 इसमें सन्देह नहीं कि सैद्धान्तिक रूप से थार्न्थवेट का वर्गीकरण वाष्पीकरण के समावेश के कारण वास्तविकता के अधिक निकट है किन्तु P-E सूचकांकों की रचना के लिए जो आनुभविक सूत्र दिया गया है, एक क्षेत्र के थोड़े से आँकड़ों पर आधारित होने के कारण उसकी सर्वत्र उपयोगिता सन्देहपूर्ण है।

कोपेन की तरह सरल संकेताक्षरों के उपयोग से थार्न्थवेट ने पृथ्वी को 32 जलवायु क्षेत्रों में विभाजित किया तथा उनकी परिमाणात्मक सीमाएं निर्धारित की। कोपेन के वर्गीकरण में केवल मुख्य जलवायु समूह ही आते हैं।

P-E सूचकांक नम जलवायु क्षेत्रों (A,B,C) के आर्द्रता मानों को भी परिमाणात्मक रूप से अलग कर देते हैं, जबकि कोपेन ने केवल शुष्क और नम जलवायु के बीच अवक्षेपण की एक सीमा निर्धारित कर दी है। यह थार्न्थवेट वर्गीकरण की एक अतिरिक्त विशेषता है जबकि सूत्रों की गणना अपेक्षाकृत कठिन होना इसका एक दोष है।

कोपेन और थार्न्थवेट के जलवायु क्षेत्र, एक से दूसरे से संपाती नहीं होते। उदाहरण के लिए थार्न्थवेट वर्गीकरण मे उष्ण कटिबन्धीय वर्षा के घने वनों वाले जलवायु का क्षेत्र कोपेन की अपेक्षा बहुत कम है।

12.80 थर्न्थवेट का वर्गीकरण (1948)

सन् 1948 मे थार्न्थवेट ने विभव वाष्पीकरण वाष्पोत्सर्जन (Potential Evapotranspiration) की एक नई धारणा प्रस्तुत की। प्राकृतिक सतहों से वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन द्वारा जल वाष्प का ह्रास साधारणतः सीधे तौर पर नहीं मापा जा सकता। अत. इसके आकलन के लिए कई अप्रत्यक्ष विधियां दी गई हैं। एक विधि आर्द्रता सन्तुलन समीकरण;

वर्षा = अपवाह (Runoff) + वाष्पीकरण - वाष्पोत्सर्जन + भूमि आर्द्रता संग्रह (Soil moisture storage),

पर आधारित है। इस विधि को वास्तविक रूप से प्रयुक्त करने के लिए छोटी वनस्पतियों युक्त एक भूखण्ड निर्धारित कर लेना चाहिए, जिस पर वर्षा, अपवाह तथा तौल मे अन्तर द्वारा भूमि आर्द्रता का माप लिया जा सके। इस तकनीक से दैनिक वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन का मान आकलित किया जा सकता है।

यदि इस भूखण्ड की जल द्वारा नियमित सिचाई होती रहे, तो वाष्पीकरण वाष्पोत्सर्जन द्वारा जल का ह्रास अधिकतम सभावित मात्रा में होगा। यही अधिकतम वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन, विभव वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन कहलाता है। अतः किसी स्थान पर विभव-वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन, जल ह्रास की अधिकतम संभावित मात्रा है, जो उस स्थान पर वाष्पीकरण [illegible] अवस्था में होती है जब वहा कि भूमि को इस कार्य के लिए हमेशा [illegible] मिलता रहे। भूमि आर्द्रता

सूचकाक Im	जलवायु प्रकार
– 40 से–60	शुष्क
– 20 से–40	अर्द्ध शुष्क
+ 20 से–20	अल्पार्द्र
+ 20 से–अधिक	आर्द्र

12 83 सन् 1955 मे भार गुणको को इस अनुभव के वाद हटा दिया गया कि जल की कमी की अवस्था तभी आरम्भ होती है, जब भूमि आर्द्रता का वाष्पीकरण होने लगता है। इस सशोधन मे भी यह धारणा अक्षुण्ण रखी गई है कि भूमि आर्द्रता सग्रह की मात्रा चर होती है, जो मिट्टी और वनस्पतियो के प्रकार पर निर्भर करती है तथा वाष्पीकरण की दर भी परिवर्तनशील रहती है।

$$\text{अत:}\ I_m = \frac{100\,(S - D)}{PET}$$

$$\text{या}\ I_m = 100\left(\frac{r}{PET} - 1\right)$$

जहाँ r वार्षिक वर्षा (सेमी) है।

नई धारणा के अनुसार, PET के मानो से ऊष्मा-क्षमता की व्युत्पत्ति होती है क्योकि यह स्वयमेव तापमान का फलन है। अत. I*m* तथा PET के आधार पर निम्नांकित जलवायु प्रकार प्रस्तुत किए कए।

$I\,m = 100\left(\frac{r}{PET} - 1\right)$	जलवायुप्रकार	PET (सेमी)	जलवायु प्रकार
100 से अधिक	अधिकार्द्र (Per-humid)—A	114 से अधिक	अधितापीय (Mega-thermal)—A
20 से 100	आर्द्र—B_1, B_2 B_3, B_4	57 से 114	मध्यतापीय (Meso-thermal)–B'_1, B'_2, B'_3 और B'_4
0 से 20 – 33 से 0	नम अल्पार्द्र—C_2 शुष्क अल्पार्द्र – C_1	28.5 से 57	अल्पतापीय (Micro-thermal) C'_1 और C'_2
– 67 से – 33	अर्द्ध शुष्क – D	14.2 से 28.5	टुन्ड्रा—D′
– 100 से – 67	शुष्क – E	14 2 से कम	तुषार (Frost) – E′

12.84 ये प्रणालिया अनेक क्षेत्रो के जलवायु वर्गीकरण के लिए प्रयुक्त की जा चुकी है। किन्तु अभी तक इस विषय पर कोई भूमण्डलीय मानचित्र नही प्रकाशित किया जा सका है। यह विधि वनस्पतियों की, सीमाओ और प्रकारो पर

विचार नही करती जैसा कि कोपेन या थार्न्थवेट (1931) के वर्गीकरण मे किया जा रहा है।

12.85 एम० ग्राई० बुदिकोव ने तापमान के स्थान पर नेट विकिरण का प्रयोग करके इस विधि को और मौलिक रूप देने का प्रयास किया। उन्होने शुष्कता के विकिरण सूचकांक की परिभाषा इस प्रकार दी —

$$\text{शुष्कता का विकिरण सूचकाक} = \frac{R\,n}{L\,r}$$

जहां Rn = नम भूमि से वाष्पीकरण के लिए उपलब्ध नेट विकिरण

L = वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा तथा r = वार्षिक अवक्षेपण।

अत: Lr = वार्षिक अवक्षेपण के वाष्पीकरण के लिए आवश्यक उष्मा।

विभिन्न जलवायु के लिए इस सूचकांक का मान इस प्रकार आता है—

जलवायु प्रकार	Rn/Lr
मरुस्थल	3 0 से अधिक
अर्द्ध मरुस्थल	2 0 से 3 0
स्टेपी वनस्पति	1 0 से 2 0
वन	0.33 से 1.0
टुन्ड्रा	0 33 से कम

12.90 कोपेन के विभिन्न जलवायु प्रकारों के उदाहरण

(क) उष्ण कटिबन्धी वन--जलवायु (A)

सर्वाधिक सर्द महीने (साधारणत उत्तरी गोलार्द्ध मे जनवरी और दक्षिणी गोलार्द्ध मे जुलाई) की 18°C समताप रेखाएँ 30 अश अक्षाशो के थोडा ऊपर-नीचे चलती है। महाद्वीपीय भागो मे ये रेखाएँ निम्न अक्षाशो पर आ जाती है तथा महासागरीय क्षेत्र मे 30 अंश से उच्च अक्षाशो मे उठ जाती है। इन्ही दोनो रेखाओ के बीच कोपेन का 'A' जलवायु क्षेत्र सीमित है। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि 20 से 25 अश अक्षांशो के बीच दोनो गोलार्द्धो के महाद्वीपीय भागो (साधारणत. पश्चिमी भाग) में उप उष्ण कटिवन्धी उच्चदाब के अन्तर्गत शुष्क जलवायु 'B' के प्रमुख क्षेत्र भी पडते है। 'A' जलवायु क्षेत्र मे औसत वार्षिक तापमान 21 से 27°C के बीच पाया जाता है। वर्ग A को पुन उपविभाजित करने के लिए निम्नलिखित विशेषताओ को ध्यान मे रखना लाभप्रद है —

(1) उष्ण कटिवन्धी क्षेत्र का एक वडा भाग, विशेषकर 15 अंश अक्षाशो के बीच का भाग, 5°C से कम वार्षिक तापमान परिसर रखता है। अत इनके लिए सकेत *i* उपयुक्त होगा। इस कम तापमान परिसर का कारण यही है कि इन क्षेत्रो पर दिन की लम्बाई और सूर्य की ऊँचाई मे चलन (Variation) अपेक्षाकृत वहुत कम होता है।

(2) सूर्य के वार्षिक स्थानान्तरण के कारण, विपुवत् रेखीय क्षेत्रों (10° उ. और द. के बीच) मे तापमान के दो उच्चतम मिलते हैं, जो बहुधा वर्षा के दुहरे उच्चतम का कारण बनते हैं। वर्षा के उच्चतम सूर्य के विपुवत् रेखा पर आने के थोडे दिनो बाद, अर्थात् अप्रेल व नवम्बर मे पाए जाते हैं। अक्सर पहला उच्चतम (मार्च, अप्रेल और मई) दूसरे से ज्यादा प्रभावशाली होता है।

(3) विपुवत् रेखीय पेटिका में सर्वत्र भारी वर्षा (125 से 200 सेमी) होती है। कुछेक स्थानो मे 500 सेमी से अधिक वर्षा भी रिकार्ड की जाती है। इन क्षेत्रो मे या तो वर्ष मे कोई शुष्क मौसम होता ही नही या उसका काल बहुत संक्षिप्त होता है। अत. इस पेटिका मे A*f* या A*m* जलवायु की प्रधानता है। A*f* जलवायु के अन्तर्गत ईस्ट इण्डीज, अफ्रीका के गुयेना तट, कागो घाटी, तथा दक्षिणी अमेरिका के आमेजन घाटी के क्षेत्र आते है।

(4) विपुवत् रेखीय पेटिका से परे उष्ण कटिबन्धी क्षेत्र A*w*, A*m* और B जलवायुओ मे विभक्त किए जा सकते हैं। A*f* जलवायु के क्षेत्रो मे उच्च अक्षांशो मे शीतकाल काफी सवृद्ध हो जाता है, जो साधारणतः शुष्क रहता है। ये भाग A*w* जलवायु मे आते है। उत्तरी आस्ट्रेलिया, सूडान दक्षिणी अफ्रीका, ब्राजील, कोलम्बिया व वेनेजुएला की घाटी, आदि इसके अन्तर्गत आते है। भारत, बर्मा, लंका तथा चीन के कुछ भाग, मानसून धाराओ के प्रभाव मे A*m* जलवायु के अन्तर्गत आते है तथा कुछ A*w* के।

(5) विपुवत् रेखा से दूरी के परिणामस्वरूप, A*w* जलवायु मे तापमान परिसर A*f* से अधिक तथा वार्षिक वर्षा कम होती है। ये क्षेत्र बहुधा वर्ष मे तापमान और वर्षा का एक उच्चतम प्रदर्शित करते हैं।

12.91 विपुवत् रेखीय जलवायु के लिए महासागर आइलैण्ड (1° द. 170 पू), पोन्टियानक (0°, 109° पू), सिगापुर (1° उ. 104° पू) क्वीटस (4° द 73° प) तथा कुछ अन्य स्टेशनो के तापमान और वर्षा के मासिक आंकड़ो को सारणी (12 3) मे प्रस्तुत किया गया है।

प्रथम 4 स्टेशनो मे :

(1) सबसे सर्द महीने का तापमान 18°C से अधिक है,

(2) A*f* जलवायु क्षेत्रो मे शुष्कतम महीने की वर्षा 6 सेमी से अधिक है,तथा

(3) वार्षिक तापमान परिसर 5°C से कम है।

अत' ये स्टेशन A*fi* जलवायु रखते है।

किन्तु विपुवत् रेखीय क्षेत्र के सभी स्टेशन इस तरह की जलवायु नही रखते। मोम्वासा (4° द. 40° पू) की जलवायु देखिए। यह कोपेन की सीमाओ के अनुसार A*wi* समूह मे रखा जा सकता है। सारणी (12.4)

उष्ण कटिबन्धी मानसून जलवायु वाले स्टेशनो के कुछ उदाहरण सारणी (12 3) मे दिए गए है, जो कोपेन की सीमाओ का पूर्ण रूप से अनुसरण करते है।

विषुवत् रेखीय वर्षा पेटिका के अलावा भी उष्ण कटिबन्ध मे *Af* जलवायु क्षेत्र मिलते है। जैसे—ब्राजील (*Afi*), जूपिटर फ्ला (*Afw*) तथा मेडागास्कर (*Af*)। इन समूहो तथा शुष्क पेटिका के अतिरिक्त उष्ण कटिबन्ध के अन्य क्षेत्र साधारणत: *Aw* जलवायु के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं। कुछ उदाहरण सारणी (12.5) में दिए गए है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, उष्ण कटिबन्धो मे शुष्ककाल प्राय: सर्दियो मे ही होता है, अत. *As* जलवायु के क्षेत्र लगभग नही मिलते है। लेकिन मद्रास, (13° उ. 80° पू.) तथा नाथरग (12° उ. 109 पू.) उत्तरी पूर्वी मानसून के पवनाभिमुखी भाग मे होने के कारण, सर्दियो मे अच्छी वर्षा प्राप्त करते हैं तथा पर्वतीय कारणो से ही गर्मियो मे प्राय शुष्क रहते हैं। कोपेन के सूत्रो के अनुसार. ये *As* जलवायु के प्रतिबन्धों पर खरे उतरते है।

सारणी (12.3)

क्रमांक	स्टेशन का नाम और स्थिति		ज.	फ.	मा.	अ.	म	जू.	जु	अ	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक	तापमान परिसर
	Af जलवायु															
1.	महासागरीय आइसलैंड (1°S, 17C°E)	तापमान (°C)	27.3	27.3	27.3	27.3	27.3	27 3	27.3	27.3	27 3	27 3	27.3	27.3	27.3	0.0
		वर्षा (सेमी)	29.2	22.6	21.8	20.6	14.2	12.9	17.3	9.9	13 2	14 2	14.5	22 6	213 1	—
2.	इक्विटास, पेरु (4° 73°W)	तापमान (°C)	25.6	25 6	24.6	25.1	24 6	23.4	23.4	24.6	24 6	25.6	25.6	25 6	25.1	2.2
		वर्षा (सेमी)	25 9	24 9	31.0	16.5	25.4	18 8	16 8	11.7	22 1	18.3	21 3	29 2	261.9	—
3.	पोन्टियानक (0°, 109°E)	तापमान (°C)	25 7	26.2	26.2	26.2	26 8	26.8	26 8	26.2	26.2	26.2	25 7	25.7	26.2	1.1
		वर्षा (°C)	25 6	20.1	24.9	25.6	25.6	22.0	16 0	22.6	21.3	37.6	39.9	33.5	319.8	—
4.	सिंगापुर (1°N, 104°E)	तापमान (°C)	26·8	26 8	27.3	27.9	27.9	27.3	27.3	27.3	27 3	27.3	27.3	26 8	27.3	1.1
		वर्षा (सेमी)	25.1	16.8	18.8	19 3	17.0	17 3	17.3	20.1	17.3	20.6	25.1	25.5	241.5	—

सारणी (12.3) Contd.

	Am जलवायु															
5.	कालीकट (भारत) (11°N, 76°E)	तापमान (°C)	25 5	26 6	27.5	28 6	28 4	25.8	24 8	25 2	25.7	26.2	26.4	25 7		3 8
		वर्षा (सेमी)	0.5	1.5	8·1	24.1	88.9	75.7	38.9	21 3	26 2	12.4	2 8	2.5		—
6.	कोलम्बो (श्रीलंका) 7°15, 80°E	तापमान (°C)	26.7	26 7	27.8	28 3	28 3	27 8	27.2	27.2	27.2	27 2	26 7	26.7	27.2	1.6
		वर्षा (सेमी)	8.1	4.8	10.9	24.6	27.7	18.5	11.2	8.1	12.2	34 0	30 0	12.9	203.2	—
7.	जकार्ता	तापमान (°C)	25.6	25 6	26 1	26 7	26.7	26.1	26.1	26 1	26 7	26.7	26.1	26 1	26.1	1.1
		वर्षा (सेमी)	33.0	32 5	19.8	12.9	10.2	9 4	6.6	4 3	7 4	11 4	14.0	21 6	183.1	—

सारणी (12 4)

स्टेशन का नाम और स्थिति		ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु	अ	सि.	अ	न	दि.	वार्षिक	तापमान परिसर
मोम्बासा (4°S, 40°E)	तापमान (°C)	26.8	26.8	27.9	27.3	25 7	25 1	24.0	24.6	25.1	25 7	26.2	26 8	26.2	3.6
	वर्षा (सेमी)	2.0	2 3	5.8	19.8	34.8	9 1	8.9	5.6	4.8	8.6	12.7	5.6	120.1	—

सारणी (12 5)

उष्ण कटिवन्धी शुष्क एवं नम (Aw) जलवायु

क्रमाक	स्टेक्षन तथा उनकी स्थिति		ज	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु	अ	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक	तापमा परिसर
1.	सैगोन	तापमान (°C)	26.1	27.2	28.9	30.0	28.9	27 8	27.8	27.8	27.8	27.2	26.7	26 1	27.6	3.9
	(10°N, 107E)	वर्षा (सेमी)	2.3	0.3	0 8	4.3	21 1	32 0	28.2	27.9	33 8	28 2	9.4	7 9	196.1	—
2.	वम्वई	तापमान (°C)	24.4	24.4	26.7	28.3	30.0	28.9	27.2	27 2	27.2	27.8	27.2	25.0	27.2	5.6
	(19°N, 73°E)	वर्षा (सेमी)	0.3	0.3	—	—	1.8	50.5	61.0	36 8	26.9	4.8	1.0	—	183.9	—
3.	डारविन	तापमान (°C)	28.9	28.3	28.9	28 9	27.8	26.1	25.0	26 1	28.3	29.4	30.0	29.4	28 3	5.0
	(12°S, 131°E)	वर्षा (सेमी)	40 4	32.8	25.7	10.4	1 8	0.3	0.3	0.3	1.3	5 6	12.2	26.2	157.0	—

सारणी (12 6)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न	दि.	वार्षिक	तापमान
	As जलवायु															
1.	मद्रास	तापमान (°C)	24.4	25.6	27.2	29.4	32.2	32.2	31.1	30 0	29 4	27 8	26.1	25.0	28.4	7.8
	(13°N, 80°E)	वर्षा (सेमी)	2.8	0.8	0.8	1 5	4.6	5.1	9.7	11 4	12 2	28.2	34.5	13.5	125.0	—
2.	नायरग	तापमान (°C)	23.9	25.0	26.1	27.8	28 3	28 9	28.9	28.9	27.8	26.7	25.6	24 4	26.7	5.0
	(12°N, 109°E)	वर्षा (सेमी)	6.1	2.8	2.3	2 3	6.1	5.6	5.1	3 8	17.5	26.9	35.3	24.4	138.2	—

(ख) शुष्क जलवायु 'B'

विभिन्न अक्षांशो के अनेक विस्तृत क्षेत्रो पर, शुष्क जलवायु पाई जाती है। इन क्षेत्रों का वार्षिक तापमान परिसर उसी अक्षांश के अन्य जलवायु क्षेत्रो से अधिक होता है। इसका कारण यही है कि शुष्क जलवायु, महाद्वीपो के भीतरी भागो मे, विशेषकर पर्वत मालाओ के अनुवर्ती तरफ स्थित है, जिससे उन तक महासागरीय हवाएँ (जो तापान्तर को कम करने की क्षमता रखती है) नही पहुच पाती। मेघ रहित आसमान तथा निम्न आर्द्रता के कारण, शुष्क क्षेत्रो मे दैनिक तापमान परिसर भी अधिक है। इसका एक कारण यह भी है कि भूमि प्राय बजर होने से, दिन का तापमान वनस्पति युक्त भूमि के तापमान की अपेक्षा अधिक होता है। कोपेन ने तापमान के अनुसार शुष्क क्षेत्रो को उष्ण (*h*), शीत (*k*) और अतिशीत (*k'*) शुष्क जलवायुओ मे बाँटा है।

शुष्क क्षेत्र मुख्यत: दोनो गोलार्द्धों के उपउष्ण कटिबन्धी उच्च दाब पेटिकाओ के अन्तर्गत पाए जाते है। इसके उच्च अक्षांशो मे पश्चिमी अमेरिका तथा एशिया के आन्तरिक भू-क्षेत्र भी शुष्क या अर्द्ध शुष्क जलवायु रखते है। सहारा तथा आसपास के नखलिस्तान, अरब का रेगिस्तान, ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, उत्तरी पश्चिमी भारत, राजस्थान, पश्चिमी चीन, मंगोलिया, एशिया की सीमा के पास सोवियत रूस का दक्षिणी भाग तथा मेक्सको के भीतरी भाग, उत्तरी गोलार्द्ध के मुख्य शुष्क क्षेत्र है। दक्षिणी अमेरिका का पश्चिमी तट, 20^0 द. से नीचे का अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया का बहुत सा भाग शुष्क जलवायु रखते है।

उप उष्ण कटिबन्धीय शुष्क क्षेत्र प्राय· उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपीय वायुराशि के प्रभाव मे रहते है तथा कोपेन की सीमा के अनुसार BW*h* या BS*h* जलवायु मे आते है, जबकि उच्च अक्षांशो के शुष्क क्षेत्र BS*k*, BW*k*,BS*k'* तथा BW*k'* जलवायु रखते हैं। इनकी शुष्कता बडे महाद्वीपो के अत्यधिक भीतरी भागो मे इनकी स्थिति के कारण है, जहा तक महासागरीय वायु धाराएँ पहुचने से पहले ही अपनी सारी नमी खो देती है। पर्वत शृंखलाएँ इन क्षेत्रो की शुष्कता बढ़ाने मे काफी सहयोग देती है। B*k* जलवायु क्षेत्र सर्दियो मे ध्रुवीय वायु राशियो तथा गर्मियो मे उष्ण कटिबन्धी महाद्वीपीय वायुराशियो के प्रभाव मे रहते हैं; अत. इनमे तापमान का मौसमी चलन बहुत अधिक होता है। शुष्क जलवायु के कुछ उदाहरण सारणी (12.7) मे दिए गए है।

सारणी (12.7)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक	तापमान
	शुष्क (BS) जलवायु															
1.	जयपुर 27°N, 76°E	तापमान (°C)	16 1	18.3	23.9	29.4	33.3	33.9	30.0	28.9	28 9	26.7	21.1	17.2	25.6	17.8
		वर्षा (सेमी)	1.0	0 8	1.0	0.5	1.5	6 6	21.1	18.5	8.1	0.8	0.3	0.8	60.1	—
2.	तेहरान 36°N, 51°E	तापमान (°C)	1.1	5.6	8.9	16.1	21.7	26.7	29.4	28.3	25.0	18 9	10.6	5.6	16.7	28.3
		वर्षा (सेमी)	4.1	2.5	4.8	3.5	1.3	0.3	0.5	—	0.3	0.8	2.5	3.3	23.6	—
3.	किमवर्ले 28°S, 25°E	तापमान (°C)	24.4	23.3	21.1	17.2	12.8	9.4	9 4	12.2	16.1	19.4	21.7	23.9	17.6	15.0
		वर्षा (सेमी)	7.1	7.9	7.6	3.3	2.3	0.8	1.0	1.0	1 8	2.5	4.3	6.1	45.7	—

सारणी (12 7) Contd.

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक	तापमान परिसर
	(BW) जलवायु															
1.	काहिरा 30°N, 31°E	तापमान (°C)	12.8	13.9	17.2	21.1	24.4	26.7	27.8	27.8	25.6	23.3	18.3	14.4	21.1	15.0
		वर्षा (सेमी)	1.0	0.5	0.5	0.5	—	—	—	—	—	—	0.3	0.5	3.3	—
2.	बगदाद 33°N, 44°E	तापमान (°C)	9.4	12.2	16.1	21.7	27.2	32.2	35.0	34.4	31.1	26.7	17.2	11.7	22.8	25.6
		वर्षा (सेमी)	3.0	3.3	3.3	2.3	0.5	—	—	—	—	0.3	2.0	3.0	17.8	—
3.	करांची 25°N, 67°E	तापमान (°C)	18.3	20.0	23.9	27.2	29.4	30.6	28.9	27.8	27.8	26.7	23.3	19.4	25.6	12.3
		वर्षा (सेमी)	1.3	1.3	1.0	0.5	0.3	2.3	7.4	3.8	1.3	—	0.3	0.3	19.3	—

(ग) आर्द्र मध्यतापीय जलवायु (C)

मध्य अक्षाशीय प्रदेश, उष्ण कटिबन्धी तीव्र ऊष्मा तथा ध्रुवीय तुषार के बीच मध्य तापमान के निश्चित मौसमी परिवर्तन युक्त जलवायु क्षेत्र हैं। इस सक्रमण क्षेत्र मे मुख्यतः जलवायु प्रकार, C और D पाए जाते है। कुछ भाग B जलवायु के अन्तर्गत भी आते हैं। C जलवायु क्षेत्र अपेक्षाकृत निचले अक्षांशो मे, जहाँ सर्दियां मृदु (mild) होती है, पाया जाता है। महाद्वीपो के पश्चिमी तटीय भागों के पवनाभिमुखी क्षेत्रो मे, उच्च अक्षांशो मे भी C जलवायु मिलता है।

Cs जलवायु (शुष्क ग्रीष्म युक्त मध्य अक्षाशीय) तप्त ग्रीष्म, मृदु शीतकाल तथा सर्दियो मे अच्छी वर्षा के गुणो से विभूषित, भू-मध्य सागर के आसपास, मध्य और दक्षिण कैलीफोर्निया, दक्षिणी अफ्रीका तट तथा दक्षिणी आस्ट्रेलिया के कुछ भागो में पाया जाता है। यह प्राय महाद्वीपो के पश्चिमी तटो की ओर सीमित पाया जाता है। सर्दी के महीनो का तापमान 5^0C से 10^0C तथा ग्रीष्म महीनों का तापमान 21^0 से 26^0C के मध्य पाया जाता है। इस जलवायु क्षेत्र मे वर्षा साधारणत कम (38 से 63 सेमी वार्षिक) होती है, जो सर्दियो मे उच्चतम तथा गर्मियो मे बहुत कम या कभी-कभी शून्य पाई जाती है। सर्दियो मे अधिक वर्षा होने के कारण, वाष्पीकरण द्वारा आर्द्रता ह्रास बहुत कम हो पाता है। अतः *Cs* जलवायु को अर्द्ध शुष्क की अपेक्षा अल्पार्द्र (sub-humid) कहना अधिक उचित होगा।

Ca (*f* या *w*) आर्द्र उपोष्ण कटिबन्धी जलवायु है, जो मुख्यत. मध्य अक्षांशीय महाद्वीपो के पूर्वी भागो मे पाया जाता है। केवल यूरेशिया का एक छोटा भाग, जो *Ca* जलवायु युक्त है, शुष्क केन्द्रीय महाद्वीपीय भाग के पश्चिम मे स्थित है। इनमें *Cs* की अपेक्षा अधिक वर्षा पाई जाती है, जो या तो वर्ष भर समान रूप से आवटित होती है या ग्रीष्म महीनो मे सीमित हो जाती हैं। जलवायु अपेक्षाकृत निम्न अक्षाशो (25 से 35 अश) मे मिलते हैं। कुछ क्षेत्र, जैसे–उत्तरी भारत और चीन के कुछ भाग मानसून हवाओ से वर्षा प्राप्त करते है। यहाँ ग्रीष्म मे उष्ण और नम *m*T हवाएँ तथा शीतकाल मे शुष्क और ठडी महाद्वीपीय वायुराशिया प्रभावशील रहती हैं। यहा ग्रीष्म ऋतु मे औसत मासिक तापमान $25–26^0C$ के आसपास मिलता है किन्तु उत्तरी अमेरिका तथा एशिया के विशाल थल भाग अधिक तप्त पाए जाते हैं। आर्द्रता अधिक होने से इन क्षेत्रो मे गर्मियो की राते भी उमस भरी तथा मेघ युक्त होती है। फलतः तापमान का दैनिक चलन कम पाया जाता है। सर्दिया उपोष्ण कटिबन्धी अन्य जलवायु क्षेत्रो की अपेक्षा अधिक उष्ण होती है। तापमान औसत रूप से 5 से 13^0C के बीच रहता है।

वार्षिक वर्षा साधारणतः पर्याप्त होती है किन्तु इसका परिमाण स्थान के साथ-साथ बदलता जाता है, जो प्राय 75 से 170 सेमी तक पाई जाती हैं। इस जलवायु क्षेत्र की आन्तरिक सीमा पर जहाँ से स्टेपी जलवायु की सीमाएँ आरम्भ

होती है, वर्षा निम्नतम पाई जाती है। अधिकाश क्षेत्रो मे, मुख्यत उत्तरी भारत, दक्षिणी चीन तथा दक्षिणी पूर्वी आस्ट्रेलिया मे, जो ग्रीष्म मानसून द्वारा प्रभावित रहते है, गर्मियो मे बहुत अधिक वर्षा हो जाती है। अमरीकी तथा एशियाई आर्द्र जलवायु के भागो मे चक्रवातो से भी अच्छी वर्षा हो जाती है।

कुछ क्षेत्र सर्दियो मे भी यथेष्ट वर्षा प्राप्त कर लेते है। यह वर्षा प्राय. चक्रवातो, वाताग्र-विक्षोभो तथा पर्वतीय कारणो से जनित होती है। सर्दियो की वर्षा बहुत धीमी गति से पाई जाती है। उदाहरणार्थ शघाई मे जनवरी में 5 सेमी की वर्षा 12 वर्षा युक्त दिनो मे हो पाती है, जबकि अगस्त की 15 सेमी की वर्षा केवल 11 दिनो में सम्पन्न हो जाती है। 'C' जलवायु युक्त कुछ स्थानो के आकडे सारणी (12.8) मे अंकित है।

(घ) अल्पतापीय आर्द्र जलवायु (D)

यह 'C' जलवायु से तापमान की न्यूनता के कारण अलग किया गया है, जिसमे प्रखर ठंड और तुषारयुक्त लम्बी सर्दिया, सक्षिप्त ग्रीष्म तथा वसन्त और पतझड का सक्रमण काल मुख्य ऋतुएँ है। वार्षिक तापमान परिसर की अधिकता भी 'D' जलवायु का एक मुख्य लक्षण है। प्रखर सर्दियो का कारण, इन जलवायु क्षेत्रो की स्थिति उच्च अक्षांशो तथा आन्तरिक भू-भागो मे अनुवर्ती तरफ है। यह जलवायु मुख्यत. महाद्वीपीय विशेषताओ से युक्त पाया जाता है। इसी कारण यह क्षेत्र अधिकतर उत्तरी गोलार्द्ध के यूरेशिया और उत्तरी अमेरिका के 35 से 40 अंश उत्तरी अक्षांशो के मध्य सीमित है। अधिक उत्तर मे तथा ऊँचाइयो पर स्थित क्षेत्र पर्याप्त समय तक तुषार से ढके रहते है। तुषार का अलबिदो बहुत अधिक होने के कारण, अधिकाश सौर उष्मा बिना शोषित हुए वापस परिवर्तित हो जाती है। अत इन स्थानो पर सर्दियो का तापमान और अधिक घट जाता है।

ग्रीष्म ऋतु वर्षा का मुख्य काल है, जबकि कुछ क्षेत्र सर्दियो मे भी अवक्षेपण प्राप्त कर लेते है। विभिन्न D जलवायु क्षेत्रो मे वर्षा का आवटन निम्नांकित बातो पर निर्भर करता है :—

(1) कम तापमान पर वायुमण्डल द्वारा अवक्षेपीय वाष्प ग्रहण करने की क्षमता कम हो जाती है।

(2) सर्दियो मे महाद्वीपो पर प्रतिचक्रवात उत्पन्न हो जाते है, जिनसे सम्बद्ध, अवतलन प्रवाह वर्षा के लिए प्रतिकूल परिस्थिति है। ये प्रतिचक्रवात वाताग्र विक्षोभो को भी विकर्षित करने की प्रवृत्ति रखते है।

(3) गर्मियो में इन क्षेत्रो पर स्थित आर्द्र वायुराशियो मे अस्थायित्व उत्पन्न होता है, जिससे सवाहनिक मेघ तथा वर्षा उत्पन्न हो सकती है।

(4) गर्मियो मे पर्याप्त उष्मन के फलस्वरूप महाद्वीपीय भागो पर निम्नदाब बन जाते है, जिनके प्रवाह मे महासागरीय मानसून धाराएँ चलने लगती है।

सारणी (12.8)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज	फ	मा	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि	अ	न.	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
	Cs जलवायु															
1.	रोम 42°N, 12°E	तापमान (°C)	7 2	8 3	10.6	13 9	17 8	21.7	24 4	24.4	21 1	16.7	11.7	7.8	15.6	17 2
		वर्षा (सेमी)	8 1	6 9	7 4	6 6	5.6	4.1	1.8	2.5	6.3	12.7	11.2	9 9	83.1	—
2	केपटाउन 34°S, 18°E	तापमान (°C)	21.1	21.1	20.0	17.2	15.0	13.3	12.8	13 3	14.4	16 1	17.8	20 0	16.7	8 3
		वर्षा (सेमी)	1.8	1.5	2.3	4.8	9 7	11.4	9 4	8 6	5.8	4.1	2.8	2.0	64.3	—
	महासागरीय Cb और Cc जलवायु															
1.	आकलैंड, न्यूजीलैंड 37°S, 145°E	तापमान (°C)	19.4	19.4	18 9	16.1	13 9	12.2	11.1	11 1	12 8	13.9	15.6	17.8	15 0	8.3
		वर्षा (सेमी)	6 6	7.6	7 9	8.4	11.2	12.2	12.7	10.7	9 1	9.1	8.4	7.4	111.3	—
2.	डच हारबर 54°N, 167°W	तापमान (°C)	0·0	0.0	0.6	1.7	5.0	7.8	10 6	10 6	8.3	5 6	1.7	0.0	4.4	10 6
		वर्षा (सेमी)	13.7	18.0	14.2	8 6	12 7	6.9	5 8	7.9	14.7	21 3	17.3	18 3	159.4	—

सारणी (12.8) Contd

	Ca जलवायु	/														
1.	नागासाकी 32°N, 130°E	तापमान (°C)	5 6	6.1	8.9	14.4	17.8	21 7	25.6	26.7	23.3	17.8	12 8	7.8	15.6	2 11
		वर्षा (सेमी)	7 9	8.9	13 2	20.6	18 8	33.5	23.6	18.5	21.8	11.7	8.4	8.4	195.3	—
2.	वाशिंगटन 39°N, 77°W	तापमान (°C)	1.1	1.7	6 1	12 2	17 8	22 2	25.0	23 3	20.0	13.9	7.8	2.2	12.8	23.9
		वर्षा (सेमी)	8 1	7 6	8 9	8 4	9 1	9.9	11.2	10 2	7 9	7.9	6 3	7.9	103·4	—
3.	हांगकांग 22°N, 114°E	तापमान (°C)	15.6	15 0	17.2	21.1	25.0	27 2	27.8	27.8	27.2	24 4	20 6	17.2	22.2	12.8
		वर्षा (सेमी)	3.3	4 6	6 9	13 5	30 5	40 1	35.6	37.1	24 6	12 9	4.3	2 8	216 1	—
4.	इलाहाबाद 25°N, 82°E)	तापमान (°C)	16.1	18.9	25.0	30 6	33.9	33 9	30.0	28 9	28 9	26.1	20.6	16.7	25 8	17.8
		वषा (सेमी)	1.8	1 3	1·0	0 3	0 8	11 9	30.5	27.9	16 0	5 8	0.8	0.5	98 5	—
5.	वाराणसी 25°N, 83°E)	तापमान (°C)	15.7	18 4	25 1	30.7	32 9	31 8	29,0	28.4	8.4	25 7	20.1	15.7	25.1	17.4
		वर्षा (सेमी)	1 8	1.5	1 0	0.5	1 5	12 2	30.7	29 5	18.0	5.3	0 5	0.5	103.1	

Da, Db और Dc इस समूह के तीन मुख्य प्रकार हैं, जो क्रमश उष्ण ग्रीष्म ऋतु शीतल ग्रीष्म ऋतु तथा उप आर्कटिक जलवायुओं को व्यक्त करती है। इनकी स्थितियाँ तथा प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित हैं :—

Da तथा Db—ये दोनों महाद्वीपीय जलवायु हैं, जो उत्तरी अमेरिका, पूर्वी एशिया तथा यूरोप के 35 से 40 अंश उत्तरी अक्षांशों के बीच पाए जाते हैं। इनसे ठीक नीचे यूरोप में Cs तथा अन्य स्थानों पर Ca जलवायु मिलता है। अमेरिकन और एशियाई Da जलवायु का ग्रीष्मकाल उपोष्ण कटिबन्धी या कभी-कभी उष्ण कटिबन्धी तापमान के समान प्रवृत्ति रखता है। जैसे, जुलाई मे सेंट लुइस तथा मंचूरिया के तापमान क्रमश 26 तथा 25°C है। (यूरोपीय क्षेत्रो के Da का ग्रीष्म काल अपेक्षाकृत ठण्डा होता है (जुलाई–मिलान 24°C तथा बुखारेस्ट (रूमानिया)-23°C) अधिक गर्म ग्रीष्म, ठण्डा शीतकाल; अतः उच्च वार्षिक तापमान परिसर, ग्रीष्म मे पर्याप्त वर्षा, जो आन्तरिक प्रदेशो तथा उच्च अक्षाशो की ओर घटती जाती है, ग्रीष्म काल के आरम्भ में अधिकतम वर्षा तथा कही-कहीं वाताग्र विक्षोभो द्वारा जनित शीतकालीन वर्षा या तुषार पात इन जलवायु प्रकारो की मुख्य विशेषताएँ है।

Dc तथा Dd—50 अंश से उच्च अक्षाशो मे चरम महाद्वीपीय क्षेत्रो मे ये जलवायु मिलते है। इन क्षेत्रो का ऊपरी सिरा टुन्ड्रा जलवायु क्षेत्र से मिलता है। यूरेशिया और साइबेरिया क्षेत्र मे कोनी फैरस (Coniferous) जगलो से युक्त इस जलवायु को टैगा के नाम से भी जाना जाता है। तीव्र ठण्ड वाली लम्बी सर्दियाँ, बहुत संक्षिप्त ग्रीष्म, वसन्त और पतझड़ और गर्मियो मे लम्बी अवधि का दिन (55 अंश अक्षाश पर लगभग 17 3 घण्टे) इस जलवायु की सामान्य विशेषताएँ है। इन्ही उप आर्कटिक क्षेत्रो मे, मैदानो का तापमान ससार भर मे निम्नतम पाया जाता है। वर्खोयान्स्क (साइबेरिया) Ddw जलवायु युक्त वह क्षेत्र है, जहाँ जनवरी का औसत तापमान–50 7°C तथा जुलाई का 14.5°C है। ग्रीष्म और शीतकाल के तापमानो मे इतना अधिक विपर्यास और किसी जलवायु मे नही पाया जाता है। उप आर्कटिक जलवायु मे वर्षा साधारणतः बहुत कम होती है। टैगा क्षेत्रो मे वार्षिक अवक्षेपण 40 सेमी तथा उपआर्कटिक कनाडा मे 50 सेमी से कम पाया जाता है। इस कम अवक्षेपण का कारण है, वायु मण्डल की कम वाष्प ग्राहिता तथा प्रतिचक्रवाती प्रवाह। सर्दियो मे वाताग्र द्वारा तुषारपात तथा गर्मियो मे महासागरीय हवाओं द्वारा वर्षा जनित होती है।

D जलवायु प्रकारो के कुछ उदाहरण सारणी (12.9) मे दिए गए है।

(च) ध्रुवीय जलवायु (E)

ग्रीष्मकाल की अनुपस्थिति तथा लम्बी अवधि के दिन और रात इन जलवायु क्षेत्रो की मुख्य विशेषताए हैं। ध्रुवों पर लगभग 6 महीने गर्मियो में सूर्य चमकता रहता है, जबकि सर्दियो का लगभग इतना ही समय अन्धेरे मे डूबा रहता है। E जलवायु की निम्न अक्षाशीय सीमा आर्कटिक तथा अन्टार्कटिक वृत्त (66½ अंश

सारणी (12.9)

क्रमाक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज.	फ.	मा.	ग्र.	म.	जू.	जु.	ग्र.	सि.	ग्र	न.	दि.	वार्षिक	तापमान परिसर
	(Da) जलवायु															
1.	न्यूयार्क 40°N, 74°W	तापमान (°C)	0.6	0.6	3.9	9 4	15.6	20.6	23 4	22 2	19.4	13.3	9.4	1.1		23.9
		वर्षा (सेमी)	8 4	8.4	8.4	8 4	8,6	8 6	10.4	10.9	8.6	8.6	8 6	8 4		—
2.	पेकिंग 40°N, 116°E	तापमान (°C)	4.9	2.4	3.8	13.0	19.8	24.2	25.3	24.5	19.3	12.5	3.5	2.8		30.2
		वर्षा (सेमी)	0.3	0.5	0.5	1.5	3.5	7 6	23 9	16.0	6.6	1.5	0 8	0 3		—
3.	ग्रोडसा, रूस 46°N, 30°E	तापमान (°C)	–3.9	–2.2	1.7	8 9	15.0	20.0	22.8	21 7	16.7	11.1	5 0	–0 6	9.4	26.7
		वर्षा (सेमी)	2 3	1.8	2.8	2.8	3.3	5.8	5.3	3.0	3 6	2.8	4 1	3.3	40.6	—
4.	मिलान, इटली 45°N, 9°E	तापमान (°C)	0.0	3.3	7.8	12.8	17 2	21.1	23 9	22.8	18.9	13.3	6.7	2.2	12 8	23.9
		वर्षा (सेमी)	6.1	5.8	6.9	8.6	10.4	8 4	7 1	8.1	8.9	11.9	10.9	7.6	101.1	—

सारणी (12.9) Contd.

	(Da) जलवायु														
1.	बर्लिन 52°N, 13°E	तापमान (°C)	−1.1	0 6	3.3	8 9	13.9	17.2	18.9	18.3	14.4	9.4	3.9	0.6	8.9	20 0
		वर्षा (सेमी)	4 3	3.6	4 1	3 8	4.8	5.8	7 6	5.8	4.3	4.3	4 3	4.8	57.7	—
2.	वारसा, पोलैंड 52°N, 21°E	तापमान (°C)	−3.3	−1 7	1.7	7 8	13 9	17.2	18 9	17.8	13.3	7 8	2.2	−1 1	7.8	22.2
		वर्षा (सेमी)	3.0	2 8	3.3	3.8	4 8	6 6	7.6	7 4	4.8	4.1	3.8	3 8	56 1	—
	Dc और Dd जलवायु														
3.	ट्राइहाइम 63°N, 10°E	तापमान (°C)	−3.3	−3.3	−0.6	3.9	7.8	12.2	13.9	13.3	9.4	5.0	1.1	−2.2	5.0	17.2
		वर्षा (सेमी)	10 9	7.6	8.6	6.3	5.6	4.8	7.1	8.6	11.2	12 7	9 9	8.6	101.9	—
4.	आर्केन्जिल 65°N, 41°E	तापमान (°C)	-13.3	-12 8	−7.8	−1.1	5 0	11.7	15.6	13 3	7.8	1 1	−5.6	-11 1	0 6	28.9
		वर्षा (सेमी)	2.3	1.8	2.0	1.8	3.0	4 6	6.1	6 1	5.6	4.1	3 0	2.3	42.7	--

समान्तर) पर मिलती है। E जलवायु क्षेत्रो मे, जहाँ लगातार दिन और लगातार रात्रि होती है, जलवायु तत्वो का दैनिक चलन गौण हो जाता है। वार्षिक तापमान निम्नतम उत्तरी ध्रुव पर वसन्त विषुव के थोडा पहले पाया जाता है, क्योंकि उससे पहले 6 मास तक कोई सौर उष्मा प्राप्त नही होती जबकि भूविकिरण द्वारा ह्रास लगातार होता रहता है।

बहुत उच्च अक्षाशो के अतिरिक्त, निम्नतर अक्षाशो की पर्याप्त ऊँचाइयों पर स्थित कुछेक स्थानो पर भी E जलवायु पाया जाता है। E जलवायु क्षेत्र ध्रुवो से लेकर उष्णतम महीने के 10°C समताप रेखा के मध्य विस्तृत है। जुलाई मे 10°C की समताप रेखा आर्कटिक वृत्त के समान्तर एशिया, अलास्का और यूरोप से गुजरती है किन्तु पूर्वी-उत्तरी अमेरिका तथा ग्रीन लैण्ड से इसकी स्थिति और दक्षिणी मे पाई जाती है। यह सभवत· ठण्डे लब्रोडोर महासागरीय धारा और ग्रीन लैण्ड आइसकेप के प्रभाव के कारण होता है।

ध्रुवीय जलवायु मे पृथ्वी का सबसे कम निम्नतम तापमान और ग्रीष्मावधि पाई जाती है। गर्मियो मे सूर्य प्रकाश की अवधि अधिक होने पर भी किरणो का बहुत कम उन्नतांश होने के कारण, तापमान बढ़ने नही पाता। इसके अतिरिक्त हिमाच्छादन के कारण सौर-विकिरण का अधिकाश भाग परावर्तित हो जाता है। अत गीष्म ऋतु मे भी ठण्ड बहुत अधिक होती है किन्तु सर्दियाँ इतनी प्रखर पाई जाती हैं कि वार्षिक तापमान परिसर पर्याप्त हो जाता है।

वर्षा बहुत कम (25 सेमी से कम) पाई जाती है किन्तु वाष्पीकरण की कमी के कारण यही वर्षा अपवाह उत्पन्न कर देती है। इस वर्षा का अधिकाश भाग गर्मियो मे ही होता है, जब वायुमण्डल की वाष्प ग्राह्यता कुछ बढ़ी होती है। उष्णतम मास के 0°C समताप की सीमा रेखा द्वारा ध्रुवीय जलवायु के दो भाग किए गए हैं टुन्ड्रा (ET) तथा स्थायी हिम या आइसकेप (EF)। EF जलवायु में जहाँ तापमान सदा हिमाक से कम होता है, किसी भी प्रकार की वनस्पतियों की सम्भावना नही। यहाँ स्थायी तौर पर गहरा हिमाच्छदन पाया जाता है। टुन्ड्रा जलवायु मे कुछ छोटी वनस्पतियाँ पाई जाती हैं। इन क्षेत्रो की भूमि वर्ष के कुछ महीने मे हिमाच्छादन से मुक्त रहती है।

EF जलवायु, ध्रुवो के पास स्थित ग्रीन लैंड, तथा एन्टार्कटिक के कुछ भागो मे पाया जाता है, जहा सदा ध्रुवीय प्रतिचक्रवाती प्रवाह से सम्बद्ध अवतलन धाराये प्रमुख रहती हैं। सारणी (12.10) मे ध्रुवीय जलवायु के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं।

(छ) पर्वतीय जलवायु

वायुदाब और तापमान का तीव्र ह्रास, तीव्रतर ऊर्ध्व तापमान प्रवणता, मुख्यत: निम्न अक्षांशो में अधिक अवक्षेपण, जलवायु पर ऊँचाई का सामान्य प्रभाव

सारणी (12.10)

क्रमाक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज.	फ	मा.	अ	म.	जू.	जु.	अ	सि	अ	न	दि.	वार्षिक	तापमान परिसर
	टुन्ड्रा (ET) जलवायु															
1.	बैरोप्वाइट 71°N, 150°W	तापमान (°C)	-21.3	-25 0	-25.6	-18.9	-61	1.7	4.4	3.9	-0.6	-8.9	-15.0	-26.1	-12.2	43.3
		वर्षा (सेमी)	0.8	0.5	0.5	0.8	0.8	0.8	2.8	2.0	1.3	2.0	1.0	1.0	14.2	—
2.	स्पिट्सबर्गेन 78°N, 14°E	तापमान (°C)	-15.6	-18.9	-18.9	-5.0	-5 0	-1.7	-5.6	-4.4	0.0	-5.6	-11.6	-14.4	-7.8	24.5
		वर्षा (सेमी)	3.6	3.3	2.8	2.3	1.3	1.0	1.5	2.3	2.5	3.0	-2.5	3.8	30 0	—
3.	तेकहार्बर 63°N, 70°W	तापमान (°C)	-25.7	-24.9	-18.9	-11 1	-1.9	3.7	7.6	6.8	2.4	-3.2	-10.9	-19.9		33.3
		वर्षा (सेमी)	2.8	2.3	2.0	3.8	3.8	2,8	6.6	5.1	3.0	3 8	5.6	-3.8		—
	EF जलवायु															
1.	लिटिल अमेरिका, एन्टार्कटिका 79°S, 164°W	तापमान (°C)	-5.6	-12.8	-21.7	-31.1	-32.4	-33.9	-36.7	-36.7	-33.9	-25.6	-13.0	-4.4	-25.2	32.3
		वर्षा (सेमी)	—	—	—	—	--	—	—	—	—	—	—	—	—	—

है। उष्ण कटिवन्धो मे तापमान की कमी के कारण, उच्च स्थान आरामदायक जलवायु प्रस्तुत करते है किन्तु इन्ही कारणो से मध्य अक्षांशो मे पर्वतो का जलवायु मैदानो की अपेक्षा कष्ट कर पाया जाता है।

पहाड़ियां वायुराशियो के मार्ग मे प्रायः रुकावट वन जाती है। अतः अनुवर्ती भागो के लिए रोध (barrier) का कार्य करती हैं। सर्दियों मे हिमालय और तिव्वत के पठार मध्य तथा उत्तरी एशिया मे आती अतिशीत हवाओ को भारत पर आने से रोकते है। यह बात इस उदाहरण मे स्पष्ट है कि जनवरी मे कलकत्ता और शघाई, जो लगभग समान अक्षांश पर स्थित हैं, के औसत तापमान क्रमशः 18 और 3°C है। ग्रीष्म मानसून काल मे भी ये पर्वत भारतीय मानसून धाराओ को रोक कर उन्हे उत्तर पश्चिम या पश्चिम की ओर परावर्तित कर देते हैं, अन्यथा ये धाराए चीन की ओर सीधी चली जाती और लगभग पूरा उत्तरी तथा मध्य भारत शुष्क क्षेत्र वन जाता।

पर्वतीय जलवायु का तापमान चलन प्राय निम्नांकित विशेषताओ से युक्त पाया जाता है.— (1) औसत तापमान का ऊँचाई के साथ उत्तरोत्तर ह्रास (2) ढाल तथा शिखर पर कम और घाटियो मे अपेक्षाकृत अधिक वार्षिक तापमान का परिसर (3) उच्चतम तथा निम्नतम मासिक तापमान का अपेक्षाकृत देर से स्थापित होना (4) पतझड ऋतु का वसन्त ऋतु से अधिक उष्ण होना।

चू कि वायुमण्डल की अधिकाश नमी, निम्नतम तहो मे सीमित रहती है, अतः पर्वतो की चोटिया प्राय शुष्क होती है। यहा वाष्पीकरण भी तीव्र होता है, जिससे त्वचा सूख जाती है और प्यास अधिक लगती है। आरोही तथा अवरोही प्रवाह के साथ नमी का स्थानान्तरण क्रमश निम्न तहो से शिखर तथा शिखर से निम्नतहो की ओर होता रहता है। फलत. दिन मे मेघाच्छन्नता तथा रात्रि मे घाटी-कुहरा की सभावनायें होती है। अनुकूल परिस्थितियो मे दोपहर के वाद गर्जन मेघ भी जनित हो सकते है।

पवनाभिमुखी भाग के अधिक वर्षा प्राप्त करने के उदाहरण के रूप मे, राकी और ऐंडीज का पश्चिमी भाग, भारतीय प्रायद्वीप मे पश्चिमी घाट का पश्चिमी तट तथा हिमालय-शृंखलाओं का दक्षिणी ढाल मुख्य है, जो पवनाभिमुखी भाग मे होने के कारण, अनुवर्ती भाग की उपेक्षा वहुत अधिक वर्षा प्राप्त करते है। जहां प्रचलित हवाएं पूर्वी होती है, वहां पर्वत शृंखलाओ के पूर्वी भाग पर अधिक वर्षा होती है। उदाहरण के लिए, दक्षिणी उष्ण कटिवन्ध मे मेडागास्कर का पूर्वी तट उद्धृत किया जा सकता है। अनुवर्ती भागो मे कम वर्षा के कारण, कही-कही रेगिस्तान उत्पन्न हो जाते है। दक्षिणी अमेरिका के पूर्वी तट पर स्थित पेटोगोनिया का रेगिस्तान इसका एक उदाहरण है।

भारत मे कुछ उच्च स्थानो पर स्थित स्टेशनो की ऊंचाई तथा वार्षिक वर्षा निम्नांकित सारणी मे दी गई है —

स्टेशन	ऊँचाई (मीटर)	वार्षिक वर्षा (सेमी)
मालदा	31	141
गौहाटी	54	182
तेजपुर	79	189
शिवसागर	97	250
डिब्रूगढ	106	276
कलिगपोग	1209	226
चेरापूंजी	1313	1142
शिलाग	1500	242
श्री नगर	1586	564
दार्जिलिंग	2127	276
उटकमड	2249	130
कोडाईकनाल	2343	310
कारगिल	2682	31

ऊचाइयो पर स्थित कुछ स्टेशनो के जलवायुविक आंकडे सारणी (12.1.) मे दिए गए है ।

सारणी (12.11)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति	ऊंचाई (मीटर)		ज	फ.	मा	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक	तापमान परिसर
1.	दार्जिलिंग 27°N, 88°E	2248	तापमान (°C)	4 6	5 7	10.1	13.4	14.6	15.7	16.8	16.2	15 1	12 9	9.0	5.7	11.8	12.4
			वर्षा (सेमी)	1 5	2.8	4 6	9 7	22 1	63.3	82 0	66.3	46 7	11.4	2 0	0 5	311.7	—
2.	कोदईकनाल 10°N, 77°E	2343	तापमान (°C)	12.9	13.4	15 1	16.2	16.8	15.1	14.6	14.6	14.6	14.0	12.9	12.9	14.6	4.0
			वर्षा (सेमी)	7.4	3.6	5 1	10.9	15 2	10 4	12 7	17.8	18 5	24 6	20 8	11.2	158.2	—
3.	अदिस अबाबा 9°N, 39°E	2438	तापमान (°C)	15.6	16.7	18 3	17.8	18.9	17.8	16.7	16.1	16.1	16 7	15.0	15.0	16.7	3 9
			वर्षा (सेमी)	1.5	4 8	7 1	8 6	7 6	14.5	27.9	30 7	19 3	2.0	1.3	0.5	126.0	—
4.	मेक्सिको सिटी 19°N, 39°E	2258	तापमान (°C)	12 2	13 9	16.1	17.8	18.3	17.8	16.7	16.7	16 1	15 0	13.3	12.2	15 6	6.1
			वर्षा (सेमी)	0 5	0 5	1 3	2.0	4 8	9.9	11.4	11.7	9 9	4 1	1.3	0.5	57 9	—
5.	प्यूवेलो, मेक्सिको	2127	तापमान (°C)	12 2	13.9	16 1	17.8	18.3	17.8	17 2	17.2	16.7	16 1	14.4	12 2	16 1	6.1
			वर्षा (सेमी)	1.0	0.8	1 0	2.8	8.9	17 3	14.7	15.2	14.0	6 3	2.3	1 0	85.3	—

6.	सेंटिस, स्विट्जरलैंड 47°N, 9°E	2509	तापमान (°C)	–8.9	–8.9	–8.3	–4.4	–0 6	2.8	5.0	5.0	2.8	–1.1	–5.0	–8.3	–2.8	13.9
			वर्षा (सेमी)	14.5	17 0	17.0	20 6	19.8	28.4	31.2	27 4	21 1	18 3	12.2	15.5	243.1	—
7.	लेह, काश्मीर 34°N, 47°E	3505	तापमान (°C)	–8.3	–7.2	–0.6	6 1	10.0	14.4	17 2	16 1	12 2	6.1	0 0	–5.6	5.0	25 5
			वर्षा (सेमी)	1.0	0.8	0.8	1.5	0.5	0.5	1 3	1 3	0 8	0 5	—	0.5	8.1	—

13

जलवायुविक तत्वों का भौगोलिक आवंटन

(Geographical Distribution of Climatic Elements)

13 10 वायुदाब का भौगोलिक आवंटन

गर्म वायु उसी आयतन की ठंडी वायु की अपेक्षा हलकी होगी, अतः स्थान-स्थान पर तापमान परिवर्तन के कारण वायुदाब भी बदलता रहता है। मौसम परिस्थितियों के विश्लेषण मे वायुदाबो का थोडा अन्तर भी महत्वपूर्ण है। दाबान्तर उत्पन्न करने वाले कारक लगभग वही है, जो तापमान मे विभिन्नता पैदा करते है। इनमे अक्षाश तथा जल-थल का प्रभाव मुख्य है।

इस विचार के आधार पर सामान्यत विपुवत् रेखीय उष्ण क्षेत्र मे निम्नदाब व ध्रुवीय क्षेत्रो मे उच्चदाब होना चाहिए तथा तापमान की भाति अक्षाणो; के प्रति-दाव को भी नियमित चलन रखना चाहिए, किन्तु ऐसा नही है। भूतलीय दाब का प्रतिरूप (pattern) अत्यधिक क्लिष्ट है। पृथ्वी के घूर्णन के अतिरिक्त वायुराशियो की ऊर्ध्वाधर गतिया भी दाब को प्रभावित करती है। किसी स्थान से ऊपर उठती हवा, वहा अपसरण पैदा करके निम्नदाब बना देती है, तो अन्य स्थान पर वही वायु अवनलित होकर, अभिसरण के कारण वायुदाब बढा देती है। उदाहरण के लिए,
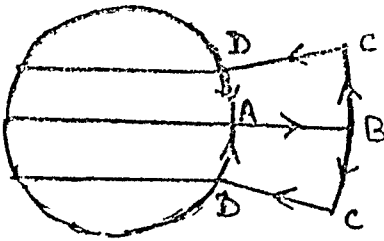
चित्र (13.1)

विपुवत् रेखा (A) पर गर्म होकर जो वायु राशि उठती है, वह A पर अपसरण तथा किसी ऊँचाई B पर अभिसरण उत्पन्न करती है। 'B' से उसका क्षैतिज प्रवाह उच्च अक्षाशो की ओर होता है, जहाँ C से पुन अवतलित होने के कारण वह मध्य अक्षाशों (30° उ व द. के आसपास) D पर उच्च-दाब बना देगी।

13.11 मोटे तौर पर पृथ्वी के औसत दाब प्रतिरूप मे निम्नाकित दाब पेटिकाएँ स्थायिवत् रूप मे पाई जाती है :—

(1) विषुवत् रेखीय निम्नदाब क्षेत्र या डोलड्रोम।

(2) उप उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब पेटिकाएं, जो 25 से 35° अक्षाशो के बीच दोनो गोलार्द्धो मे स्थित है।

(3) उप ध्रुवीय निम्नदाव क्षेत्र, जो 60 से 70^0 अक्षांशो के बीच दोनो गोलार्द्धों मे स्थित है ।

(4) ध्रुवीय उच्चदाव क्षेत्र, जो उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्धों के ध्रुवीय अक्षाशो मे स्थित है । ये क्रमश. आर्कटिक और एन्टार्कटिक उच्चदाव भी कहलाते हैं ।

हान और कोनराद (1930) के अनुसार, उत्तरी गोलार्द्ध मे मुख्य अक्षाशो पर समुद्रतलीय वायुदाव का वार्षिक औसत इस प्रकार है —

अक्षांश (उत्तरी)	—	0	30	60	75
दाव (मिलीवार)	—	1010	1016	1010	1014

13.12 इस सामान्य प्रतिरूप मे जल और थल के अनियमित वितरण के कारण अनेक परिवर्तन (modification) होते है । ये परिवर्तन मौसम विभिन्नता के कारण और भी महत्वपूर्ण हो जाते है । सूर्य की उष्मा थल को जल की अपेक्षा गर्मियो मे अधिक गर्म और सर्दियो को अधिक ठण्डा कर देती है । अत: सर्दियो मे थल के भाग उच्चदाव क्षेत्र वन जाते हैं जवकि जल के भाग अपेक्षाकृत गर्म होने के कारण तुलना मे निम्नदाव के क्षेत्र होते है । गर्मियो मे अधिक गर्म होने से, थल के भागो मे निम्न-दाव स्थापित हो जाता है और जल में अपेक्षाकृत उच्चदाव ।

13 13 मानचित्र **13 2** तथा **13 3** मे जनवरी और जुलाई के माध्य समुद्र तलो पर औसत समदाव रेखाओ का भूमण्डलीय आवंटन प्रदर्शित किया गया है । ये महीने शीत तथा ग्रीष्मकाल के प्रतिनिधि के रूप मे लिए गए है । इन मानचित्रो के विश्लेषण से, वायुदाव के भौगोलिक वटन की रूपरेखा विस्तार पूर्वक समझी जा सकती है । कुछ मुख्य वाते नीचे दी गई है ।

13.14 जनवरी की समदाव रेखाएं

(1) सूर्य के दक्षिणी गोलार्द्ध मे स्थानान्तरण के साथ, विषुवत् रेखीय निम्न-दाव क्षेत्र भी दक्षिण की ओर खिसक जाता है । इसकी औसत स्थिति महासागरो मे 5–10^0 द. तथा महाद्वीपो मे 10 – 20° द. के बीच होती है । उत्तरी पश्चिमी आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका तथा मध्य दक्षिणी अमेरिका पर क्रमश: 1005. 1006 और 1008 मिलीवार के निम्नदाव क्षेत्र उपस्थित रहते है ।

(2) दक्षिणी गोलार्द्ध मे उप-उष्णकटिबन्धी उच्चदाव क्षेत्र स्पष्ट रूप से 30 से 35^0 अक्षाँश वृत्तों के बीच स्थित है । महासागरो पर 1020 मिलीवार की कोशिकाएं स्थापित है । यह उच्चदाव क्षेत्र महाद्वीपो के निम्न दावों द्वारा एक-दो स्थान पर खण्डित पाया जाता है ।

(3) दक्षिणी गोलार्द्ध का उप ध्रुवीय निम्नदाव 60 अ श से नीचे आ जाता है तथा विना खण्डित हुए सर्वत्र व्याप्त रहता है । इसका कारण यह है कि इस क्षेत्र के पूरे वृत्त पर केवल महासागर वर्तमान है ।

औसत माध्य समुद्रतलीय दाब का आवंटन – जनवरी
चित्र (13.2)

औसत माध्य समुद्र तलीय दाब का आवंटन — जुलाई
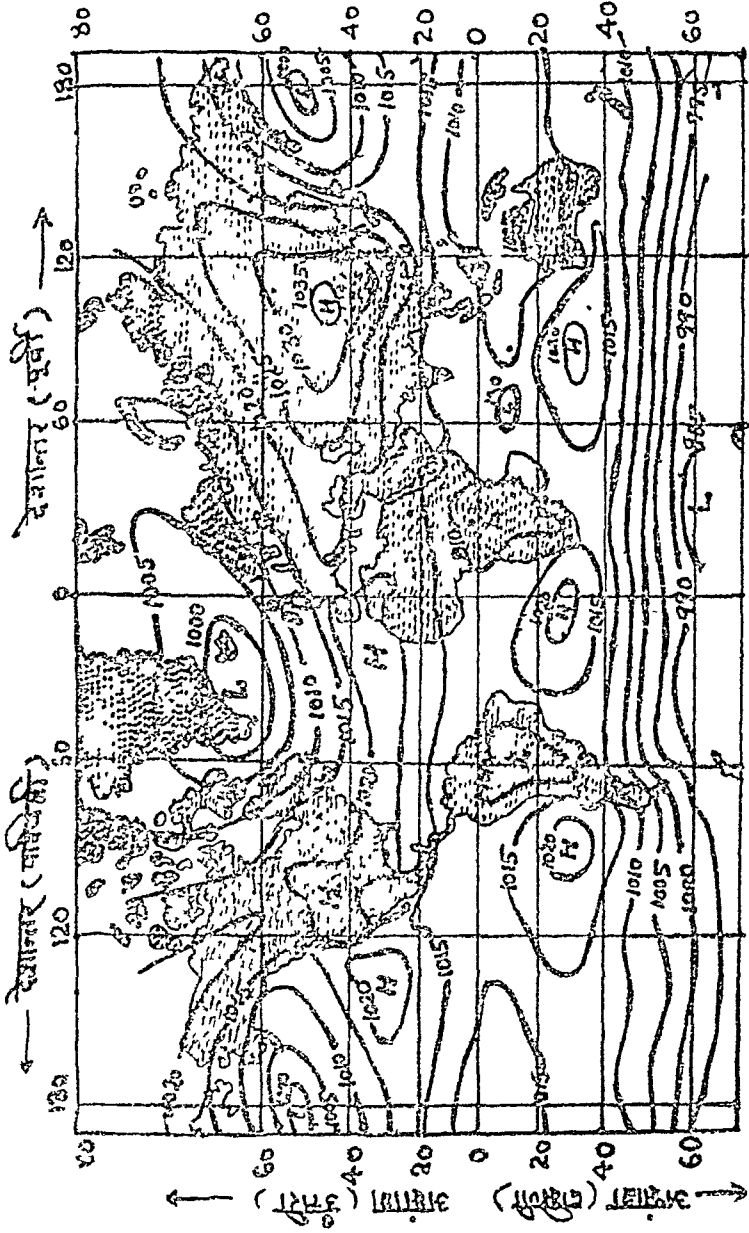
चित्र (13.3)
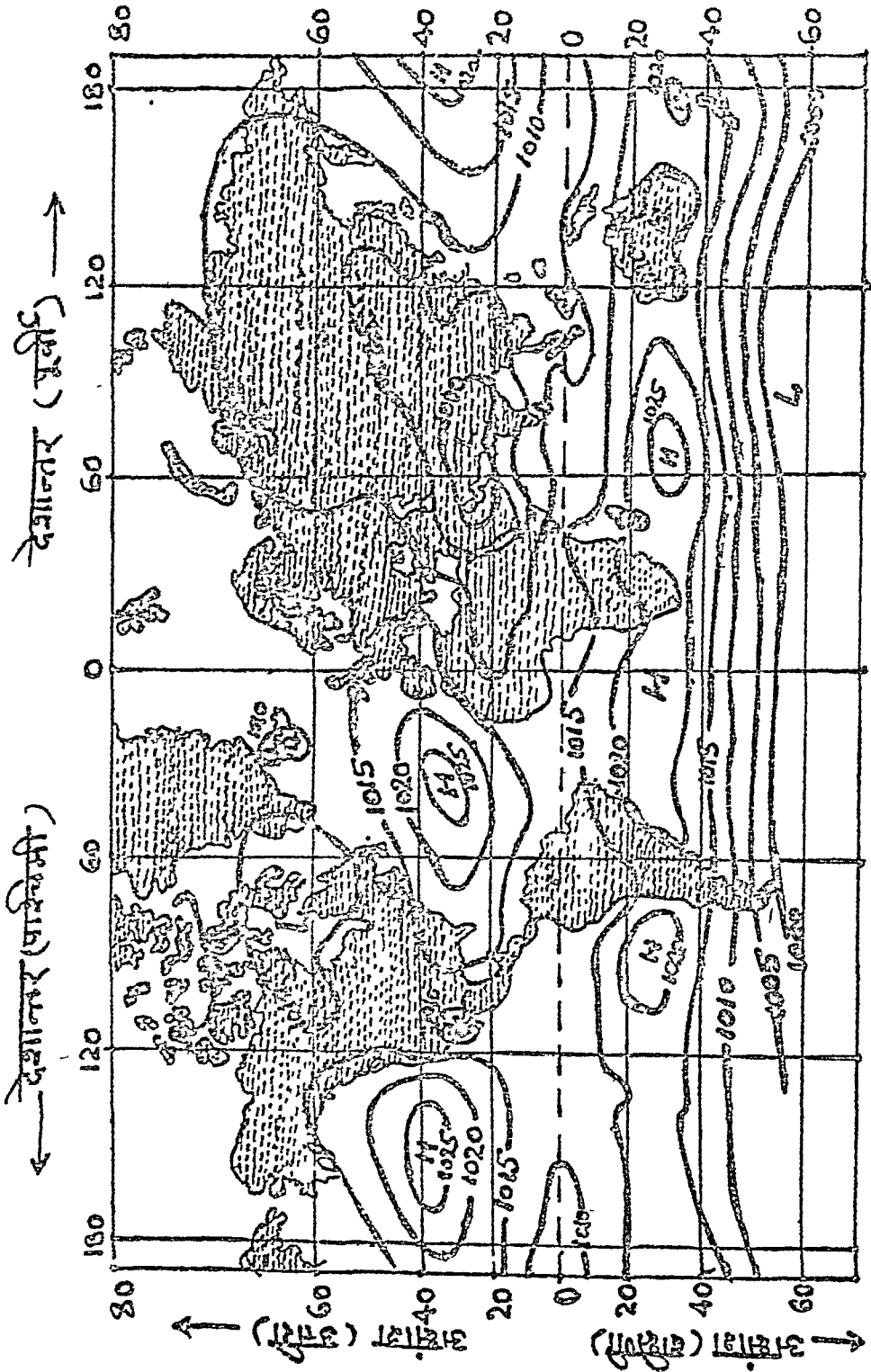
(4) उत्तरी गोलार्द्ध का उप उष्ण कटिवन्धी उच्चदाव मुख्यतः मध्य पूर्वी एशिया पर सर्वाधिक तीव्रता के साथ विस्तृत रहता है, जहाँ 45 अंश अक्षांश पर 1035 मिलीबार की उच्चदाव कोशिका वर्तमान पायी जाती है। अपेक्षाकृत कम तीव्रता (1020 मिलीबार) की कोशिकाएँ 30 और 40 अक्षाशो के बीच अटलाटिक एवं पूर्वी प्रशान्त महासागर तथा दक्षिणी पश्चिमी अमेरिका पर भी स्थित होती है।

(5) उप ध्रुवीय निम्नदाव क्षेत्र मुख्यत दो केन्द्रो मे बट जाता है। एक उत्तरी अटलाटिक (50° उ से ऊपर) पर, 1002 मिलीबार की कोशिका के रूप मे स्थित होता है। इसे **आइसलैंड निम्नदाब** कहते है। दूसरा, उत्तरी प्रशान्त महासागर पर 996 मिलीबार की कोशिका बनाता है। इसे **अल्यूशियन** (Aleution) निम्नदाब कहते है।

13 15 जुलाई की समदाब रेखाएँ

(1) गर्मियो मे सूर्य के साथ विपुवत् रेखीय निम्नदाव का स्थानान्तरण भी उत्तरी गोलार्द्ध मे हो जाता है। यह स्थानान्तरण दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा कुछ अधिक होता है। महासागरो मे तो डोलड्रम क्षेत्र 5–10° उ. अक्षाश के बीच स्थित रहता है, किन्तु महाद्वीपीय भागो मे 15 से 25 अश अक्षाश वृत्तो मे चला जाता है। सर्वाधिक स्थानान्तरण भारतीय उप महाद्वीप मे 25° उ. तक होता है।

(2) 70 अंश उत्तरी अक्षाश तक का सारा एशियायी थल भाग, निम्नदाव क्षेत्र बन जाता है। इसकी तीव्रता सबसे अधिक पाकिस्तान और उत्तरी पश्चिमी भारत पर होती है, जहाँ 995 मिलीबार की निम्नदाब कोणिका औसत रूप से दिखाई देती है।

(3) उत्तरी गोलार्द्ध का उप उष्ण कटिबन्धी उच्चदाव बहुत क्षीण हो जाता है और दो विकसित प्रतिचक्रवात कोणिकाओ के रूप मे अटलांटिक और प्रशान्त महासागरो मे विद्यमान होता है। दोनो प्रतिचक्रवात 1020 मिलीबार की समदाव रेखाओ से बनते हैं।

(4) दक्षिणी गोलार्द्ध मे उप उष्ण कटिबन्धीय उच्च दाब, 20 से 30° द० के बीच स्थित रहता है। महासागरो मे 1020 या 1025 मिलीबार की कई कोशिकाए देखी जा सकती है। 1020 मिलीबार की एक उच्च दाब कोशिका आस्ट्रेलिया के थल भाग पर विकसित रहती है।

(5) उपध्रुवीय निम्नदाब उत्तरी गोलार्द्ध मे बहुत क्षीण हो जाता है, और कही-कही एक समदाब रेखा से घिरी कमजोर कोशिका के रूप मे दिखाई देता है। किन्तु दक्षिणी गोलार्द्ध मे यह अपेक्षाकृत गभीर होता है और 60° द० अक्षाश के समानान्तर दौडता है।

13 20 उच्च वायु मण्डलीय वायु दाब का आवंटन (Distribution of upper atmospheric pressure)

जैसा कि अध्याय 10 मे बताया जा चुका है, ऊपरी वायुमण्डल मे दाब प्रणालियों के अध्ययन के लिए समदाब रेखीय मानचित्रो की अपेक्षा कन्टूर मानचित्र

(स्थिरदाब मानचित्र) अधिक उपयुक्त होते हैं। उच्च वायु मण्डल मे उच्चदाब के बटन की सबसे मुख्य बात यह है कि जैसे-जैसे ऊपर की ओर जाते है, जल-थल का प्रभाव कम होने से दाब का प्रतिरूप सरल होता जाता है। इसके अलावा, सामान्य वायु प्रवाह की प्रकृति भ्रमिल प्रवाह जैसी हो जाती है। यह भ्रमिल सममित नही होता। मध्य क्षोम मण्डल मे इसका एक केन्द्र साधारणत पूर्वी कनाडा के आर्कटिक क्षेत्रों मे पाया जाता है तथा दूसरा पूर्वी साइबेरिया के ऊपर। प्रवाह सर्दियो मे अधिक तीव्र हो जाता है।

13.21 जनवरी और जुलाई के 850, 500 तथा 200 मिलीबार के औसत स्थिर दाब मानचित्रो के अनुसार, उत्तरी गोलार्द्ध मे निम्नांकित मुख्य तथ्य प्रकट होते हैं:—

(क) जनवरी

(1) 850 मिलीबार

उप ध्रुवीय तथा ध्रुवीय अक्षाशो पर निम्न दाब पाया जाता है, जिसकी कन्टूर सम रेखा का मान 1200 जी. पी. एम (geo potential meter) है। 15 से 25° अक्षांशो के बीच 1520 जी पी. एम का उच्च दाब क्षेत्र प्रभावशाली रहता है, जो कभी-कभी कई कोशिकाओ मे बटा होता है।

(2) 500 मिलीबार

ध्रुवीय अक्षाशो मे 5000 जी पी एम. का निम्नदाब तथा 10 से 20° अक्षाशो के बीच 5860 जी. पी एम. का उच्चदाब क्षेत्र पाया जाता है, जो दो या तीन कोशिकाओ मे साधारणत बटा होता है। मध्य अक्षाशो मे अधिक दाब प्रवणता होती है जिससे 30 – 50° उ अक्षांशो के बीच तीव्र वायु-प्रवाह पाया जाता है।

(3) 200 मिलीबार

निम्न दाब (10880 जी पी. एम.) ध्रुवो पर सिमट जाता है। 0 – 20 अश उत्तरी भाग, 12400 जी पी एम की उच्च दाब कोशिकाओं से घिरा होता है। मध्य अक्षाशो मे दाब प्रवणता अधिक होने के कारण, उप उष्ण कटिबन्धीय जेट धारा अधिक तीव्र होती है।

(ख) जुलाई

(1) 850 मिलीबार

ध्रुवो पर 1360 जी. पी एम. का निम्न दाब पाया जाता है। एटलांटिक तथा प्रशांत महासागर क्रमश 1600 और 1560 जी. पी. एम के उच्चदाबो से घिरे होते हैं।

(2) 500 मिलीबार

ध्रुवो पर यथावत् निम्न दाब (5440 जी. पी. एम.) तथा 20 से 30° अक्षांशों के सागरीय [illegible] पर [illegible] पी एम. की उच्चदाब कोशिकाएं

मिलती है। इन्ही अक्षांश वृत्तो के बीच, अफ्रीका तथा भारत के भूखण्ड पर और शक्तिशाली उच्चदाव कोशिकाए (5920 जी. पी एम.) स्थित रहती है।

(3) 200 मिलीबार

ध्रुवो पर 11680 जी. पी. एम. का निम्नदाव तथा 25 से 35° उ० अक्षाशो के बीच, अरब से भारत तक तथा चीन पर 12560 जी. पी एम कन्टूर का उच्चदाव पाया जाता है। अमेरिका पर भी उच्चदाव कोशिकाएं बनती है, जो अपेक्षाकृत कम तीव्र (12440 जी. पी. एम) होती है।

13.30 धरातलीय तापमान का भौगोलिक आवंटन (Geographical distribution of Surface Temperature)

तापमान मुख्यत सौर विकिरण द्वारा नियन्त्रित होता है। पृथ्वी की सतह पर इसका आवटन अक्षाशों, सतह की प्रकृति, ऊंचाई और प्रचलित हवाओ पर निर्भर करता है।

सारणी (13.1)

अक्षाश वृत्तो पर औसत धरातलीय तापमान (°C) का आवटन

	जनवरी		जुलाई		वार्षिक		परिसर (range)	
अक्षाश गोलार्द्ध	उ.	द	उ.	द.	उ.	द.	उ.	द
0	26.4	26 4	25 6	25.6	26.2	26.2	0.8 (1.0)	0.8 (1.0)
10	25.8	26 3	26.9	23.9	26 7	25 3	1 1 (1 4)	2 4
20	21.8	25 4	28.0	20.0	25 3	22.9	6.2	5.4
30	14.5	21.9	27.3	14.7	20.4	16.6	12.8	7.2
40	5.0	15 6	24.0	9 0	14.1	11.9	19.0	6.6
50	− 7.1	8.1	18.1	3.4	5.8	5 8	25.2	4.7
60	− 16 1	2 1	14 1	− 9.1	− 1 1	− 3.4	30.2	11.2
70	− 26 1	− 3.5	7.3	− 23 0	− 10 7	− 13 6	33.4	19.5
80	− 32.2	− 10.8	2.0	− 39.5	− 18.3	− 27 0	34.2	28.7
90	− 41.1	− 13.5	− 1 1	− 47 9	− 22.7	− 33 1	40 0	34.4

सारणी (13 1) मे दिए गए आकडों से स्पष्ट है कि सभी नियन्त्रको मे अक्षाशों का प्रभाव सर्वोपरि है। इस सारणी मे विभिन्न अक्षाशो पर सर्दियों, गर्मियो और पूरे वर्ष के लिए, औसत तापमान तथा तापमान का वार्षिक परिसर दिए गए है। सारणी मे निम्नांकित निष्कर्ष निकाले जा सकते है —

(1) तापमान अक्षाशो के साथ लगातार घटता जाता है किन्तु सबसे गर्म अक्षाश विषुवत् रेखा न होकर 10^0 उ. है। सर्दियो मे विषुवत् रेखा पर और गर्मियो मे 20° उ. से कुछ ऊपर सर्वाधिक तापमान पाया जाता है।

(2) दोनो ही गोलार्द्धो मे, सर्दियो मे, गर्मियो की अपेक्षा तापमान अक्षाशो के साथ ज्यादा तेजी से घटता है। यह विकिरणो के मौसमी चलन के कारण होता है। सौर और भू विकिरणो का अन्तर (जिस पर तापमान निर्भर करता है) शीत गोलार्द्ध मे ग्रीष्म गोलार्द्ध की अपेक्षा अक्षाशो के साथ बहुत कम परिवर्तित होता है। इस प्रकार, ताप प्रवणता शीत काल मे अधिक पाई जाती है। इसी कारण शीत काल मे सामान्य वायु प्रवाह, ग्रीष्म काल की अपेक्षा अधिक तीव्र होता है।

नोट करने की बात यह है कि केवल विकिरण सन्तुलन ही किसी स्थान का तापमान निर्धारित नही करता। अन्य कारण भी तापमान को प्रभावित करते है। इसी कारण, अक्षाशो के प्रति विकिरण और तापमान का आवटन समानान्तर नही है। उदाहरणार्थ, जनवरी मे विकिरण का आधिक्य 30^0 द. अक्षाँश पर सर्वाधिक होता है, जबकि इस महीने मे अधिकतम तापमान विषुवत् रेखा पर पाया जाता है।

(3) कुल मिलाकर उत्तरी गोलार्द्ध का औसत वार्षिक तापमान, दक्षिणी गोलार्द्ध से ज्यादा है। वार्षिक औसत के आधार पर उत्तरी गोलार्द्ध का हर अक्षाश, दक्षिणी गोलार्द्ध के संगत अक्षाश की अपेक्षा अधिक गर्म है। इसका कारण उत्तरी गोलार्द्ध का अधिक थल भाग है।

(4) अक्षाशो के साथ तापमान ह्रास की दर, उष्ण कटिबध मे सबसे कम और ध्रुवीय क्षेत्रो मे सर्वाधिक होती है। उदाहरण के लिए —

T (विषुवत्)—T (30 अंश उ) = 5.8°C,

T (30 अंश उ) —T (60 अंश उ.) = 21.5°C

T (60 अंश उ.) —T (90 अंश उ.) = 21.6°C

दक्षिणी अक्षांशो मे यह अन्तर कुछ अधिक होता है, पर प्राय: इसी नियम का पालन करता है:—

T (विषुवत्) — T(30 अंश द.) = 9.6°C

T (30 अंश द) —T (60 अंश द.) = 20.0°C

और T (60 अंश द.) — T (90 अंश द) = 29.7°C

(5) उत्तरी गोलार्द्ध मे तापमान साधारणत: जुलाई मे उच्चतम और जनवरी मे निम्नतम होता है तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे ठीक इसके विपरीत। अत उत्तरी गोलार्द्ध के किसी अक्षाश वृत्त पर,

वार्षिक तापमान परिसर = जुलाई का औसत तापमान—जनवरी का औसत तापमान

दक्षिणी गोलार्द्ध मे,
वार्षिक तापमान परिसर = जनवरी का औसत तापमान—जुलाई का औसत तापमान।

सारणी (13.1) के अन्तिम कालम मे यही तापमान परिसर दिया गया है।

परन्तु यह देखा गया है कि विषुवत् रेखा से 10° उ तक उच्चतम तापमान जुलाई मे न होकर मई या जून मे पाया जाता है। इसी प्रकार इस भाग मे अनेक स्थानो पर, जनवरी निम्नतम तापमान का महीना नही है। अत: विषुवत् रेखा और 10^0 उ. के लिए अतिम कालम मे दिए गए आँकडे वास्तविक परिसर नही प्रदर्शित करते। सबसे गर्म और सबसे ठडे महीनो के तापमान अन्तर के अनुसार—

विषुवत् रेखा पर वार्षिक तापमान परिसर = 0.9°C तथा 10° उ. पर वार्षिक तापमान परिसर = 1 4^0C। तापमान परिसर, उष्ण कटिबन्धी अक्षाशो मे कम है और दोनो ध्रुवो की ओर साधारणतः बढता जाता है। इसका कारण यह है कि उच्च अक्षाशो मे सौर विकिरणो का वार्षिक चलन बहुत ज्यादा है, जबकि विषुवत् रेखा के आसपास वर्ष भर सूर्य लगभग समान तीव्रता से चमकता है।

लेकिन 30^0 द के दक्षिण मे तापमान परिसर पुन. घटता है और 50^0 द. पर दूसरा निम्नतम प्रस्तुत करता है। इसका कारण यह है कि 30^0 द के बाद महाद्वीपीय भाग बहुत तेजी से कम होता जाता है। 30^0 द परिधि का 20% भाग थल से ढका है, जबकि 40^0 द. की परिधि पर थल भाग केवल 4% हो जाता है। यहा महासागरीय प्रभाव, अक्षाँशीय प्रभाव से अधिक शक्तिशाली पड़ता है, जिसके फलस्वरूप तापमान परिसर बढने के बजाय घटने लगता है।

(6) वार्षिक तापमान विस्तार उत्तरी गोलार्द्ध के हर अक्षाश पर, दक्षिणी गोलार्द्ध के सगत अक्षाश से अधिक है केवल 10^0 उ. को छोडकर। उत्तरी गोलार्द्ध मे अधिक महाद्वीपीय प्रभाव ही इसका कारण है। 10^0 उ और 10^0 द अक्षांशो पर थल का प्रतिशत भाग बराबर है, किन्तु तापमान परिसर 10^0 द पर अधिक है।

(7) दोनों गोलार्द्धों और सम्पूर्ण पृथ्वी के लिए औसत तापमानो के आँकडे निम्नाकित सारणी में दिए गए हैं—

सारणी (13.2)
तापमान (°C)

	जनवरी	जुलाई	परिसर
उत्तरी गोलार्द्ध	8.1	22.4	14.3
दक्षिणी गोलार्द्ध	17.1	9.7	7.4
सम्पूर्ण पृथ्वी	12.6	16.0	3.4

उत्तरी गोलार्द्ध में वार्षिक तापमान दक्षिणी गोलार्द्ध से थोड़ा अधिक है परन्तु वार्षिक तापमान परिसर उत्तरी गोलार्द्ध मे अपेक्षाकृत बहुत अधिक है। इसका कारण भी उत्तरी गोलार्द्ध का अधिक महाद्वीपीय भाग है, जो ग्रीष्म महीनों में अत्यधिक गर्म और शीत के महीनों मे अत्यधिक ठंडा हो जाता है।

अतः अधिक गर्म ग्रीष्म काल, अधिक ठंडा शीतकाल तथा अधिक वार्षिक तापमान परिसर आन्तरिक महाद्वीपीय जलवायु की विशेषताएँ है। महासागरीय जलवायु मे ग्रीष्मकाल अपेक्षाकृत शीतल और शीतकाल मृदु होता है।

इन तथ्यो से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि थल भाग मे, जहाँ तापमान परिसर अधिक है, वहाँ वार्षिक औसत तापमान भी तदनुसार अधिक होगा। उत्तरी गोलार्द्ध में 35 या 40 अंश उ तक यह बात सही पाई जाती है। पर इससे ऊँचे अक्षांशो मे तापमान परिसर बढ़ने पर, औसत वार्षिक तापमान कम होने लगता है। उदाहरण के लिए 47° उ. पर दो स्थान नान्टेस (2° प) और बुडापेस्ट (19° पू) पर विचार कीजिए। नान्टेस मे तापमान परिसर 13.8°C और वार्षिक तापमान 11.1°C है, जबकि बुडापेस्ट में तापमान परिसर 23.4°C होते हुए भी वार्षिक तापमान नान्टेस से कम, 9.9°C है।

इस विपरीत चलन का कारण यह है कि उच्च अक्षांशों में तट से अन्दर की ओर गर्मियो का तापमान उतनी तेजी से नहीं बढ़ता, जितनी तेजी से सर्दियों का तापमान घटता है।

लेकिन यह कहना ठीक नही है कि उत्तरी गोलार्द्ध का वार्षिक तापमान अधिक होने का कारण, केवल अधिक थल का भाग ही है। इस गोलार्द्ध के महासागर भी दक्षिणी गोलार्द्ध के महासागरों से अधिक गर्म है। इसके दो कारण है :—

(1) दक्षिणी पूर्वी व्यापारिक हवाओं द्वारा दक्षिणी ध्रुव भूमध्यरेखा की गर्म जलराशि का उत्तरी गोलार्द्ध में आयात।

13.31 तापमान आवंटन पर जल और थल भागों का प्रभाव

उपर्युक्त तथ्यो के अतिरिक्त जल और थल का, तापमान आवंटन का प्रभाव चित्र (13.4) और (13 5) मे दिए गए जनवरी और जुलाई के समुद्र स्तर पर
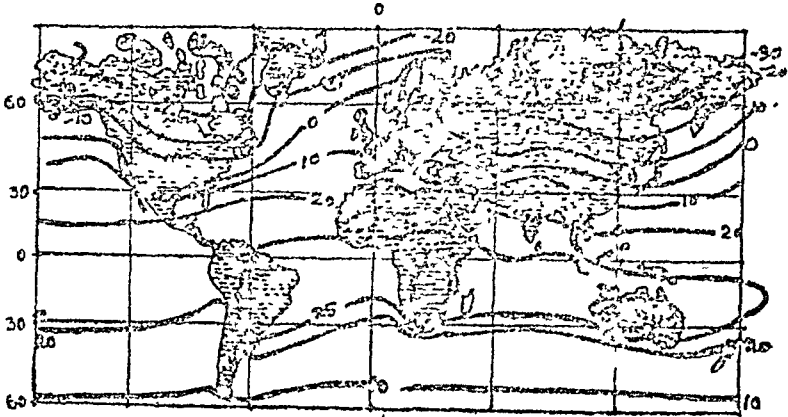
औसत धरातलीय तापमान का आवंटन – जनवरी
चित्र (13.4)
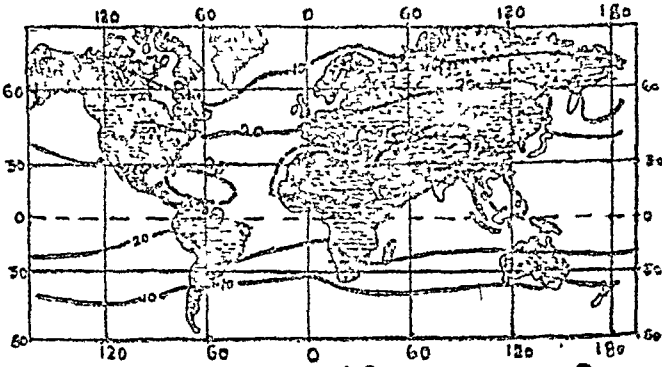
औसत तापमान का भौगोलिक आवंटन – जुलाई
चित्र (13.5)

समताप मानचित्रो द्वारा और स्पष्ट हो जाता है। इनमे उच्च भू-भाग के तापमानो को $0.65^0C/100$ मीटर ह्रास पर समुद्र तल पर अवतरित करा लिया गया है। ये समताप रेखाएँ निम्नांकित तथ्य स्पष्ट करती है :—

(1) अधिकाँश भागो मे जनवरी की समताप रेखाएँ, अक्षाश के वृत्त के समानान्तर नही चलती। उत्तरी गोलार्द्ध मे महाद्वीपो मे प्रविष्ट होते समय, ये रेखाएँ नीचे की ओर मुड जाती है। इससे स्पष्ट है कि महाद्वीप, महासागरो की अपेक्षा ठडे हैं।

उत्तरी गोलार्द्ध का सवसे ठंडा स्थान साइवेरिया मे बर्खोयान्स्क (68^0 उ. 133^0 पू) है, जहाँ जनवरी का औसत तापमान – 50^0C पाया जाता है। परन्तु गर्मियो मे इसका तापमान काफी वढ जाता है। जुलाई का औसत तापमान

15⁰C हो जाता है। अतः वार्षिक तापमान अधिक नही गिर पाता। ससार का सर्वाधिक ठंडा स्थान सभवत एन्टार्कटिक प्रदेशो मे, वोस्तोक (vostok) है, जहा 24 अगस्त 1960 को लिया गया – 88 3⁰C का तापमान अब तक का रिकार्ड धरातलीय निम्नतम तापमान है।

(2) मध्य अक्षाशो मे जनवरी मे महाद्वीपो का पश्चिमी तट, पूर्वी की अपेक्षा गर्म है। इसका कारण इस भाग की पश्चिमी हवाएँ हैं, जो सागरो की अपेक्षाकृत गर्म हवाएँ, पश्चिमी तटो पर लाती रहती है। उदाहरण के लिए 40⁰C की रेखा लीजिए, जो उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी तट के 45⁰ उ. और पूर्वी तट को 36⁰ उ. पर काटती है।

जल और थल सीमा पार करते समय, समताप रेखाओ का उत्तर या दक्षिण मे विचलन, उष्ण कटिबन्धो और मध्य अक्षाशो मे बहुत कम है। यह इन भागो के कम तापमान परिसर के कारण होता है।

(3) जुलाई की रेखाओ से स्पष्ट है कि इस ऋतु मे महाद्वीपीय भाग आसपास के सागरो मे अधिक गर्म है। इस महीने मे जल और थल भाग पार करते समय रेखाएँ विपरीत दिशा मे विचलित होती हैं।

(4) दक्षिणी गोलार्द्ध के लिए जनवरी गर्मियो का महीना है, जब यहाँ महाद्वीपो का तापमान महासागरों से अधिक होता है। दक्षिणी अमेरिका, दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया पर बन्द समताप रेखाओ द्वारा यह तथ्य प्रकट है।

जनवरी और जुलाई दोनो महीनो मे दक्षिणी गोलार्द्ध की रेखाएँ ज्यादा नियमित और अक्षाशो के समानान्तर हैं। यह, जल भाग की प्रमुखता के कारण उत्पन्न समता का परिणाम है।

(5) जनवरी की रेखाएँ एक दूसरे से अधिक निकट हैं, जिससे स्पष्ट है कि रेखांशिक तापमान प्रवणता सर्दियो से अधिक होती हैं।

13.32 तापमान का दैनिक चलन

दैनिक तापमान साधारणतः सूर्योदय होने के ठीक बाद निम्नतम तथा दोपहर के 1 से 3 घण्टे के बाद उच्चतम होता है। उच्चतम और निम्नतम तापमानो का अन्तर दैनिक तापमान परिसर कहलाता है। यह स्पष्ट है कि तापमान निम्नतन से उच्चतम तक उठने मे, उच्चतम से निम्नतम तक गिरने की अपेक्षा कम समय लेता है। दैनिक तापमान परिसर निम्नलिखित बातो पर निर्भर करता है:—

(1) आकाश की अवस्था

मेघाच्छन्न दिनों मे तापमान परिसर कम होता है, क्योकि बादल, सौर विकिरणो को नीचे आने से और पृथ्वी की बहिर्गामी विकिरणो को बाहर जाने से

रोकते है। फलस्वरूप उच्चतम तापमान कम और निम्नतम तापमान अधिक हो जाता है। मेघ रहित दिनो मे तापमान परिसर अपेक्षाकृत अधिक होता है।

(2) वायु का स्थायित्व

स्थायी वायु मण्डल मे, विशेषकर जब भूमितल के पास व्युत्क्रमण स्थित हो, तो भूमि के सम्पर्क से हुई गर्म हवा व्युत्क्रमण तह मे ऊपर नही जा पाती। फलस्वरूप सीमित क्षेत्र हो जाने से, वायु राशि अन्य दिनो की अपेक्षा अधिक गर्म रहती है। इससे उच्चतम तापमान बढ़ता है। अतः स्थायी वायुमण्डल और निम्न व्युत्क्रमण के दिनो मे, दैनिक तापमान परिसर अधिक पाया जाता है।

(3) भू सतह की प्रकृति

वार्षिक तापमान परिसर की भाति, उन्ही कारणो से दैनिक तापमान परिसर भी सागरो पर थल की अपेक्षा कम होता है। सागरो पर तापमान उच्चतम भी अपेक्षाकृत पहले (दोपहर के लगभग आधा घण्टा बाद) पहुँच जाता है। कारण यह है कि सागरो के गर्म होने से आपतित और बहिर्गामी विकिरणो मे सन्तुलन कुछ पहले ही स्थापित हो जाता है।

तटीय क्षेत्रो मे सागर-समीर का नियमित प्रवाह, दिन के सबसे गर्म भागों का तापमान कुछ कम कर देता है और इस प्रकार तापमान परिसर इन क्षेत्रो मे कम ही रहता है।

(4) इस प्रकार यह स्पष्ट है कि दैनिक तापमान परिसर पर अक्षाशो का विशेष नियन्त्रण नही है। यह स्थानीय तत्वों, जैसे—मेघाच्छन्नता, वाष्प और धूल के कण, जल-थल का आवटन और वायु-प्रवाह आदि द्वारा अधिक प्रभावित रहता है।

11 33 तापमान की वार्षिक प्रगति (Annual March of Temperature)

हम देख चुके है कि वार्षिक तापमान नियमित रूप से अक्षाश के साथ घटता जाता है तथा तापमान परिसर अक्षाश के साथ बढता जाता है। तापमान परिसर महासागरो की अपेक्षा महाद्वीपो में अधिक होता है। इन दो बातों के अतिरिक्त, किसी स्थान के वार्षिक तापमान चलन के अन्तर्गत यह अध्ययन करना भी आवश्यक है कि तापमान उच्चतम और निम्नतम किन महीनो मे होता है और कितने समय तक वार्षिक तापमान औसत से ऊपर या नीचे रहता है। इन दृष्टिकोणों से ससार भर मे तापमान चलन प्राय. निम्नाकित 4 रूपो मे मिलता है, जिन्हें चित्र (13 6) मे दर्शाया गया है।
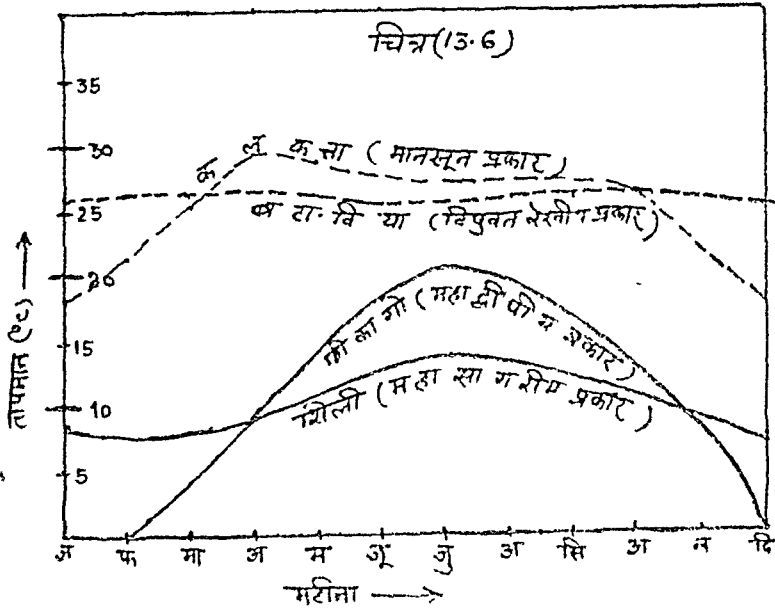
(1) विषुवत् रेखीय प्रकार (Equatorial Type)

वेटाविया की तापमान प्रगति देखिए। बहुत ही कम वार्षिक तापमान परिसर इस प्रकार की मुख्य विशेषता है। सूर्य वर्ष मे दो बार विषुवत् रेखीय आकाश से गुजरता है, अत उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रो मे वर्ष मे बहुधा दो उच्चतम और दो निम्न-तम पायी जाती है। किन्तु यह दुहरा उच्चतम हर स्थान पर नही पाया जाता। उष्ण कटिबन्धो की सीमा के पास, जहा अधिकतम सौर विकिरण के दोनो समयो मे विशेष अन्तर नही होता, दुहरे उच्चतम की प्रक्रिया नही देखी जाती।

(2) महाद्वीपीय प्रकार (Continental Type)

शिकागो का तापमान चलन इस प्रकार का एक उदाहरण है। यह प्रकार जनवरी मे निम्नतम और जुलाई मे उच्चतम तापमान प्राप्त करता है। दोनो ही महीने क्रमश शीत और ग्रीष्म अयनान्तो के बाद पडते है। चलन का ग्राफ उच्चतम और निम्नतम स्थितियो के सममित (symmetrical) रहता है। उप उष्ण कटिबन्धो, मध्य अक्षाशो तथा ध्रुवीय अक्षाशो के महाद्वीपीय भाग, लगभग इसी के समान तापमान चलन प्रदर्शित करते है।

(3) मध्य महासागरीय प्रकार (Temperate Maritime Type)

सिल्ली (scilly, 50° उ 6° प) दक्षिणी पश्चिमी इगलैण्ड के तटीय सागर मे स्थित, ऐसा स्थान है, जो पश्चिमी प्रवाह के कारण सदा महासागरीय हवाओ के प्रभाव मे रहता है। इसका तापमान मध्य महासागरीय प्रकार का एक उदाहरण है। यहाँ महाद्वीपीय भागो से तापमान परिसर कम है। इस प्रकार के स्थानो मे अधिकतम तापमान जुलाई की अपेक्षा अगस्त मे पाया जाता है और इसी प्रकार, निम्नतम तापमान भी कुछ देर से अर्थात् फरवरी या कभी-कभी मार्च के महीने मे

मिलता है। इस देरी का कारण जल मिश्रण तथा संवाहन है। ऊष्मा प्राप्त करते ही जल भाग संवाहन तथा मिश्रण द्वारा ऊष्मा को अधिक आयतन में फैला देता है। उच्चतम तथा निम्नतम तापमान स्थापित करने के लिए, जलराशि का उतनी गहराई तक समान रूप से तब तक गर्म या ठण्डा होना आवश्यक है, जब तक कि मिश्रण या संवाहन क्रिया सतह के जल को स्थानान्तरित करने में समर्थ न हो सके। उच्चतम तापमान देर से प्राप्त करने की विशेषता उन तटीय स्टेशनों पर और अधिक पाई जाती है, जो ठण्डे महासागरीय धाराओं के सम्पर्क में आते हैं, जैसे— सैनफ्रांसिस्को (कैलीफोर्निया), मागोडोर (मोरक्को) और काबो (पेरू) के तट।

(4) मानसून प्रकार (Monsoon Type)

इस प्रकार के सामान्य उदाहरण के लिए कलकत्ता की वार्षिक तापमान प्रगति पर विचार करें। दक्षिणी पश्चिमी मानसून धाराओं के आगमन से उन क्षेत्रों में एकाएक बादल तथा वर्षा की वृद्धि होने से तापमान की वृद्धि रुक जाती है और तापमान उच्चतम जुलाई के बजाय मई में ही स्थापित हो जाता है। मानसून खत्म होने के बाद तापमान स्वाभाविक रूप से फिर बढ़ता है और मासिक चलन के अन्तर्गत सितम्बर में द्वितीय उच्चतम प्रस्तुत करता है।

हर मानसून प्रभावित क्षेत्र ऐसा ही तापमान चलन प्रदर्शित करता है। परन्तु उच्चतम और निम्नतम तापमान की स्थापना मानसून की प्रकृति और काल पर निर्भर करती है।

13 40 औसत ऊर्ध्व वायु तापमान का भूमण्डलीय आवंटन (Global distribution of average upper air temperature)

चित्र (13 7) में दी गई रेखाएं उष्ण कटिबन्ध, मध्य अक्षांश तथा ध्रुवीय क्षेत्रों में ग्रीष्म और शीत काल के लिए तापमान का 25 किमी तक उर्ध्वाधर आवंटन अलग अलग प्रदर्शित करती है। इन रेखाचित्रों से निम्नांकित उल्लेखनीय तथ्य सामने आते हैं :—

चित्र (13.7)
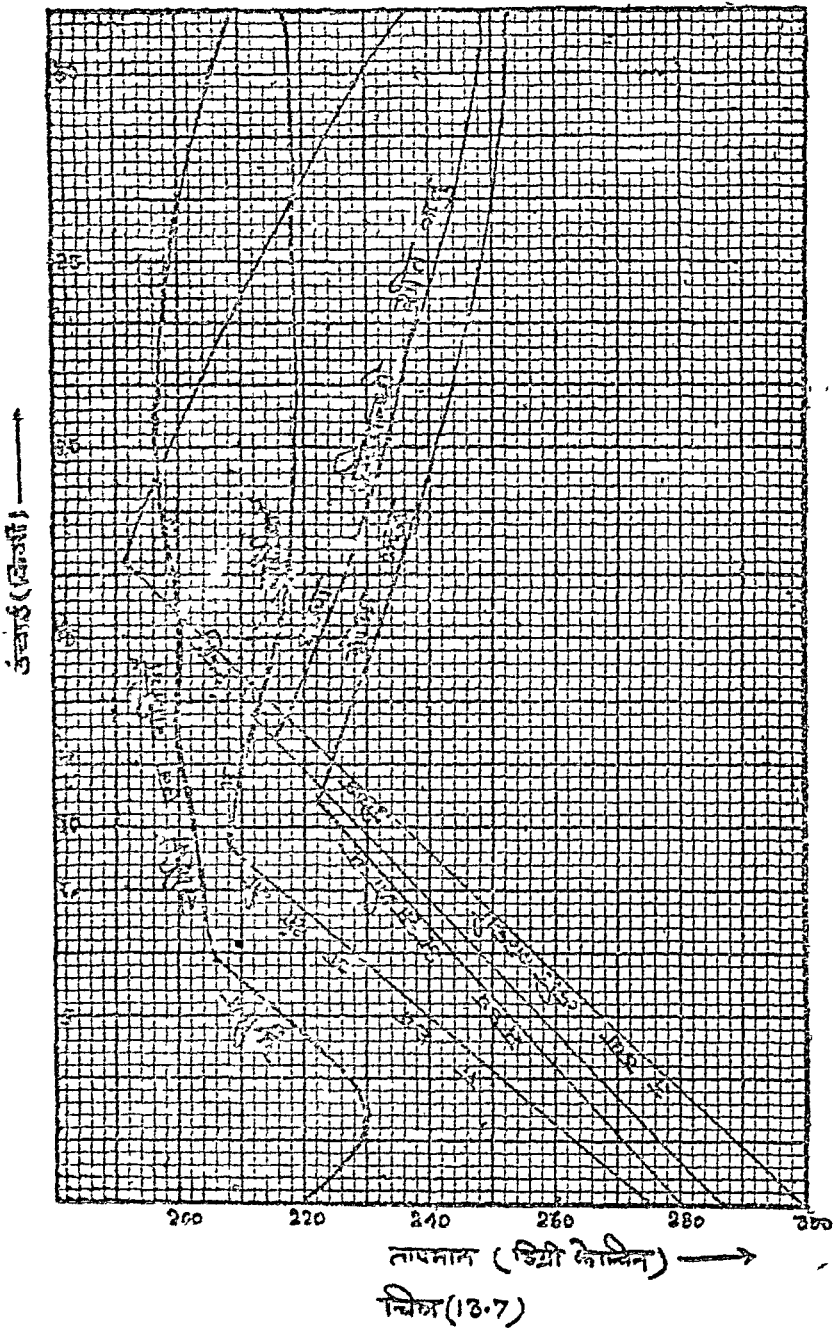
(1) उच्च अक्षांशो के शीतकाल को छोड कर, ससार के हर भागों और हर ऋतुओं मे ह्रास दर 8–10 किमी की ऊंचाई तक लगभग समान है। इस ह्रास दर का औसत मान 5–6°C/किमी है। ह्रास दर उच्च स्तरो पर निम्न स्तरो की अपेक्षा थोडी अधिक प्रतीत होती है।

उच्च अक्षाशो के शीत काल को छोड कर अन्य तापमान ह्रास रेखाए क्षोभ सीमा (7 किमी ध्रुवो पर से 17 किमी उष्ण कटिबधो पर) पर एकाएक रुक जाती

है, तत्पश्चात् स्थिर मण्डल में तापमान की बहुत ही धीमी किन्तु लगातार वृद्धि प्रदर्शित करती है। ह्रास दर का यह परिवर्तन लगभग 100 मीटर मोटी तह से अचानक ही उत्पन्न होता है। इससे स्पष्ट है कि क्षोभ और स्थिर मण्डलों का तापमान विभिन्न प्रणालियों द्वारा नियन्त्रित होती है।

क्षोभ सीमा के बाद उष्ण कटिबन्धीय तापमान यद्यपि अपेक्षाकृत अधिक तेजी से बढ़ता है तथापि यह मध्य और उच्च अक्षांशों के ग्रीष्म तापमानों से कम ही रहता है।

उच्च अक्षांशों में क्षोभ सीमा की ऊंचाई उष्ण कटिबन्धी क्षोभ सीमा की ऊंचाई (17 किमी) से कम होती है। 60 अंश के बाद यह ऊंचाई गर्मियों में 10 किमी और सर्दियों में 9 किमी के लगभग रह जाती है। कम ऊंचाई के कारण उच्च अक्षांशों की क्षोभ सीमाएं अपेक्षाकृत अधिक गर्म होती हैं।

(2) वायुमण्डल का सबसे कम तापमान उष्ण कटिबन्धी क्षोभ सीमा पर पाया जाता है। यहां तापमान -80^0C से भी नीचे पहुंच जाता है। ध्रुवीय क्षेत्रों के शीत कालीन रेखा से यह प्रतीत होता है कि 25 किमी से ऊपर (लगभग 40 किमी तक) का तापमान भी लगभग विषुवत् रेखीय क्षोभ सीमा जितना ही कम है।

(3) ध्रुवीय सर्दियों में तापमान निम्न क्षोभमण्डल में ऊंचाई के साथ इतनी अधिकता से बढ़ता है कि औसत तापमान में भी स्पष्ट व्युत्क्रमण दिखाई देता है।

(4) ध्रुवीय क्षेत्रों में ग्रीष्म और शीत काल के तापमान आवंटन, बहुत अन्तर प्रदर्शित करते हैं। स्थिर मण्डल में तापमान ध्रुवीय गर्मियों में सबसे अधिक होता है जबकि सर्दियों में ध्रुवीय स्थिर मण्डल समान रूप से सर्वाधिक शीतल क्षेत्र बन जाता है। यह बात चित्र (13 8) में और अधिक स्पष्ट हो जाती है।
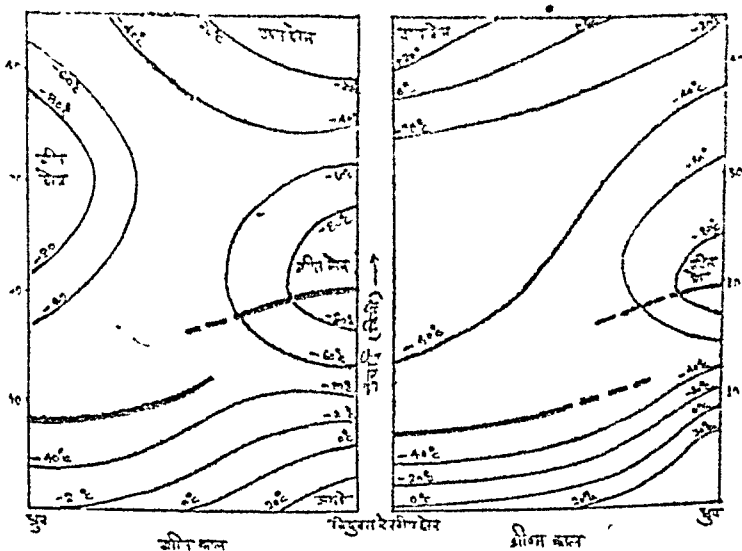
उच्चतर वायुतापमान का आवंटन
चित्र (13 8)

13.41 चित्र (13.8) भूमध्य से ध्रुव तक एक देशान्तर रेखा के ऊपर लिया गया एक अनुप्रस्थ काट (cross section) है। पहला भाग ग्रीष्म गोलार्द्ध और दूसरा भाग शीत गोलार्द्ध को चिन्हित करता है। 30 से 35° अक्षांशो के बीच क्षोभ सीमा का टूटना इन चित्रो मे स्पष्ट है।

अक्षाश के साथ क्षोभ सीमा की ऊँचाई घटती जाती है और सामान्यत. (30–35) अ श अक्षाश पर उष्ण कटिबन्धीय क्षोभ सीमा टूट जाती है, जहा इसकी ऊंचाई मे एकाएक काफी गिरावट आ जाती है। यह टूटी हुई क्षोभ सीमा, मध्य क्षोभ सीमा के रूप मे आगे बढ़ती है, जो मध्य और उच्च अक्षांशो के सगम पर एक बार फिर इसी प्रकार टूटती है।
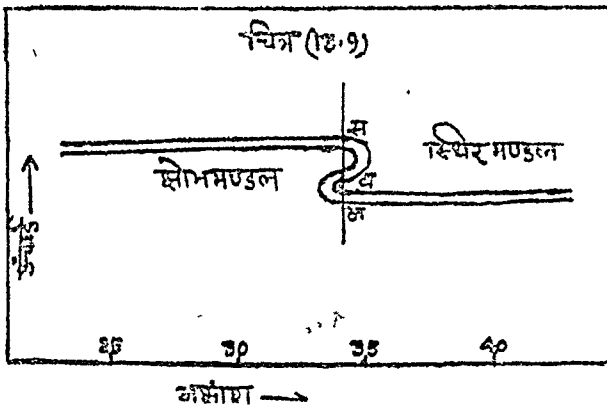
अनेक अवसरो पर क्षोभ सीमा टूटने के बजाय दोहरा मोड़ लेती है। चित्र (13 9) की तरह इन अक्षांशो मे लगभग 12 किमी (अ) पर पहली क्षोभ सीमा पार कर स्थिर मण्डल आ जाता है। किन्तु लगभग 14 किमी (ब) पार करने के बाद हमे पुन क्षोभ मण्डल प्राप्त होता है, जो 16 किमी (स) पर दूसरी क्षोभ सीमा बनाता है।

13.42 चित्र (13.8) से यह भी स्पष्ट है कि क्षोभ मण्डल मे हर स्तर पर तापमान साधारणत भूमध्य से ध्रुवो की ओर घटता जाता है। केवल उच्च अक्षांशो की गर्मियो का तापमान इसका अपवाद है। स्थिर मडल मे गर्मियो मे तापमान भूमध्य से ध्रुवो तक लगातार बढ़ता है, किन्तु सर्दियो मे मध्य अक्षाशीय क्षेत्र, तापमान उच्चतम प्रदर्शित करते है।

13.43 निम्न क्षोभ मण्डल के तापमान, अक्षाशो के अलावा जल और थल आवटन मे भी प्रभावित होते है। एक ही अक्षाश वृत्त पर 3–4 किमी ऊंचाई का तापमान थल भाग पर, जल भाग या तटीय क्षेत्रो की अपेक्षा थोडा अधिक पाया जाता है। यह अन्तर महाद्वीपीय उष्मा तथा तापमान अभिवहन का मिला-जुला प्रभाव प्रतीत होता है। इसके सम्बन्ध मे अभी तक कोई निश्चित सिद्धान्त स्पष्ट नही हो पाया है।

13.50 अवक्षेपण का सामान्य आवंटन (General distribution of precipitation)

तुषार या वर्षा के लिए आर्द्रता के अलावा वायुमण्डलीय अस्थिरता जिससे वाष्प को उठने और संघनित होकर बादल बनने के लिए सुविधा मिलती है, भी एक आवश्यक तत्व है। इसी कारण विषुवत् रेखा के उत्तरी क्षेत्र (डोलड्रम) मे ससार की सबसे ज्यादा वार्षिक वर्षा (198 सेमी) रिकार्ड की जाती है। सूर्य की सर्वाधिक उष्मा के कारण यहां अधिक वाष्पीकरण होता है और साथ ही उत्तरी-पूर्वी और दक्षिणी-पूर्वी व्यापारिक हवाओं के अभिसरण से वायुमण्डल अधिकतर अस्थाई होता है। इसके अलावा चक्रवाती तूफान भी निम्न अक्षांशों के कुछ क्षेत्रों मे भारी वर्षा के लिए उत्तरदायी है। सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा उत्तरी मे अधिक दूर तक स्थानान्तरित होता है, जिससे ताप भूमध्य (Thermal equator) और I. T C. Z. औसत रूप से भौगोलिक भूमध्य से थोड़ा उत्तर की ओर स्थित पाये जाते है। इसी कारण अधिकतम वर्षा का क्षेत्र भी भूमध्य की अपेक्षा उत्तर की ओर विचलित हो जाता है।

इस उच्चतम से दोनो गोलार्द्धों मे अवक्षेपण की मात्रा, अक्षांशों के साथ थोड़ी बहुत घटती जाती है। किन्तु वर्षा पर अक्षांशों का उतना अधिक नियन्त्रण नहीं है, जितना तापमान पर होता है। अक्षांशो के साथ वर्षा का घटाव नियमित नही है। दोनों ही गोलार्द्ध मध्य अक्षांशो (40–50°) में अवक्षेपण का द्वितीय उच्चतम प्रदर्शित करते है।
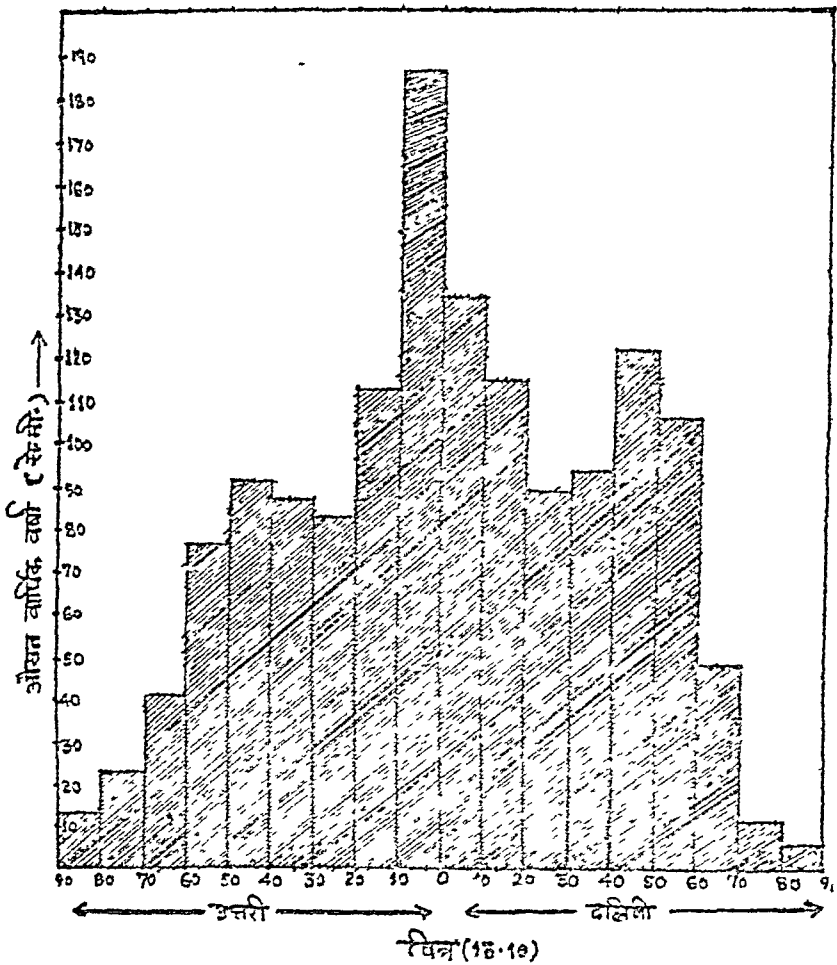
चित्र (13·10)

चित्र (13 10) मे दिया गया हिस्टोग्राम अक्षांशो के प्रति वार्षिक अवक्षेपण का आवंटन प्रस्तुत करता है। डोलड्रम के उच्चतम के बाद (20—30) अक्षांश दोनो ही गोलार्द्धों मे कम वर्षा रिकार्ड करते है क्योकि यह उप-उष्ण कटिबन्धीय उच्चदाब पेटिका का क्षेत्र है, जो सामान्य रूप से स्थायी वायुमण्डल और अवतलन गति के प्रभाव मे रहता है। यह स्थिति स्पष्ट ही बादलो के विकास के लिए असुविधाजनक है।

इसके आगे पश्चिमी प्रवाह का क्षेत्र (40–50°), जिसे 'ध्रुवीय वाताग्र क्षेत्र' कहा जाता है, तीव्र वाताग्र प्रक्रियाओं के कारण अधिक वर्षा प्राप्त कर, द्वितीय उच्चतम स्थापित करता है। यह द्वितीय उच्चतम दक्षिणी गोलार्द्ध मे उत्तरी की अपेक्षा अधिक विकसित है। कारण यह है कि 40–60 अंश अक्षांश क्षेत्र मे, उत्तरी गोलार्द्ध का केवल 45% भाग जल है, जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध का 98% जल है। इससे 40–60° द में अपेक्षाकृत अधिक वाष्प की सुविधा है, जिससे ज्यादा वर्षा होना स्वाभाविक ही है।

इसके आगे के क्षेत्र मे ध्रुवीय उच्चदाब के प्रभाव के कारण निचले क्षोभ मण्डल मे अवतलन गति प्रचलित रहती है। अत ध्रुवीय क्षेत्रो मे सबसे कम अवक्षेपण होता है। इस कम अवक्षेपण के लिए वहा का निम्न तापमान भी उत्तरदायी है।

13.51 वर्षा के आवटन की इस सरल रूपरेखा को निम्नांकित कारण खण्डित करते रहते हैं—

(1) डौलड्रम, उप उष्ण कटिबन्धीय उच्च दाब पेटिका, और पश्चिमी प्रवाह के क्षेत्रो मे मौसमी विचलन।

(2) जल और थल का भौगोलिक वितरण।

(3) पर्वत शृंखलाओ की उपस्थिति।

13.52 क्षेत्रीय स्तरों पर काफी अन्तर के बावजूद दोनो गोलार्द्धों मे कुल औसत वार्षिक वर्षा मे आश्चर्यजनक समता है। उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्ध क्रमशः 1009 तथा 1000 सेमी की औसत वार्षिक वर्षा में प्राप्त करते हैं। इन गोलार्द्धों के वार्षिक वाष्पीकरण का औसत क्रमश 944 तथा 1064 मिमी है। कम वाष्पीकरण के बावजूद उत्तरी गोलार्द्ध मे अधिक वार्षिक वर्षा का कारण, I. T. C Z. का उत्तरी गोलार्द्ध मे अधिक स्थानान्तरण तथा उत्तरी मध्य अक्षांशों की वाताग्र प्रक्रियाएँ है। ससार की कुल वार्षिक वर्षा का लगभग 50% भाग 20° उ — 20° द क्षेत्र मे सीमित है। इस क्षेत्र मे महाद्वीपीय भाग, दोनो गोलार्द्धों मे लगभग बराबर है किन्तु उत्तरी गोलार्द्ध के क्षेत्र मे I. T C. Z. के ज्यादा सक्रिय होने से, वहा वर्षा अधिक होती है। किन्तु दक्षिणी मध्य अक्षांशो की अधिक वर्षा इस अन्तर को उदासीन कर देती है।

सारणी (13 3) मे दोनो गोलार्द्धों मे वर्षा के क्षेत्रीय अन्तर को स्पष्ट करने के लिए अक्षांश पेटियो पर सागरीय तथा महाद्वीपीय वर्षा के आँकडे अलग-अलग दिए गए हैं। तुलनात्मक दृष्टिकोण से वाष्पीकरण, अक्षेपीय जल तथा अवक्षेपण क्षमता के आकडे भी साथ ही प्रस्तुत किए गए है।

13.53 दोनो ही गोलार्द्धों मे वाष्पीकरण, शुष्क उप उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो मे अधिकतम होता है और विषुवत् रेखा तथा ध्रुवो की तरफ घटता जाता है। सम्पूर्ण भूमण्डल पर 10–20° द क्षेत्र मे वार्षिक वाष्पीकरण का मान सर्वाधिक (1541 मिमी) है। 10–20° उ क्षेत्र अपने गोलार्द्ध क्षेत्र मे सबसे अधिक (1389 मिमी) वार्षिक वाष्पीकरण करता है पर दक्षिणी गोलार्द्ध से पीछे रहने का कारण, इस क्षेत्र मे अधिकतर पड़ने वाले वे रेगिस्तानी क्षेत्र है, जो अपनी शुष्कता के कारण वायुमण्डल को ज्यादा नमी देने मे समर्थ नही है।

यो दक्षिणी गोलार्द्ध में वाष्पीकरण उत्तरी गोलार्द्ध से औसतन कुछ अधिक होता है। पर उसके महासागरीय क्षेत्र की अधिकता को देखते हुए यह अन्तर बहुत कम है। इसका कारण दक्षिणी गोलार्द्ध का कम तापमान और अधिक मेघा-

सारणी (13 3)

औसत वार्षिक वर्षा मिली मीटर

अक्षांश	महाद्वीपीय		महासागरीय		भारीय औसत weighted mean		वाष्पीकरण (मिलीमीटर)		प्रवर्धनीय जल (W) (मिलीमीटर)		प्रवर्धन क्षमता (P) (%)	
	उ.	द.	उ.	द.	उ.	द	उ.	द.	उ.	द.	उ.	द.
0—10	1405	1539	1991	1415	1934	1445	1235	1304	41.07	40 90	12.9	9.7
10—20	823	1090	1248	1185	1151	1132	1389	1541	36.73	36 66	8.6	8 5
20—30	675	660	895	925	790	841	1246	1416	26.37	29.86	8.2	7 9
30—40	590	565	1175	982	872	932	1002	1256	18.95	23.81	12 6	10.7
40—50	515	798	1352	1222	907	1226	641	895	18 21	18.10	16.3	18 6
50—60	490	972	1125	1067	780	1046	469	520	15 21	12 61	18 6	22 7
60—70	305	170	685	490	415	418	333	174	11 64	6 84	13 3	16.7
70—80	145	79	215	102	185	82	145	45	8 52	2.87	7.8	7.8
80—90	112	18	112	46	112	30	42	0	6 48	1.56	6.7	5.3
0—90	—	—	—	—	1009	1000	944	1064	23.85	22 49	12.1	12.1
सम्पूर्ण भूमण्डल	671		1140		1004		1004		24.67		12 1	

च्छन्नता है। इसके अलावा उत्तरी गोलार्द्ध के ग्रीनलैंड की अपेक्षा एन्टार्कटिक का बहुत अधिक क्षेत्र अत्यन्त कम तापमान के कारण वाष्पीकरण के अयोग्य है।

13.54 अवक्षेपीय जल इकाई क्षेत्र (1 वर्ग सेमी) पर खड़े वायु स्तंभ मे, कुल वाष्प की मात्रा (ग्राम, सेमी या मिमी) को कहते है। साधारणतः कम अवक्षेपीय जल, कम वर्षा दर की ओर इंगित करती है। परन्तु अनेक शुष्क और रेगिस्तानी क्षेत्र, अधिक अवक्षेपीय जल (w) होते हुए भी वायुमण्डल की स्थिरता के कारण बहुत कम वर्षा प्राप्त कर पाते हैं। इसके विपरीत ($40–50^0$) उ. क्षेत्र अपेक्षाकृत कम (w) के होते हुए भी अधिक वर्षा प्राप्त करते है क्योंकि वहा वाताग्र क्रियाएँ वायुमण्डल को अपनी नमी छोड देने के लिए विवश कर देती है।

जैसा कि आंकडो से स्पष्ट है, w का मान दोनो गोलार्द्धों मे अक्षाशों के साथ तापमान की तरह लगातार घटता जाता है और ध्रुवों पर निम्नतम होता है। इसका कारण यह है कि कम तापमान पर, वायु की नमी रोक रखने की क्षमता भी कम हो जाती है।

13.55 अवक्षेपण क्षमता (P)

$$(P) = \frac{\text{औसत दैनिक वर्षा}}{\text{औसत अवक्षेपीय जल}} \times 100 = \frac{R}{365 \times w} \times 100,$$

जहा, R, स्थान की वार्षिक वर्षा है।

अवक्षेपण क्षमता दोनों गोलार्द्धों के मध्य अक्षाँशो मे साइक्लोनिक क्रियाओ के कारण अधिकतम होती है। अन्तगोलार्द्धीय उष्ण कटिवन्धी अभिसरण क्षेत्र की तीव्रता के कारण P का द्वितीय उच्चतम ($0–10^0$उ.), मे पाया जाता है। दोनो गोलार्द्धों के उप उष्ण कटिवन्धी क्षेत्र (20–30) अंश में उच्चदाव के कारण उत्पन्न अवतलन अवक्षेपण क्षमता को बहुत घटा देता है। वैसे, जैसाकि स्पष्ट है, निम्न तापमान के कारण P का निम्नतम मान ध्रुवों पर ही होता है।

13.60 वर्षा आवंटन पर जल और थल का प्रभाव

(1) एक ही अक्षांश वृत्त पर साधारणतः महासागरीय क्षेत्र थल भाग से अधिक वर्षा प्राप्त करता है। केवल $0–10^0$ द. अक्षांश पेटिका इस नियम का अपवाद है।

सारे ससार के थल और जल भाग पर अलग-अलग औसत वार्षिक वर्षा क्रमशः 67.0 और 114 सेमी है। इस आकलन में द्वीपो की वर्षा, जल-भाग में ही सम्मिलित कर ली गई हे। यहां यह समझ लेना चाहिए कि द्वीप पर खुले समुद्र की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है, क्योंकि वहाँ नमी तो पर्याप्त मात्रा मे रहती ही है, पर्वतीय अनुकूलता और ऊँची जमीन के कारण उत्पन्न सवहन धाराएँ भी इस नमी को उठाने में सहायता करती है।

(2) डोलड्रम क्षेत्र मे वर्षा सर्वत्र समान नहीं होती । अफ्रीका के शुष्क पूर्वी तट को छोड़कर सर्वाधिक वर्षा विषुवत् रेखा के आसपास होती है, जो अक्षांश के साथ घटती जाती है । दोनों गोलार्द्धों के उप उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब क्षेत्र, अवतलन प्रवाह के कारण कम वर्षा प्राप्त करते है । इसी क्षेत्र के महाद्वीपीय भागों में वास्तविक मरुस्थल वर्तमान हैं । उत्तर मे शुष्क पेटिका ईरान, अफगानिस्तान, अरब और सहारा रेगिस्तान होते हुए उत्तरी अतलांटिक मे दूर तक फैली है । उत्तरी मेक्सिको और दक्षिणी पश्चिमी अमेरिका के शुष्क क्षेत्र भी इसी पेटिका के भाग बनते है । दक्षिणी गोलार्द्ध की शुष्क पेटिका पश्चिमी आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका और दक्षिणी अमेरिका पर फैली हुई है । दोनों उप उष्ण कटिबन्धी शुष्क पेटिकाएं कहलाती हैं । ये पेटिकाएँ किसी सतत क्षेत्र का निर्माण नहीं करती है । इन पेटिकाओं के अन्तर्गत पड़ने वाले सभी महाद्वीपों के पूर्वी भाग अच्छी वर्षा प्राप्त करते है तथा बीच-बीच मे शुष्क पेटिका को खण्डित कर देते है । इस वर्षा का कारण व्यापारिक हवाओं का पूर्वी अवयव है, जो पूर्वी तटों पर नम वायु भार प्रवाहित करता रहता है ।

(3) शुष्क पेटिकाओं के बाद ध्रुवों की ओर वर्षा पुनः बढ़ती है, क्योंकि वह क्षेत्र वाताग्र विक्षोभों के प्रभाव मे आ जाता है । प्रचलित पछुआ हवाओं के कारण, इस क्षेत्र मे महाद्वीपों के पश्चिम तट सर्वाधिक वर्षा प्राप्त करते हैं, जहां से भीतरी भागों की ओर वर्षा शनैः शनैः घटती जाती है । उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका मे क्रमशः राकी और एन्डीज पर्वतों के कारण, अनुवर्ती भागों में, अर्थात् भीतरी थल भागों की ओर वर्षा का घटाव एकाएक और बहुत अधिक हो जाता है ।

(4) इससे ऊँचे अक्षांशों मे अवतलन प्रवाह और कम तापमान के कारण वर्षा पुन घटती चली जाती है ।

13 61 अधिक ऊँचाई पर जहां तापमान 0°C से कम है, [illegible] अधिकतर तुषार के रूप मे होता है, उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों मे भी । [illegible] भाग की अधिक वर्षा तथा अनुवर्ती भागों मे वर्षा की अचानक कमी, [illegible] का विशेष गुण है । कभी-कभी अनुवर्ती भाग बिल्कुल शुष्क [illegible] उदाहरणार्थ, आस्ट्रेलिया मे ग्रीष्म मानसून पूर्वी और उत्तरी [illegible] देता है परन्तु दक्षिण-पश्चिम भाग को सूखा छोड़ जाता है । मेक्सिको [illegible] भी इसी प्रकार के उदाहरण हैं । वैसे इन स्थानों पर कम वर्षा का [illegible] भी है कि इनके पश्चिम में स्थित महासागरों का तापमान भूमि [illegible]

13.70 मेघाच्छन्नता (Cloudiness) का भौगोलिक आवंटन

आकाश का वह भाग जो बादलो से घिरा है, मेघाच्छन्नता कहलाता है। इस प्रकार यदि पूरे आकाश के 25% भाग पर बादल छाए हुए है, तो मेघाच्छन्नता 25% होगी। मेघाच्छन्नता की परिभाषा मे मेघ-आवरण की मोटाई सम्मिलित नही है। यह सभव है कि मेघाच्छन्नता 8 आक्टा होने पर भी सूर्य की चमक स्पष्ट दिखाई पड़े जैसा कि पक्षाभ मेघो से आच्छादित आकाश मे होता है। सी. इ. पी. ब्रुक्स ने स्थल तथा समुद्र पर मेघाच्छन्नता की माध्य प्रतिशतता का कलन किया। उनके अनुसार मेघाच्छन्नता की वार्षिक माध्य प्रतिशतता का आवंटन निम्न सारणी मे दिया गया है :—

सारणी (13.4)

उत्तरी गोलार्द्ध

अक्षांश (अंश)	90–80	80–70	70–60	60–50	50–40	40–30	30–20	20–10	10–0
समुद्र	63	70	72	67	66	52	49	53	53
स्थल	—	63	62	60	50	40	34	40	52
माध्य	—	66	63	62	56	45	41	47	53

दक्षिणी गोलार्द्ध

अक्षांश (अंश)	90–80	80–70	70–60	60–50	50–40	40–30	30–20	20–10	10–0
समुद्र	64	76	72	67	57	53	49	50	—
स्थल	—	—	70	58	48	38	46	56	—
माध्य	—	—	72	66	54	48	48	52	—

मेघाच्छन्नता के भू-मण्डलीय आवटन मे निम्नांकित विशेषताएँ पाई जाती हैं —

(1) साधारणतः सागरीय क्षेत्र पर स्थल की अपेक्षा अधिक मेघाच्छन्नता होती है। केवल दक्षिणी गोलार्द्ध मे 0–10 अंश अक्षाशो के बीच स्थिति, इसके विपरीत है।

(2) अक्षाशो के साथ मेघाच्छन्नता का आवटन, वर्षा के आवटन के लगभग समान है। डोलड्रम क्षेत्र मे मेघाच्छन्नता काफी अधिक है तथा उपोष्ण कटिबन्धो मे यह निम्नतम है। अधिकतम मेघाच्छन्नता साधारणत. मध्य अक्षांशों के उन भागो

मे पाई जाती है जो प्राय. वाताग्र विक्षोभो से प्रभावित रहते है। उष्ण कटिबन्ध मे अधिकतर सवाहनिक मेघ पाए जाते हैं। इन मेघो का क्षैतिज विस्तार अपेक्षाकृत कम तथा ऊर्ध्वाधर विस्तार अधिक होता है अत इनसे जनित मेघाच्छन्नता कम होती है।

(3) उष्ण कटिबन्धो मे ग्रीष्म काल प्राय अधिक वर्षा का समय होता है, फलत मेघाच्छन्नता इन्ही दिनो मे उच्चतम पाई जाती है। निम्नतम मेघाच्छन्नता शुष्क सर्दियो मे रहती है। किन्तु जहाँ सर्दियो मे अधिक वर्षा होती है, जैसे भू-मध्य सागरीय तथा कैलीफोर्निया के तट, वहाँ सर्दियो की मेघाच्छन्नता ग्रीष्म ऋतु की अपेक्षा अधिक पाई जाती है। किन्तु इसका एक अपवाद है। महाद्वीपो के बहुत आन्तरिक भागो मे यद्यपि वर्षा गर्मियो मे ही अधिक होती है, किन्तु मेघाच्छन्नता अधिकतम सर्दियो मे पाई जाती है। इसका कारण यही है कि गर्मियो मे, कपासी प्रकार के मेघो से, जो बौछार युक्त भारी वर्षा उत्पन्न करते हैं, कम क्षैतिज विस्तार के कारण कम मेघाच्छन्नता मिलती है जबकि सर्दियो मे वाताग्र जनित स्तरी प्रकार के मेघ प्राय आकाश पूर्णत. ढक देते हैं। ये मेघ कपासी मेघो की अपेक्षा अधिक समय तक वर्तमान रहते हैं, तथा अपेक्षाकृत कम तीव्रता की वर्षा देते हैं। इस प्रकार मेघाच्छन्नता और वर्षा की अवधि दोनो ही अधिक हो जाती है। किन्तु सभी महाद्वीपो के आन्तरिक भागो मे यह स्थिति नही होती। पूर्वी साइबेरिया जहाँ सर्दियो मे प्रतिचक्रवाती प्रवाह प्रमुख होता है, वर्षा और मेघाच्छन्नता दोनो गर्मियो मे ही अधिकतम पाई जाती है।

इस प्रकार स्पष्ट है मेघाच्छन्नता की मात्रा मेघ के प्रकार पर भी निर्भर करती है।

(4) यही तथ्य दैनिक मेघाच्छन्नता विचलन की भी व्याख्या करता है। दोपहर और शाम के बीच प्राय कपासी प्रकार मेघ बनते हैं। इस प्रकार के मेघो का अधिकतम, दोपहर के दो घण्टे बाद माना जा सकता है। स्तरी प्रकार के मेघो के लिए अपेक्षाकृत स्थायी वायुमण्डल आवश्यक है, अत: इनका अधिकतम प्रात. वेला मे तथा निम्नतम दोपहर बाद को माना जा सकता है। इस प्रकार स्तरी बादलो वाले स्थानो पर जैसे मध्य अक्षाशो की सर्दियो मे मेघाच्छन्नता का उच्चतम प्रात.काल तथा संवाहनिक मेघो के क्षेत्रो मे दोपहर बाद होता है। कभी-कभी ये दोनो उच्चतम एक साथ ही पाये जा सकते है।

13 80 तड़ित झंझा (Thunder Storm) का भौगोलिक आवंटन

तडित झझा के भौगोलिक आवटन का अध्ययन यथार्थ रूप मे नही किया जा सकता, क्योंकि एक बडे भूभाग, विशेषत सागर क्षेत्र पर तत्सम्बन्धी आकडे या तो बिल्कुल उपलब्ध नही है अथवा अपर्याप्त है। उपलब्ध आकडो के अनुसार अक्षाश के साथ तडित झझा की बारम्बारता वंटन मे निम्नांकित विशेषताएँ पायी जाती है।

(1) साधारणत तड़ित झझा की सख्या सागर क्षेत्रो की अपेक्षा स्थल पर अधिक है। इसका अपवाद केवल 20° उ. अक्षांश पर अक्टूबर से मार्च के

बीच पाया जाता है। इसका कारण यह है कि 20 उ अक्षांश, सहारा मरुस्थल से होकर गुजरता है, जहाँ तड़ित झंझा की घटना बहुत ही कम होती है। अप्रैल से सितम्बर के बीच तडित झंझा की संख्या इसी अक्षांश के आसपास स्थित थाइलैण्ड, वियतनाम आदि भूभागों पर बहुत अधिक है, इसके फलस्वरूप पूरे वर्ष के लिए इस अक्षांश पर स्थल पर तडित झंझा की बारंबारता सागर क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक हो जाती है।

(2) उत्तरी गोलार्द्ध के ग्रीष्म ऋतु (अप्रैल से सितम्बर) मे तड़ित झंझा की अधिकतम बारंबारता 10° उ. अक्षांश पर पायी जाती है। किन्तु वर्ष के शेष छः महीनो मे अधिकतम बारंबारता-क्षेत्र का स्थानान्तरण अपेक्षाकृत दक्षिणी अक्षांशो मे हो जाता है।

(3) तडित झंझा की औसत संख्या उष्ण कटिबन्ध से उच्चतर अक्षांशो की ओर घटती जाती है। किन्तु यह घटाव पूर्ण रूप से नियमित नहीं है। उप उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब क्षेत्र मे औसत संख्या के घटाव मे अनियमितता स्पष्ट रूप से पायी जाती है। केवल अक्टूबर से मार्च के बीच दक्षिणी गोलार्द्ध में यह घटाव काफी नियमित होता है।

(4) ग्रीष्म ऋतु मे तडित झंझा की अधिकतम बारबारता का क्षेत्र मध्य अमेरिका, वैस्ट इण्डीज, दक्षिणी पूर्वी गल्फ के क्षेत्र, न्यू मैक्सिको, अफ्रीका के विषुवत् रेखा के समीपवर्ती भाग, उत्तर पूर्वी थाईलैण्ड, वियतनाम तथा इस्ट इण्डीज है।

(5) तडित झंझा की घटनाएं सहारा तथा अरब के रेगिस्तानी क्षेत्रो मे बहुत कम होती हैं। इनके अलावा निम्न अक्षांशो के वे क्षेत्र जहाँ तडित झंझा की घटनाएँ कम होती हैं, ये है–दक्षिणी अटलांटिक तथा हिन्द महासागर क्षेत्र तथा आस्ट्रेलिया। 50° द. अक्षांश के परे तथा उत्तरी गोलार्द्ध के आर्कटिक क्षेत्र मे भी तडित झंझा की घटनाएं अत्यल्प है।

(6) शीतकाल मे अत्यल्प झंझा का क्षेत्र और विस्तृत हो जाता है। उत्तरी गोलार्द्ध मे यह ध्रुव से 50° उ. अक्षांश तक पाया जाता है। उत्तरी अमेरिका के एक बड़े भाग पर ग्रीष्म मे तडित झंझा की प्रतिशत बारबारता 10% से अधिक होती है किन्तु शीतकाल मे बारम्बारता एक सीमित भाग में सिमटकर केवल 5% रह जाती है। इसी प्रकार गल्फ स्टेट्स, मध्य तथा पूर्वी यूरोप तथा बालकन्स जहाँ ग्रीष्म मे प्रतिशत बारम्बारता 10% से अधिक होती है शीतकाल मे घटकर 1 से 3% तक हो जाती है। ग्रीष्म काल मे तडित झंझा की अधिकतम बारम्बारता जो थाईलैण्ड तथा वियतनाम मे पाई जाती है, शीतकाल में दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होकर ईस्ट इण्डीज से लेकर उत्तरी आस्ट्रेलिया तक विस्तृत हो जाती है। अफ्रीका के विषुवत रेखीय क्षेत्र मुख्यत 10° उ. अक्षांश पेटिका मे पायी जाने वाली अधिकतम बारंबारता शीतकाल मे स्थानान्तरित होकर 20° द. अक्षांश के आसपास सीमित हो जाती है।

दक्षिणी अमेरिका में तड़ित झंझा की बारंबारता इक्वेडोर, पेरु तथा अमेजन बेसिन के एक बड़े भाग में अधिक होती है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि किसी भी क्षेत्र पर तड़ित झंझा के लिए शीतकाल की अपेक्षा ग्रीष्म काल अधिक उपयुक्त समय है। ऐसा स्वाभाविक है क्योंकि तड़ित झंझा की घटना आर्द्र वायु राशि में तीव्र संवाहनिक धारायें उत्पन्न होने के कारण ही घटित होती है। ग्रीष्म काल में धरातल के अधिक उष्मन के कारण तीव्र संवाहनिक धाराएँ सरलता से जनित होती हैं। यही कारण है कि तड़ित झंझा की बारम्बारता गोलार्द्धों के ग्रीष्म कालों में अधिक पायी जाती है।

किन्तु यह नियम प्राय विषुवत् रेखा अथवा इसके समीप वर्ती क्षेत्रों पर लागू नहीं होता है क्योंकि इन क्षेत्रों में ग्रीष्म तथा शीतकाल का अन्तर लगभग नगण्य रहता है।

(7) दक्षिणी एशिया, उत्तरी अफ्रीका तथा ईस्ट इण्डीज में अधिकतम बारम्बारता दो बार होती है—एक तो वर्षा ऋतु के प्रारम्भ तथा दूसरा वर्षा ऋतु के अन्त में। मध्य अमेरिका, उत्तरी अटलांटिक तथा वैस्ट इण्डीज में अधिकतम बारम्बारता अगस्त माह में पायी जाती है। हिन्द महासागर में विषुवत् रेखा के उत्तरी भाग में अधिकतम बारम्बारता मई में होती है, जबकि विषुवत् रेखा के दक्षिणी भाग में सभी सागर-क्षेत्रों में जनवरी से मई के बीच अधिकतम बारम्बारता स्थापित हो जाती है।

(8) दैनिक चलन स्थलीय क्षेत्रों में तड़ित झंझा की अधिकतम घटनाये दोपहर के बाद घटित होती हैं, जबकि संवाहनिक क्रिया सर्वाधिक तीव्र होती है। प्रातः काल के समय इनकी संभावना सबसे कम पायी गयी है, क्योंकि इस समय संवाहनिक धारायें नगण्य होती हैं। इस सामान्य नियम का एक अपवाद तब होता है, जब वायुमण्डल के निम्न स्तरों में अस्थायित्व की प्रवृत्ति आर्द्रता के अभिवहन अथवा अवदाबों की उपस्थिति के कारण उत्पन्न हो जाय। इस अवस्था में झंझा के लिए सर्वोच्च संभावना का समय अनिश्चित हो जाता है।

(9) यदि पूरे वर्ष में विभिन्न अक्षांशों में तड़ित झंझा युक्त दिनों की संख्या का विचार करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे दिनों की संख्या विषुवत् रेखीय क्षेत्र में अधिकतम है तथा विषुवत् रेखा से ध्रुवों की ओर निरन्तर घटती जाती है। केवल उपोष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों में यह घटाव सामान्य से अधिक पाया जाता है। विषुवत् रेखीय अक्षांशों में आम तौर पर वर्ष में 75 से 150 दिन तड़ित झंझा की घटनाएँ होती हैं। कुछ स्थानों पर तो वर्ष में 200 दिन भी ये घटनाएँ रिकार्ड की गई हैं। इनका कारण यह है कि इन क्षेत्रों में पूरे वर्ष में उच्च तापमान तथा आर्द्रता की अधिकता स्थायिवत रूप से वर्तमान पायी जाती है, तथा वायु प्रणाली भी अभिसरण की प्रवृत्ति रखती है, जो तड़ित झंझा उत्पन्न होने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ हैं। 60 अंश से उच्च अक्षांशों में तड़ित झंझा की घटनाये अत्यल्प पायी जाती हैं। ऐसा इन अक्षांशों में कम तापमान तथा अवतलन प्रवाह के कारण होता है। निम्न अक्षांशों के रेगिस्तानों में तड़ित झंझा की घटनाएँ वर्ष में 5 या इससे भी कम दिन होती हैं।

14

भारत की जलवायु

(The Climate of India)

14.10 भारत की भौगोलिक परिस्थितियां

किसी स्थान विशेष की जलवायु मुख्यत: उसकी भौगोलिक परिस्थितियों द्वारा निर्धारित की जाती हैं। लगभग 3293800 वर्ग किमी के क्षेत्रफल में विस्तृत भारत का विशाल भू-भाग मध्य एशिया के दक्षिण में स्थित संसार का सबसे बड़ा प्रायद्वीप है। यह शेष एशिया से लगभग 2500 किमी लम्बी तथा पश्चिम में सिंध दर्रों से पूर्व में ब्रह्मपुत्र घाटी तक फैले हिमालय की श्रृंखलाओं द्वारा विछिन्न कर दिया गया है। चौड़ाई में ये श्रृंखलायें प्राय 250 से 500 किलोमीटर का स्थान घेरती हैं। इन श्रृंखलाओं तथा लगभग 5636 किलोमीटर लम्बे समुद्री तट से घिरा पूरा देश 3 विशिष्ट क्षेत्रों में बांटा जा सकता है।

पहला क्षेत्र प्रायद्वीपीय (peninsular) भाग है जो प्राय: विन्ध्य और सतपुड़ा श्रृंखलाओं के दक्षिण में स्थित है। दूसरा क्षेत्र सिंध तथा गंगा के मैदान हैं, जो भारत के उत्तरी भाग में स्थित हैं। यह क्षेत्र पूर्व में आसाम व बंगाल एवं बिहार तथा उत्तर प्रदेश होते हुए पश्चिम में पंजाब तक विस्तृत है। तीसरा क्षेत्र हिमालय श्रृंखलाओं द्वारा निर्मित पर्वतीय भू-भाग है, जो पश्चिम में बलूचिस्तान तथा पूर्व में बर्मा के मध्य स्थित हैं।

14.11 प्रायद्वीप की प्रमुख पहाड़ी श्रृंखलाएं पश्चिमी व पूर्वी घाट, विन्ध्याचल, सतपुड़ा एवं अरावली हैं। पश्चिमी घाट प्रायद्वीप के पश्चिमी तट पर ताप्ती की घाटी से केपकेमोरिन तक लगभग 1400 किमी लम्बाई में विस्तृत हैं। शिखरों की ऊँचाई प्राय 1200 से 1800 मीटर के मध्य पायी जाती है। दक्षिण की ओर बढ़ते हुए पश्चिमी घाट की पहाड़ियां सागर तट को दूर छोड़ती जाती हैं। यह दूरी अधिक दक्षिणी क्षेत्रों में 50 किमी तक हो जाती है। ये पहाड़ियां नीलगिरी श्रृंखलाओं में समाप्त हो जाती हैं। जहाँ पूर्वी घाट की शाखाएं भी सम्मिलित होकर "पर्वत गांठ" (mountain knot) का निर्माण करती है। पूर्वीघाट, विषम संरचना वाली पहाड़ियों की विछिन्न कड़ियों से बनता है, जो उड़ीसा के उत्तरी सीमा से चलकर कारोमन्डल तट होते हुए नीलगिरी में मिलता है। पूर्वी घाट की औसत ऊँचाई 800 मीटर पाई गयी है। कहीं-कहीं शिखर बिन्दु 1600 मीटर तक भी उठे हुए हैं।

विन्ध्य शृंखलाएँ जो उत्तरी और दक्षिणी भारत के बीच सीमा रेखा बनाती है प्रर्याप्त रूप से सतत पहाडियो के समूह से निर्मित है। अधिकाश पहाडियाँ रेत के चट्टानो तथा क्वार्ट्जाइट से बनी हुई है। सतपुड़ा पहाड़ियां नर्मदा और ताप्ती नदियो के मध्य स्थित हैं, जिनका पश्चिमी सिरा गुजरात मे राजपिपला शृंखलाओं से मिलती है तथा पूर्वी भाग राची और हजारीबाग क्षेत्रों तक दौडती है। पश्चिम मे इन शृंखलाओ का झुकाव थोडा दक्षिण की ओर तथा पूर्व मे थोड़ा उत्तर की ओर पाया जाता है। गंगा के डेल्टा के शीर्ष पर स्थित राजमहल की पहाडियां विन्ध्य या सतपुड़ा की शृखलाएँ नही है। ये वास्तव मे लावा से वनी है तथा 87½ अंश पूर्वी देशान्तर पर 24½ अ श से 25¼ अ श उत्तरी अक्षाँश तक का स्थान घेरती है।

अरावली शृखलाएँ किसी समय के टेक्टानिक मूल के विशाल पर्वतो के अवशेष है। ये शृंखलाएँ राजस्थान के दक्षिणी-पश्चिमी कोण से उत्तर पूर्व की ओर बढ़ते हुए राज्य को लगभग दो भागो मे विभक्त करती हैं। ये साधारणत' मेटामार्फिक चट्टानो (क्वार्ट्जाइट, फिल्लाइट, सीस्ट, नाइमेस तथा ग्रेनाइट युक्त) से वनी है। अरावली का सर्वोच्च शिखिर 'माउण्ट-आबू' मे 'गुरुशिखिर' (1883 मीटर) के नाम से प्रसिद्ध है।

14.12 उत्तरी भारत के पर्वतो की उत्पत्ति अपक्षाकृत अर्वाचीन है जो टर्शियरी नामक आधुनिक भू वैज्ञानिक युग मे मानी गई है। इनकी आकृति अधिकतर गोलाकार है जो दक्षिण की ओर उभरी हुई पायी जाती है। इस भाग मे पडने वाली हिमालय की शृंखलाएँ 4 पर्वतीय क्षेत्रो मे बाँटे जा सकते है। जो एक दूसरे के समान्तर हैं।

1 **शिवालिक**—जो मैदानी भागो के ठीक उत्तर मे 8 से 50 किमी की मौटाई मे स्थित है। इनकी तुगता प्राय 1 किलोमीटर से कम ही पाई जाती है।

2. **निम्न हिमालय क्षेत्र**—जो 60 से 80 किलोमीटर की मौटाई मे स्थित 3 किलोमीटर औसत ऊँचाई की उच्च भूमि है। नेपाल तथा पंजाब मे पर्वत शृखलाएँ समान्तर रूप से व्यवस्थित है किन्तु कुमायूँ क्षेत्र मे अस्त-व्यस्त रूप से पायी जाती है।

3. **वृहद हिमालय क्षेत्र या मध्य हिमालय**—जो ऊँचे तथा बर्फ से ढकी पहाडियों का क्षेत्र है। संसार की बहुत ऊँची चोटियो मे से सर्वाधिक चोटियां मध्य हिमालय मे ही पायी जाती है, जिनमे कम से कम आधे दर्जन शिखिर 8000 मीटर से अधिक ऊँचाई पर स्थित है और एक दर्जन, 6-7 हजार मीटर से अधिक ऊँचाई रखते हैं।

4 **ट्रान्स हिमालय क्षेत्र**—वृहद हिमालय के पीछे लगभग 40 किलोमीटर चौडाई मे स्थित नदियो की घाटियो वाला क्षेत्र ट्रान्स हिमालय क्षेत्र कहलाता है।

14 13 आसाम मे पहाड़ियो का उठान अपेक्षाकृत तीव्रगति से किन्तु कम ऊँचाई तक पाया जाता है। उत्तरी-पूर्वी सीमा पहाडियाँ तीक्ष्णता के साथ दक्षिण

की ओर मुड़ती हैं और चाप की आकृति में भारत और वर्मा की सीमा निर्मित करती है। इन शृंखलाओं मे पटकाई, नागा, मिजो तथा मनिपुर प्रमुख है।

आसाम का पठार यद्यपि बिहार की स्थलाकृति के सान्तत्य मे उसी का विस्तार है किन्तु गगा-ब्रह्मपुत्र की घाटी दोनो के मध्य सीमा रेखा बन जाती है। आसाम के पठार मे गारो, खासी, जयन्तिगा नामक पहाड़ियो के अतिरिक्त उत्तरी पूर्वी भाग मे मिकिर पहाड़ियो का विछिन्न सिलसिला स्थित है।

14.14 भारत की प्रमुख नदियां

भारतीय उपमहाद्वीप में बहने वाली छोटी-बड़ी नदियो की संख्या बहुत बडी है। इन्हें चार प्रमुख समूहों मे बाँटा जा सकता है—

(1) प्रायद्वीपीय नदियाँ

(2) सिधु प्रणाली

(3) गगा प्रणाली

(4) ब्रह्मपुत्र प्रणाली

प्रायद्वीपीय नदिया प्राय. पश्चिम से पूर्व की ओर ढलान पर बहती है। भू-गर्भ वेत्ताओ का मत है कि टर्शियरी युग मे प्रायद्वीपीय का पश्चिमी भाग कुछ ऊपर की ओर उठता रहता है। पश्चिमी घाट से बंगाल की खाडी तक बहने वाली मुख्य नदियाँ ये है। गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, पेनर, ताम्रपर्णी (जो मन्नार की खाडी मे गिरती है)। सतपुडा की पहाड़ियो से अनेक नदियाँ निकलती है जिनमे नर्मदा और ताप्ती मुख्य है। ये दोनो अरब सागर मे गिरती है। अन्य नदियो मे दामोदर, जो हुगली से मिल जाती है, सुवर्ण रेखा, ब्राह्मणी, तथा महानदी का नाम लिया जा सकता है। ये सभी नदिया अनेक सहायिकाएं (tributaries) रखती है। जिनमे अधिकाश वर्ष भर जलयुक्त पायी जाती है।

कुछ नदिया अरावली शृंखलाओ से भी जनित होती है जो प्रायः अरब सागर की ओर बहती हैं। इनमे लूनी (लवणवारि) विशेष उल्लेखनीय है। इसमे केवल वर्षा ऋतु मे ही जल रहता है। यह जल बालोता तक तो मीठा रहता है किन्तु उसके बाद खारा हो जाता है। बानस नदी माऊंट आबू के पूर्वी भाग से उदित होकर चम्बल मे जा गिरती है। साबरमती तथा माही मेवाड़ की पहाड़ियो से उदित होकर कैम्बे की खाडी मे गिरती है।

14.15 वृहद् हिमालय, काराकोरम, लद्दाख, जन्सकार, कैलाश तथा ट्रांस हिमालय शृंखलाओ मे लगभग 20 महत्वपूर्ण नदिया जनित होती है। जो पर्वतीय अचल से आगे चलकर एक दूसरे मे सम्मिलित होते हुए तीन वृहद नदी प्रणालियो का निर्माण करती है। 1—सिन्धु, 2—गगा और 3—ब्रह्मपुत्र। इनके स्रोत स्थल की धाराए प्रायः ग्लेशियरो के पिघलने से उत्पन्न होती है।

सिंधु प्रणाली—हिमालय के पश्चिमी सिरे पर स्थित शृंखलाओ से निकलकर नाँगा पर्वत को वृत्ताकार मे घेरते हुए सिन्धु नदी दक्षिण पश्चिम की ओर हजारा

से होकर पाकिस्तान के समतल पर वहती है और करॉची के निकट लगभग 3000 वर्गमील का डेल्टा बनाते हुए अरब सागर से मिल जाती है। इस प्रणाली की 5 अन्य नदिया ये हैं :—

1 झेलम (वितस्ता) 2 चेनाब (चन्द्रभागा) 3 रावी (इरावती) 4. व्यास (विपासा) तथा 5. सतलज (सताद्रू)।

गंगा प्रणाली—भागीरथी तथा अलकनन्दा नामक दो सहायिकाओ के सम्मिलन से गगा का निर्माण हुआ। ये दोनो ग्लेशियर की धाराएँ हैं, जो देवप्रयाग के पास मिलकर आगे बढती हैं और गंगा हरिद्वार के पास समतल मैदानो मे अवतरित होती है। वहाँ से उत्तर प्रदेश, बिहार, तथा पश्चिमी बगाल मे लगभग 1557 मील की यात्रा करने के बाद गगा वृहद् डेल्टा का निर्माण करते हुए बगाल की खाडी मे मिल जाती है। गंगा प्रणाली की सबसे पश्चिमी और बडी सहायिका यमुना, जमनोत्री नामक ग्लेशियर युक्त पहाडी से उदित होकर तथा मसूरी की पहाड़ियों से निकलकर मैदानो मे आती है। यहाँ वक्राकार मार्ग पर दिल्ली, मथुरा तथा आगरा होते हुए लगभग 860 मील की यात्रा के बाद इलाहबाद मे गगा से मिल जाती है। यमुना की मुख्य सहायिका चम्बल है, जो अरावली के म्हाओ नामक स्थान से निकलकर बूँदी, कोटा तथा धोलपुर होकर वहती है तथा इटावा से लगभग 25 मील पूर्व मे 600 मील की दूरी तय करने के बाद यमुना से जा मिलती है।

गगा की सभी उत्तरी सहायिकाएँ हिमालय की वर्फीली शृंखलाओ से उदित होकर आती है। इनमे रामगगा, काली (शारदा), गोगरा, गडक, कोशी (कशिका) तथा महानन्दा उल्लेखनीय है। दक्षिण से आने वाली सहायिकाओ मे वेटवा, केन (कर्णावती), तोस (तामस) तथा सोन (सुवर्ण नदी) का नाम प्रमुख है।

ब्रह्मपुत्र प्रणाली—तिवब्त मे ब्रह्मपुत्र को **सांग-पो (Tsang-po)** और उत्तरी आसाम के पहाडो में 'दिबंग' के नाम जाना से जाता है। सादिया के पास जब दिवग लोहित नामक शाखा से मिलकर आसाम के मैदानो के आगे बढती है तो ब्रह्मपुत्र का नाम ग्रहण करती है। स्रोत से बगाल की खाडी तक यह लगभग 1800 मील की दूरी तय करती है। इसकी अनेक सहायिकाओ मे रायदक, सकोश, मानस, सुवसरी, धनश्री, टोरसा, तिस्ता (त्रिष्णा) उल्लेखनीय है। सुर्मा से सम्मिलन के बाद ब्रह्मपुत्र, मेघना के नाम से अधिकतर जानी जाती है। यह सागर मे मिलने से पूर्व चार भागो मे विभक्त हो जाती है। गगा ब्रह्मपुत्र का संयुक्त डेल्टा ससार के सबसे वृहद् डेल्टाओ में एक माना जाता है।

14 20 भारत की मुख्य ऋतुएं (Principal Seasons of India)

भारतीय उपमहाद्वीप मानसून प्रकार के जलवायु प्रदेश का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। समुद्रतलीय दाव इस प्रदेश मे जनवरी से जुलाई तक पूर्णत. उत्क्रमण (reversal) को प्राप्त हो जाता है। इसके प्रभाव मे धरातलीय वायु प्रवाह का भी पूर्ण उत्क्रमण होता है। इस प्रकार उपमहाद्वीप मे वर्ष भर मे दो प्रकार की मानसून
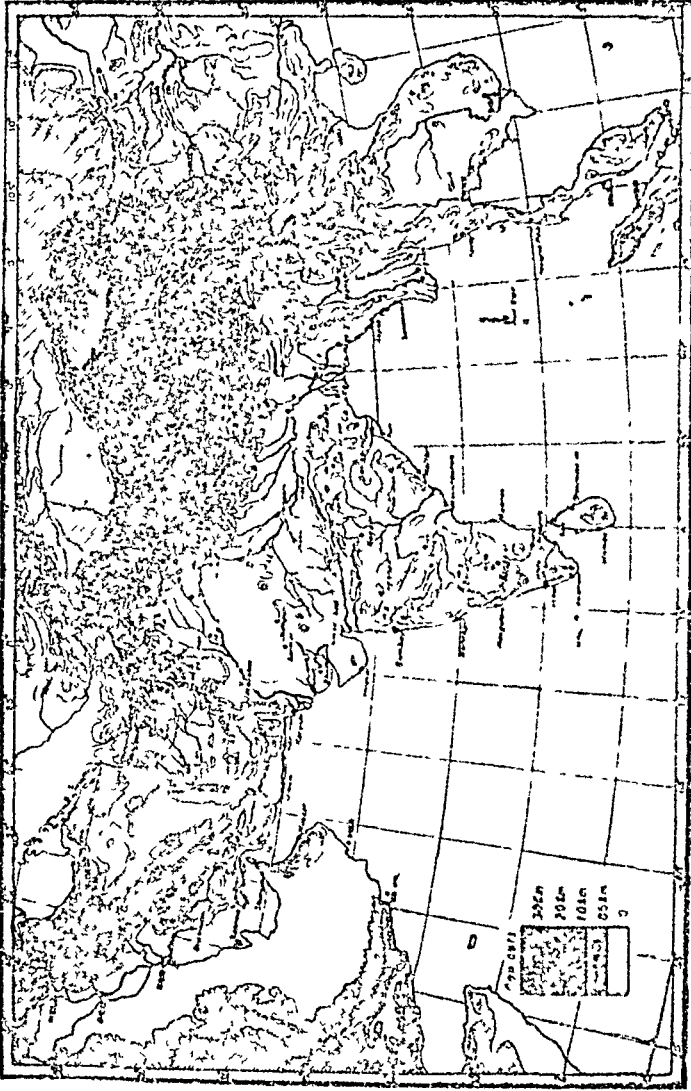
भारत तथा आसपास का उच्चावचन (Relief) मानचित्र
चित्र (141)

धाराएँ बहती हैं। सर्दियो मे धरातल पर उच्चदाव तथा सागरीय क्षेत्रो मे निम्नदाव विकसित रहता है। इनके प्रभाव मे हवाये उत्तरी अक्षांशो से अवतरित होती हैं, जो सागर क्षेत्रो पर उत्तर पूर्व से आती हुई पायी जाती है। उच्च अक्षांशो तथा धरातलीय स्रोत के कारण ये वायुराशियां ठण्डी तथा शुष्क होती हैं, जो भारत पर सर्दी का मौसम स्थापित करती है। इसे **शीत मानसून** (Winter monsoon) या **उत्तरी-पूर्वी** (North-east) मानसून के नाम से जाना जाता है। गर्मियो मे अन्त तक शनै. शनैः उत्तरी भारत पर निम्नदाब स्थापित हो जाता है तथा उच्चदाब सागरीय क्षेत्रो में आ जाता है। निम्नदाब के प्रवाह मे सागरीय हवाये भूमि की ओर अग्रसर होती हैं तथा शीत मानसून के पथ पर ही किन्तु विपरीत दिशा मे वहती है। नम और उष्ण होने के कारण ये वायुधाराएँ वर्षा उत्पन्न करने की क्षमता रखती है। यह प्रवाह **ग्रीष्म मानसून** (Summer monsoon) या **दक्षिणी-पश्चिमी** (South-west) **मानसून** कहलाता है।

14.21 इस प्रकार भारत की जलवायु मोटे तौर पर निम्नांकित चार ऋतुओ मे बांटी जा सकती है .—

(1) **शीतकाल या उत्तरी-पूर्वी मानसून काल**—दिसम्बर से फरवरी।

(2) **ग्रीष्म ऋतु या पूर्वमानसून काल**—मार्च से मई।

(3) **ग्रीष्म मानसून या दक्षिणी-पश्चिमी मानसून काल**—जून से सितम्बर।

(4) **संक्रमण काल** (transition period) या **उत्तरी मानसून काल**—अक्टूबर और नवम्बर।

यद्यपि पश्चिमी मानसून का काल पूरे देश के लिए साधारणत: जून से सितम्बर तक का माना जाता है किन्तु इसका वास्तविक काल स्थान विशेष पर वहा ग्रीष्म मानसून धाराओ के अभ्युदय (on set) तथा अपनयन (withdrawal) दिनांको के मध्य की अवधि ही होती है। अभ्युदय तथा अपनयन के दिनांक स्थान के अनुसार परिवर्तन शील रहते हैं। उत्तरी-पश्चिमी भारत ग्रीष्म मानसून काल प्रायः जुलाई से सितम्बर तक ही पाया जाता है। पश्चिमी राजस्थान मे मानसून धाराओ का अभ्युदय लगभग 15 सितम्बर तक सम्पन्न हो जाता है। अत इस क्षेत्र के लिए दक्षिणी पश्चिमी मानसून काल केवल दो महीने मे ही सीमित रहता है।

14.30 उत्तरी पूर्वी मानसून काल

सामान्यदाव आवंटन—इस ऋतु मे एशिया के सम्पूर्ण भू-भाग पर निम्न तापमान प्रचलित रहता है तथा उच्चदाव पेटिका अरब तथा फारस से मध्य एशिया और फिर उत्तरी पूर्वी चीन तक विस्तृत हो जाती है। यह **साइबेरिया उच्चदाव क्षेत्र** कहलाता है। उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब मे जो एशियाई भू-भाग पर प्रमुख रहता है, ठंडी महाद्वीपीय हवाओ के संचयन से साइवेरियन उच्चदाव इस काल मे अत्यन्त तीव्र (intense) रहता है और लगभग 45° उ अक्षाश तथा 105° पू. देशान्तर पर केन्द्रित पाया जाता है। भारत इस उच्चदाव के परिधि पर पडता है।

हिमालय शृंखलाओं के उत्तर मे दाब प्रवणता अत्यधिक तीव्र होती है तथा भारतीय क्षेत्र पर क्षीण। इन महीनो मे विषुवत रेखीय निम्नदाब हिन्द महासागर मे शून्य से 10° द. अक्षाश के मध्य स्थित पाया जाता है।

भारत पर जनवरी मे दाब आवटन चित्र (14.2) में दिया गया है। पश्चिमी राजस्थान से मध्य बिहार तक एक क्षीण कटक दौडती है। केरल से गुजरात तथा तेनासरीम तट के निकट से उत्तरी वर्मा तक द्रोणिका स्पष्ट रूप से विकसित रहती है।

14.31 धरातलीय हवायें

25 अंश उत्तरी अक्षांश के नीचे सागर तथा भू-क्षेत्रो पर मुख्यत उत्तरी-पूर्वी प्रवाह प्रचलित रहता है। इसके उत्तर मे राजस्थान तथा आसाम को छोडकर शेष भागो मे हल्की पश्चिमी या उत्तरी-पश्चिमी हवाये बहती है। उच्चदाब कोशिका के प्रभाव मे प्रायः उत्तरी पूर्वी तथा आसाम मे पूर्वी हवाये पाई जाती है। भू-भागो मे धरातलीय हवाये हल्की होती है किन्तु सागरीय क्षेत्रो मे इनकी तीव्रता लगभग 10 'नाट' पाई जाती है। यह तीव्रता दक्षिणी पश्चिमी अरब सागर मे और बढ जाती है।

14 32 धरातलीय तापमान

किसी स्थान के औसत वायु तापमान के नियन्त्रक तत्व अक्षाश, ऊँचाई, सूर्य का उन्नताश, समुद्र तट से दूरी तथा प्रचलित वायुराशियाँ हैं। शीतकाल मे भारत का अधिकाश भू-भाग ठण्डी और महाद्वीपीय वायु राशियो से प्रभावित रहते हे, जिनका स्रोत उच्च अक्षांशो मे पाया जाता हैं। औसत तापमान उत्तर से दक्षिण की ओर बढता जाता है। समताप रेखाये सामान्यत. अक्षाशो के अनुसार चलती हे। 20°C और 30° उत्तरी अक्षाशो के मध्य लगभग 1°C प्रति अक्षांश की प्रवणता पाई जाती है। तापमान दक्षिण मे लगभग 17°C उत्तरी अक्षाश तक बढता जाता है। जनवरी मे औसत तापमान का चलन 14°C से 27°C परिकलित किया गया हे। जनवरी के औसत धरातलीय तापमान का आवन्टन चित्र (14.3) मे प्रदर्शित किया गया है।

दैनिक उच्चतम तापमान का आवन्टन भी मुख्यत: औसत तापमान की भाँति पाया जाता हे। पश्चिमी तट और 78° पूर्वी देशान्तर तथा 11° और 20° उत्तरी अक्षांशो के बीच का भाग सर्वाधिक उच्चतम तापमान (लगभग 33°C) प्रदर्शित करता हे। यहा से हर दिशा मे तापमान घटता जाता है। सबसे कम उच्चतम तापमान लगभग 22°C, 30° उत्तरी अक्षाश के आसपास पाया जाता है।

औसत दैनिक निम्नतम तापमान मे अपेक्षाकृत अधिक प्रवणता पाई जाती हे। 20 से 25° उत्तरी अक्षाश के बीच प्रवणता सर्वाधिक होती है। तापमान चलन प्रायद्वीप के चरम दक्षिणी भाग (22°C) से उत्तरो भारत के मैदानों तक

(10°C) तथा पंजाब तक (6°C) परिवर्तित होता है। महासागरीय प्रभाव के कारण तटीय क्षेत्र आन्तरिक भू भागों की अपेक्षा अधिक निम्नतम तापमान रखते हैं।

पश्चिमी विक्षोभों के पीछे उच्च अक्षांशों की ठंडी हवा शीत-तरंग के रूप में उत्तरी भारत को प्रभावित करती है। इस अवसर पर तापमान 6 से 12°C तक सामान्य से नीचे आ जाता है और उत्तर पश्चिमी भारत के मैदानी भागों में पाले की घटनाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। तापमान का दैनिक चलन मुख्यतः मेघाच्छन्नता तथा वायुमंडलीय आर्द्रता पर निर्भर करती है। यह तटीय क्षेत्रों की अपेक्षा आन्तरिक भागों में स्वाभाविक रूप से अधिक होती है। सर्वाधिक दैनिक तापमान परिसर का वार्षिक औसत (14–15°C) उत्तरी पश्चिमी भारत में पाया जाता है, जो दक्षिण और पूर्व की ओर घटता जाता है।

14 33 शीत तरंग

20° उ अक्षांश से उत्तर के क्षेत्र विशेषतः जम्मू काश्मीर, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात तथा पश्चिमी मध्य प्रदेश जनवरी फरवरी में शीत-तरंगों के लिए सर्वाधिक संवेदनशील पाए गए हैं।

सामान्यतः ये तरंगें सक्रिय पश्चिमी विक्षोभ के पीछे ही आती है, जिसमें तापमान का सहसा परिवर्तन होता है। यदि रात्रि तापमान पहले ही सामान्य से कम हो तो, कमजोर विक्षोभ के पीछे भी शीत तरंगें जनित हो जाती हैं।

उत्तर पश्चिम में उत्पन्न होकर तरंगें पूर्व तथा दक्षिण की ओर फैलती रहती हैं तथा अनुकूल परिस्थितियों में पश्चिमी बंगाल तथा दक्षिण में तेलंगाना तक पहुँचती हैं।

13 34 आर्द्रता, कुहरा और मेघाच्छन्नता

भारत पर आर्द्रता का आवंटन प्रचलित वायुराशियों तथा समुद्र से दूरी पर निर्भर करता है। यह सामान्यतः उत्तरी पश्चिमी भारत में निम्नतम पाई जाती है, जो हर दिशा में समुद्र तट की ओर बढ़ती जाती है। शीतकाल में जब वायुराशि भूमि पर जनित होती है, वाष्पदाब पूरे भारत पर सबसे कम होता है। इस काल में सापेक्ष आर्द्रता पश्चिमी प्रायद्वीप, गुजरात तथा राजस्थान में सबसे कम (40–50%) पाई जाती है। सर्वाधिक सापेक्ष आर्द्रता (80% से अधिक) आसाम में पाई जाती है।

शीतकाल में समुद्र तल पर वायु घनत्व दक्षिणी भारत की अपेक्षा उत्तर भारत में अधिक पाया जाता है। इस काल में घनत्व की प्रवणता भी अपेक्षाकृत अधिक रहती है।

विभिन्न ऊँचाइयों पर हर महीने का औसत वायु घनत्व निम्नांकित सारणी में प्रदर्शित किया गया है।

सारणी (14.1)

औसत मासिक वायु घनत्व (ग्राम/घन मीटर)

उत्तरी भारत

ऊँचाई–माह (किमी.)	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
1.	1092	1081	1057	1049	1020	1011	1036	1032	1037	1048	1085	1087	1058
2.	988	973	967	957	935	929	937	942	947	962	983	979	958
3.	890	896	879	873	860	853	849	853	863	875	887	884	872
4	802	800	795	795	785	775	763	770	778	787	880	795	787

दक्षिणी भारत

ऊँचाई–माह (किमी.)	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
1.	1056	1044	1043	1027	1027	1028	1045	1044	1044	1051	1047	1050	1042
2.	972	960	957	944	942	947	952	953	957	963	968	971	957
3.	882	877	881	869	864	861	863	867	867	873	876	881	872
4.	795	796	799	795	789	780	780	785	784	787	789	791	789

घाटी, डेल्टा तथा नम भूप्रदेशो व तटीय क्षेत्रो मे कुहरे तथा कुहासे की घटनाये शीतकाल मे बहुत सामान्य है। कुहरे प्रात.काल उत्पन्न होते है, जो सूर्योदय के दो-तीन घण्टो के अन्दर क्षीण हो जाया करते है। मध्य और उत्तरी भारत मे पश्चिमी विक्षोभो के पृष्ठ भाग मे तथा कभी-कभी अग्र भाग मे कुहरे उत्पन्न होते है। जब शाम या रात मे वर्षा हो तथा तुरन्त बाद आकाश स्वच्छ हो जाय तो, कुहरा उत्पन्न होने की सम्भावना बहुत होती है। इसके लिए वायु गति धीमी होना आवश्यक है। ये सभी दशायें साधारणत विक्षोभ के पृष्ठ भाग मे लागू रहती है। उडीसा, बगाल तथा बगला देश के तटीय क्षेत्रो मे विक्षोभ के अग्र भाग मे भी कुहरे उत्पन्न होते है।

अभिवहन कुहरा भारत मे बहुत कम होते हैं। असम की पहाडियो से नम हवा के घाटियो मे आरोहण से कभी-कभी इस प्रकार के कुहरे बन जाते हैं। शीत-काल के विभिन्न महीनो मे कुहरो की औसत सख्याए चित्र 14 4–14 6 मे दी गई है। आसाम की घाटी तथा गगा के मैदान मे सबसे अधिक कुहरे बनते है। दिसम्बर और जनवरी के महीनो मे इनकी सख्या 20 दिन प्रति माह से अधिक है।

शीत-काल मे विक्षोभो के कारण सबसे अधिक मेघाच्छन्नता हिमाचल प्रदेश तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के पहाड़ियो मे पाई जाती है। मद्रास तक पर भी उत्तरी पूर्वी मानसून के प्रभाव मे पर्याप्त मेघाच्छन्नता रहती है। शेष भाग प्रायः स्वच्छ आकाश या आशिक रूप से आच्छादित रहता है।

14.40 पूर्व मानसून काल

सूर्य के उत्तरी गोलार्द्ध मे आगमन से मार्च मे भारतीय भूभाग का उष्मन आरम्भ हो जाता है। दाब प्रवणता तेजी से घटती जाती है और पश्चिमोत्तर भारत के अतिरिक्त सारे देश से शीतकालीन दशाये प्राय लुप्त हो जाती है। प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग से उत्तरी-पूर्वी क्षेत्रो तक मार्च मे एक क्षीण निम्नदाब विस्तृत पाया जाता है तथा उत्तरी खाडी मे आपेक्षिक उच्चदाब स्थापित हो जाता हे।

एक असातत्य रेखा (line of discontinuity) स्पष्ट रूप से प्रायद्वीप के दक्षिणी भागो मे उभरती है, जो 20° उ 77° पू. तक ठीक उत्तर की ओर और वहा से उत्तर-पूर्व की ओर 25° उ, 92° पू तक औसत रूप से खिची रहती है। रेखा के पूर्व मे स्थित दक्षिणी प्रायद्वीप पर 1 कि मी ऊचाई तक दक्षिणी या दक्षिणी-पश्चिमी प्रवाह पाया जाता है जिसमे खाडी से पर्याप्त आर्द्रता इन क्षेत्रो पर अभिवहित होती हे। फलत प्रायद्वीपीय असातत्य रेखा के आसपास इस महीने मे तडित झंझा तथा बौछार की घटनाए सामान्य है। इस प्रकार की घटनाए उत्तरी-पूर्वी भारत पर भी 'नारवेस्टर' के रूप मे विकसित होती है।

अप्रैल मे ताप जनित निम्नदाब प्रायद्वीपीय पर विकसित हो जाता है, जो गर्मी के साथ धीरे-धीरे उत्तर की ओर स्थानान्तरित होता जाता है। साथ ही मध्य एशिया पर उष्मन के कारण उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब तीव्रता से टूट कर निम्नदाब

बनने लगता है। यह उन्मन नीचे की ओर स्थानान्तरित होकर पश्चिमोत्तर भारत में शीतकालीन दशायें समाप्त कर देता है। मई तक एशिया के विशाल भूभाग पर निम्नदाब व्याप्त हो जाता है जिसका केन्द्र 30° उ., 75° पू. दे. आस पास स्थित रहता है। प्रायद्वीपीय निम्नदाब क्षेत्र इसी में विलीन हो जाता है तथा उड़ीसा तक सुस्पष्ट द्रोणिका विकसित हो जाती है। उस समय तक प्रायद्वीप पर स्थित द्रोणिका पूर्व की ओर थोड़ा हटकर मद्रास तट के समानान्तर स्थापित हो जाती है।

14.41 धरातलीय हवायें

अप्रैल में मध्य भारत पर स्थित निम्नदाब तथा प्रायद्वीप पर विस्तृत द्रोणिका के प्रभाव में द्रोणिका अक्ष के पश्चिम में पश्चिमी या उत्तरी पश्चिमी धरातलीय हवायें बहती हैं तथा पूर्व में दक्षिणी या दक्षिणी पश्चिमी। द्रोणिका अक्ष के पूर्व की ओर खिसकने के साथ मई में उपरोक्त प्रवाह क्षेत्र भी पूर्व की ओर स्थानान्तरित हो जाता है।

राजस्थान तथा पंजाब पर धरातलीय हवायें अप्रैल में पश्चिम तथा मई में निम्नदाब के प्रभाव में दक्षिण पश्चिम से बहती हैं। उत्तर-पूर्व में पूर्वी प्रवाह अप्रैल पाया जाता है जो ग्रीष्म कालीन द्रोणिका के विकास के साथ मई तक उत्तर उत्तर प्रदेश तक फैल जाता है। शेष भागों में मुख्यतः उत्तरी-पश्चिमी हवायें बहती हैं।

सागरीय क्षेत्रों में उत्तरी-पूर्वी मानसून प्रवाह धीरे-धीरे वामावर्तित (back) होने लगती है तथा जून तक पूर्णत उत्क्रमित होकर दक्षिणी पश्चिमी प्रवाह बन जाती है। संक्रमण काल में वायु गति सर्वत्र 10 'नाट' से कम ही पायी जाती है।

14.42 तापमान

अप्रैल तक दक्षिणी प्रायद्वीप के आन्तरिक क्षेत्रों का औसत तापमान 33–35°C तक पहुंच जाता है जबकि तट क्षेत्र अपेक्षाकृत ठंडे (28–30°C) रहते हैं। 20° उ अक्षांश पर ताप उच्चतम पाया जाता है, जहां से दोनों ओर तापमान घटता जाता है। औसत उच्चतम तापमान 14 से 25° उत्तरी अक्षांश के मध्यवर्ती भाग में 40–42°C के बीच सम आवटित रहता है। किन्तु सागरीय क्षेत्रों में उच्चतम तापमान अपेक्षाकृत कम होता है। फलत थल और सागर समीर का प्रवाह तटीय क्षेत्रों पर प्रमुख होता है।

गुजरात तथा उत्तरी महाराष्ट्र, उत्तरी राजस्थान तथा उत्तरी मध्य प्रदेश पर अप्रैल के महीने में दैनिक तापमान परिसर का मान अधिकतम (18°C) पाया जाता है। सबसे कम परिसर 6°C के लगभग पश्चिमी घाट पर रहता है।

मई में 15°C ऊपर प्राय सारा देश वर्ष का सर्वाधिक दैनिक तापमान प्राप्त करता है। मानसून धाराओं के अभ्युदय से इस वृद्धि पर रोक लग जाती है। महासागरीय प्रवाह के कारण दक्षिणी प्रायद्वीप के पश्चिमी भाग में तापमान मध्य अप्रैल के बाद ही गिरने लगता है। इस क्षेत्र में सबसे अधिक तड़ित झंझा की घटनाएं

मई में ही पाई जाती है। चरम दक्षिणी तट मार्च मे ही सर्वाधिक तापमान प्रदर्शित करते है।

उत्तर-पूर्व मे भी अप्रैल के बाद तापमान घटने लगता है क्योकि यहा निम्न तहो मे महासागरीय प्रवाह आरम्भ हो जाता हे। मई मे तडित झंझा की घटनाए इन क्षेत्रो मे बहुत सामान्य हे। वर्षा के बावजूद आसाम मे सर्वाधिक दैनिक तापमान जुलाई या अगस्त मे पाया जाता है।

अन्डमान द्वीप समूह अप्रैल मे, पश्चिमी राजस्थान तथा गुजरात तट जून मे और काश्मीर जुलाई मे अधिक उच्चतम तापमान के महीने है। यह विविधता अनेक कारणो से पायी जाती हैं।

अप्रैल, मई तथा जून मे उत्तर भारत के कई स्थान यदा कदा सामान्य से बहुत अधिक दैनिक तापमान का अनुभव करते हैं। इन दिनो उच्चतम तापमान के सामान्य से 6°C या इससे अधिक ऊपर हो जाने की अवस्था ताप-तरंग (heat wave) कहलाती है। जून मे ताप तरगे सबसे अधिक तथा प्रखर पायी जाती है। पजाव, हरियाना, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, विहार तथा उडीसा मुख्यत ताप तरगो के प्रभाव क्षेत्र है। राजस्थान, ग्रीष्म काल अत्यधिक प्रखर होते हुए भी, प्राय, ताप तरगो से प्रभावित नहीं हो पाता। इसका कारण यही है कि यहाँ का सामान्य उच्चतम तापमान स्वय इतना अधिक होता है कि वास्तविक उच्चतम तापमान बहुत ही कम मौको पर +6°C का विचलन प्रदर्शित करता है।

14 43 कालवैशाखी या नारवेस्टर

ओले, बौछार तथा तडित झंझा की घटनाएँ पश्चिम से पूर्व की ओर गति करते हुए पूर्व मानसून काल मे बिहार से आसाम तक सक्रिय रहती हे। सक्रियता मार्च से मई तक लगातार बढती जाती है। किसी स्टेशन पर तडित झंझाएँ प्रायः पश्चिमोत्तर दिशा से पहुचते है, अत नारवेस्टर कहलाते है। वैशाख (15 अप्रैल–15 मई) मे इन झँझाओ की तीव्रता अपेक्षाकृत अधिक प्रखर रहती है, जिससे सम्पत्ति और जीवन का पर्याप्त विनाश प्रतिवर्ष होता है। सभवत इसीलिए ये झंझाएँ काल वैशाखी भी कहलाती है। धूल उडाती आधिया तथा स्क्वाल भी इनसे सामान्यत सम्बन्धित रहते है।

पश्चिमोत्तर दिशा से आने वाली झँझाएँ अधिकतम प्रखर होती है और प्राय दोपहर बाद से शाम तक आती है तथा 100 किमी/घण्टा के लगभग गति से स्क्वाल उत्पन्न करती हैं। ये झंझाए 50-60 किमी प्रति घण्टा की गति से चलती हुई बंगला देश की ओर बढती है, जहा उनकी प्रचण्डता और बढ जाती है।

कुछ झंझाए रात्रि के पिछले प्रहर या सुबह आती है। ये उत्तरी बगाल से उदित होकर दक्षिण की ओर गति करती है तथा अपेक्षाकृत कम प्रचण्ड होती है। इनकी गति प्राय कम (15-30 किमी/घण्टा) होती है।

खासी पहाड़ियों से भी कुछ झंझाएँ उदित होती हैं। ये भी कम प्रचण्ड होती है तथा उत्तर से दक्षिण की ओर गति करती है।

यदा कदा आसाम तथा सीमावर्ती पहाड़ियों में भी झंझाएं बनती है जो पश्चिम की ओर गतिमान होती है।

ये झंझाएं भारी बौछार युक्त वर्षा से दिन का तापमान बहुत घटा देती है।

नारवेस्टर से सम्बन्धित समकालीन स्थितियों का विवरण अध्याय 10 मे दिया जा चुका है।

14 44 पूर्व मानसून काल मे प्रमुख रूप से पश्चिमोत्तर भारत तथा गंगा के मैदानी भाग दो विशेष मौसम घटनाओं का अनुभव करते हैं .

(i) आंधी या मरुझंझा (Dust storm or Sand storm)

(ii) अंधड़ (Dust or sand raising winds)

(i) आंधी या मरुझंझा

ये तड़ित झंझा की भांति ही संवाहनिक घटनायें हैं तथा कपासी वर्षी मेघो मे उत्पन्न होती हैं। पर्याप्त आर्द्रता होने पर कपासी वर्षी से तड़ित झंझा जनित होती है तथा नमी के अभाव मे आंधी। आंधी प्रायः वर्षा रहित झंझा है। वर्षा यदि उत्पन्न भी होती है तो प्रायः भूमि तक नही पहुंच पाती। इन झंझाओं से सम्बन्धित स्क्वाल काफी ऊंचाई तक धूल या रेत उठा देती है। वायुमण्डल मे धूल या रेत की मात्रा इतनी भर जाती है कि क्षैतिज दृश्यता 1 किलोमीटर से कम हो जाती हैं।

आंधी पूर्व मानसून काल मे उत्तरी पश्चिमी भारत की सामान्य घटना है। मानसून-अभ्युदय से पूर्व जून मास मे भी आंधियां उत्पन्न होती हैं, जो प्रायः अधिक प्रचण्ड पायी जाती है। आंधी एक सीमित क्षेत्र मे घटित होती है जिसकी अवधि कुछ मिनटों की होती है। यह घटना निम्नांकित दो परिस्थितियों मे सामान्यत उत्पन्न होती है .—

(1) पूर्व मानसून काल मे पश्चिमी विक्षोभो के प्रभाव मे। पश्चिमी विक्षोभ जब उत्तर पश्चिमी भारत को प्रभावित करता है, तो इसके शीत-वाताग्र के गुजरने के समय कम आर्द्रता वाले क्षेत्रो मे आंधी की घटनाएँ घटित होती है। इस प्रकार की आंधी राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तर-प्रदेश और बिहार मे होती है। बंगाल तथा असम क्षेत्रो मे जहां वातावरण मे पर्याप्त आर्द्रता उपस्थित होती है, तड़ित-झंझा की घटनाएं उत्पन्न होती हैं।

(2) मार्च, अप्रैल तथा मई मे धरातल के अत्यधिक उष्मन से वायुमण्डल के निम्न तहों मे तापमान का अतिप्रवण (steep) ह्रास दर उत्पन्न हो जाता है, जिसके फलस्वरूप वायुमण्डल मे अस्थायित्व आ जाता है तथा तीव्र संवाहनिक धारायें कपासी वर्षी मेघ को जन्म देती हैं। इन परिस्थितियों मे आंधी की घटना घटित होती है।

अप्रैल, मई तथा जून मे आंधी की बारबारता चित्र (14, 10, 11, 12) मे प्रदर्शित की गई है ।

(ii) अन्धड़

इसे तेज धूल भरी हवाएँ भी कहा जाता है । आँधी के विपरीत यह घटना व्यापक क्षेत्र को प्रभावित करती है । इसकी अवधि भी कुछ घण्टो से लेकर 6-7 दिन तक हो सकती है । यह घटना पूरे उत्तर भारत मे उत्पन्न होती है, किन्तु दक्षिणी राजस्थान तथा गुजरात मे इसका विशेष जोर देखा गया है । इन क्षेत्रो मे धरातल पर धूल या बालू की अधिकता के कारण तेज हवाओं के लँवे समय तक चलने से धूल या बालू के टीले स्थान-स्थान पर बन जाते है तथा यातायात मे अवरोध उपस्थित कर देते है । इस घटना मे भी दृश्यता काफी कम हो जाती है, कभी-कभी एक लम्बी अवधि तक दृश्यता 500 मीटर से भी कम होती है । यह घटना किसी क्षेत्र मे तीव्र दाब प्रवणता स्थापित होने के कारण घटित होती है । यह दाब प्रवणता धरातलीय सतहो की उष्मन क्षमता मे विभिन्नता के कारण ग्रीष्म-काल मे स्थापित हो जाता है ।

14 45 आर्द्रता तथा मेघाच्छन्नता

इस काल मे सापेक्ष आर्द्रता का तटो से आन्तरिक भागो की ओर कम होने की दर अपेक्षाकृत अधिक होती है । आन्तरिक भूभागो की वायु प्राय अत्यधिक शुष्क रहती है, विशेषकर दक्षिणी पठार तथा मध्य भारत पर औसत सापेक्ष आर्द्रता 30% से भी कम पायी जाती है ।

दोपहर बाद सापेक्ष आर्द्रता पजाब से बिहार तक के मैदानी भागो मे 5% से भी कम हो जाती है । इसका एक कारण यह भी है कि अत्यन्त अधिक उष्मन के कारण उत्पन्न आरोही धाराये धरातलीय नमी को उच्चतर वायु तहो मे उठा देती है ।

पूर्व मानसून काल मे सबसे अधिक मेघाच्छन्नता प्रायद्वीप के दक्षिणी भागो तथा बंगाल व आसाम मे पाया जाता है । इन स्थानो पर सागरीय हवाये तीव्र गति से पहुँचती है तथा इन्हे स्थानीय पहाड़ियो द्वारा उत्थापन की यथेष्ट सुविधा प्राप्त हो जाती है ।

14.50 दक्षिणी-पश्चिमी मानसून काल

मई मे बर्मा, आसाम, बंगलादेश तथा बगाल मे खाडी की नम हवाये दक्षिणी पश्चिमी प्रवाह के रूप मे पहुचना आरम्भ कर देती है । इसी मास के अन्त तक पश्चिमोत्तर भारत पर मौसमी निम्नदाब क्षेत्र पूर्णत स्थापित हो जाता है और इसके प्रभाव मे दक्षिणी गोलार्द्ध की व्यापारी हवाये भी विषुवत रेखा पार कर दक्षिण-पश्चिम से अरब सागर तथा खाडी मे सम्मिलित होने लगती है । फलस्वरूप मानसून प्रवाह तीव्र तर होता जाता है । स्पष्टत मानसून का उदय बगाल की खाडी मे अपेक्षा कृत पहले होता है । अन्डमान द्वीप तथा तेनासरीम तट पर मानसून अभ्युदय

की सामान्य तिथि 20 मई, मध्य बर्मा पर 25 मई तथा बंगलादेश पर 1 जून है। मानसून की यह शाखा जब आसाम तथा बर्मा की पहाड़ियों से परावर्तित होकर पूर्व की ओर मुड़ती है तो स्वाभाविक रूप से उत्तरी भारत के मैदानी भाग पर द्रोणिका विकसित हो जाती है। पश्चिमोत्तर भारत के निम्नदाब के प्रभाव में अरब सागर की उत्तरी-पूर्वी व्यापारी हवायें इसी समय पश्चिमी या दक्षिणी पश्चिमी दिशा से बहने लगती हैं। जिससे केरल तट पर अरब सागरीय शाखा का अभ्युदय जून के प्रथम दो-तीन दिनों तक हो जाता है। यह शाखा शनै. शनैः उत्तर की ओर बढ़ती रहती है, जिससे मानसून द्रोणिका और सुदृढ़ होती जाती है।

मानसून अभ्युदय से सम्बन्धित भारतीय उप महाद्वीपीय के कुछ समकालीन लक्षण (Synoptic Features) निम्नांकित हैं:

(1) सूर्य के उत्तरी गोलार्द्ध में स्थानान्तरण के कारण उच्च ताप का क्षेत्र विषुवत रेखा से हट कर जून के प्रथम सप्ताह तक तिब्बत के पठार पर केन्द्रित हो जाता है। मुख्यत 15 से 30° उत्तरी अक्षाशों के बीच दाब और तापमान की वृद्धि दक्षिण से उत्तर की ओर पायी जाती है। फलत: ताप हवा की दिशा पूर्वी हो जाती है और इससे 30° उत्तरी अक्षांश से नीचे 450 से 100 मिलीबार स्तरों के बीच पूर्वी प्रवाह स्थापित हो जाता है।

(2) उच्चतर वायुमण्डल में तिब्बत पठार के ऊपर एक उष्ण प्रतिचक्रवात उदित हो जाता है, जिससे प्रचलित पश्चिमी प्रवाह की द्रोणिका जो इस क्षेत्र के ऊपर शीतकाल में विद्यमान रहती है, भंग हो जाती है तथा दो द्रोणिकाओं में विभक्त होकर मध्य स्थिति से पूर्व और पश्चिम में विस्थापित हो जाती है। पश्चिमी जेट प्रवाह जो शीतकाल में हिमालय के दक्षिण में केन्द्रित होता है, मानसून अभ्युदय के साथ ही उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर लगभग 40° उ. अक्षांश तक सिमट जाता है।

(3) मानसून के अच्छी तरह स्थापित हो जाने के बाद अरब सागर और खाड़ी की धारायें निम्नदाब द्रोणिका के अक्ष पर, जो पश्चिमोत्तर भारत से शीर्ष खाड़ी तक विकसित रहती है, संगम करती हैं। द्रोणिका अक्ष, अपनी मध्य स्थिति से ऊपर-नीचे उच्चावचित होती रहती है। इसकी गति से वर्षा का क्षेत्रीय आवटन भी प्रभावित होता है। जब अक्ष उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर हिमालय शृंखलाओं के समीप पहुंच जाती है, तो उत्तर भारत के मैदानों में वर्षा रुक जाती है। हिमालय के पर्वतीय अंचल इस अवस्था में पर्याप्त वर्षा प्राप्त करते हैं। यह स्थिति भंग मानसून (Monsoon Break) कहलाती है। जब अक्ष उत्तरी बंगाल की खाड़ी में डूबी होती है तो मानसून उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में प्राय. सक्रिय पाया जाता है। यही परिस्थिति मानसून अवदाब उत्पन्न होने के लिए भी अनुकूल रहती है। सक्रियता तथा आंशिक या सामान्य भंग की दशायें दक्षिणी पश्चिमी मानसून में क्रमश एक दूसरे का अनुसरण करते रहते हैं।

14.51 धरातलीय तापमान

जुलाई के धरातलीय तापमान का आवंटन चित्र 14.14 मे प्रस्तुत किया गया हैं। जुलाई तक पूरे देश मे मानसून छा जाने के बाद उच्चतम तापमान मे तेजी से गिरावट आती है। पंजाब तथा राजस्थान, जहा वर्षा कम होती है, अधिक तापमान प्रदर्शित करते हैं। पश्चिमी राजस्थान, पाकिस्तान तथा दक्षिणी ईरान के क्षेत्र 40°C के औसत वायु तापरेखाओ के अन्तर्गत पडते है। प्रायद्वीप का पश्चिमी तट तथा बर्मा तट औसत वायु तापमान का शीत क्षेत्र बन जाते है।

14 52 वायु राशियां

उपलब्ध आंकडो के अनुसार अरब सागर के वायु मण्डल मे मानसून काल मे दो प्रकार की वायु राशिया पायी जाती है।

(1) निम्न तहो मे नम वायु राशि, ये वास्तव मे उत्तरी पूर्वी व्यापारी हवायें है, जो भारतीय निम्नदाब के प्रवाह मे वामावर्तित (back) होकर पश्चिम या दक्षिण पश्चिम मे बहने लगती है।

(2) उच्चतर वायु तहो मे शुष्क महाद्वीपीय हवाये।

दोनों वायु राशिया व्युत्क्रमण तह द्वारा एक दूसरे से अलग रहती है। (10° उ., 68° पू) के पश्चिम मे नम वायु राशि की गहराई लगभग 1.5 किमी पायी जाती है किन्तु पूर्व की ओर व्युत्क्रमण तह बहुत क्षीण और ऊपर उठता चला जाता है—फलस्वरूप नम वायु राशि की गहराई बढ़ती चली जाती है। यह गहराई पश्चिम घाट पर लगभग 6 किमी तक हो जाती है। इस स्थान पर उच्चतर वायुमण्डलीय व्युत्क्रमण नही पाया जाता है। घाट द्वारा वायु राशि की आरोहरण प्रक्रिया ही इसके लिए मुख्यत उत्तरदायी है। उत्तरी-पूर्वी अरब सागर के तटो पर जहां पर्वत शृंखलाएँ नही हैं, नम वायु राशियो की गहराई मे इतनी वृद्धि नही पायी जाती।

बगाल की खाडी मे व्युत्क्रमण तह प्राय: अनुपस्थित रहता है और नम मानसून धाराये प्राय 6 किमी गहराई तक बहती रहती है।

14 53 मानसून अवदाबों की उत्पत्ति

मानसून धाराओ के तीव्र होने पर तथा उनके पर्वतीय उत्थापन के कारण धरातलीय दाब गिरता है जिससे स्वयमेव कभी-कभी अवदाब उत्पन्न हो जाते है। इस प्रकार के अवदाब पर्वतीय अनुकूलता के कारण बगाल की खाडी मे अरब सागर की अपेक्षा अधिक सख्या मे बनते हैं। किन्तु अधिकाश अवदाब बर्मा से पूर्व की ओर चलने वाली निम्नदाब तरगो की प्रेरणा के कारण शीर्ष खाड़ी मे उत्पन्न होते हैं। प्राय. निम्न क्षोभ मण्डल मे पहले एक उच्चतर वायु चक्रवाती प्रवाह जनित होता है, जो मानसून धाराओ के तीव्र होने पर सागर सतह पर अवदाब के रूप मे स्थापित हो जाता है।

अरब सागर के अवदाब प्रायः उत्तर पश्चिम या उत्तर की ओर गति करते हुए पश्चिमी या गुजरात तट को पार करते है। कुछ अवदाब उच्च अक्षांशो में आजाने पर उत्तर पूर्व की ओर मुड कर करांची तट या कभी-कभी अरब तट तक पहुँचते हैं। बंगाल की खाडी के मानसून अवदाब साधारणतः उत्तर पश्चिम की ओर गति करते है। पूर्वी राजस्थान तथा पजाब पर पहुँच कर इनकी गति बहुत धीमी हो जाती है। प्राय. एक या दो दिन स्थिर भी रहते हैं। तत्पश्चात् या तो कमजोर होकर मौसमी निम्नदाब मे विलीन हो जाते हैं या उत्तर की ओर मुड कर हिमालय शृंखलाओ की ओर अग्रसर हो जाते है, जहाँ भारी वर्षा देने के बाद या तो क्षीण हो जाते है या ऊँचाई के कारण अधिधारित (occluded) होकर उच्चतर वायुप्रवाह मे पछुवाँ द्रोणिका के रूप मे पूर्व की ओर गति करने लगते हैं।

मानसून काल मे अरब सागर मे उत्पन्न होने वाले अवदावो की सख्या नगण्य ही रहती है। किन्तु शीर्ष खाडी मे प्रतिमाग 3 या 4 अवदाब औसत रूप मे जनित होते है। सन् 1924–1952 तक अवदावो और तूफानो के आंकडो के सांख्यिकीय अध्ययन द्वारा अनन्तकृष्णन तथा भाटिया (1958) ने निम्नांकित निष्कर्ष दिये·

मानसून अवदावो की सख्या (1924–52)

	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर
अरब सागर	12	2	0	4
बंगाल की खाड़ी	33	77	66	65

मानसून अवदावो की अनुपस्थिति में उत्तरी भारत पर मानसून की सक्रियता मानसून द्रोणिका के अक्ष की स्थिति पर निर्भर करती है। वर्षा का क्षेत्र इस अक्ष के दक्षिण मे लगभग 200–300 किमी दूरी तक विस्तृत पाया जाता है। बर्मा से पूर्व की ओर चलने वाली निम्न क्षोभमण्डलीय निम्नदाब तरगे यदि अवदाब उत्पन्न करने में न भी सफल हो तो वे मानसून द्रोणिका की तीव्रता बढा देती है, जिससे मानसून प्रवाह सक्रिय हो उठता है।

14·54 मानसून का अभ्युदय

मानसून का अभ्युदय सबसे पहले केरल-तट पर प्राय जून के ठीक आरम्भ मे होता है। किन्तु मानसून का अभ्युदय इससे पूर्व या इसके बाद भी हो सकता है। केरल तट पर मानसून के अभ्युदय के दिन का पूर्वानुमान अत्यधिक महत्वपूर्ण है। कई वर्षो मे मानसून के अभ्युदय के विषय मे धरातलीय मौसम चार्ट, उच्चतर वायु-चार्ट तथा मौसम उपग्रहो से प्राप्त सूचनाओ के अध्ययन से यह पाया गया है केरल पर मानसून अभ्युदय के समय कि निम्नांकित लक्षण स्पष्ट दृष्टिगोचर होते है·

(1) बगाल की खाडी या अरब सागर मे किसी विक्षोभ के उत्पन्न होने की स्थिति मानसून के केरल तट पर अभ्युदय के लिए अनुकूल होती है। साधारणत यह विक्षोभ निम्न वायु-दाब की द्रोणिका के रूप मे दक्षिण-पूर्वी अरब सागर मे पाया जाता

है। विक्षोभ के प्रभाव में स्क्वाल युक्त मौसम, विक्षुब्ध सागर तथा दक्षिण पश्चिम से आती हुई सागरीय लहरे एवं संवाहनिक धाराये मानसून के अभ्युदय के स्पष्ट संकेत हैं।

(2) श्री लंका तथा धुर (extreme) दक्षिणी प्रायद्वीप पर निम्न क्षोभ मण्डल में वर्तमान दक्षिणी-पश्चिमी वायु का सशक्त होना तथा इसकी गहराई में वृद्धि केरल तट पर मानसून के अभ्युदय के पूर्व पाये जाते है। इसके साथ-साथ उच्च क्षोभ-मंडल मे वर्तमान पूर्वी वायु सशक्त होने लगती है। 14 से 16 किलोमीटर की ऊँचाई पर इसकी गति 40 नाट तक पहुंच जाती है। मानसून के अभ्युदय के बाद यह गति बढ़कर 60 नाट तक हो जाती है।

(3) मानसून अभ्युदय के समय उत्तर भारत के उच्च वायुमण्डल मे बहती जेट धाराये उत्तर की ओर स्थानान्तरित होने लगती है और भारतीय अक्षांशो के बाहर चली जाती हैं।

(4) तिब्बत के पठार पर उच्चतर वायुमण्डल मे प्रतिचक्रवात विकसित होने लगता है।

(5) दक्षिणी अरब सागर मे मेघाच्छन्नता एकाएक बढ जाती है तथा मेघ राशियाँ उत्तर की ओर तेजी से प्रवाहित होती रहती है।

विभिन्न स्थानो पर मानसून के आगमन तथा अपनयन की औसत तिथियाँ चित्रो 14.18 तथा 14 19 मे दिये गये है।

14·55 सक्रिय मानसून (Active-monsoon) तथा मानसून-भंग (Monsoon break) की स्थितियां

दक्षिण पश्चिमी मानसून धारायें जून के प्रारम्भ से सितम्बर के अन्त तक लगभग पूरे देश मे व्यापक वर्षा देती है, किन्तु मानसून वर्षा का आवटन समय तथा स्थान के प्रति सममित (Symmetrical) नही है। इसका कारण यह है कि मानसून धाराये अपने पूरे प्रभाव काल मे समान रूप से सशक्त नही रहती। इनकी तीव्रता घटती-बढती रहती है। मानसून धाराओ के इस अस्थिर प्रकृति के कारण ही किसी निश्चित समय पर देश का एक भाग बाढ तथा दूसरा भाग सूखे की स्थिति से प्रभावित रहता है। मानसून धाराये जब वेगवती होती है तो प्रायद्वीप के दक्षिण पूर्वी भाग तथा हिमालय के तराई क्षेत्रो को छोडकर पूरे देश मे प्रचुर वर्षा होती है। इस स्थिति को **सक्रिय मानसून** की स्थिति कहते है। मानसून धाराये जब क्षीण होती हैं, तो दक्षिणी प्रायद्वीप के दक्षिण पूर्वी भाग तथा तराई क्षेत्रो मे वर्षा की मात्रा बढ जाती है तथा देश के मैदानी क्षेत्रो मे वर्षा रुक जाती है। इस स्थिति को **मानसून-भंग** की स्थिति कहते है। मानसून भंग का अवधि अनिश्चित है, यह 3 से लेकर 21 दिन तक भी हो सकती है। यह देखा गया है कि अगस्त-सितम्बर मे मानसून भंग की अवधि, जुलाई की अपेक्षा लम्बी होती है तथा कभी-कभी तो इसके साथ ही मानसून की समाप्ति भी हो जाती है। जुलाई में साधारणतः मानसून भंग की अवधि 2 से 5 दिन

मानसून-भग, ये दोनो स्थितियाँ धरातल तथा उच्चतर वायु मानचित्रो पर कुछ विशेष समकालीन स्थितियो द्वारा सम्बन्धित पायी जाती है, जो निम्नांकित है :

(1) धरातल मौसम चार्ट के लक्षण

(अ) मानसून-द्रोणिका, जो मानसून काल मे गगा के मैदानी क्षेत्रो समेत पंजाब से लेकर बगाल की उत्तरी खाडी तक स्थापित होती है की स्थिति मे चलन शीलता धरातल चार्ट पर देखी जा सकती है। इस द्रोणिका का अक्ष अपनी सामान्य स्थिति से उत्तर या दक्षिण की तरफ स्थानान्तरित होती है। मानसून भंग की स्थिति मे यह अक्ष उत्तर की ओर सिमट कर हिमालय-शृंखलाओ के दक्षिणी सिरे के साथ लग जाती है। सक्रिय मानसून की स्थिति मे यह अक्ष दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होता है। जब बंगाल की उत्तरी खाडी मे मानसून अवदाव पैदा होते है, तो इस अक्ष का दक्षिण पूर्वी सिरा शीर्ष खाडी मे अवस्थित रहता है। मानसून अवदाव मानसून की सक्रियता बढा देते है। मानसून-भग की अवधि मे तराई क्षेत्रो मे अधिक वर्षा होने से उत्तरी भारत की नदियो मे जिनका उद्गम हिमालय की शृंखलाओ मे है, बाढ आ सकती है।

(ब) मानसून-भग की स्थिति में दाब-प्रवणता गुजरात, राजस्थान तथा निकटवर्ती क्षेत्रों को छोड़कर शेष भारत मे बहुत कम हो जाती है। इसके विपरीत सक्रिय मानसून की स्थिति मे दाब प्रवणता अधिक होती है। उदाहरण के लिए मानसून भग की स्थिति मे दहानू तथा त्रिवेन्द्रम के बीच माध्य दाबान्तर 3 मिलीबार पाया गया है, जबकि सामान्य स्थिति मे इन स्थानो के बीच दाबान्तर लगभग 7 मिलीबार होता है।

(स) मानसून-भग की स्थिति मे स्थल क्षेत्रो पर दाब विचलन सामान्यतः धनात्मक तथा सागरीय क्षेत्रो पर ऋणात्मक पाया जाता है। सक्रिय मानसून की स्थिति ठीक इसके विपरीत होती है।

(द) मानसून-भग की स्थिति मे पश्चिमी तट के दोनो ओर समदाब रेखाएँ दक्षिण की ओर झुकती है तथा उच्च दाब का कटक बनाती है। सक्रिय मानसून की स्थिति मे समदाब रेखाएँ पश्चिमी तट पर प्राय. लम्बवत होती है।

(2) उच्चतर वायु चार्ट के लक्षण

(अ) निम्न क्षोभ मण्डल के स्तरो पर (700 मिलीबार तक) भारतीय प्रायद्वीप मे पश्चिमी वायु (20 – 30 नाट) काफी ऊँचाई तक पायी जाती है। मानसून-भग की स्थिति मे प्रायद्वीप मे अपेक्षाकृत कमजोर पश्चिमी वायु बहती है तथा कम ऊँचाई तक ही सीमित रहती है। इस स्थिति मे गंगा के मैदानी क्षेत्रो पर मानसून द्रोणिका का अक्ष भी निम्न क्षोभ मण्डल की तहों मे प्राय· नही पाया जाता है या क्षीण रहता है।

(ब) सक्रिय मानसून की स्थिति मे धरातल तथा निचले स्तरों पर उत्तर प्रदेश बिहार तथा असम क्षेत्र मे पूर्वी वायु पायी जाती है। किन्तु मानसून-भंग की

स्थिति मे इन क्षत्रो से पूर्वी वायु लुप्त हो जाती है तथा हिमालय के दक्षिण सिरे तक पश्चिमी वायु वहने लगती है।

(स) सक्रिय मानसून की स्थिति मे उच्चतर क्षोभ मंडल मे पाकिस्तान तथा समीपवर्ती उत्तर पश्चिमी भारत पर उपोष्ण कटिवधी कटक पाया जाता है। इस कटक का अक्ष 30° उ. अक्षाश के लगभग गुजरता है। मानसून-भग की स्थिति मे इस कटक का दक्षिण की ओर स्थानान्तरण हो जाता है तथा इसका अक्ष लगभग 26–27° उ अक्षाश से होकर गुजरता है। तिब्वत पठार का प्रतिचक्रवात क्षेत्र भग तथा क्षीण मानसून स्थिति मे प्राय दक्षिणी अक्षाशो मे स्थानान्तरित हो जाता है।

14.56 भारतीय मानसून और जेट धारायें

दक्षिणी पश्चिमी मानसून काल के अतिरिक्त वर्ष भर उपोष्ण कटिबन्धी पश्चिमी जेट धारा 20° उ. अक्षाण से उत्तरी भारत पर 9 से 12 किमी की ऊँचाई पर बहती हे। जैसे-जैसे उत्तर की ओर बढते है. तीव्रतम धाराओ की ऊँचाई घटती जाती हे तथा जेट की गहराई बढती जाती है। 60 नाट की वायु गति, 20° उ. अक्षांश पर 12 किमी के आसपास पाई जाती हे, जबकि 23° उ. अक्षांश से जेट धारा 9 से 14 किमी ऊँचाई के बीच प्रवाहित होती है। फरवरी मे तीव्रता अधिकतम पाई जाती है। तत्पश्चात घटने लगती है। अप्रेल मे अधिकतम वायुगति 60 नाट तक गिर जाती है तथा मई में जेट-धारा 30° उ अक्षाण से उत्तर की ओर स्थानान्तरित हो जाती है, साथ ही इसकी गति और घटकर 50 नाट रह जाती है।

केरल तट पर मानसून के अभ्युदय के साथ ही पश्चिमी जेट-धाराओ का भारतीय क्षेत्र से लोप हो जाता है। इस घटना को भारत पर मानसून के आगमन का एक महत्वपूर्ण सकेत माना जाता है। मानसून-काल के वाद अक्टूबर मे 30° उ. अक्षाश के आसपास 12 किमी पर 50 से 60 नाट की गति के साथ जेट धाराये पुन. स्थापित होती है, जो शनै शनै तीव्रतर होती जाती है। जब कभी मानसून मे लवा अवरोध या क्षीण अवस्था उत्पन्न हो जाती है, तो पश्चिमी जेट धाराये पुनः भारतीय अक्षाशो मे वापस आ जाया करती है।

मानसून काल मे 25° उ. अक्षाश के दक्षिण मे 14 से 16 किमी के वीच पूर्वी जेट-धाराये वहती है। ये धारायें अफ्रीका के पूर्वी तट तक ही पाई जाती है। औसत रूप से पूर्वी जेट-धाराओ का अक्ष 16 किमी पर 13° उ. के समानान्तर माना जा सकता हे, जहा वायुगति 80 नाट की आकलित की गई है। सक्रिय तथा क्षीण मानसून की अवस्थाओ मे यह अक्ष औसत स्थिति से उत्तर या दक्षिण की ओर स्थानान्तरित हो जाती है।

ग्रीष्म मानसून मे उच्चतर वायुमण्डल के प्रत्येक तह में ताप उच्चतम् प्राय 30° उ. अक्षाश के आसपास स्थित होता है और तापमान दक्षिण की ओर क्रमश. घटता जाता है। यह ताप प्रवणता उत्तरी भारत मे 100 मिलीबार स्तर तक स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। फलतः ताप हवाओं की दिशा पूर्वी होती है,

जिससे पश्चिमी प्रवाह ऊँचाई के साथ क्षीण होता जाता है और पूर्वी प्रवाह तीव्रतर। इसी ताप-प्रवणता के कारण निम्न क्षोभमण्डल मे प्रायद्वीप पर वहती पश्चिमी प्रवाह उत्क्रमित होकर पूर्वी जेट-धारा के रूप मे विकसित हो जाता है।

उच्चतर वायुमण्डल मे 27° उ. अक्षाश तक 10 से 20 नाट का पूर्वी प्रवाह तथा 32° उ. अक्षांश के उत्तर मे इसी क्रम का पश्चिमी प्रवाह प्रमुख होता है। इन सीमाओ के वीच सक्रमण क्षेत्र होता है।

जून के पूर्वी जेट प्रायद्वीप के दक्षिणी भागो मे ही सीमित रहता है। तत्पश्चात्-तीव्रतम प्रवाह रेखा उत्तर की ओर स्थानान्तरित होने लगती है तथा इसकी ऊँचाई भी कुछ बढने लगती है।

14.57 आर्द्रता—इस काल मे आर्द्रता का चलन वहुत कम होता है और उत्तरी पश्चिमी भारत के अतिरिक्त हर स्थान पर सापेक्ष आर्द्रता 80–90% के वीच पाई जाती है। भारी वर्षा होने पर 95% से भी अधिक आर्द्रता सामान्य है।

तड़ित झंझा—भारत मे तडित झझा की अधिकतम घटनाएं पूर्वमानसून और उत्तर मानसून काल मे उत्पन्न होती हैं। सर्वाधिक झझाए श्रीलका, मालावार तथा तेनामरीम पर होती है। तटीय वगाल, वगलादेश, मद्रास तथा कर्णाटक मे भी इनकी सख्या काफी होती हैं। सर्वाधिक प्रखर तडित झझाए वगाल तथा आसाम मे काल वैशाखी से सम्बन्धित होती है। चित्रो (14 22, 14.23) मे जून तथा सितम्वर मे तडित झझाओ का आवंटन प्रदर्शित किया गया है।

मेघाच्छन्नता—मानसून काल मे तटीय तथा पर्वत क्षेत्रों मे मेघ सवसे अधिक गहन पाये जाते है। मानसून अक्ष के आसपास भी गहनता पर्याप्त रहती है। सवसे कम मेघाच्छन्नता सिन्ध, वलूचिस्तान तथा फारस पर पाई जाती है।

14 60 उत्तर मानसून काल

सितम्वर के उत्तरार्ध मे मानसून उत्तर से हटना आरम्भ कर देता है और वहां शीतल तथा शुष्क वायुराशि स्थापित होती जाती है। वगाल की खाडी की शाखा उत्तरी भारत के मैदानो से तथा अरव सागर की शाखा राजस्थान, गुजरात तथा दक्षिणी प्रायद्वीप से होती हुई उसी मार्ग पर वापस हट जाती है, जिसमे उसका अभ्युदय होना है। अक्टूबर के आरम्भ मे ही पश्चिमोतर भारत का निम्नदाव क्षेत्र समाप्त हो जाता है। इस क्षेत्र का दाब तेजी से वढता है, उत्तरी पूर्वी भारत तथा दक्षिणी प्रायद्वीप का दाव भी वढता है, किन्तु वृद्धि दर अपेक्षाकृत कम होती है। वगाल की खाडी के मध्य एव दक्षिणी भागो मे दाव कुछ कम हो जाता है। अत. पूरे देश पर लगभग समदाव की स्थिति छा जाती है, जिससे दाव प्रवणता अत्यन्त क्षीण हो जाती है। इसी समय मध्य वगाल मे एक क्षीण निम्नदाव विकसित हो जाता है। कुल मिलाकर इस ऋतु मे भारतीय उपमहाद्वीप के ऊपर दाव प्रणाली वहुत प्रसारित (diffused) अवस्था मे रहती है तथा हवाएं अव्यवस्थित रूप से वहती हैं। अक्टूबर-

नवम्बर काल दक्षिणी पश्चिमी मानसून से उत्तरी पूर्वी मानसून स्थापित होने के बीच का संक्रमण काल है, जिसमे दाब और वायु प्रवाह की परिस्थितियां शनै. शनै: परिवर्तित होती जाती हैं। क्षीण वायु प्रवाह उत्तरी भारत मे प्राय. उत्तरी पश्चिमी, चरम दक्षिणी प्रायद्वीप मे पश्चिमी तथा प्रायद्वीप के उत्तरी भागो मे पूर्वी या उत्तरी पूर्वी पाई जाती है। नवम्बर मे मध्य एशिया पर उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब विकसित होना आरम्भ कर देता है जो उत्तरी पश्चिमी भारत को अपने प्रभाव क्षेत्र मे ले लेता है। फलस्वरूप दाब प्रवणता तथा वायु प्रवाह उत्क्रमित होने लगती है। यह उत्क्रमण दिसम्बर के आरम्भ तक पूरा हो जाता है।

14.61 धरातलीय तापमान

मानसून के उत्तरी भारत से हटने के साथ साथ, यहा मौसम शुष्क तथा साफ होने लगता है तथा तापमान तेजी से गिरने लगते हैं। निम्नतम तापमान मे यह गिरावट अधिकतम तापमान की अपेक्षा अधिक सुस्पष्ट होती है। उत्तर पश्चिमी भारत मे अक्टूबर मे औसत अधिकतम तापमान 38°C से भी नीचे आ जाता है तथा नवम्बर मे और गिरावट आ जाती है। नवम्बर मे पश्चिमोत्तर भारत का औसत तापमान 28°C से कम होता है। देश के धुर (extreme) उत्तरी प्रदेशो मे तो कई दिन तापमान हिमांक से भी नीचे आ जाता है।

अक्टूबर माह के प्रारम्भ से तापमान का दैनिक परिसर मे भी वृद्धि होने लगती है। तापमान का दैनिक परिसर पश्चिमी भारत मे अधिकतम होता है जहा इसका मान 16 से 17° सेन्टीग्रेड तक होता है। दक्षिण की ओर दैनिक परिसर कम होता जाता है तथा धुर दक्षिणी भागो मे इसका मान 6 से 7° सेन्टीग्रेड तक रह जाता हैं।

14.62 धरातलीय हवायें

धरातलीय दाब के प्रसारित (diffused) होते ही मानसून हवाये भारत पर बहुत क्षीण हो जाती है। उत्तरी भारत पर प्रायः उत्तरी पश्चिमी हवाये बहती हैं तथा दक्षिण मे इनकी प्रकृति परिवर्तन शील पायी जाती है। मध्य बगाल की खाडी मे उत्तरी पूर्वी से पूर्वी तथा धुर दक्षिण मे पश्चिमी हवाये साधारणत विद्यमान रहती हैं।

14 63 आर्द्रता तथा मेघाच्छन्नता

उत्तरी भारत की सापेक्ष आर्द्रता निरन्तर घटती जाती है और नवम्बर के अन्त तक लगभग 50% हो जाती है। सबसे अधिक औसत सापेक्ष आर्द्रता दक्षिणी प्रायद्वीप मे 60-70% पायी जाती है। मेघाच्छन्नता मे भी तीव्र ह्रास देखा जाता है तथा अक्टूबर के प्रथमार्द्ध के बाद उत्तरी पश्चिमी तथा मध्य भारत पर आसमान प्राय साफ रहता है। उत्तरी-पूर्वी भारत मे आंशिक रूप से मेघाच्छन्नता पायी जाती है। नवम्बर मे आसाम को छोडकर शेष उत्तर-पूर्व मे आसमान स्वच्छ रहता है। आसाम से कुछ दिन मेघ युक्त आकाश दृष्टिगोचर होता है।

स्वाच्छाकाश की घटना दक्षिण की ओर बढती जाती है तथा नवम्बर के अन्त तक प्रायद्वीप के पूर्वी तटो को छोड कर शेष भाग मेघ रहित रहता है।

अक्टूबर मे कपासी वर्षी की घटनाए सबसे अधिक केरल मे होती है जहां औसत रूप से 12 तडित झंझाए उत्पन्न होती है। उत्तर मे ये घटनाए घटती जाती है तथा बम्बई तक इनकी सख्या 2 रह जाती है। नवम्बर मे भी तडित झंझा इसी प्रकार केरल (औसत सख्या 12) मे उत्तर की ओर घटती जाती है। जो 15° उ. अक्षाश से ऊपर 2 से कम रह जाती है।

14.64 चक्रवात अक्टूबर और नवम्बर भारतीय सागरो मे चक्रवातो का मौसम कहलाते है क्योकि खाडी और अरब सागर दोनो मे ही प्रखर तीव्रता के चक्रवात प्राय: 10–14° उ. अक्षाशो के बीच इसी काल मे उत्पन्न होते हैं। इनकी सख्या इस काल मे औसत रूप से 1 से 3 तक पायी जाती है। विस्तृत विवरण अध्याय 8 मे दिया जा चुका है।

14.70 उच्चतर वायुप्रवाह तथा तापमान

(क) शीतकाल मे उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब की एक कटक निम्न वायु मण्डलीय तहो मे अरब सागर से दक्षिणी पूर्वी एशिया तक दौडती है। यह कटक ऊंचाई के साथ दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होती जाती है। कुछ सौ मीटर ऊंचाई तक इस कटक के उत्तर मे पश्चिमी या उत्तरी पश्चिमी हवाए चलती है तथा दक्षिण मे उत्तरी-पूर्वी से दक्षिणी-पूर्वी के बीच। लगभग 1500 मीटर के बाद प्रवाह उत्तरी भारत पर पूर्णत पश्चिमी पाया जाता है जहां वायुगति ऊंचाई के साथ निरन्तर बढ़ती जाती है। 25 से 30° उ. अक्षाशो के बीच 6 किमी पर 40 नाट, 9 किमी पर 75 नाट, तथा 12 किमी पर 85 नाट का पश्चिमी प्रवाह देखा जाता हैं। इसके बाद हवाये प्राय मन्द होती जाती है।

1.5 से 9 किमी ऊंचाई के मध्य हर स्तर पर तापमान 15° उ. अक्षांश से उत्तर की ओर घटता चला जाता है। 12-13 किमी पर सारे भारत पर तापमान —50°C (± 3°C) के लगभग पायी जाती है, इसके बाद तापमान प्राय स्थिर रहता है या ऊंचाई के साथ बढने लगता है। 15° उ. अक्षाँश के दक्षिण मे प्रायद्वीप पर लगमग 9 किमी पर उच्च तापमान का क्षेत्र स्थिर रहता है।

23° उ. अक्षाश के उत्तर मे उष्ण कटिबन्धी तथा शीतोष्ण कटिबन्धी दोनोक्षोभ सीमाएं जनवरी मे वर्तमान पायी जाती है इनकी माध्य स्थितियाँ क्रमश 100 तथा 210 मिलीबार स्तर पर आकलित की गई है। 30° उ. अक्षांश पर उष्ण कटिबन्धी क्षोभ सीमा का तापमान —68°C पाया जाता है जो 15° उ. अक्षाशो के नीचे घट कर —75° तक चला जाता है।

शीतकाल मे मध्य और उत्तरी भारत के निम्न क्षोभ मन्डल में तापमान का आवटन एक और महत्वपूर्ण विशेषता रखता है रात्रि मे धरातलीय व्युत्क्रमण। 1.5 से 3 किमी के मध्य ह्रास दर मध्य भारत में निम्नतम (4°C/किमी) होता है

पश्चिमी बंगाल की खाडी में भी ह्रास दर लगभग इसी क्रम का पाया जाता है जो उत्तरी-पूर्वी व्यापारी हवाओ मे व्यापारी वायु व्युत्क्रमण (trade wind inversion) उत्पन्न करता करता है ।

3 से 9 किमी तक पूरे भारत पर 6°C/किमी का सम ह्रास दर पाया जाता है। दक्षिणी प्रायद्वीप मे 9 किमी से ऊपर ह्रास दर 7°C/किमी होता है जो 12 किमी के बाद ऊंचाई के साथ घटने लगता है। इससे उत्तरी अक्षांशो मे 9 किमी से ही ह्रास दर घटना आरम्भ हो जाता है।

(ख) अप्रैल मे उपोष्ण कटिबन्धी कटक 3 किमी तक 18° उ. अक्षांश के पास वर्तमान रहता है जो ऊंचाई के साथ दक्षिण की ओर खिसकते हुए 12 किमी पर 8° उ. अक्षांश पर आ जाता है। इसके प्रभाव मे बहती पश्चिमी हवायें उत्तर भारत मे ऊंचाई के साथ बढती है जो 9 किमी पर अधिकतम 40 नाट तक पहुंचती है।

मई मे पूरे देश मे ऊर्ध्व प्रवाह निम्न तहो मे पश्चिमी ही पाया जाता है। उत्तरी भारत मे 14 किमी तक निरन्तर बढता हुआ पश्चिमी प्रवाह मिलता है। जिसकी अधिकतम नति 50 'नाट' की 14 किमी पर पायी जाती है। तत्पश्चा प्रवाह घटने लगता है। प्रायद्वीप पर उच्चतर वायुमण्डल मे हल्की पूर्वी हवाये स्थापित होने लगती हैं।

अप्रैल मे 1.5 किमी पर उच्च ताप क्षेत्र (26°C) 22° उ., 88° पू के आसपास केन्द्रित रहता है, जहा से चारो ओर तापमान घटता जाता है। यह घटाव 30° उ. तक 4°C तथा 8° उ. तक 7°C का औसत रखता है। 30° उ. के उत्तर मे प्रवणता और तीव्र हो जाती है। ऊंचाई के साथ उच्च ताप क्षेत्र दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होता रहता है। 6 किमी पर तापमान 12° उ. के उत्तर मे घटता जाता है जबकि दक्षिण मे लगभग सम होता है। 12 किमी पर पूरे देश मे —50°C का तापमान 2°C के परिसर मे सम पाया जाता है।

25° उ. के उत्तर मे दुहरी क्षोभ सीमा वर्तमान रहती है, 15 किमी पर उष्ण कटिबन्धी तथा 12 किमी पर शीतोष्ण कटिबन्धी। इन स्तरो पर तापमान क्रमश. 76 तथा —68°C पाया जाता है।

ह्रास दर निम्न क्षोभ मण्डल मे सबसे अधिक पश्चिमी भारत में पाया जाता है, लगभग 9°C किमी। दक्षिण और पूर्व दोनो ओर घटते हुए पोर्ट ब्लेयर तथा त्रिवेन्द्रम हैं निम्नतम (5.5°C/किमी) हो जाता है। 12 किमी ऊंचाई पर ह्रास दर पूरे भारत मे घटकर 2–4°C/किमी रह जाता है।

मई मे 1.5 किमी का उच्चताप क्षेत्र थोडा उत्तर मे स्थानान्तारित होकर 23° उ, 78° पू. पर केन्द्रित हो जाता है—जहा से पूर्व और दक्षिण मे तापमान मे तेजी से गिरावट आती है। जैसे-जैसे ऊपर जाते है, ताप प्रवणता घटती जाती है। 12 से 16 किमी के मध्य तापमान प्रायद्वीप पर प्राय: स्थिर रहता है जब कि उत्तर की ओर थोड़ा बढता हुआ पाया जाता है।

(ग) जून के अन्त तक जब मानसून द्रोणिका निम्न तहों में उत्तर भारत पर पूर्णतः स्थापित हो जाती है, तो इसका अक्ष एक सीमा रेखा बनाती है जिसके दक्षिण में पश्चिमी तथा उत्तर में पूर्वी प्रवाह विद्यमान रहता है। भारत की उत्तरी सीमाओं पर उच्चतर वायु मण्डल में प्रतिचक्रवाती प्रवाह प्रमुख रहता है, जिसमें 22° उ. अक्षांश से दक्षिण में पूर्वी प्रवाह पाया जाता है। और अधिक ऊंचाइयों पर कटक रेखा 28° उ. अक्षांश पर विद्यमान होती है--उसके दक्षिण में निरन्तर तीव्र होती हुई पूर्वी हवायें बहती हैं। प्रायद्वीप में 16 किमी पर इनकी गति 50 नाट के लगभग हो जाती है।

जुलाई में मानसून द्रोणिका का अक्ष सामान्यतः दिल्ली और कलकत्ता को मिलाती हुई स्थित रहती है। इसके दक्षिण में पश्चिमी तथा उत्तर में दक्षिणी पूर्वी या पूर्वी प्रवाह पाया जाता है। पश्चिमी प्रवाह प्रायद्वीप पर लगभग 2 किमी की ऊँचाई तक तीव्रतर होता जाता है तथा 20–25 नाट की अधिकतम गति प्राप्त कर लेता है।

मानसून अक्ष ऊंचाई के साथ दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होता हुआ पाया जाता है, जो 3 किमी पर 23° उ अक्षांश पर स्थित रहता है। इसके ऊपर द्रोणिका बहुत क्षीण हो जाती है।

पाकिस्तान के ऊपर स्थित ताप निम्नदाब 3 किमी से ऊपर उच्चदाब में रूपान्तरित होने लगता है। इसके प्रभाव में हल्की पूर्वी हवायें बहती हैं। 9 किमी ऊँचाई पर सर्वत्र पूर्वी प्रवाह व्याप्त रहता है। 12 से 16 किमी के बीच उत्तरी पूर्वी भारत पर एक और कटक विकसित हो जाता है जिससे पूर्वी हवायें तीव्रतर होती जाती हैं। यही हवायें 14–16 किमी पर प्रायद्वीपीय भारत पर पूर्वी जेट धाराओं का निर्माण करती है।

जून में 1.5 किमी का ताप उच्चतम पाकिस्तान तथा संलग्न पश्चिमोत्तर भारत पर स्थित पाया जाता है, जहा से पूर्व और दक्षिण की ओर तापमान घटता जाता है। 6 किमी के आस पास 25 से 30° उत्तरी अक्षांशों के बीच एक कमजोर उच्चताप कटक विकसित हो जाता है जो 16 किमी की ऊंचाई तक विद्यमान रहता है। इस मास में केवल उष्ण कटिबन्धी क्षोभ सीमा उपस्थित होती है, जिसकी ऊँचाई 15° उ. अक्षांश पर 110 मिलीबार तथा 25° उ. अक्षांश पर 100 मिलीबार पायी जाती है।

जुलाई में उच्चताप क्षेत्र (28°C) ईरान तथा अरब के केन्द्रीय भागों पर स्थापित हो जाता है। 1.5 किमी पर उत्तरी पश्चिमी भारत इसके कटक के प्रभाव में रहता है। 20° उ. के दक्षिण में तापमान प्रवणता बहुत कम पायी जाती है। 25–30° उत्तरी अक्षांश के मध्य क्षोभ सीमा की ऊंचाई सर्वाधिक (95 मिलीबार) होती है। यहा तापमान —75°C रहता है। इस क्षेत्र के दोनों ओर क्षोभ सीमा की ऊँचाई घटती जाती है।

भाप भरी मानसून धाराओं के प्रवाह के कारण अधिकाश भागो मे 5°C/किमी के लगभग ह्रास दर निचली तहो मे पाया जाता है। ऊंचाई के साथ ह्रास दर बढ़ता जाता है, जो 9–12 किमी की तह मे अधिकतम (7–8°C/किमी) हो जाता है।

(घ) अक्टूबर तक मानसून प्राय समाप्त हो जाता है। इस मास मे 10°उ अक्षांश के नीचे भी निम्नतहों में पश्चिमी प्रवाह प्रचलित रहता है। लगभग 6 किमी ऊंचाई पर 17° उ अक्षांश के समान्तर एक कटक स्थित रहता है जिसके उत्तर मे पश्चिमी प्रवाह होता है। यहाँ वायुगति ऊंचाई के साथ लगातार बढती जाती है और पश्चिमोत्तर भारत मे 12–14 किमी पर 50 से 60 नाट तक का उच्चतम प्रदर्शित करती है। पूर्वोत्तर भारत मे गति कम पायी जाती है। कटक के दक्षिण मे पूर्वी प्रवाह होता है। यह प्रवाह भी 9 किमी के ऊपर तीव्रतर होता जाता है और 14 किमी पर अधिकतम वायुगति प्राप्त कर लेता है।

इस मास में 1.5 किमी पर 22°C का उच्चताप क्षेत्र गुजरात तथा पाकिस्तान तट पर स्थित होता है, जो 6 किमी तक ऊंचाई के साथ दक्षिण की ओर खिसकता जाता है। 9 किमी पर —30°C का उष्ण क्षेत्र पूरे प्रायद्वीप तथा सलग्न मध्य भारत को घेर लेता है। 12 किमी पर पूरे एशिया पर तापमान लगभग समान हो जाता है। तापमान प्रवणता हर स्तर पर बहुत क्षीण पायी जाती है। ध्रुवीय क्षोभ सीमा 30° उ अक्षाश पर अवतरित हो जाती है। उष्ण कटिबंधी क्षोभ सीमा लगभग 110 मिलीबार स्तर पर (तापमान —75°C) पायी जाती है। 3 किमी ऊंचाई तक ह्रास दर पश्चिमोत्तर भारत मे अधिकतम (7°C/किमी) रहता है जो पूर्व और दक्षिण की ओर घटता जाता है। आसाम में यह 6°C/किमी तथा त्रिवेन्द्रम मे 5°C/किमी के लगभग पाया जाता है।

(च) तापमान का वार्षिक परिसर पूरे भारत मे हर स्तर पर उत्तर से दक्षिण की ओर लगभग बढ़ता जाता है। किन्तु 12 किमी के ऊपर तापमान परिसर लगभग सम हो जाता है।

(छ) विभिन्न ऊंचाइयो पर औसत मासिक ह्रास दर का मान सारणी (14.2) से दिया गया है।

सारणी (14.2)
माध्य मासिक ह्रास-दर (डिग्री सेन्टीग्रेड/किमी)

उत्तरी भारत

मास / ऊँचाई (किमी.)	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु	अ.	सि.	अ.	न.	दि	वार्षिक माध्य
धरातल–2	5.7	6.3	7.9	6.9	8.8	8.3	5.5	6.2	6.8	7.9	5.6	4.9	6.7
2–4	5.5	5.8	6.8	8.2	8.9	8.1	4.2	4.9	5.9	6.1	5.8	5.3	6.3
4–6	6.4	6.4	6.8	6.7	7.1	5.9	5.3	5.3	4.9	5.7	5.8	7.1	6.1
6–8	5.9	6.7	6.7	6.8	6.2	5.3	5.7	5.2	5.7	6.5	6.3	7.6	6.2
8–10	4.1	4.5	6.0	7.1	6.7	7.2	6.3	7.3	7.5	6.9	6.3	8.1	6.7

दक्षिणी भारत

मास / ऊँचाई (किमी.)	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु	अ.	सि.	अ.	न.	दि	वार्षिक माध्य
धरातल–2	9.3	8.7	8.7	8.3	8.3	8.0	7.0	8.0	7.0	7.3	8.7	7.7	8.1
2–4	5.4	7.3	8.3	8.7	7.9	6.9	5.3	5.3	5.5	5.2	4.7	4.8	6.2
4–6	6.5	5.9	5.0	6.3	5.4	6.1	5.9	5.3	5.5	5.9	5.9	9.9	5.8
6–8	6.6	6.1	7.0	6.1	6.9	5.8	5.7	5.1	6.3	6.4	6.1	6.9	6.3
8–10	7.4	6.9	7.7	7.5	7.7	7.6	7.3	7.9	7.3	7.5	7.7	7.5	7.5

14·80 वर्षा का आवंटन

चित्र (14·20) औसत वार्षिक वर्षा का आवंटन प्रस्तुत करता है। भारत मानसून प्रधान देश है। जम्मू और काश्मीर, चरम दक्षिणी तट तथा पूर्वी घाट के क्षेत्रों को छोड कर पूरे देश में कुल वर्षा का 80–90% भाग केवल दक्षिणी पश्चिमी मानसून के चार महीनो मे प्राप्त हो जाता है।

वर्षा के आवंटन को भारत मे सर्वाधिक प्रभावित करने वाला तत्व प्रर्वत शृंखलाएँ हैं क्योकि मानसून धारायें पश्चिमी घाट तथा उत्तरी पूर्वी भारत के पहाडियो को प्राय. लम्बवत् रूप से काटती हैं। खासी-जयन्तिया के दक्षिणी ढाल पर 1000 सेमी से अधिक वार्षिक वर्षाप्राप्त होती है, जबकि ब्रह्मपुत्र के उत्तरी भागो पर मानसून धाराओ के अनुवर्ती भागो मे पड़ने के कारण बहुत कम(लगभग 200 सेमी) वार्षिक वर्षा मिल पाती हैं। संसार का सर्वाधिक वर्षा का स्थान चेरा पूंजी इन्ही पहाड़ी मोड़ो मे समुद्रतल से 1313 मीटर की ऊंचाई पर स्थित हैं। मानसून धाराओ का पर्वतीय-आरोहरण ही इस स्थान के लगभग 1142 सेमी औसत वार्षिक वर्षा का कारण है। पश्चिमी घाट के पवनाभिमुखी भाग लगभग 600 सेमी वार्षिक वर्षा प्राप्त करते हैं जबकि लगभग 70–75 किमी अनुवर्ती भाग मे वार्षिक घट कर 50–60 सेमी रह जाती है।

मानसून भारत की भूमि पर दो धाराओ मे पहुँचता है, अरब सागर की शाखा तथा बंगाल खाड़ी की शाखा। अरब सागर की शाखा जून के प्रथम सप्ताह में पश्चिमी तट पर प्राय दक्षिण पश्चिम दिशा से पहुँचती है और पश्चिमी घाट पर आरोहरण के कारण आस पास के क्षेत्रो मे भारी वर्षा उत्पन्न करती है। घाट से उतरने के बाद मानसून पश्चिमी प्रवाह के रूप मे प्रायद्वीप पर आगे बढ़ता है। क्रमश: इन धाराओ की उत्तरी सीमा भी और उत्तर की ओर अग्रसर होती जाती है। पश्चिमी प्रवाह जैसे-जैसे प्रायद्वीप पर आगे बढ़ता है, मानसून धाराओ की शुष्कता तथा फलस्वरूप वर्षा की मात्रा भी निरन्तर घटती जाती है। यहाँ तक कि पूर्वी घाट पर आरोहरण करते समय यह इतनी शुष्क हो जाती है कि वहाँ इस ऋतु मे वर्षा लगभग नही के बराबर पायी जाती है। इस प्रकार पूर्वी घाट से उतर कर लगभग शुष्क हुई धारायें बंगाल की खाडी मे प्रविष्ट करती हैं।

बंगाल खाड़ी की दक्षिणी पश्चिमी मानसून धारायें मई के अन्त मे ही अराकान तथा तेनासेरिम तटो पर भारी वर्षा आरम्भ कर देती हैं। किन्तु मध्य बर्मा की ओर वर्षा की तीव्रता तेजी से घटती जाती है। जो धारायें अपेक्षाकृत दक्षिणी पथ पर चलती हुई बंगाल तथा बंगला देश तट पार करती हैं वे आसाम तथा बर्मा की पहाडियो से परावर्तित होकर पश्चिम की ओर मुड जाती हैं तथा पूर्वी प्रवाह के रूप मे क्रमश. आसाम, बंगाल, उड़ीसा, बिहार, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा राजस्थान पर वर्षा उत्पन्न करती है। यात्रा के दौरान धाराओ की तीव्रता घटती जाती है, जिसके परिणामस्वरूप वर्षा की मात्रा निरन्तर घटती जाती है।

विभिन्न ऋतुओ मे वर्षा आवंटन के कुछ प्रमुख तथ्य निम्नांकित हैं।

(क) (i) शीतकाल की वर्षा दो भागो मे बांटी जा सकती है। 1. पश्चिमी विक्षोभो द्वारा उत्पन्न उत्तरी भारत की वर्षा 2 उत्तरी-पूर्वी मानसून द्वारा उत्पन्न दक्षिणी-पूर्वी प्रायद्वीप की वर्षा, जो दिसम्बर मे सर्वाधिक होती है।

इस काल मे लगभग 5 विक्षोभ प्रतिमास सक्रिय रहते हैं, किन्तु वर्षा उत्पन्न करने की क्षमता सभी मे भिन्न-भिन्न पायी जाती है। हिमालय की पहाड़ियाँ प्राय: भारी वर्षा तथा तुषार प्राप्त करती हैं। मैदानी भागो मे वर्षा सबसे अधिक, उत्तरी पश्चिमी भारत तथा आसाम मे होती है। कभी-कभी मध्य प्रदेश तथा प्रायद्वीप के उत्तरी भाग भी हल्की वर्षा प्राप्त करते हैं।

उत्तरी-पूर्वी प्रवाह कारोमण्डल तट से दक्षिण के तटीय क्षेत्रों मे अच्छी वर्षा उत्पन्न करता है। कभी-कभी दिसम्बर मे बंगाल की खाडी मे चक्रवात भी उत्पन्न हो जाते हैं, जो प्राय. मद्रास से नीचे तटो से टकरा कर भारी वर्षा देते हैं। वर्षा की तीव्रता आन्तरिक भागो मे घटती जाती है।

(ii) दिसम्बर मे 1 सेमी या अधिक वर्षा का क्षेत्र जम्मू-काश्मीर, पजाब, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तरी-पूर्वी आसाम पर सीमित रहता है। जनवरी मे इन स्थानो की वर्षा बढ जाती है और साथ ही 1 सेमी से अधिक वर्षा का क्षेत्र पूर्वी राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश तथा पूरे पूर्वोत्तर भारत पर फैल जाता है। फरवरी मे वर्षा की मात्रा बगाल, उड़ीसा, दक्षिणी-पूर्वी मध्यप्रदेश और आसाम मे बढ जाती है, किन्तु जम्मू-काश्मीर, पजाब तथा पूर्वी राजस्थान मे थोडा घट जाती है। सबसे अधिक वृद्धि 1–3 सेमी आसाम मे पाई जाती है।

(iii) शीतकाल मे हिमालय के दक्षिण मे अक्षाशो के साथ वर्षा लगातार घटती जाती है। इन दिनो सबसे अधिक वर्षा हिमाचल प्रदेश मे तथा काश्मीर मे होती है। दिसम्बर मे ये क्षेत्र लगभग 6 तथा जनवरी-फरवरी मे 15 सेमी वर्षा प्राप्त करते है।

(iv) मैदानी भागो की वर्षा प्राय. तड़ित झंझा युक्त होती है। पंजाव, हिमाचल प्रदेश, पश्चिमी उत्तर और मध्य प्रदेश तथा उत्तरी आसाम पर दिसम्बर मे 0 5 दिन तडित झझा का औसत आता है, जो जनवरी तथा फरवरी मे बढकर 1 दिन हो जाता है। साथ ही क्षेत्र पूरे उत्तरी भारत पर विस्तृत हो जाता है। जनवरी मे सर्वाधिक तडित दो दिन पश्चिमी उत्तर-प्रदेश की पहाड़ियो मे तथा फरवरी मे 3 दिन उत्तरी-पूर्वी आसाम पर पाया जाता है।

(ख) (i) पूर्व मानसून काल के पूर्वार्द्ध मे पश्चिमी विक्षोभ उत्तर भारत को प्रभावित करते है तथा वर्षा का मुख्य कारण बनते है। इनसे तडित झझा तथा ओलो की घटनाएँ भी सम्बन्धित रहती है जो मध्य तथा पूर्वी भागो मे प्राय अधिक तीव्र होती है। आसाम, बगला देश तथा बगाल मे काल वैशाखी मार्च, अप्रैल और मई मे क्रमश: 4, 8, और 12 की औसत सख्या मे उत्पन्न होते है, जो भारी वर्षा

इन्ही के कारण आसाम मई मे भी जून के दो-तिहाई के बराबर वर्षा प्राप्त कर लेता है।

(ii) जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है प्रायद्वीप के दक्षिणी पूर्वी भागों मे द्रोणिका के प्रभाव में खाडी से पर्याप्त नमी का आगमन होता है, जिससे अप्रैल तथा मई मे तड़ित बौछार उत्पन्न होते रहते हैं। इससे इन क्षेत्रो को 8 से 10 सेमी तक वर्षा प्राप्त हो जाती है। दक्षिणी पश्चिमी प्रायद्वीप पर भी पूर्व मानसून के तड़ित बौछार होते हैं, जिनकी प्रकृति तथा कारण प्राय अनियमित हैं। उत्तरी पश्चिमी प्रायद्वीप इस ऋतु मे मुख्यत. सूखा रहता है। कभी-कभी मई के अन्त मे अनुकूल सागरीय प्रवाह के अन्तर्गत तड़ित झंझा की घटनाएँ हो जाया करती हैं। नमी का आयात बहुत तीव्र होने पर तड़ित झंझा मध्य भारत तक भी फैल जाते हैं।

(iii) इस ऋतु मे सबसे कम वर्षा राजस्थान, गुजरात तथा मध्य भारत मे होती है। बिहार, उडीसा, उत्तर प्रदेश, शेष पश्चिमोत्तर भारत तथा दक्षिणी प्रायद्वीप 5 से 15 सेमी. तक की वर्षा प्राप्त करते हैं। 50 से० मी० से अधिक की अधिकतम् वर्षा कालवैशाखी (Norwester) के कारण बंगाल, असम तथा आसपास के क्षेत्रो मे होती है।

(ग) (i) जून मे सर्वाधिक वर्षा अराकान, तेनासरीम तथा प्रायद्वीप के पश्चिमी तट पर 75–80 सेमी के लगभग होती है। उत्तरी बंगाल और असम के कुछ भाग 50 से 75 सेमी की वर्षा प्राप्त करते हैं जो पश्चिम की ओर निरन्तर घटती हुई बिहार और उडीसा तक 25 सेमी तथा उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश एव गुजरात मे 15 से 25 सेमी के मध्य रह जाती है।

(ii) जुलाई और अगस्त भर मानसून धारायें लगभग पूरे देश पर छायी रहती हैं। केवल पश्चिमी राजस्थान का थार मरुस्थल इन दिनो भी पाकिस्तान पर स्थित ताप निम्नदाब के प्रभाव मे बहने वाली शुष्क महाद्वीपीय हवाओं से घिरा होता है। किन्तु जब कभी मानसून सक्रिय होता है या दोनों शाखाये सयुक्त होकर बढती हैं, या ताप निम्नदाब अपेक्षाकृत दक्षिण मे स्थित होकर अरब सागर से नमी अभिवहित करता है या मानसून अवदाब राजस्थान को प्रभावित कर रहा होता है तो नम धारायें थार मरुस्थल पर भी आच्छादित हो जाती हैं। इसके विपरीत क्षीण मानसून तथा मानसून भंग की अवस्था मे थार तथा सिंध की शुष्क वायुराशि राजस्थान एवं संलग्न पंजाब पर भी बहने लगती है।

(iii) जुलाई और अगस्त मे वर्षा के आवंटन मे ऋतुनिष्ठ द्रोणिका का अक्ष एवं मानसून अवदाब महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अक्ष की स्थिति यदि अपेक्षाकृत दक्षिण मे है तो सामान्यत. मानसून सक्रिय होता है तथा पूरा देश दूर-दूर तक वर्षा प्राप्त करता है। उत्तर की ओर अक्ष का स्थानान्तरण वर्षा मे कमी तथा मानसून की क्षीणता की ओर सकेत करता है। इस दशा मे अरब सागर की धारायें बहुत क्षीण हो जाती है तथा बगाल की खाड़ी की धारायें और पूर्व की ओर सिमट

जाती है। यदि अक्ष अधिक उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर पर्याप्त समय तक हिमालय की तलहटी के समानान्तर स्थिर रहे तो मानसून भंग की स्थिति आ जाती है। इस दशा मे वर्षा केवल पूर्वी हिमालय की जड़ो मे होती है।

(iv) शीर्ष खाडी मे अवदाव के विकास के साथ नई धारायें प्रवाहित होने लगती है जिनसे तटीय भागो मे वर्षा एकाएक वढ जाती है। अवदाव के उत्तर-पश्चिम की ओर अग्रसर होते ही भारी वर्षा का क्षेत्र पहले वगाल तथा दक्षिणी आसाम पर फैल जाता है तथा फिर अवदाव की गति के साथ उड़ीसा और विहार की ओर वढ़ता जाता है कुछ अवदाव जो थोड़ा दक्षिणी तट, जैसे उड़ीसा से गुजरते हैं मध्य प्रदेश दक्षिणी पूर्वी यू. पी. एव उत्तरी प्रायद्वीप पर दूर-दूर तक वर्षा जनित करते हैं। तत्पश्चात गुजरात और राजस्थान को प्रभावित करने के वाद ये अवदाव क्षीण होकर या तो मौसमी निम्नदाव मे विलीन हो जाते हैं या अरव सागर की धारा सक्रिय होने पर उत्तर पूर्व की ओर मुड़कर पश्चिमोत्तर भारत पर वर्षा उत्पन्न करते हैं।

(v) जुलाई मे पुन तेनासरीम, अराकान तथा पश्चिमी घाट के तटीय क्षेत्र 100–125 सेमी की सर्वाधिक वर्षा प्राप्त करते हैं। अगस्त मे यह मात्रा थोडी घटकर अराकन तथा उत्तरी तेना सरीम तट पर 80–100 सेमी तथा पश्चिमी घाट पर 50–75 सेमी रह जाती हे। पूर्वी घाट की ओर वर्षा तेजी से घटती जाती है। जुलाई मे पूर्वी तट 16^{0} उ. अक्षांश के दक्षिण मे 15 सेमी से कम तथा उत्तर मे थोडा अधिक वर्षा प्राप्त करता है। मध्य प्रदेश पर जुलाई और अगस्त दोनो मे 40–50 सेमी की वर्षा होती है। दोनों ही महीनों मे वगाल तथा आसाम 40–50 सेमी वर्षा प्राप्त करते हैं जो पश्चिम की ओर निरन्तर घटते हुए पश्चिमी राजस्थान मे 10–15 सेमी के लगभग रह जाती है।

(vi) सितम्बर मे मानसून उत्तरी पश्चिमी भारत से हटने लगता है। साथ ही इसकी सक्रियता भी क्षीण होती जाती है। प्रारम्भिक दिनो मे वर्षा का आवटन अगस्त की भाँति ही पाया जाता हे किन्तु मास के अन्तिम भाग मे पूर्वी प्रायद्वीप पर वर्षा की मात्रा वढ जाती है तथा शेप भारत पर घटने लगती है। इसका एक कारण यह है कि अवदाव इन दिनो अपेक्षाकृत दक्षिणी अक्षाँशो मे उत्पन्न होते है। दक्षिणी पठार की वर्षा इन दिनो प्राय. तड़ित झंझा से युक्त होती है। तेनासरीम तट सर्वाधिक वर्षा (75 सेमी) प्राप्त करते हैं। पश्चिमी घाट और अराकान तट की औसत 50 सेमी के लगभग होती है। आसाम और उत्तरी पूर्वी वगाल 25 से 40 तथा शेप वगाल 25 सेमी से कुछ कम वर्षा प्राप्त करते हैं। उत्तरी पश्चिमी भारत पर प्राय. 15 सेमी से कम, पश्चिमी राजस्थान पर 5 सेमी से कम तथा शेप भारत पर 15 से 25 सेमी की वर्षा रिकार्ड की जाती है।

(घ) (i) बंगाल की खाडी की मानसून शाखा 10 अक्टूबर तक उत्तर पूर्वी भारत से हट जाती के अतिरिक्त ओले तथा तूफानी मौसम पैदा करते हैं।

है तथा अरब सागर की शाखा भी इस समय तक देश के मध्य भाग तथा उत्तर पश्चिमी प्रायद्वीप से हट जाती है। फलत. इन भागों मे वर्षा बंद हो जाती है।

(ii) 15 अक्टूबर तक मध्य बंगाल की खाडी मे कम वायु-दाब का क्षेत्र स्थापित हो जाता है जो धीरे धीरे दक्षिण दिशा मे स्थानान्तरित हो जाता है। बंगाल की खाडी की शाखा, जिसके कारण इस समय भी बर्मा के तटीय क्षेत्रो मे वर्षा होती है, इस निम्न वायु-दाब के प्रभाव मे विचलित हो जाती है तथा कारोमण्डल तट पर वर्षा देती है। वर्षा की मात्रा तट से आन्तरिक भागो की ओर घटती जाती है। कुछ लोग इस विचलित शाखा को 'उत्तर पूर्वी मानसून' का नाम देते है।

(ii) अक्टूबर-नवम्बर मास मे वर्षा देने वाली दूसरी प्रणाली चक्रवात है, जो बंगाल की खाड़ी व अरब सागर मे जनित होते है। खाडी के चक्रवात उत्तर पश्चिम दिशा मे चलते हुए मद्रास तट तथा बंगाल के डेल्टा प्रदेश के मध्य तटीय क्षेत्रो मे वर्षा देते हैं। कुछ साइक्लोन पश्चिम दिशा मे चलते हुए कारोमण्डल तट पर भारी वर्षा उत्पन्न करते है। अरब सागर मे वर्तमान विक्षोभ तथा पूर्व की ओर चलते हुए अवदाब मलाबार तट पर भारी वर्षा देते है। नवम्बर मास मे ये अवदाब अपेक्षाकृत अधिक दक्षिण की ओर टकराते है, जिसके फलस्वरूप वर्षा पेटिका भी दक्षिण की ओर स्थानान्तरित हो जाती है।

(iv) अक्टूबर मे कारोमण्डल तट तथा दक्षिणी मलाबार मे कुल वर्षा साधारणत: 25 सेमी होती है। मंगलोर को डिब्रूगढ से एक सीधी रेखा द्वारा मिलाया जाय तो इसके निकट पश्चिम मे स्थित क्षेत्र लगभग 12.5 सेमी वर्षा पाते हैं जबकि उत्तर पश्चिमी भारत मे इस माह मे 2.5 सेमी से भी कम वर्षा होती है।

(v) नवम्बर मे दक्षिणी कारोमण्डल तट पर वर्षा साधारणत: 25 से 38 सेमी के बीच होती है तथा वर्षा की मात्रा आन्तरिक भागो की ओर घटती जाती है। मंगलोर से डिब्रूगढ को जोडने वाली रेखा के पश्चिम मे अवस्थित क्षेत्र नवम्बर मे सामान्यतः 2.5 सेमी वर्षा पाते है तथा उत्तर पश्चिमी भारत मे इस माह मे वर्षा बिल्कुल नही होती।

(v) दिसम्बर तक मानसून देश के सभी भागो से पूर्ण रूप से हट जाती है तथा पश्चिमी प्रायद्वीप मे वर्षा लगभग बन्द हो जाती है। देश के धुर उत्तरी भागो मे पश्चिमी विक्षोभो के प्रभाव के कारण दिसम्बर मे थोडी वर्षा होती है।

(च) वार्षिक वर्षा

(i) दक्षिणी प्रायद्वीप मे पूर्वी तट से वार्षिक वर्षा की मात्रा पश्चिम की ओर पश्चिमी घाट के अनुवर्ती भाग तक घटती जाती है। तट के समीप पूर्वी घाट की पहाडियो पर वर्षा अधिकतम 120 सेमी से अधिक होती है। चरम दक्षिणी भागो मे पश्चिमी घाट के पूर्वी तरफ वर्षा निम्नतम (50 सेमी) पायी जाती है। 13^0 उ अक्षांश के पास भी पश्चिमी घाट का पूर्वी भाग 50 सेमी कम वार्षिक वर्षा प्राप्त करता है।

(ii) पश्चिमी घाट के उच्च भूभागो मे अनेक स्थानो पर 600 सेमी के लगभग वर्षा होती है, जो प्राय: बहुत सीमित क्षेत्र घेरते है। पश्चिमी ढाल पर तट की ओर वर्षा की मात्रा शनै: शनै: घटती जाती है।

(iii) बगाल तथा उड़ीसा तट से आन्तरिक भूभागो की ओर वर्षा घटती जाती है। बीच मे पड़ने वाली मैकाल, छोटा नागपुर तथा महादेव पहाड़ियाँ सलग्न क्षेत्रो मे वर्षा की मात्रा थोड़ी बढा देती हैं। इसके पश्चात विन्ध्य तथा सतपुड़ा पहाड़ियाँ प्राय: अप्रभावकारी रहती हैं। काठियावाड़ की गीर तथा दक्षिणी राजस्थान की आबू पहाड़ियाँ आस पास के समतल की अपेक्षा बहुत अधिक वर्षा प्राप्त करती हैं।

(iv) मानसून द्रोणिका का दक्षिणी भाग अवदाबो के प्रभाव क्षेत्र में अधिक रहने के कारण उत्तरी भागो की अपेक्षा अधिक वर्षा प्राप्त करता है। कुछ अवदाब जो अधिक उत्तरी मार्ग अपनाते हैं हिमालय की पहाड़ियो मे वर्षा की मात्रा बढ़ाते है। इन सभी क्षेत्रों में वर्षा की मात्रा पश्चिम की ओर लगातार घटती रहती है। वार्षिक वर्षा का परिसर बगाल मे 150 सेमी से थार मरुस्थल मे 15 सेमी से कम तक पाया जाता है।

(v) लगभग एक ही अक्षांशों पर स्थित खाड़ी का अन्डमान तथा अरब सागर का लक्कादिव व मालदिव द्वीप समूहो पर क्रमश. 300 तथा 150 सेमी की वार्षिक वर्षा का औसत पाया गया है।

(vi) वर्षा युक्त दिनों की सख्या का आवटन चित्र 14.21 में प्रदर्शित किया गया है। इसका वितरण भी वार्षिक वर्षा के लगभग समान ही है। प्रायद्वीप पर वर्षा युक्त कम दिनो की संख्या दक्षिणी मद्रास तथा मध्य महाराष्ट्र से दक्षिणी आन्ध्र प्रदेश पर कम (30-50) रहती है। पश्चिमी घाट पर 9–13° उ. अक्षांशों के बीच यह सख्या बढ़ जाती है जिसका औसत मलेप्पी पर अधिकतम (137 दिन) रिकार्ड किया गया है।

100 से अधिक दिनों वाले क्षेत्र आसाम, ब्रह्मपुत्र घाटी, उत्तरी बंगाल के तराई के क्षेत्र, अण्डमान तथा पश्चिमी घाट हैं। चेरा पूंजी मे अधिकतम दिनों (160) वर्षा होती है। वर्षा युक्त सबसे कम दिनो की संख्या (20 से कम) कच्छ और पश्चिमी राजस्थान पर पायी जाती है। थार मरुस्थल मे 5 से भी कम दिन वर्षा के होते हैं।

14.81 बंगाल की खाड़ी की जलवायुविक अवस्था

शीतकाल मे बंगाल की खाड़ी मे निम्नदाब का क्षेत्र पाया जाता है किन्तु दाब उत्तर से दक्षिण की ओर घटता जाता है। इसी दिशा मे तापमान की नियमित वृद्धि भी रिकार्ड की जाती है। मौसम, हल्की उत्तरी पूर्वी हवाओ तथा आंशिक मेघाच्छन्नता से युक्त होता है। पर्वतीय प्रभावो के कारण पूर्वी श्रीलंका तथा सुमात्रा के तटो पर कभी कभी तड़ित झंझा तथा स्क्वाल उत्पन्न होते रहते हैं। शीर्ष खाड़ी मे भी मौसम

(क) सांभर—इसके जल मे साधारण नमक तथा सोडियम सल्फेट की बाहुल्यता पायी जाती है।

(ख) डिडवानो—इसमे सोडियम सल्फेट की मात्रा अधिक है।

(ग' पचभद्रा—इसका जल मैगनेशियम सल्फेट से भरपूर है।

इन झीलो का खारापन समुद्र के जल से अधिक पाया गया है।

(ii) उष्ण-रेगिस्तान—अर्द्ध रेगिस्तान के पश्चिम का सारा भूभाग जो थार-मरुस्थल के नाम से विख्यात है, उष्ण रेगिस्तान है, जहाँ वार्षिक वर्षा 300 मिमी से भी कम है। इसमे जैसलमेर, बीकानेर, नागौर गगानगर, बारमेर, पश्चिमी जोधपुर, दक्षिणी पश्चिमी जालौर तथा पश्चिमी चूरू की भूमि सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र की मिट्टी अत्यधिक लवण युक्त है। रेतीली पहाड़ियो के कारण भूमि बहुत असमतल है। तेज हवाओ के कारण जगह-जगह रेत की पहाटियां तैयार हो जाती है, जो थोड़ी ही देर मे स्वतः लुप्त हो जाया करती हैं।

उष्ण रेगिस्तान मे राजस्थान के उपर्युक्त क्षेत्रों के अतिरिक्त बहावलपुर तथा सिंध का भी एक बडा हिस्सा सम्मिलित है। इस रेगिस्तान की पश्चिमी सीमा सिंध नदी है, जिसके पश्चिम मे पुन. सिंध और बलूचिस्तान की खारी झीलो वाली अर्द्ध रेगिस्तानी भूमि का सिलसिला शुरु हो जाता है।

सारे पश्चिमी राजस्थान पर अरावली शृङ्खलाओ तथा छिट-पुट पहाडियो का प्रकीर्ण (Scatered) फैलाव पाया जाता है। कही-कही इन पहाडियों की समुद्र तल से ऊँचाई 1000 मीटर से अधिक मिलती है।

14.92 राजस्थान की नदियां

वैसे तो राजस्थान मे नदियो का जाल सा बिछा दीखता है, पर ऐसी एक भी नदी नही है जो वर्ष भर जीवित रहती हो। अधिकाश नदियां सिर्फ बरसात के मौसम मे कुछ दिनो या अधिक से अधिक एक-दो महीने के लिए प्रवाहित होती है और फिर सूख जाती है।

पूर्वी राजस्थान मे, जमुना की सहायिकाये, चम्बल, गंभीरी, बानगगा और मेवा नदिया बहती है। राज्य के दक्षिण प्रश्चिम मे माही, साबरमती, सरस्वती तथा बानस के अलावा राजस्थान की सबसे बडी नदी लूनी भी बहती है। ये सभी नदियां कच्छ के रन मे होकर चलती है। लूनी अजमेर के पास की अरावली शृङ्खलाओ से निकल कर पहले पश्चिम मे बाड़मेर की ओर और फिर दक्षिण-पश्चिम दिशा मे रन से होती हुई अरब सागर मे गिरती है। पश्चिमी राजस्थान की अन्य नदियो मे नारा तथा सिंधु का नाम भी लिया जा सकता है। उत्तर मे घग्गर, नेवाल और रैना (सिंध मे) नदियो का अब केवल नाम ही बाकी रह गया है, जिसमे पानी की जगह अब वर्ष भर रेत बहती है।

लूनी को छोड़कर अन्य कोई भी नदी सागर तक नही पहुंच पाती। रेगिस्तान मे ही कही खो जाती हैं। इन सभी नदियो का प्रवाह उत्तर से दक्षिण या उत्तर-पूर्व से दक्षिण पश्चिम की ओर पाया जाता है।

जल अपवाह (run off) के लिये किसी निश्चित मार्ग तथा पर्याप्त वर्षा, दोनो का अभाव है। मानसून की वर्षा तालाबो, झीलो तथा बांधो में जमा करके उन्हें स्थानीय उपयोग मे लाया जाता है।

14.93 मिट्टी, वनस्पतियां और लोग (Soil, Vegetation and the people)

मिट्टी का निर्माण और प्रकार; जलवायु, धरातलीय और वानस्पतिक अवस्थाओं पर निर्भर करता है। राजस्थान के शुष्क भागों की मिट्टी तीव्र जीरोमार्फिक (xeromorphic) विशेषताओ से युक्त है जिसमे ह्यूमस (humus) तत्व बहुत ही कम मात्रा मे विद्यमान है। प्राकृतिक लवणों की पर्याप्त मात्रा यहां की मिट्टी मे पाई जाती है, जो सभवतः केशनली उठान (Capillary-rise) प्रक्रिया द्वारा भूगर्भीय खारे जल की देन है। अपरदन के कारण निरन्तर भूमि के ह्रास से काफी बडे भाग में बंजरता का गुण स्वाभाविक रूप से आ गया है। फिर भी इस क्षेत्र के एक तिहाई से अधिक भूमि पर खेती की जाती है, लगभग 23.5% भाग पर घास और झाड़ियां उगती है तथा 3.2% भूमि स्थायी चरागाह है। खेती तथा पशुपालन यहाँ के निवासियों की मुख्य जीविका है।

जलवायु की प्रतिकूलता के बावजूद थार रेगिस्तान में कुछ प्रकार की वनस्पतियां पाई जाती हैं। फ्लोरा वनस्पतियो के समूह झुण्ड के झुण्ड थोडे थोडे अन्तर पर दिखाई देते हैं। इनमे एफीमेरल, घास, कटीली झाड़ियाँ, ड्वार्फ (dwarf) वृक्ष तथा स्क्रब के जंगल विशेष रूप से मिलते हैं।

बाजरा, ज्वार, मोठ और मूंग यहा की मुख्य फसलें हैं। कहीं कहीं जहाँ भूगर्भीय जलस्तर अपेक्षाकृत ऊंचा है, गेहूँ और सब्जियो की खेती भी करली जाती है। कृषि के अलावा लोग भेंड़, बकरी, गाय और ऊंट पालना पसन्द करते है तथा उन्हें झुण्ड के झुण्ड लेकर चरागाह और जल की तलाश मे फिरना ही उनकी जीविका है।

निवासियो में लगभग 98% हिन्दू हैं, जिनमे अधिकांश शाकाहारी हैं। यह यहां के पशुधन की रक्षा के लिए बहुत अनुकूल है। कुछ जन जातिया जैसे बन बावरिया मीना, सांसी आदि जिनके पास कृषि के लिए जमीन नही है, अधिकतर शिकार का पेशा अपनाती हैं, जिससे इस क्षेत्र की सीमित पशुधन की सुरक्षा के लिए बडा आघात पहुंचता है। परिस्थितियो के फलस्वरूप यहां के निवासियो मे स्वाभाविक सहनशीलता विकसित रूप मे पायी जाती है।

14 94 पश्चिमी राजस्थान रेगिस्तान कैसे और कब बना ?

राजस्थान के भूगर्भ विज्ञान का इतिहास इस बात की ओर स्पष्ट संकेत करता है कि अरावली के जन्म (हिमाचल से बहुत पहले) से अब तक नम और शुष्क जलवायु के दौर इस क्षेत्र पर एक के बाद एक आते रहे हैं।

भारत पर अब तक दो हिम-युग (ice ages) गुजरे हैं। एक का नाम पर्मोकार्बो-निफोरस है जो लगभग 24 करोड वर्ष पहले आरम्भ हुआ। दूसरा, क्वाटरनरी कहलाता है लगभग 10 लाख वर्ष से आरम्भ होकर अभी तक चल रहा है इन दोनो के संधिकाल मे लाखो वर्षों तक भारत उष्ण जलवायु के प्रभाव मे रहा। क्वाटरनरी युग मे अभी उत्तरी ग्लेशियर के सिकुडने और फैलने की चार महत्वपूर्ण घटनाएँ हो चुकी हैं जिनके कारण इतनी ही बार भारत को क्रमश. शुष्क और नम जलवायु का अनुभव करना पडा है।

क्वाटरनरी हिम युग से पूर्व सिंध, बिलोचिस्तान और पश्चिमी राजस्थान का कुछ भाग लाखो वर्ष सागर मे डूबा रहा। क्वाटरनरी युग के आते ही शुष्क जलवायु का जो दौर आरम्भ हुआ, उसके फलस्वरूप समुद्र पीछे हटा और ये भूभाग प्रकाश मे आये।

ऐसा अनुमान है कि वर्तमान हिमयुग मे राजस्थान के ऊपर अभी तक 4 नम जलवायु के दौर गुजर चुके है, जिसमे दूसरा दौर जो सर्वाधिक तीव्रता का माना जाता है, लगभग 5 लाख वर्ष पहले समाप्त हुआ। यहाँ यह संकेत स्पष्ट है कि इस क्षेत्र के शुष्कावस्था का आरम्भ इसी समय से मान लिया जाय। वैसे नम जलवायु का अन्तिम दौर कोई 20,000 वर्ष पूर्व बीत चुका है। इस समय के बाद निश्चित रूप से पश्चिमी राजस्थान की मिट्टी का शनै. शनै. ह्रास होता गया, पृथ्वी का जलस्तर गिरता गया और शुष्कता की मात्रा उत्तरोत्तर बढती गई। महाभारत में इस प्रदेश में मरुभूमि होने का उल्लेख मिलता है।

यह भी कहा जा सकता है कि 3000–4000 वर्ष पूर्व सिधु घाटी में जो सभ्यता पनपी थी, उसने बरतन, इंटे, नालिया, धातुएं आदि आदि तैयार करने मे ईंधन के रूप मे वनो और वनस्पतियो को जिस प्रकार नष्ट किया होगा, उससे राजस्थान की शुष्कता बढने मे और मदद मिली।

एक कारण और भी सम्भव है।

नदिया, जमीन के नीचे जल स्तर को बनाये रखने के लिये निरन्तर खुराक देती रहती हैं। भूगर्भीय जल भंडार भी स्रोतो के रूप मे नदियो को इसका प्रतिदान देता रहता है। यदि किसी कारण वश किसी क्षेत्र की नदिया सूख जायँ या दिशा बदल कर दूर हो जाय तो वहा के भूगर्भीय जल भण्डार का स्रोत समाप्त हो जायगा और जल स्तर नीचे गिरने लगेगा। कुछ समय पश्चात जल वनस्पतियो की पकड-सीमा के नीचे चला जायेगा, जिसमे वनस्पति विहीन भूमि सूर्य-किरणो तथा वायु वेग के सीधे आघात के कारण निरन्तर अपरदित और क्षीण होती जायेगी।

राजस्थान की नदियो का इतिहास कुछ इसी तरह का है। कहते हैं कि सिंधु और सतलज नदिया कभी उस मार्ग से बहती थी, जहा आज चम्बल और उसकी सहायिकाये स्थित हैं। ये दोनो नदिया पश्चिम की ओर लगातार अपना प्रवाह बदलती गयी। जब सतलज और सिधु वर्तमान घग्घर और नारा से होकर बहती थीं

(जिसका लगभग 4 किमी चौडा पाट अभी भी स्पष्ट है) तो वीकानेर, जैसलमेर, वहावल पुर आदि क्षेत्र काफी उपजाऊ और समृद्ध थे। फिर इन नदियो के और पश्चिम की ओर हटने के वाद ये क्षेत्र तेजी से रेगिस्तानी अवस्था को प्राप्त होते गये।

जैसलमेर और वाडमेर मे इस समय लगभग 50% कुये ऐसे मिलेगे जिनमे जलस्तर की गहराई 40 मीटर से अधिक है। लगभग 10% कुये 80 मीटर से ज्यादा गहरे है तथा कुछ कुओ में तो पानी 120 से 130 मीटर की गहराई मे मिलता है।

अनेक प्रमाण इस वात के लिये प्रस्तुत किये गये है कि उत्तरी पश्चिमी भारत, राजस्थान, पाकिस्तान और वलूचिस्तान के प्रदेश ईसा से कोई 4,000 वर्ष पहले हरे भरे क्षेत्र थे। 2700 वर्ष ईसा पूर्व मोहन जोदारो की सभ्यता विकसित हुई थी। श्री वी. सी. उम्कार (1933) ने ईसा से 2750-2500 वर्ष पूर्व सिंधु नदी मे आयी वाढो का जिक्र किया है।

ईसा से कोई 1000 वर्ष पूर्व जव हिमालय अच्छी तरह विकसित हुआ और जल की असीम मात्रा ग्लेशियर के रूप मे हिमशिखरों पर सिमट आई तो अनेक नदियो के सूखने या प्रवाह वदल देने से मध्य एशिया के अनेक क्षेत्र व्यापक रूप से शुष्क हो गये। हिमालय का विकास, वैसे जलवायु के दृष्टिकोण से उत्तर भारत के लिये वहुत अनुकूल तथा महत्वपूर्ण है जो गर्मियो मे मानसून धाराओ को अन्यत्र जाने से रोक कर उत्तर पश्चिम की ओर दिशान्तरित कर देता है तथा सर्दियो मे बहुत ठण्डी ध्रुवीय हवाओ को आने से रोक देता है। हिमालय की वृद्धि के साथ अरावली का ह्रास होता गया जिससे नम हवाओ का मार्ग कुछ इस तरह परिवर्तित हो गया कि पश्चिमी राजस्थान अनुवर्ती दिशा मे पड कर वर्षा से वंचित रह गया और उच्च वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन के कारण मिट्टी अपने नमी तथा ह्यूमिक तत्व खोती गयी।

सारणी 14.3
तापमान के जलवायुविक आंकड़े

स्थान		अक्षांश	देशान्तर	माध्य समुद्र तल से ऊँचाई (मीटर)	तापमान (°C)								
					औसत उच्चतम					औसत निम्नतम			
					जनवरी	अप्रैल	मई	जुलाई	अक्टूबर	जनवरी	अप्रैल	जुलाई	अक्टूबर
अरुणाचल	1. दिगवोई*	27° 23′	95° 37′	152	22.0	29.0	29.3	31.3	29.1	11.0	18.8	24.1	20.3
	2. उत्तरी लखीमपुर	37 14	94 07	102	23.0	29.0	29.0	31.0	29.1	9.1	21.1	25.1	20.0
नागालैंड	1. कोहिमा	23 38	94 10	1406	15.0	24.8	25.0	24.0	21.8	9.0	16.6	19.0	16.1
मेघालय	1. शिलांग	25 34	91 53	1598	15.5	23.8	23.7	24.1	21.8	3.6	14.1	18.1	12.9
	2. तुरा	25 31	90 14	370	23.5	32.5	31.0	28.9	28.9	12.3	22.1	23.2	20.3
मणीपुर	1. इम्फाल	24 46	93 54	781	21.0	29.0	29.0	28.3	27.3	4.0	15.8	22.0	16.5
मीजोराम	1. आइजल	23 44	92 43	1097	20.1	26.5	26.1	25.1	24.5	11.3	17.4	19.0	18.0
त्रिपुरा	1. अगरतल्ला	23 53	91 15	16	26.0	35.0	33.3	31.0	30.6	10.3	22.8	25.0	21.5

*दिग्बोई और उत्तरी लखीमपुर आसाम के मैदानी जिले हैं, जो अरुणाचल प्रदेश की सीमा के समीप स्थित हैं।

सारणी 14.3 (Contd.)

असम	1. गौहाटी	26° 05′	91° 43′	54	23.4	31.9	31 1	31.7	30.1	9.8	20.1	25.7	22.1
	2. डिब्रूगढ	27 28	94 55	106	22 5	28.2	29.2	30.7	29.5	10.2	19.2	24.5	21.0
पं. बंगाल	1. कलकत्ता	22 32	88 20	6	26.8	36.3	35.8	32.0	31.8	13.6	25.0	26 3	23.9
	2. जलपाईगुडी	26 32	88 43	83	23.4	31.6	30.9	30.6	30.0	10.8	20.4	25.0	21.7
बिहार	1. पटना	20 28	85 06	60	23.6	37.6	38.9	32.9	31 9	11 0	23 3	26.7	23.0
	2. गया	19 48	84 57	116	24.2	39.0	41.3	33.5	31 8	10 1	23.0	26.3	21.7
उड़ीसा	1. कटक	20 28	85 56	27	28 9	38.3	38.8	31.6	32.0	15.7	25.3	25.6	23.7
	2. पुरी	19 48	85 49	6	26.9	30.7	31.6	30 6	31 2	17.9	26.6	26.7	25.0
उत्तर प्रदेश	1. गोरखपुर	26 45	83 25	74	23 0	37 4	39.0	32.8	32.2	9 9	22.4	26.4	21.5
	2. इलाहाबाद	25 27	81 44	98	23.7	38 8	42.1	33.6	32 6	9 1	22.5	26.6	20.4
	3. लखनऊ	26 52	80 56	111	23.3	38.3	41.2	33 6	32.8	8 9	21.8	26.6	19.8
	4. बरेली	28 22	79 24	172	22.0	37 0	40.5	33.8	32.3	8.6	21.1	26.2	19.5
हिमाचल प्रदेश	1 शिमला	31 06	77 10	2202	8.5	19.2	23.4	21.0	17.9	1.9	11 2	15.6	10.8
जम्मू-कश्मीर	1. श्रीनगर	34 05	74 50	1587	4.4	19 3	24.6	30.8	22.6	−2.3	7.4	18.4	5.7
	2. लेह	34 09	77 34	3514	−2.8	12.4	17.1	24.7	14.2	−14.0	−1.2	10.2	−0.9

सारणी 14.3 (Contd.)

पंजाब	1. अमृतसर	31°	38′	75°	52′	234	18.6	34.2	38 9	35.6	31.9	4 5	16.2	25.9	16.6
हरयाणा	1. अम्बाला	30	23	76	46	278	20 8	36 2	40 8	35.2	33 2	6 8	19 7	26.0	16.4
दिल्ली	1. नई दिल्ली	28	35	77	12	216	21.3	36 2	40.5	35.3	33.1	7 3	21 0	27.2	18.7
राजस्थान	1. जोधपुर	26	18	73	01	217	24 6	38 3	41 6	35 7	35 7	9.5	22.4	26.8	19.6
	2. जयपुर	26	49	75	48	390	22.0	36.5	40.6	34.1	33.2	8.3	21.0	25 6	18.3
गुजरात	1. अहमदाबाद	23	04	72	38	55	28 7	39.7	40.7	33.2	35 6	11.9	23.0	25.7	21.2
मध्य प्रदेश	1. भोपाल	23	17	77	21	523	25 7	37.8	40.7	29.9	31.3	10.4	21.2	23.2	18.0
	2. जबलपुर	23	10	79	57	393	26 1	38 5	41.9	30.3	31.4	9 8	20.5	23.9	18 4
	3. रायपुर	22	14	81	39	298	27.7	39.2	42.3	30.3	31.2	13.5	25 1	24.1	21.5
आन्ध्र प्रदेश	1. हैदराबाद	17	27	78	28	545	28 6	36 9	38.7	29.8	30.3	14 6	23.7	22.3	19.8
	2 विशाखापतनम	17	43	83	14	3	27.7	32 8	34.0	31 7	30.9	17.5	25.9	26.0	24.5
महाराष्ट्र	1. बम्बई	18	54	72	49	11	29.1	32.3	33 3	29.8	29 8	19.4	25.1	25.1	24.6
	2. नागपुर	21	06	79	03	310	28.6	39 7	42.8	31.2	31 9	12.7	23.9	24.0	20 0

सारणी 14.3 (Contd)

कर्नाटक	1. बंगलौर	12° 57′	77° 38′	897	26.9	33 4	32.7	27.2	27.5	15 0	21.2	19 2	18.9
केरल	1. त्रिवेन्द्रम्	08 29	76 57	64	31 3	32.4	31.6	29.1	29.9	22.3	25.1	23.2	23.4
तमिलनाडु	1. मद्रास	13 04	80 15	6	28.8	94.9	37.6	35 2	31.8	20.3	26 0	26.3	24.4
	2. सलेम	11 39	78 10	278	31.1	36.9	36 8	33.4	31.9	19 2	25.1	23.6	22.8
द्वीप	1. अमीनी देवी	11 07	72 44	6	31 4	33 0	32.6	29 3	30 4	23.9	27.1	25.4	25.2
	2. पोर्ट ब्लेयर	11 40	92 43	79	29 2	31.9	30 9	28 9	29 0	22.7	24 2	24.1	23.6

सारणी (14.4)

आर्द्रता एवं वर्षा के जलवायुविक आंकड़े

स्टेशन		आपेक्षिक आर्द्रता 0830 घडी भारत मानक समय				आपेक्षिक आर्द्रता 1790 घडी भारतीय मानक समय				वर्षा (मिलीमीटर)/वर्षा युक्त दिनो की संख्या			
		ज	अ	जु.	अ.	ज.	अ.	जु	अ.	ज.–फ.	मा.–अ.–मई	जू.–जु.–अ –सि.	अ.–न.–दि.
अरुणाचल	1. डिगबोई	88	81	87	86	73	67	77	79	106 6/–	672.5/–	1576.4/–	202.1/–
	2. उत्तरी लखीमपुर	83	77	90	81	82	76	82	87	93 3/(9.3)	786 4/(36.6)	2219.2/(74.1)	288 9/(13.3)
नागालैंड	1. कोहिमा	66	63	89	80	82	62	92	89	47.2/(4.8)	336.3/(28 9)	1375.7/(76.9)	162 8/(12 4)
मेघालय	1 शिलाग	65	51	81	71	83	62	83	89	43 2/(7.9)	497.9/(46.1)	1479.6/(74 7)	232.6/(12.6)
	2. तुरा	75	70	90	85	66	60	87	82	23.7/(5.2)	597.7/(20 4)	2406.8/(80 0)	266.0/(10 3)
मणिपुर	1. इम्फाल	75	64	81	80	60	63	78	77	48 4/(4 9)	373.2/(25.9)	855.1/(59.2)	147.7/(3.6)
मिजोराम	1 ऐजल	67	68	91	86	62	65	94	91	46 5/(3 6)	604 9/(27.4)	1448.6/(80 4)	196.8/(12.9)
त्रिपुरा	1. अगरतला	78	72	86	81	59	60	60	81	45.8/(2.6)	508.8/(22.3)	1456.7/(63.5)	2268/(8.5)

सारणी (14 4) (Contd.)

असम	1. गौहाटी	88	72	85	84	67	57	79	77	35.6/(3.3)	455 4/(28 1)	1050.4/(52.5)	92 8/(6.0)
	2. डिब्रूगढ़	87	75	88	81	78	73	82	83	106.8/(9.7)	748.0/(37.8)	1729.8/(74.9)	257.4/(12.5)
पश्चिमी बंगाल	1. कलकत्ता	78	71	84	70	56	56	82	77	39.8/(2.7)	218.4/(12.2)	1208.0/(60.8)	158 6/(8.0)
	2. जलपाइगुडी	87	68	88	82	59	50	81	71	29.9/(2.1)	449.4/(21.9)	2677.2/(89.4)	168.6/(7.1)
बिहार	1. पटना	71	41	81	70	53	24	75	62	37.6/(3.3)	39.5/(3.7)	967.2/(48 7)	68.5/(3.9)
	2. गया	69	31	79	72	47	17	72	61	43.7/(3.5)	32.8/(3.6)	949.7/(48.7)	60.7/(4.2)
उड़ीसा	1. कटक	80	71	83	79	48	50	81	72	38.9/(1 6)	132.3/(8 4)	1174.1/(56.2)	194.0/(8.2)
	2. पुरी	73	80	83	77	68	85	85	75	34.8/(2.0)	90 4/(5 1)	964.4/(45.1)	28 3/(10.6)
उत्तर प्रदेश	1. गोरखपुर	80	43	83	74	57	26	76	61	32.3/(3 4)	60 9/(3 3)	1496 8/(46.7)	69.3/(3.0)
	2. इलाहाबाद	79	30	80	69	53	1[illegible]	71	52	40.2/(2.6)	33.8/(2 3)	887.9/(41 4)	50.5/(3.4)
	3. लखनऊ	82	39	82	72	55	2[illegible]	76	60	38 1/(3.4)	32.7/(2 8)	896.6/(40.1)	47.0/(2.5)
	4. बरेली	81	37	81	71	54	21	71	52	52.1/(3.8)	36 0/(3.4)	916.4/(36.7)	48.0/(2.3)
हिमाचल प्रदेश	1. शिमला	48	32	86	47	62	37	88	49	134.9/(10 5)	169 4/(14.7)	1166.7/(59.3)	71.2/(5.5)
जम्मू व काश्मीर	1. श्रीनगर	88	77	73	82	70	53	19	51	144.1/(12.5)	244 1/(20.9)	193.0/(16 9)	77.7/(6.7)
	2. लेह	61	50	49	45	51	32	34	28	18 5/(2.1)	20.3/(2.5)	43 1/(5.2)	10 7/(1.2)

सारणी (14.4) Contd.

पंजाब	1. अमृतसर	92	48	75	74	61	23	57	45	53.0/(4.7)	43.7/(5.2)	489 4/(20.7)	63.2/(2.3)
हरियाणा	1. अंबाला	79	41	78	68	52	22	63	41	87.8/(5.8)	59.7/(5.1)	679 0/(29.7)	43.7/(2.8)
नयी दिल्ली		72	32	73	54	41	16	60	35	44.4/(3 5)	32 3/(3.5)	558 6/(22.8)	24.8/(1 8)
राजस्थान	1. जोधपुर	50	31	75	49	27	15	54	24	11.2/(1.0)	15 8/(1.7)	327 6/(16.4)	11 4/(0.9)
	2. जयपुर	60	29	75	51	35	18	62	32	20.8/(1.9)	25.4/(2 8)	527.6/(27.9)	24 1/(1.7)
गुजरात	1. अहमदाबाद	55	49	86	64	28	18	68	35	3.5/(0.3)	13.0/(1.1)	751.8/(34.1)	14.5/(1.2)
मध्य प्रदेश	1. भोपाल	60	25	86	62	35	14	72	41	22 3/(2 4)	22 7/(2.2)	1156 6/(48.5)	58 6/(3 4)
	2. जबलपुर	74	30	85	73	43	18	79	52	48 8/(4 1)	39.9/(3.8)	1268 3/(53 4)	73.7/(4.1)
	3. रायपुर	62	36	85	73	39	21	78	60	40.6/(3.1)	54.8/(5.2)	1192.5/(45 2)	70.9/(4.5)
आंध्र प्रदेश	1. हैदराबाद	79	51	83	73	36	31	69	58	17 3/(1.4)	68 8/(5.1)	572.8/(36.8)	101.9/(15.6)
	2. विशाखापनतम	77	73	84	78	78	80	82	79	32.0/(1.7)	78.0/(4.3)	502.1/(31.1)	342.2/(12.9)
महाराष्ट्र	1. बम्बई	71	73	85	80	63	66	85	74	6.1/(0.4)	21.3/(1.0)	1693.1/(67.2)	84.3/(4.1)
	2. नागपुर	65	37	83	71	38	23	72	54	34 8/(2.7)	53.9/(5.2)	1059 2/(49.9)	84 3/(5.0)

कर्नाटक	1. बंगलौर	77	7(	86	83	40	34	68	64	16.0/(1.2)	162.6/(10.2)	482.5/(32.4)	227.8/(13.9)
केरल	1. त्रिवेन्द्रम	77	81	89	87	63	73	81	80	43.7/(3.3)	352.1/(14 6)	862.8/(53.6)	553.5/(26.7)
तमिलनाडु	1. मद्रास	83	72	65	81	67	68	61	76	58.0/(2.9)	68.6/(2.9)	363.7/(25.6)	795.3/(26 8)
	2. सलेम	73	7(	/8	80	43	41	56	62	18.6/(1.5)	170 2/(11.0)	479.0/(30.6)	287.4/(18.0)
द्वीप	1. अमीनीदेवी	74	73	85	80	—	—	—	—	22.6/(1.6)	154.9/(1.9)	1059.4/(56.3)	267 6/(15 6)
	2. पोर्ट ब्लेयर	70	7(	84	81	77	77	88	89	85.6/(3.9)	446.8/(21.6)	1830.1/(80.2)	767.1/(34.8)

चित्र (14.2) दाब आवंटन (मिलीबार) जनवरी

चित्र (14.3) तापमान आवंटन - जनवरी (°C)

चित्र (14.5) कुहरा युक्त दिनों की संख्या फरवरी

चित्र (14.4) कुहरा युक्त दिनों की संख्या जनवरी

चित्र (१४ ७)
कुहरा युक्त दिनों की संख्या
दिसंबर
DLH
JPR
LKN
PTN
AHMD
BPL
NGP
CAL
BMB
HYD
BNG
MDS
TRV
> 20
4-8
2-4
1-2

चित्र (14.7)
ऊर्ध्व वायुमण्डलीय तापमान और कन्टूर रेखायें

चित्र (15.9) ऊर्ध्व वायुमण्डलीय तापमान और कन्टूर रेखायें

JANUARY 200 mb
ISOTHERMS ----°C
CONTOURS — Metres
11760
11840
11920
12000
12080
12160
12240
12320
12400
12480
-55°
L
K
H
W

चित्र (14.10)
थण्डरस्टार्म वाले दिनों की संख्या
अप्रैल

2-4
1-2
01-1

चित्र (14.11)
थण्डरस्टार्म वाले दिनों की संख्या
मई

2-4
1-2

चित्र (14.12)
डस्टस्टार्म वाले दिनो की संख्या
जून

चित्र (14.13)
धरातलीय दाब का आवटन
(मिलीबार)
जुलाई

चित्र (14.14.)
धरातलीय तापमान का आवटन
(°c)
जुलाई
32.5
DLH
JPR
LKN
PTN
GHT
IMP
32.5
30.0
AHMD
BPL
CPL
27.5
NGP
25.0
BMB
27.5
HYD
SBG
MDS
30.0
TRV
27.5

JULY
700 mb
ISOTHERMS ----°C
CONTOURS

चित्र (1416)
JULY
500 mb
ISOTHERMS ----- °C
5860
5860
5840
5840
5840
5820
5880
5880
5860
5860
5840
5840
H
H
L
L
W
W
W
W
K
K
K
K

चित्र (14.17)
JULY
200 mb
12550
12480
-50
12400
-55
12560
-45
12490
H
L

चित्र (14.18) मानसून अभ्युदय की सामान्य तिथियाँ

चित्र (14.19) मानसून अपनयन (WITHDRAWAL) की सामान्य तिथि

वर्षा के दिनों की संख्या
चित्र (14.21)

चित्र (14.20)
वार्षिक वर्षा (सेन्टीमीटर)

चित्र (14-23) थण्डरस्टॉर्म के दिनों की संख्या सितंबर

चित्र (14 22) थण्डरस्टॉर्म के दिनों की संख्या जून

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

Popular

1. Battan, Louis J — Cloud Physics and Cloud seeding (Anchor Books N.Y.)
2. Battan, Louis. J. — The nature of violent storms (Anchor Books N.Y.)
3. Bolton J. — The Wind and the Weather past present and future (Thomas Y. Crowell N Y.)
4. Das P.K — Monsoons (Book Trust of India)
5. Humphreys W J. — Weather Proverbs and Paradoxes (Williams and Wilkins Baltimore.)
6. Inwards R — Weather Lore (London Rider 1950)
7. Lehr Paul E, R. Will Burnett and Herbert. S Zim. — Weather, Air Masses, Clouds. Storms, Weather Maps Climate. (Simon & Schuster N Y.)
8. Time-Life Series — Weather.

Elementary Texts

1. Best A C. — Physics in Meteorology (Pitman N.Y)
2. Hess S L — Introduction to Theoretical Meteorology (Holt 1959 N Y.)
3. H.M S O — Handbook of Aviation Meteorology.
4. Humphereys W J — Physics of the Air (Mc Graw Hill)
5. Neuberger H — Introduction to Physical Meteorology.
6. Panofsky Hans — Introduction to Dynamic Meteorology. (University Park. Pa. U.S A.)

7.	Petterssen. S.	Introduction to Meteorology. (Mc. Graw Hill. N.Y.)
8.	Taylor G.F.	Elementary Meteorology. (Prentice—Hall N.Y.)
9.	Willet. H.C.	Descriptive Meteorology. (Academic Press.)

Advance Text

1.	American Meteorological Society. (Boston) 1951.	Compendium of Meteorology Ed. T.F. Malone.
2.	Books C.E.P. and N. Carruthers.	Handbook of Statistical Methods in Meteorology. (B.I.S)
3.	Brunt. D.	Physical and Dynamical Meteorology. (Cambridge Univ. Press).
4.	Berry (Jr.) F.A. Bollay F. and Beers N.R.	Handbook of Meteorology.
5.	Byers H.R.	General Meteorology (Mc, Graw Hill)
6.	Godske C.L. Bergeron T, Bjerknes J and Bundgaard R.C.	Dynamic Meteorology and Physical Meteoroiogy. (Mc. Graw Hill. N Y.)
7.	Haurwitz. B	Dynamic Meteorology (McGraw Hill)
8.	Mitra S.K.	The Upper Atmosphere Royal Society of Asia Calcutta.
9.	Panofsky, Hans and Glena. W. Bier	Some applications of Statistics to Meteorology (University Park Pa. U.S.A)
10.	Petterssen S.	Weather Analysis and Forecastig. Vol I and II (McGraw Hill)
11.	Richardson L.F.	Weather Prediction by Numerical Process (Cambridge Univ. Press 1922).
12.	Riehl. H.	Tropical Meteorology (McGraw Hill, 1954)
13.	Garbell M.A.	Tropical and Equatorial Meteorology (Pitman N.Y.)

14. Saucier N.J. — Principles of Meteorological Analysis. (Chicago University Press)

15. Sutton O.G — Micrometeorology. A Study of Physical Processes in the Lowest Layers of Earth's Atmosphere (McGraw Hill)

16. Thompson P.D. — Numerical weather Analysis and Prediction (Macmillan & Co N.Y.)

17. U.S. Weather Bureau Washington D.C. — The Thunderstorm.

Special Subjects

1. Battan Louis J — Radar Meteorology (Chicago Univ. Press)

2. Fletcher N.H — The Physics of Rain Clouds (Cambridge Univ. Press)

3. George J.J. — Weather Forecasting for Aeronautics. (Academic Press N.Y.)

Climatology

1. Books C.E.P — Climate through the Ages (London Ben.)

2. Chatterji S B. — Climatology of India (University of Calcutta Calcutta)

3. Conrad. V. — Methods in Climatology (Cambridge Mass. U.S.A.)

4. Critchfield H.S. — General Climatology (Prentice Hall)

5. Geiger R. — The Climate near the Ground. (Cambridge Mass. N.Y.)

6. Haurwitz and Austen — Climatology (McGraw Hill N.Y.)

7. Kendrew W.G — The Climate of Continents (Oxford University Press)

8. Landsberge H. — Physical Climatology (Gray Printing Co. Dubois Pa U.S A.)

9. Spate O H.K. — Geography of India and Pakistan (Methuen & Co Lon)

10. Trewartha Glenn T — Introduction to Weather and Climate (Mc Graw Hill N.Y.)

Hand Book and Work books.

1. American Met. Society — Glossary of Meteorology.
2. H.M.S O. — Meteorological Glossary
3. India Meteorological Department — Handbook for Meteorological Observers.
4. Met. office London. — Observer's Hand book.
5. World Meteorological Organisation Geneva Switzerland — International cloud Atlas vol. I and II Abridged Atlas. 1956.
6. I. Met. D. — Tracks of storms and Depressions 1877–1960 (Addendum to above) 1961–1970.
7. I. Met. D. — Climatological Atlas of India (Abridged 1971),
8. I. MET. D. — Analyses of Monthly Mean Resultant Winds for standard Pressure levels.

Periodicals (Only those published in English).

Great Britain

1. Meteorological Magazine (Monthly) British Met. Office B.I.S.
2. Quarterly Journal of the Royal Meteorological Society R.M S. 49 Cromwell Rd. Lon. S.W. 7.
3. Weather Monthly R.M.S. 49 Cromwell Rd. London S.W. 7

India

1. Indian Journal of Meteorology and Geophysics. Quarterly. Editor Lodi Rd. New Delhi 3.
2. Vayu Mandal Quarterly India Meteorological Society Editor Lodi Road New Delhi–3.

Sweden

*1. Tellus Quarterly Swedish Geophysical Society.
Lindhagensgaten 124 Stockholm

U.S.A.

1. Bulletin of the American Meteorological Society Monthly A.M.S. 45 Beacon st. Boston 8 Mass.
2. Journal of Applied Meteorology (Bimonthly) A.M.S 45 Beacon St. Boston 8 Mass.
3. Journal of Atmospheric Sciences
A.M.S. 45 Beacon St. Boston 8 Mass.
4. Weatherwise. Bimonthly American Met. Society 45 Beacon St. 8 Boston Mass.

W.M.O. Publications

W.M O. Technical Notes publications, pamphlets published from time to time.

पारिभाषिक शब्दावली

A

Absolute Humidity	निरपेक्ष आर्द्रता	53
Absolute Instability	निरपेक्ष अस्थायित्व	68
Absolute Scale	निरपेक्ष, ताप का परम मापक्रम	44
Absolute Stability	निरपेक्ष स्थायित्व	68
Adiabatic Lapse Rate (Dry)	शुष्क रुद्धोष्म ह्रास दर	65
Adiabatic Lapse Rate (Sat.)	सतृप्त रुद्धोष्म ह्रास दर	65
Adiabatic Process	रुद्धोष्म प्रक्रिया (प्रक्रम)	65
Adiabatic Process (Pseudo)	छद्म रुद्धोष्म प्रक्रिया	66
Aerosol	वायुविलय	82
Ageostrophic Wind	अभूव्यावर्ती हवा	121
Air Mass	वायु राशि	193
Air Mass (Classification)	वायु राशि वर्गीकरण	193
Air Mass (Continental)	वायु राशि उष्ण कटिबन्धी	193
Air Mass (Life)	वायु राशि (जीवन)	192
Air (Oceanic)	महासागरीय कटिबन्धीय वायु राशि	195
Air Pollution	वायु प्रदूषण	11
Airy's Rule	एयरी नियम	24
Aitken nuclei	एटकन केन्द्रक	82
Albedo	धवलता	34
Alidade	एलिडेड, दर्शरेखक	159
Altimeter	तुगंता मापी	23
Altocumulus	मध्य कपासी	81,190
Altostratus	मध्य स्तरी	81,190
Anabatic	आरोही हवा	135
Analogue Method	एनालग विधि	284
Anemograph	पवन वेग लेखी	174
Anemometer	वायु वेग मापी	168

C

Cap Cloud	छत्रक मेघ	142
Carburrettor Ice	कारबुरेटर हिम	108
Castellanus	कैस्टलेनस/(दुर्गिय मेघ)	158
Ceiling Balloon	सीलिंग बैलून	158
Ceiliometer	सीलिओमीटर	159
Celsius	सेल्सियस	44
Centigrade	सेण्टीग्रेड	44
Centripetal Force	अभिकेन्द्री, (केन्द्रभिसारी) बल	124
Chemosphere	रासायनिक मण्डल	9
Cirrus Cloud	पक्षाभ मेघ	90
Cirro Cumulus	पक्षाभ कपासी मेघ	90
Cirro Stratus	पक्षाभ स्तरी मेघ	91
Classification of Air Mass	वायु राशियों का वर्गीकरण	197,199
Clear Air Turbulence	स्वच्छ वायु विक्षोभ	152,257
Climate Classification (Koppen)	जलवायु आवंटन (कोपेन)	336
Climograph	क्लाईमोग्राफ	51
Clouds	मेघ	
(Amount and Height)	मेघ प्रेक्षण	89,157
Cloud Burst	वृष्टि प्रस्फोट	104
Cloud Classification	मेघों का वर्गीकरण	88
Coagulation	स्कन्दन	83
Coalescence Theory	सम्मिलन सिद्धान्त	95
Coefficient of Transmission	संचरण गुणांक	314
Col	कॉल	28,257
Cold Front	शीतल वाताग्र	220
Cold Wave	शीत तरंग	299
Condensation	संघनन	81
Condensation Nuclei	संघनन केन्द्रक	81
Conditional Instability	प्रतिबंधी अस्थायित्व	70
Conformal	अनुकोण	263
Conservative Properties of Air Mass	वायुराशि की संरक्षी विशेषताएं	212

Drifts and Currents (Ocean)	ड्रिफ्ट और धारायें (महासागरीय)	319
Drizzle	फुहार	98
Dust Haze	धूल धुंध	163
Dust or Sandstorm	धूल भरी या रेताली आंधी	163

E

Easterly Wave	पूर्वी तरंग	229
Eddies	भवरें	133
Eddy Coefficient	आवर्त गुणांक	58
Electrometeor	विद्युतोल्का	166
Entropy	एनट्रॉपी	71
Equation of Continuity	सातत्य का समीकरण	286
Equation of State of Moist Air	नम हवा के लिए गैस समीकरण	61
Equatorial Air Mass Region	विपुवत रेखीय वायुराशि-क्षेत्र	194
Equatorial Type	विपुवत रेखीय प्रकार	395
Equinox	विपुव	5
Evaporation	वाष्पीकरण/वाष्पन	56
Evapotranspiration	वाष्पीकरण वाष्पोत्सर्जन	56
Extrapolation Method	बहिर्वेशन विधि	276
Exosphere	बहिर्मण्डल	11
Extra-Tropical Cyclone	वाताग्र विक्षोभ	224
Eye Piece	नेत्रिका	181
Eye of Storm	तूफान की आंख	234

F

Farenheit	फैरनहाइट	44
Feather Frost	पिच्छ तुषार	108
Fog	कुहरा	104
Fog Advection	अभिवहन कुहरा	105
Fog Convergence	वायुराशियों का मिश्रण कुहरा	104,106
Frontal Fog	वाताग्र कुहरा	107
Fog Radiation	विकिरण कुहरा	104
Fog Steam	वाष्प कुहरा	104
Fog Upslope	आरोही का कुहरा	104

Horse Latitude	अश्व अक्षांस	141
Humid	आर्द्र	336
Humid Climate	नम जलवायु	339
Humidity Measurement	आर्द्रता माप	167
Humidity Mixing Ratio	आर्द्रता मिश्रण अनुपात	54
Humidity Province	आर्द्रता प्रदेश	352
Humidity Quantities	आर्द्रता राशियाँ	53
Humidity Relative	सापेक्ष आर्द्रता	54
Humidity Specific	विशिष्ट आर्द्रता	54
Hydrometeors	जलोल्काएं	162
Hygroscopic	आर्द्रता ग्राही	81
Hurricane	भीषण चक्रवाती तुफान	231

I

ICAN	अन्तर्राष्ट्रीय वायु यातायात आयोग	24
ICAO	अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक विमानन संगठन	24
Ice Accretion	हिम अभिवृद्धि	107
Ice Needles	हिम सूचिका	99
Ice Pellets	हिम गोली	99
Image Surface	बिंब पृष्ठ	263
Insolation	आतपन, सूर्यातप	31
Atmospheric Instability	वायुमण्डल की अस्थिरता	68
Inversion	व्युत्क्रमण	108
Inversion Layer	व्युत्क्रमण तह	108
Ionosphere	अयन मण्डल	10
Isallobar	समदाब परिवर्तन रेखाये	259
Isobars	समदाब रेखा	27,268
Isohygric	आर्द्रता मिश्रण समरेखाये	74
Isopleths	समरेखायें/समान रेखा	258
Isotach	समवायुगति रेखा	272
Isotherm	समताप रेखा/वक्र	317
Isotherm Layer	समताप तह	8
ITCZ	अन्तं उष्ण कटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र	141,216 228

J

Jet Stream	जेट धारा	151
Jet Easterly	पूर्वी जेट धारा	154

Mesosphere	मध्य मण्डल	10
Meteor	उल्का	162
Micro Climatology	सूक्ष्म जलवायु विज्ञान	329
Millibar	मिलिबार	15
Mist	कुहासा	104
Mixing Ratio (Humidity)	आर्द्रता मिश्रण अनुपात	54
Monsoon Depression	मानसून अवदाब	232,307
Monsoon Type	मानसून प्रकार	396
Monsoon Region (Air Mass)	मानसून क्षेत्र (वायु राशि)	194
Mountain/Valley Winds	पर्वतीय और घाटी हवाएं	135,137
Mountain Waves	पर्वत तरंगें	141
Mountain Winds	पर्वत हवाएं	139
Muslin	मलमल	

N

Nacreous Cloud	मुक्ताव मेघ	142
Neph-analysis	नेफ विश्लेषण	260
Nepho-Scope	नेफस्कोप	160
Nimbostratus	वर्षास्तरी मेघ	91
Noctilucent Clouds	निशादीप्ति मेघ	10
Nor'wester	काल बैसाखी	287
Numerical Weather Prediction	संख्यात्मक मौसम प्रागुक्ति	285

O

Object glass	अभिदृश्यक	181
Occluded Front	अधिविष्ट वाताग्र	221
Occlusion	अधिधारण	222
Observation Network	वेधशालाओ का जाल	155
Obserzvation-Rain	वर्षा मापि केन्द्र	156
Observation Surface	धरातलीय प्रेक्षण	156
Observation upper	उच्चतर वायुमण्डलीय प्रेक्षण	176
Open-Pan Evaporimeter	खुलि टंकी वाष्प मापि	60
Ozone	ओजोन	9
Ozonosphere	ओजोन मण्डल	9

P

Q

R

Radiation Night	विकिरण निशी	41
Radio-Sonde	रेडियो सोंड	181
Radio-Wind (Rawin)	रेडियो पवन प्रेक्षण	181,260
Rain	वर्षा	98
Rainbow	इन्द्रधनुष	164
Raingauge	वर्षामापन	172,176
Region of Transition (Air Mass)	संक्रमण के क्षेत्र	193
Regression	समाश्रयण	286
Relative Humidity	सापेक्ष आर्द्रता	54
Ridge	दावकटक	28
Rime	राइम हिम	108,162
Roaring Forties	गरजती चालिसा	140,320
Roll Cloud.	रोटर या वर्तुल मेघ	142

S

Sand whirl	धूल या रेत भ्रामिल	163
Salinity	लवणता	320
Satellites (Weather)	मौसम उपग्रह	185
Saturated	संतृप्त	53
Saturated Vapour Pressure	संतृप्त वाष्प दाब	53
Saturation Deficit	संतृप्ता हानि	55
Scattering (Reflection)	परावर्तित/प्रकीर्णन	34
Sea Breeze	सागर समीर	135,137
Seeding Clouds	बादलो को सीडिंग	111
Seistan	सीस्टन	140
Self-Recording Instruments	स्वालेखी यंत्र	172
Shamal	शामाल	140
Shimmer	शिमर	164
Short Range	अल्पवधि पूर्वानुमान	281
Shower	बौछार	98
Sidereal Day	नाक्षत्र दिन	5
Simoom	सिमूम	140
Sirocco	सिरक्कों	140
Sleet	सहिम वृष्टि	99

Temperature Efficiency	तापमान क्षमता	353
Temperature Measurement	तापमान माप	41
Temperature Provinces	तापमान प्रदेश	354
Temperature Range	तापमान परिसर	45
Temperate Maritime Type	मध्य महासागरीय प्रकार	395
Temperate Zone	मध्य अक्षांश	2,334
Tephigram	टीफैग्राम	72
Terminal Velocity	अन्तिम वेग	83
Thermal Equator	ताप सुमध्य रेखा	396
Thermal High	उच्चताप क्षेत्र	128
Thermal Wind	ताप हवा	128
Thermodynamics (Atmosphere)	वायुमण्डल की उष्मागतिक	70
Thermograph	तापमान लेखी	174
Thermometer	ताप मापी	
Thermometer Dry	शुष्क ताप मापी	42
Thermometer Grass Min	घास निम्नतम मापी	42
Thermometer Max	उच्चतम ताप मापी/महत्तम ताप मापी	41
Thermometer Min	निम्नतम ताप मापी/न्यूनतम ताप मापी	41
Thermometer Wet	नमबल्ब ताप मापी	43
Thickness Chart	थिकनेस चार्ट	275
Thornthwaites Classification	थार्नवेट का वर्गीकरण	351
Thunder	मेघगर्जन	101
Thunder Storm	तड़ित झंझा	101
Tiros	टाइरोस	177
Tornado	टोर्नाडो	252
Torrid Zone	उष्ण कटीबन्ध	333
Trade Winds	व्यापारिक हवा/पवन	135
Transpiration	वाष्पोत्सर्जन	56
Tree Climate	वृक्ष जलवायु	337
Tropic of Cancer	कर्क रेखा	1
Tropic of Capricorn	मकर रेखा	1

Wave Length	तरंग-दैर्घ्य	30
Wein's Law	वीन नीयम	31
Weather Map	मौसम मान चित्र	161,258
(Past-and Present)	(भूत और वर्तमान)	262
Weather Satellites	मौसम उपग्रह	250
Western Disturbance	पश्चिमी विक्षोभ	216,228
Wet Bulb Temp	नम वल्ब तापमान	292
Whirlwind	वातावर्त	233
Willy Willy	वील्ली वील्ली	233
Wind	हवा (वायु)	114
Wind Daily Variation	हवा का दैनिकचलन	134
Wind Seasonal Variation	हवा ऋतु विभिन्नता	134
Wind Vane	पवन दर्शकी	156
W. M O.	विश्व मौसम संघ	26,156